CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'स्वर-ताल-पद'

के शिल्पी

'पद्मश्री' पं. बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग'

(व्यक्तित्व एवं कृतित्व)

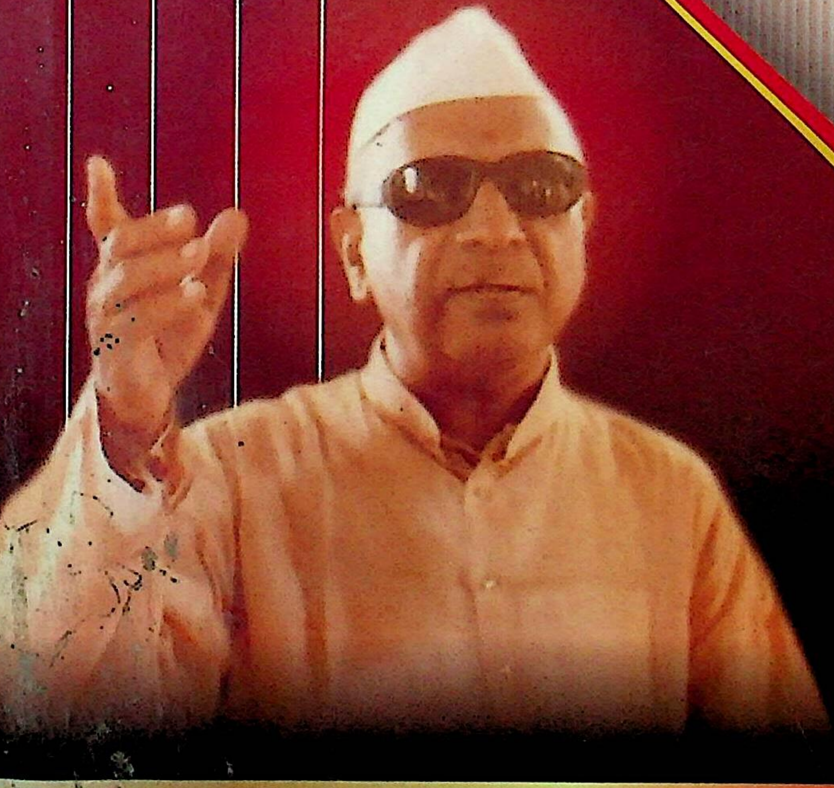

डॉ. लयलीना भट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'सङ्गीत भी शत-प्रतिशत, कविता भी शत-प्रतिशत'
(वाग्गेयकार के रूप में बलवन्त राय जी द्वारा रचित बन्दिशों के उभय पक्षों यानि शब्द-रचना एवं स्वर-संयोजन के पारस्परिक सन्तुलन की पुष्टि)

डॉ० भानुशङ्कर मेहता
पूर्व उपाध्यक्ष,
उ०प्र० सङ्गीत नाटक अकादमी, लखनऊ
(व्यवसाय से पैथोलौजिस्ट,
साहित्य तथा सङ्गीत रसिक एवं रङ्गकर्मी)

'लोकैषणा का जाल बड़ा जटिल होता है, जिसे काटना बहुत कठिन माना गया है। भैयाजी इससे मुक्त रह पाए हैं यह बहुत बड़ी बात है। इसी कारण उनमें आन्तरिक विनय है जो ओढ़ी हुई विनयशीलता से सर्वथा भिन्न है ... स्पर्धा, ईर्ष्या, मत्सर का कभी स्पर्श भी आपमें देखने को नहीं मिला। इससे यह भरोसा होता है कि सङ्गीत से मोक्ष की प्राप्ति की जो प्रशस्ति शास्त्रों में मिलती है वह कहीं तो सार्थक होती दिखाई देती है।'

प्रो० प्रेमलता शर्मा
(बलवन्त राय जी की गुरु बहन, सङ्गीत शास्त्र की विचक्षण अध्येता, पूर्व सङ्काय प्रमुख, सङ्गीत एवं मञ्चकला सङ्काय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
पूर्व उपाध्यक्षा,
केन्द्रीय सङ्गीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली,
पूर्व कुलपति, इ०क०सं०वि०वि० खैरागढ़)

प्रायः सङ्गीतज्ञ गाते समय बोलों के उच्चारण को इतना विकृत कर देते हैं कि उनके भाव तक पहुँचना श्रोता के लिए असम्भव हो जाता है और वह ऊबने लगता है। 'भावरङ्ग' जी के गायन में भजनों की पंक्तियों का इतना स्पष्ट और सहज उच्चारण रहता है कि श्रोता बड़ी सरलता से भावानुभव की चरम सीमा तक पहुँच जाता है।

प्रो० नागेन्द्रनाथ उपाध्याय
(पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

S.3

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आदरणीया भोली दीदी को

सादर

लीना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'स्वर-ताल-पद'

के शिल्पी

'पद्मश्री' पं. बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग'

(व्यक्तित्व एवं कृतित्व)

डॉ० लयलीना भट

एसोसिएट प्रोफेसर, नृत्य (भरतनाट्यम्)
महिला महाविद्यालय,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

प्रकाशन :

संस्कृति : शोध एवं प्रकाशन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रकाशन :
संस्कृति : शोध एवं प्रकाशन
सा १० /८१ सी-१, अशोक मार्ग
सारनाथ, वाराणसी-२२१००२
मो० : ८९६००३१३८८, ९२३५६११७६९
E-mail : sanskritishodh@gmail.com / deenabandhuvns@sify...

© लयलीना भट
ओल्ड एफ / ५, हैदराबाद कॉलोनी
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी-२२१००५
मो० : ९८३९१७२५५८

ISBN : 978-81-909165-5-4

प्रथम संस्करण : २०१२

मूल्य : रु १००० / -

प्रमुख वितरक :
शारदा संस्कृत संस्थान
सी. २७/५९, जगतगंज, वाराणसी-२२१००२,
दूरभाष : ०५४२-२२०४१६८, २४५२०३७.

मुद्रक :
आदर्श ऑफसेट
धर्मसंघ, करपात्री स्टेट कॉम्प्लेक्स
दुर्गाकुण्ड, वाराणसी-२२१००५
मो० : ९८३९६३३९३९
E-mail : mangaleshwar.0123@gmail.com

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रङ्ग्यो 'भाव' हिय सर्वदा शिव समान, हे महामना महान!

"विद्या की शोभा धर्म से होती है– विद्या धर्मेण शोभते।"

मदन मोहन मालवीय.

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक

महामना पं० मदन मोहन मालवीय

जिनके चरण स्पर्श करने का सौभाग्य

बलवन्तराय जी को मिला

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'सङ्गीतमार्तण्ड' 'पद्मश्री' पं० ओम्कारनाथ ठाकुर

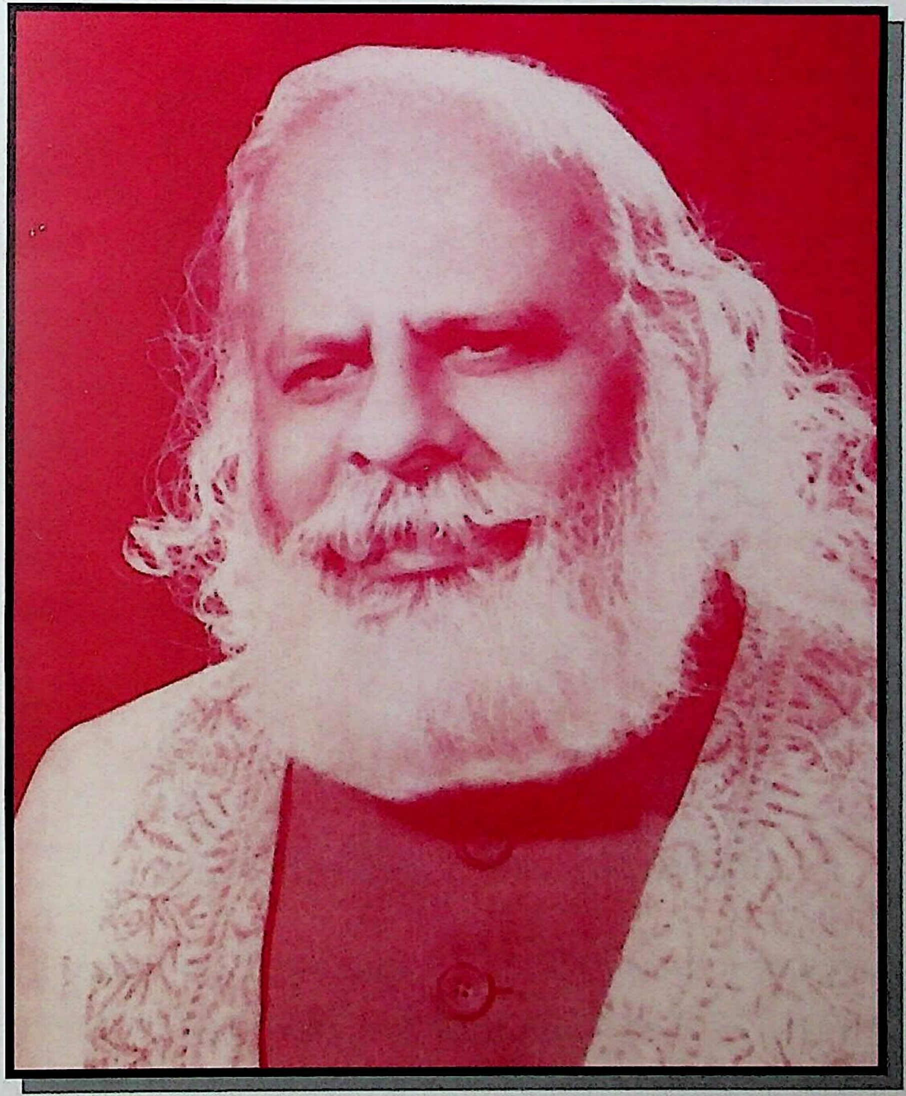

भारत के अप्रतिम गायक, जिनके शिष्यत्व में बलवन्तराय जी ने एक तपावधि (सन् ३८ - सन् ५०) की कठोर साधना करके 'सङ्गीताचार्य' की पदवी प्राप्त की।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सङ्गीतावतार पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर
(बलवन्तराय जी के दादा गुरु)

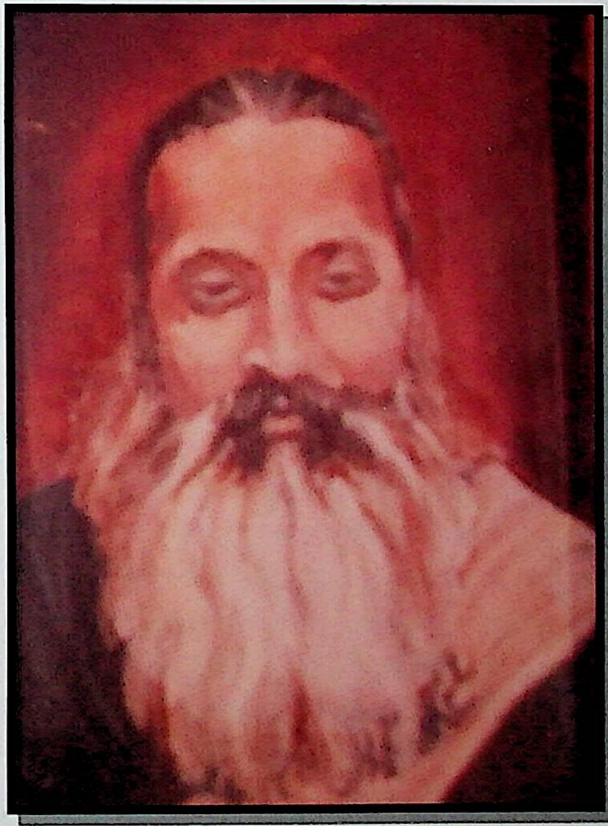

सङ्गीत जैसी श्रमसाध्य विद्या को जनसाधारण में स्वीकारयोग्य बनाने हेतु पलुस्कर जी ने गोस्वामी तुलसीदास तथा मीराबाई सदृश भक्त कवियों के पदों को ख्याल के रूप में स्वर-तालबद्ध कर शास्त्रीय सङ्गीत के 'गेय' (बन्दिशों) को अतिशृङ्गारिकता के दोष से मुक्त करने का अभियान चालू किया। अपने दादागुरु द्वारा शुरू किए गए इस महत्त्वपूर्ण अभियान को बलवन्तरायजी ने पूरी निष्ठा से अपनी अनेकानेक रचनाओं द्वारा गति प्रदान कर अपने दायित्व का निर्वाह किया है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्राक्कथन

कला होने के कारण सङ्गीत में सृजनशीलता की अनन्त सम्भावनाएँ हैं। मानव मन सदैव नवीन की खोज में रहा है। इसी क्रम में परम्परा से अर्जित ज्ञान में वह अपनी कल्पनाशीलता से कुछ नया जोड़ता रहा है। कला के मूल तत्त्वों को यथावत् रखते हुए विवेकपूर्ण ढङ्ग से जोड़े गए नए आयाम स्फूर्तिदायक सिद्ध होते हैं। नवीन का सृजन जहाँ एक ओर स्वयं सर्जक को अथवा कला-साधक को सन्तोष प्रदान करता है वहीं दूसरी ओर कला के पारखियों को विश्लेषण का अवसर देते हुए कलारसिकों को आनन्द प्रदान करता है।

भारतीय सङ्गीत में सृजनशीलता दो धाराओं में सुव्यक्त है। एक है निबद्ध व दूसरी अनिबद्ध। इन दोनों में गहरा सम्बन्ध है। फर्क सिर्फ इतना है कि दोनों धाराओं में कौशल अर्जित करने के मापदण्ड अलग हैं। अनिबद्ध धारा के साधक अभ्यास द्वारा एवं अपनी कल्पनाशीलता से सीखी हुई विद्या का प्रदर्शन करने का कौशल अर्जित करते हैं जबकि निबद्ध धारा के साधक यानि 'वाग्गेयकार' के लिए इन गुणों के अतिरिक्त कतिपय अन्य विशिष्ट प्रतिभाओं से युक्त होना आवश्यक है। 'निबद्ध' का अर्थ 'बँधा हुआ' या 'बँधी हुई' होता है, यानि जिसका स्वरूप पहले से तय है। सङ्गीत के सन्दर्भ में यह 'निबद्ध' रचना या बन्दिश होती है जिसके आधार पर बाकी का विस्तार (आलाप-तानादि) किया जाता है। इस 'निबद्ध' या 'बँधे हुए' का तात्पर्य है राग-विशेष तथा ताल-विशेष में बँधी पद-रचना जो प्राचीनकाल से लेकर वर्तमान काल तक विविध बन्धों के रूप में यानि प्रबन्ध, ध्रुपद, धमार, ख्याल, ठुमरी टप्पा तथा तराना के रूप में हमारे सामने है।

भारतीय सङ्गीत में पद-रचना का विशेष महत्त्व है क्योंकि गायन में पद का आधार अवश्यम्भावी है चाहे सार्थक हो अथवा तराने के रूप में निरर्थक। जैसा कि ऊपर उल्लेख हो चुका है पद-रचना करने वाले से सङ्गीत के प्रयोगपक्ष सम्बन्धी कौशल के अतिरिक्त भाषा के व्याकरण एवं छन्द-सम्बन्धी ज्ञान की भी अपेक्षा होती है। मात्र पद-रचना अथवा काव्य की सर्जना करना अलग कौशल है जो प्रायः साहित्यकार करते ही हैं उसी प्रकार किसी पूर्व रचित पद को स्वर-ताल में बाँधना भिन्न प्रकार का कौशल है जो सङ्गीत की शिक्षा लेने वाला व्यक्ति प्रायः कर लेता है। ये दोनों कौशल विशिष्ट होते हुए भी एकाङ्गी हैं तथा दोनों में भिन्न प्रकार की सम्वेदनाशीलता काम करती है। जब पद-रचना और स्वर-रचना दोनों का कर्ता एक ही हो तब वह 'वाग्गेयकार' का बिरूद प्राप्त करता है। शर्ङ्गदेव ने 'सङ्गीत-रत्नाकर' में स्पष्ट कहा है कि 'वाचं गेयं च कुरुते यः स वाग्गेयकारकः'।

भारतीय सङ्गीत के कोश को अनुपम वाग्गेयकारों की रचनाओं ने समृद्ध किया है। 'सदारङ्ग', 'अदारङ्ग' जैसे रचनाकारों की अनमोल रचनाएँ ख्याल शैली की रचनाओं के लिए मील का पत्थर सिद्ध हुई हैं।

बीसवीं शताब्दी के वाग्गेयकारों में 'पद्मश्री' पं० बलवन्तराय भट्ट का नाम अत्यन्त आदर से लिया जाता है। 'भावरङ्ग' उपनाम से उन्होंने विविध बन्धों यथा ख्याल, ध्रुपद, धमार, तराना, चतुरङ्ग, ठुमरी तथा त्रिवट आदि के रूप में प्रायः डेढ़ हजार रचनाएँ की हैं। शास्त्रीय सङ्गीत की इन रचनाओं में से ४५० 'भावरङ्ग-लहरी' नामक उनके रचना-सङ्ग्रह के तीन भागों में प्रकाशित हुई हैं। प्रथम भाग के परिवर्धित तृतीय संस्करण में ५१ नवीन रचनाओं (३६ रचनाएँ स्वरलिपि सहित तथा १५ पद-रचना) को समाविष्ट किया है, इसके अतिरिक्त भट्टजी की ज्येष्ठ पुत्री डॉ० स्वरवन्दना शर्मा ने उनके द्वारा लिखित गुजराती, संस्कृत तथा हिन्दी भाषा के ५१ पदों (पद-रचना मात्र) को 'आत्मदर्शन' नाम से प्रकाशित किया है। 'भावरङ्ग लहरी' में सङ्कलित रचनाएँ रचनाकार की मौलिक शब्द रचनाएँ हैं जिनके माध्यम से साहित्य एवं सङ्गीत दोनों विधाओं के सौन्दर्य का प्रकर्ष समग्र प्रभाव के साथ अनुभव होता है। राग एवं ताल के गठन की दृष्टि से सङ्गीत के विद्यार्थियों एवं सङ्गीतानुरागियों के लिए यह ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण है ही साहित्य के विद्यार्थियों के लिए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्राक्कथन

कला होने के कारण सङ्गीत में सृजनशीलता की अनन्त सम्भावनाएँ हैं। मानव मन सदैव नवीन की खोज में रहा है। इसी क्रम में परम्परा से अर्जित ज्ञान में वह अपनी कल्पनाशीलता से कुछ नया जोड़ता रहा है। कला के मूल तत्त्वों को यथावत् रखते हुए विवेकपूर्ण ढङ्ग से जोड़े गए नए आयाम स्फूर्तिदायक सिद्ध होते हैं। नवीन का सृजन जहाँ एक ओर स्वयं सर्जक को अथवा कला-साधक को सन्तोष प्रदान करता है वहीं दूसरी ओर कला के पारखियों को विश्लेषण का अवसर देते हुए कलारसिकों को आनन्द प्रदान करता है।

भारतीय सङ्गीत में सृजनशीलता दो धाराओं में सुव्यक्त है। एक है निबद्ध व दूसरी अनिबद्ध। इन दोनों में गहरा सम्बन्ध है। फर्क सिर्फ इतना है कि दोनों धाराओं में कौशल अर्जित करने के मापदण्ड अलग हैं। अनिबद्ध धारा के साधक अभ्यास द्वारा एवं अपनी कल्पनाशीलता से सीखी हुई विद्या का प्रदर्शन करने का कौशल अर्जित करते हैं जबकि निबद्ध धारा के साधक यानि 'वाग्गेयकार' के लिए इन गुणों के अतिरिक्त कतिपय अन्य विशिष्ट प्रतिभाओं से युक्त होना आवश्यक है। 'निबद्ध' का अर्थ 'बँधा हुआ' या 'बँधी हुई' होता है, यानि जिसका स्वरूप पहले से तय है। सङ्गीत के सन्दर्भ में यह 'निबद्ध' रचना या बन्दिश होती है जिसके आधार पर बाकी का विस्तार (आलाप-तानादि) किया जाता है। इस 'निबद्ध' या 'बँधे हुए' का तात्पर्य है राग-विशेष तथा ताल-विशेष में बँधी पद-रचना जो प्राचीनकाल से लेकर वर्तमान काल तक विविध बन्धों के रूप में यानि प्रबन्ध, ध्रुपद, धमार, ख्याल, ठुमरी टप्पा तथा तराना के रूप में हमारे सामने है।

भारतीय सङ्गीत में पद-रचना का विशेष महत्त्व है क्योंकि गायन में पद का आधार अवश्यम्भावी है चाहे सार्थक हो अथवा तराने के रूप में निरर्थक। जैसा कि ऊपर उल्लेख हो चुका है पद-रचना करने वाले से सङ्गीत के प्रयोगपक्ष सम्बन्धी कौशल के अतिरिक्त भाषा के व्याकरण एवं छन्द-सम्बन्धी ज्ञान की भी अपेक्षा होती है। मात्र पद-रचना अथवा काव्य की सर्जना करना अलग कौशल है जो प्रायः साहित्यकार करते ही हैं उसी प्रकार किसी पूर्व रचित पद को स्वर-ताल में बाँधना भिन्न प्रकार का कौशल है जो सङ्गीत की शिक्षा लेने वाला व्यक्ति प्रायः कर लेता है। ये दोनों कौशल विशिष्ट होते हुए भी एकाङ्गी हैं तथा दोनों में भिन्न प्रकार की सम्वेदनाशीलता काम करती है। जब पद-रचना और स्वर-रचना दोनों का कर्ता एक ही हो तब वह 'वाग्गेयकार' का बिरूद प्राप्त करता है। शर्ङ्गदेव ने 'सङ्गीत-रत्नाकर' में स्पष्ट कहा है कि 'वाचं गेयं च कुरुते यः स वाग्गेयकारकः'।

भारतीय सङ्गीत के कोश को अनुपम वाग्गेयकारों की रचनाओं ने समृद्ध किया है। 'सदारङ्ग', 'अदारङ्ग' जैसे रचनाकारों की अनमोल रचनाएँ ख्याल शैली की रचनाओं के लिए मील का पत्थर सिद्ध हुई हैं।

बीसवीं शताब्दी के वाग्गेयकारों में 'पद्मश्री' पं० बलवन्तराय भट्ट का नाम अत्यन्त आदर से लिया जाता है। 'भावरङ्ग' उपनाम से उन्होंने विविध बन्धों यथा ख्याल, ध्रुपद, धमार, तराना, चतुरङ्ग, ठुमरी तथा त्रिवट आदि के रूप में प्रायः डेढ़ हजार रचनाएँ की हैं। शास्त्रीय सङ्गीत की इन रचनाओं में से ४५० 'भावरङ्ग-लहरी' नामक उनके रचना-सङ्ग्रह के तीन भागों में प्रकाशित हुई हैं। प्रथम भाग के परिवर्धित तृतीय संस्करण में ५१ नवीन रचनाओं (३६ रचनाएँ स्वरलिपि सहित तथा १५ पद-रचना) को समाविष्ट किया है, इसके अतिरिक्त भट्टजी की ज्येष्ठ पुत्री डॉ० स्वरवन्दना शर्मा ने उनके द्वारा लिखित गुजराती, संस्कृत तथा हिन्दी भाषा के ५१ पदों (पद-रचना मात्र) को 'आत्मदर्शन' नाम से प्रकाशित किया है। 'भावरङ्ग लहरी' में सङ्कलित रचनाएँ रचनाकार की मौलिक शब्द रचनाएँ हैं जिनके माध्यम से साहित्य एवं सङ्गीत दोनों विधाओं के सौन्दर्य का प्रकर्ष समग्र प्रभाव के साथ अनुभव होता है। राग एवं ताल के गठन की दृष्टि से सङ्गीत के विद्यार्थियों एवं सङ्गीतानुरागियों के लिए यह ग्रन्थ महत्त्वपूर्ण है ही साहित्य के विद्यार्थियों के लिए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भी यह अध्ययन का मार्ग प्रशस्त करता है। जहाँ साहित्य की कसौटी पर कसने के लिए अलङ्कारों का वैभव है, छन्दों की विविधता है, सुन्दर नाद-व्यञ्जना है वहीं भावों की विलक्षणता से प्राप्त बिम्ब-विधान है जो एक नर्तक को अपनी अभिनय-प्रतिभा का उपयोग करने का अवसर प्रदान करता है। इस प्रकार 'भावरङ्ग लहरी' में साहित्य और सङ्गीत के संयोग के साथ ही नृत्य का सुयोग भी प्राप्त है।

एक कलाकार के रूप में गायन के क्षेत्र में अपने कौशल का परिचय देने के साथ ही विभिन्न अवसरों पर अनेक वाद्यों पर अपने प्रभुत्व का परिचय देते हुए भट्ट जी ने रचना के क्षेत्र में विशेष प्रतिष्ठा अर्जित की है। एक 'वाग्गेयकार' के रूप में उत्तर-भारतीय-सङ्गीत के क्षेत्र में 'भावरङ्ग' जी का योगदान बहुमूल्य है। शब्दों के साथ स्वर-लय एवं ताल के सौन्दर्य को जिस कुशलता से उन्होंने उद्घाटित किया है उसे लक्ष्य कर विभिन्न विश्वविद्यालयों में शोध कार्य हो चुके हैं-

१. गोरखपुर विश्वविद्यालय के ललितकला एवं सङ्गीत विभाग के गायन विषय में श्रीमती आरती श्रीवास्तव ने 'भावरङ्ग' के साङ्गीतिक कृतित्व का समीक्षात्मक अध्ययन' शीर्षक से डॉ० राजेश्वर आचार्य के निर्देशन में सन् १९९३ में अपना शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया।

२. काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के सङ्गीत एवं मञ्चकला सङ्काय के गायन विभाग से सन् १९९७ में कु० रश्मिप्रभा पुसालकर ने 'वाग्गेयकार' पद्मश्री पं० बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट, व्यक्तित्व, कृतित्व एवं साङ्गीतिक योगदान' शीर्षक से अपना शोध-प्रबन्ध प्रो० प्रदीप कुमार दीक्षित के निर्देशन में प्रस्तुत किया।

यद्यपि दोनों ही कार्यों में भट्ट जी की साहित्यिक उपलब्धियों की चर्चा की गई है तथापि गोरखपुर विश्वविद्यालय के शोध-प्रबन्ध में साहित्यकार डॉ० अनन्त मिश्र द्वारा कतिपय रचनाओं की साहित्यिक समीक्षा पढ़कर मुझे अनुभव हुआ कि बलवन्तराय जी की बन्दिशों के अध्ययन का एक नया क्षेत्र भी है। उसी कौतुहलवश बन्दिशों के साहित्यपरक गम्भीर अनुशीलन के लिए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग से पञ्जीकृत होकर मैंने 'भावरङ्ग लहरी : एक समीक्षात्मक अध्ययन (साहित्य, सङ्गीत एवं नृत्य के सन्दर्भ में) शीर्षक से सन् २००६ में प्रो० पुष्पा अग्रवाल के निर्देशन में अपना शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किया। अपने शोध-प्रबन्ध को मैंने ७ अध्यायों में इस प्रकार विभक्त किया कि बन्दिशों के अधिकाधिक पक्षों पर प्रकाश डाल सकूँ।

प्रस्तुत पुस्तक 'स्वर-ताल-पद' के शिल्पी 'पद्मश्री' पं० बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग' (व्यक्तित्व एवं कृतित्व) उक्त शोध-प्रबन्ध का मात्र एक अध्याय है। शीर्षक के अनुसार शोध-प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य साहित्य, सङ्गीत एवं नृत्य तीनों विधाओं के मानदण्डों के आधार पर रचनाओं की समीक्षा करना था अतः 'रचनाकार का व्यक्तित्व और कृतित्व' नामक अध्याय में केवल अतिआवश्यक अंशों को ही सम्मिलित किया था। पुस्तकाकार में प्रकाशित करने हेतु यद्यपि शोध-प्रबन्ध में प्रकाशित सामग्री का उपयोग किया है तथापि लगभग ६० प्रतिशत अतिरिक्त सामग्री का समावेश किया है।

यद्यपि जीवन के अनेक पक्षों को विस्तार से रखने का प्रयास किया है तथापि उनके व्यक्तित्व सम्बन्धी अनेक पक्ष जिनको पुस्तक का अंश बनाने के लिए आरम्भ से ही इच्छुक थी, छूट गए। उदाहरणार्थ स्कूल में एक चोर को आहट पर ही दोनों हाथों से फुर्ती से पकड़ना, एक ठग (जो अपने को मेम्बर ऑफ पार्लियामेन्ट बताकर उनके अनेक विद्यार्थियों को नौकरी दिलाने का झाँसा देकर काफी रकम ऐंठ चुका था) को बड़ी रणनीति बनाकर ससम्मान विश्वविद्यालय के प्रॉक्टर ऑफिस में पकड़वाना (उस ठग ने बाद में भट्ट जी की तारीफ ही की कि गुरुजी के विद्यार्थियों ने मुझे न गाली दी न मारा पीटा), चलती ट्रेन में एक बोगी से दूसरी बोगी बदलना आदि ऐसे अनेक प्रसङ्ग हैं जिनके बारे में अब विचार करते हैं तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं, लेकिन उन्होंने सब कुछ सहजता से किया। जिन विद्यार्थियों ने बाद की यात्राओं में भीड़ भाड़ वाली बोगी भी तथा प्लेटफार्म की धक्का मुक्की के बीच उन्हें शान्ति और सूझबूझ से काम लेते

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

देखा है वे स्वयं भी विस्मित होते रहे हैं। कराची के एक प्रोग्राम से लौटते समय टाँगे पर गुरूजी (पं० ओमकारनाथ जी) के चार तानपूरे रखने थे जो अन्य विद्यार्थी बाकी सामानों के साथ नहीं रख पा रहे थे। बलवन्तरायजी ने बिना किसी परेशानी के उनको व्यवस्थित किया। बराण्डे में अपने यजमान के साथ खड़े होकर गुरूजी यह सारी कार्रवाई देख रहे थे, तुरन्त प्रसन्न होकर बोले 'शाबाश है सूरदास! शाबाश है।' इस घटना को वर्षों बाद विख्यात वॉयलिन वादक श्री एम०एस० गोपालकृष्णन् ने भी याद किया था जो उस यात्रा में साथ थे।

परिशिष्ट-१ तथा परिशिष्ट-२ में दी गयी सामग्री शोध-प्रबन्ध की सामग्री से पूर्णतया भिन्न है जिसमें उनकी गायकी की विशिष्टता के साथ उन कलाकारों की सूची (यथासम्भव ऐतिहासिक कालक्रम से) देने का प्रयास किया है जिनके लिए उन्होंने रचनाएँ बनायीं। उनके शालेय जीवन तथा बाद में गुरुजी के पास सङ्गीत-शिक्षण लेते समय जिन स्नेहियों से विभिन्न प्रकार का सहयोग मिला उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन की दृष्टि से अपनी भावाभिव्यक्ति की है। विभिन्न अवसरों पर लिखे गए तथा विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित उनके लेख भी दिए हैं। उनकी स्वर्ण-जयन्ती तथा अमृत महोत्सव के अवसर पर आयोजित समारोहों में उनके मित्रों, सहकर्मियों, विद्यार्थियों एवं सङ्गीतरसिकों द्वारा प्रदान किए गए मानपत्रों की प्रतिलिपि भी दी है। जिसमें उनकी भावनाएँ मुखरित हुई हैं।

चित्रों के माध्यम से शालेय जीवन से लेकर अब तक के जीवन की झलकियाँ प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

शोध-प्रबन्ध के मुख्य विषय का लेखन पूर्णतया तटस्थ दृष्टि से हुआ है किन्तु स्नेही मित्रों एवं स्वजनों के बारे में लिखते समय शैली मिश्रित है। कहीं स्वयं को तीसरे व्यक्ति के रूप में रखकर केवल तथ्यों का उल्लेख किया है तो कहीं अपनी ओर से लिखते समय अपने सम्बन्ध (पिता-पुत्री) की दृष्टि से लिखा है।

पुस्तक प्रकाशन का यह मेरा पहला प्रयास है अतः त्रुटियाँ होना स्वाभाविक है। अपनी सीमित क्षमता में जो सम्भव हो सका है उसे पाठकों के समक्ष रख रही हूँ। बापूजी के कृतित्व का सही आकलन कर सकूँ ऐसी मेरी योग्यता नहीं है। अपने अन्तःचक्षुओं से उन्होंने जिस रूप में संसार को देखा है वह अतुलनीय है। मैंने मात्र उन पक्षों का निर्देश किया है जिस आलोक में उनकी बन्दिशों को परखा जाना चाहिए एवं रसास्वादन करना चाहिए। अपने शोध-प्रबन्ध के मुख्य विषय के अनुसार 'भावरङ्ग लहरी' की बन्दिशों की साहित्य, सङ्गीत एंव नृत्य के दृष्टिकोण से किए गए समीक्षात्मक अध्ययन का प्रकाशन सङ्कल्पित है। भविष्य के गर्भ में क्या है यह नहीं जानती किन्तु ईश्वर की कृपा हुई तो उस कार्य को भी सुधी पाठकों के सामने रख सकूँगी।

कार्तिक पूर्णिमा वि. सं. २०६९.
तदनुसार २८-११-२०१२.

विनयावनत
लयलीना भट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Prof. (Dr.) Satya Bhan Sharma

M.A. - SAHITYA - HINDI & ENGLISH
PH.D. - SANGEET - VOCAL & INSTT.
KALA - DRAWING & PAINTING
EX. DEAN - MUSIC & ARTS FACULTY
DAYAL BAGH UNIVERSITY, AGRA
'A' GRADE ARTIST - RADIO & TELEVISION
GRADED ARTIST - I.C.C.R.
(HINDUSTANI SANGEET - VOCAL CLASSICAL)
RECIPIENT - SANGEET NATAK ACADEMY AWARD

11, Rahul Nagar
Mau Road, Agra (U.P.)
(Near Khandari Bye Pass)
Pin-282005
Ph. : +91-99974 25824

शुभाशंसा

'स्वर-ताल-पद' के शिल्पी 'पद्मश्री' पं० बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग' (व्यक्तित्व एवं कृतित्व) ग्रन्थ जिसे डॉ० लयलीना भट ने वास्तविक तथ्यों के साथ स्वयं की भावनाओं तथा श्री 'भावरङ्ग' जी के प्रति श्रद्धा-आस्था से आच्छादित किया है वह सर्वथा स्तुत्य है।

'पद्मश्री' श्री बलवन्तराय जी भट्ट जी के सम्पर्क में आकर मैं भी लगभग गत दो युगों से उनके अत्यन्त विनम्रतापूर्ण प्रभावशाली व्यक्तित्व से सतत् प्रेरणा प्राप्त करता रहा हूँ। हमारे मन में बहुत पहले से ही यह ललक थी कि ऐसे व्यक्ति का, जिसने अपना सम्पूर्ण जीवन सङ्गीत को समर्पित कर दिया तथा सङ्गीत-क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान प्रदान किया, सम्पूर्ण व्यक्तित्व एवं कृतित्व समाज को सफलतापूर्वक प्रस्तुत होना चाहिए, उसे डॉ० लयलीना ने सर्वाङ्गीण स्वरूप प्रदान किया है। यह अति आनन्द एवं सन्तोषप्रद है।

एक बहुतआयामी व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों को एक स्थान पर स्थापित करना एक दुस्तर कार्य है लेकिन डॉ० लयलीना ने यह कठिन कार्य जिस लगन से सफलतापूर्वक सम्पन्न किया है वह सर्वथा श्लाघनीय है। 'पद्मश्री' श्री भावरङ्ग जी के व्यक्तित्व के सभी पहुलाओं पर चाहे वह उनका सङ्गीतपरक ज्ञान हो, साहित्यपरक ज्ञान हो और चाहे अध्यात्म में गहरी डुबकी लगाने का ज्ञान व लालसा हो, सभी पक्षों को निष्पक्ष कलम से सन्तोषजनक रूप में उजागर किया है।

आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यह ग्रन्थ शोधार्थियों व आगे आने वाले जिज्ञासुओं के लिए एक विशिष्ट वरदान होगा।

05.02.2012.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Kamalesh Dutta Tripathi
Professor Emeritus
Department of Dharmāgama (Religious & Āgamic Studies)
Faculty of Sanskrit Learning & Theology
Banaras Hindu University
VARANASI 221005
E-mail: igrkk_vns@dataone.in

दिनांकः 10-4-2012

शुभाशंसा

काशी की संगीत परम्परा में उज्ज्वल रत्न और मूर्धन्य वाग्गेयकार पं0 बलवन्त राय भट्ट पं0 विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के द्वारा आरम्भ किये गये संगीत शिक्षण और संगीत को लोकप्रिय बनाने वाले आन्दोलन के महान् विद्वानों तथा वाहक के रूप में रसिकों के लिये सुपरिचित हैं। संगीतमार्तण्ड पं0 ओंकार नाथ ठाकुर की गायन परम्परा के वे अद्वितीय प्रतिनिधि के रूप में भी जाने जाते हैं। उत्तर भारत की संगीत परम्परा के लिए उनके योगदान को विद्वानों और गुणीजनों ने मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया है। पं0 बलवन्त राय भट्ट की कृति " भावरंग लहरी" तीन भागों में प्रकाशित हुई - प्रथम भाग 1964 में, द्वितीय भाग 1974 में और तृतीय भाग 1982 में प्रकाशित हुआ। उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संगीत एवं मंचकला संकाय को सुदीर्घ काल तक अपनी सेवाएं अर्पित कीं और एक समृद्ध शिष्य परम्परा उनके चरणों में विकसित हुई। ऐसे अद्भुत व्यक्तित्व के जीवन और कृतित्व पर केन्द्रित प्रस्तुत कृति **"स्वर ताल पद के शिल्पी : पद्मश्री पं0 बलवन्तराय भट्ट 'भावरंग'(व्यक्तित्व एवं कृतित्व)"** विषय को अपनी पूरी समग्रता में प्रतिपादित करने के कारण बहुमूल्य है। इसकी लेखिका डा0 लयलीना भट्ट ने स्वयं न केवल उस परम्परा को अपने पिता से साक्षात् प्राप्त किया है, अपितु स्वयं भी वे भरतनाट्यम की आचार्या हैं और संगीत के मर्म को भली तरह से जानती हैं। विदुषी लेखिका ने अपनी कृति में पं0 बलवन्तराय भट्ट जी के व्यक्तित्व का व्यवस्थित, प्रामाणिक और विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है। उन्होंने इस कृति में पं0 बलवन्त राय भट्ट के वैदुष्यपरक और सर्जनात्मक अवदान का सम्यक् समालोचन भी किया है। पं0 बलवन्तराय भट्ट महान् आचार्य संगीतमार्तण्ड पं0 ओंकार नाथ ठाकुर की परम्परा के साक्षात् वाहक ही नहीं, उनके व्यक्तित्व से प्रभावित संगीताचार्य भी हैं। वे स्वयं प्रतिष्ठित गायक तथा वाद्य-वादनशास्त्र के मर्मज्ञ और लय-ताल की विलक्षण और अत्यन्त विरल सूक्ष्म दृष्टि से समन्वित आचार्य भी हैं। पर इस सबसे बढ़कर बात उनके व्यक्तित्व के विशिष्ट पक्ष को परिभाषित करती है कि वे सच्चे अर्थों में 'वाग्गेयकार' हैं, जिनमें शास्त्रों में वर्णित वाग्गेयकारत्व के प्रतिमानों को एक साथ उपस्थित देखा जा सकता है। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ से ही संगीत शिक्षण की दिशा में जो क्रान्ति आरम्भ हुई उसमें स्वर, ताल और पदरचना के मर्मवेत्ता एक अत्यन्त समर्थ वाग्गेयकार की आवश्यकता अनुभव की जा रही थी जो नये उदित होते हुए मध्यवर्ग के संस्कार के लिए ऐसे पदों / बंदिशों को प्रदान कर सके जो सर्जनात्मकता के सभी आयामों को पूरा भर करती हो और बदलते हुए युग की नैतिक अपेक्षा को भी पूरा करती हो ताकि अतिरंजित श्रृंगारिकता से भरपूर पदावली से मुक्ति मिल सके और कोमलवय के बच्चे भी निःसंकोच रूप से संगीत में शिक्षित किये जा सकें। संगीताचार्य पं0 बलवन्तराय भट्ट ने भावरंग लहरी के तीन भागों में एक ऐसी कृति दी जो सबको उन सभी

Residence: Plot No. 141/1, Susuwahi-Nasirpur Marg, Prajnapuram Colony (Near Nasirpur Aam ki bagia), P.O.: B.H.U., Varanasi-22100

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपेक्षाओं को पूरी करते हुए संगीत के सर्जनात्मक उच्चतम मानदण्डों को भी पूरा करती है। डा0 लयलीना भट्ट ने इन सभी आयामों की सम्यक् आलोचना करते हुए 'भावरंगलहरी' का मूल्यांकन भी अपूर्व दक्षता के साथ प्रस्तुत किया है। संगीताचार्य पं0 बलवन्तराय भट्ट की स्वनिर्मित बंदिशों में पदों के प्रयोग में उनका शास्त्रीय ज्ञान कैसे प्रकाशित हुआ है, इसे उन्होंने उदाहरण को देकर स्पष्ट कर दिया है। आचार्य भट्ट की रचनाओं में आन्तरिक सांगीतिक संरचना किस प्रकार निर्मित होती है, इसको भी उन्होंने स्पष्ट कर दिया है। आचार्य भट्ट भाषा, छन्दोविधान, लय-ताल और स्वर संचरना की सूक्ष्मतम समझ के साथ कैसे नवीन पदरचना प्रदान करते हैं - यह सब कुछ भी डा0 लयलीना भट्ट की कृति से स्पष्ट हो जाता है।

डा0 लयलीना भट्ट की यह रचना हमारे अपने समय के काशी के महान् संगीताचार्य के व्यक्ति और कृतित्व को समझने के लिए अमूल्य प्रयास है और मुझे आशा है कि सुधीजन इसका अनुशीलन करेंगे और इसे समुचित गौरव प्राप्त हो सकेगा।

- कमलेशदत्त त्रिपाठी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Padmabhooshan
Padmashri Dr. (Smt.) N. Rajam
(Violinist)

Ex Dean & Prof
Faculty of Performing Arts
BHU.
Varanasi.

G-3 209/210 Malhar, Lok Puram,
Thane (West) Pin Code : 400 601.
Tel.: 022-537 8417 Fax: 022-537 4814
Email : drrajam@hotmail.com

Dr. Gangubai Hangal
Gurukul
Hubli - Karnataka.

I have had the pleasure and privilege to come in contact with Pt. Balwantrai Bhat as early as 50 years back at Varanasi. The TRIVENI SANGAM' of performer, teacher and composer is rarely found in musicians and Pt. Bhatt is an exception in this regard. Almighty has endowed him with exceptional abilities in all the three directions and as a gurubehan and colleague at the Banaras Hindu University I feel very proud of him. His compositions have high literary content, complicated and intricate rhythmic patterns and of course attractive melodic settings. Many musicians of repute of the present generation present his compositions extensively and I personally thoroughly enjoy playing his compositions on the violin in my concerts. His set of Bhavarangalahari is a priceless possession for each and every student of music. I am immensely happy that Dr. Layaleena Bhat is bringing out a book on Pt. Balwantrai Bhat highlighting his achievements and contributions to the field of Indian music.

I wish her venture all success

N. Rajam
14. 4. 2012

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आभारोक्ति

प्रस्तुत पुस्तक 'स्वर-ताल-पद' के शिल्पी 'पद्मश्री' पं० बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग' (व्यक्तित्व और कृतित्व) मेरे शोध-प्रबन्ध, भावरङ्ग-लहरी : एक समीक्षात्मक अध्ययन (साहित्य, सङ्गीत एवं नृत्य के सन्दर्भ में) के द्वितीय अध्याय 'रचनाकार का व्यक्तित्व और कृतित्व' का परिवर्धित संस्करण है, जिसे मूलतः सन् २००६ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग से पञ्जीकृत होकर पी०एच०डी० की उपाधि हेतु प्रस्तुत किया गया था।

शोध-प्रबन्ध के उक्त अध्याय में प्रस्तुत सम्बद्ध विषय के विस्तार के अतिरिक्त इस पुस्तक में छाया-चित्रों के माध्यम से पू० बापूजी के शालेय-जीवन से लेकर अब तक के जीवन की महत्त्वपूर्ण घटनाओं को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। इसके अतिरिक्त परिशिष्ट-१ तथा परिशिष्ट-२ के अन्तर्गत विशेष सामग्री प्रस्तुत की है। इस प्रकार शोध-प्रबन्ध में प्रस्तुत सामग्री से इतर अन्य अनेक महत्त्वपूर्ण जानकारियों से समन्वित कर इसे पूर्णतया नवीन कलेवर प्रदान किया है।

उक्त सामग्री को पुस्तक रूप में प्रकाशित करने हेतु जिन गुरुजनों तथा स्नेही स्वजनों का मार्गदर्शन एवं सौहार्द्रपूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है उन सभी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन अपना परम कर्तव्य समझंती हूँ।

सर्वप्रथम अपने शोध-कार्य की निर्देशिका प्रो० पुष्पा अग्रवाल के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने शोध-प्रबन्ध लिखते समय तो मेरा मार्गदर्शन किया ही है, बाद में भी उसे प्रकाशित कराने हेतु सदैव प्रेरित करती रही हैं एवं समय-समय पर इस दिशा में मेरे कार्य की प्रगति की जानकारी लेती रही है। डॉ० उर्मिला शर्मा के प्रति मेरा सादर प्रणाम जिन्होंने शोध-कार्य के दौरान मुझे अध्ययन हेतु 'छन्दः प्रभाकर' उपलब्ध कराया तथा पुस्तक का कार्य आरम्भ करने के पूर्व भी आवश्यक सलाह दी जिसका मुझे पर्याप्त लाभ हुआ है। समय-समय पर संस्कृत ग्रन्थों से श्लोकों का सन्दर्भ ढूँढने एवं श्लोकों का सही अन्वय कर अर्थ समझने में अपने जीजाजी प्रो० कृष्णकान्त शर्मा (प्रोफेसर, सांख्य योग तथा पूर्व सङ्काय-प्रमुख संस्कृतविद्या-धर्मविज्ञान सङ्काय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) से मुझे पर्याप्त सहायता मिली है। पुस्तक का शीर्षक तय करने में भी उन्होंने उचित सुझाव दिये हैं। एतदर्थ विभिन्न प्रकार की व्यस्तताओं के बीच मेरे लिए समय निकालने हेतु उनके प्रति हार्दिक धन्यवाद् ज्ञापित करती हूँ।

जीवन-वृत्त लिखते समय विभिन्न घटनाओं की प्रामाणिक जानकारी तो स्वयं सौ० माँ और पू० बापूजी से मिली है। सभी भाई-बहनों सौ० जीजी (डॉ० स्वरवन्दना शर्मा), प्रिय सौ० गीता, प्रिय राहुल, प्रिय विभास तथा प्रिय सौ० भैरवी से मुझे विभिन्न सामग्री (पुराने छाया-चित्र, लेख, स्मारिकाएँ) खोजने तथा पुराने संस्मरण याद करने में पर्याप्त सहायता मिली है। पुस्तक प्रामाणिक हो और अधिक से अधिक सामग्री सङ्कलित हो सके इसके लिए सभी ने निजी रुचि से समय-समय पर चाहे फोन से सम्पर्क करके चाहे डाक द्वारा मुझे वाञ्छित सामग्री उपलब्ध कराई है। पुस्तक का अधिकांश मैंने सौ. माँ, सौ. जीजी और चि० राहुल को दिखाया है तथा उनके सुझाव से आवश्यक संशोधन भी किया है। इन सब के तत्पर एवं प्रेमपूर्ण सहयोग के बिना इतनी सामग्री जुटा पाना मेरे वश का नहीं था। अतः पुस्तक-प्रकाशन का श्रेय और आनन्द सबके साथ बाँटना चाहती हूँ।

प्रो० सत्यभान शर्मा (पूर्व सङ्काय-प्रमुख, सङ्गीत एवं कला सङ्काय, दयालबाग विश्वविद्यालय, आगरा,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रो० कमलेश दत्त त्रिपाठी (Emeritus Professor, धर्मागम विभाग, संस्कृतविद्या धर्मविज्ञान सङ्काय, पूर्व सङ्कायप्रमुख, संस्कृतविद्या धर्मविज्ञान सङ्काय, का०हि०वि०वि०, पूर्व-निदेशक, कालिदास अकादमी, उज्जैन, परामर्शदाता आई०जी०एन०सी, वाराणसी तथा बापूजी की गुरुबहन तथा प्रसिद्ध वॉयलिन वादिका (पूर्व सङ्काय प्रमुख, सङ्गीत एवं मञ्चकला सङ्काय, वाराणसी) 'पद्मभूषण प्रो० एन०राजम् के प्रति मैं प्रणामपर्वूक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ जिन्होंने मेरे अनुरोध पर अत्यन्त व्यस्तता के उपरान्त भी प्रस्तुत पुस्तक के लिए अपनी शुभाशंसा भेजकर इसकी गरिमा बढ़ाई है।

लङ्का स्थित जे०के०स्टूडियो के श्री जितेन्द्र खनेजा के प्रति विशेष धन्यवाद जिन्होंने अपने लैब के श्री० मनीष को मुझे उपलब्ध कराया। श्री मनीष ने अत्यन्त धैर्य से सारे छाया-चित्र तथा परिशिष्ट-२ की अधिकांश सामग्री (मानपत्र तथा लेख आदि) को स्कैन किया। वे साधुवाद के पात्र है।

संस्कृति : शोध एवं प्रकाशन के प्रकाशक प्रो. दीनबन्धु पाण्डेय के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ, जिन्होंने प्रकाशन के दौरान सारी सामग्री को ध्यानपूर्वक पढ़ा एवं मुझे कुछ एक अंशों को बढ़ाने का सुझाव दिया, जिससे इस पुस्तक की गरिमा बढ़ी है। 'महिला महाविद्यालय' के बॉटनी विभाग के श्री छोटई को प्रूफ लाने-पहुँचाने के लिए धन्यवाद्। आदर्श आफ्सेट के श्री मङ्गलेश्वरधर द्विवेदी को मुद्रण कार्य एवं पुस्तक का मुख्य पृष्ठ तैयार करने हेतु धन्यवाद्।

अपने पति प्रो. सुधाकर भट एवं पुत्र चि. विनायक को धन्यवाद् देकर सम्बन्ध की सहज आत्मीयता को औपचारिकता का आवरण नहीं देना चाहती, जिन्होंने पुस्तक प्रकाशन के दौरान गृहस्थी के कार्यों में हाथ बँटाकर मेरे मानसिक तथा शारीरिक श्रम को कम करने में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष द्विविध सहयोग किया। ईश्वर से दोनों के स्वस्थ एवं सुदीर्घ जीवन हेतु प्रार्थना करती हूँ।

अन्त में परमपिता परमेश्वर के चरणों में कोटिशः नमन, जिनके अनुग्रह से ही अनेक विघ्न-बाधाओं के होते हुए भी यह कार्य पूर्ण हो सका।

लयलीना भट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आत्माभिव्यक्ति

अपने पूज्य बापू जी पं. बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग' के व्यक्तित्व का अंश लिखते समय यह अनुभव हुआ कि जिनकी वात्सल्यपूर्ण किन्तु अनुशासनयुक्त छत्रछाया में बचपन बीता, जिनका प्रतिक्षण का जीवन अन्त्यन्त निकट से देखा, जिन्हें विद्यार्थियों से आदर पाते देखा तथा सङ्गीत के क्षेत्र में मान-सम्मान एवं प्रतिष्ठा अर्जित करते हुए देखा, उनकी सहजता एवं सादगीपूर्ण व्यवहार के कारण ही शायद हम उनकी महानता का आकलन नहीं कर सके। अपनी उपलब्धियों से वे हर्षित अवश्य हुए, उत्साहित हुए किन्तु अहङ्कार से ग्रस्त नहीं हुए। निज के अभ्यास और महाविद्यालय में शिक्षा के उपरान्त भी उन्होंने बहुत काम किया। दृष्टिबाधा होते हुए भी समाज-सेवा के साथ-साथ अपने रचना-सङ्ग्रह 'भावरङ्ग-लहरी' के तीन भागों तथा दादा जी (पं. ओम्कारनाथ जी) की पुस्तक 'सङ्गीताञ्जलि' के चार भागों का संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण प्रस्तुत करना आसान काम नहीं। रचना करना और उसे सिखाना एक बात है, किन्तु प्रकाशन के लिए स्वरलिपि लिखवाना फिर उन्हें पढ़वाकर सुनना बहुत धैर्य का काम है। किसी भी विषय की सिद्धान्तविषयक पुस्तक तथा सङ्गीत की प्रायोगिक पक्ष की पुस्तक के प्रकाशन में बहुत अन्तर है।

गुणग्राहकता उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अङ्ग है। एक सङ्गीतकार होने के नाते गुणी कलाकारों के प्रति आदरभाव तथा एक शिक्षक के रूप में कमजोर से कमजोर विद्यार्थी में भी किसी विशेष गुण को पहचान कर उचित सलाह देकर उसके विकास का मार्ग प्रशस्त करना उन्हें सदैव इष्ट रहा।

वे औचित्य-विचार के परम आग्रही हैं। कुछेक संस्कृत सूक्तियों में उनकी वेद-वाक्य के समान दृढ़ आस्था है। वे स्वयं आचरण में उसका ध्यान रखते हैं तथा दूसरों (बच्चे तथा शिष्यवर्ग) को भी उसपर अमल करने का निर्देश देते रहते हैं। सामान्य चर्चा के बीच भी उन्हें **'उपायं चिन्तयेत् प्राज्ञः अपायमपि चिन्तयेत्', 'यद्यपि सिद्धं लोकविरुद्धं नाचरणीयं नाचरणीयम्', तथा 'यदि नो संस्कृता वाणी संस्कृताध्ययनेन किं'** आदि कहते हुए और समझाते हुए सुन सकते हैं।

यह मेरा परम सौभाग्य है कि उनकी सन्तान होने के नाते सङ्गीत का संस्कार मिला। उठते-बैठते कर्ण-कुहरों में स्वर एवं सङ्गीत-चर्चा ही पड़ती रही। घर में थोड़ा बहुत सीखने के साथ 'महिला महाविद्यालय' से स्नातक की पढ़ाई करते समय सङ्गीत (गायन) विषय में आनर्स लिया। उस समय श्री सी.वी. चन्द्रशेखर जी वहीं, (महिला महाविद्यालय का.हि.वि.वि) नृत्य (भरतनाट्यम्) की कक्षाएँ लेते थे। मुझे बचपन से नृत्य में रुचि रही अतः नृत्य सीखने का इतना अच्छा संयोग देखकर माँ-बापू जी ने फीस जमा करवा दी। मेरा सौभाग्य है कि उनके (चन्द्रशेखर जी) निर्देशन में मैंने नृत्य के त्रिवर्षीय डिप्लोमा का पाठ्यक्रमपूर्ण किया। वात्सल्य और अनुशासन का जो सन्तुलन घर में था वही अनुभव नृत्य की कक्षाओं में भी रहा। सन् १९८० में मेरे नृत्यगुरु श्री चन्द्रशेखर जी वड़ोदरा के महाराज सयाजीराव गायकवाड़ विश्वविद्यालय के Faculty of Performing Arts के नृत्य-विभाग में प्रोफेसर के पद पर नियुक्त होकर गये, जिससे मेरी नृत्य-शिक्षा थोड़ी बाधित हुई। अतः बापू जी ने इस बात का विशेष ध्यान रखा कि जब-जब उनका गुजरात जाने का कार्यक्रम बनता हमें जरूर साथ ले जाते। वो अपने काम के अनुसार भावनगर,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अहमदाबाद या सूरत जाते और हम वड़ोदरा में ऋषि काका या गुरु जी के यहाँ रहते। हम गुरु जी के सम्पर्क में रहें और आगे कुछ सीख सकें, इसका उन्हें ध्यान था, जिसका हमें बहुत लाभ हुआ।

बापूजी ने और माँ ने सीमित साधनों में अत्यन्त जीवट और कठिन परिश्रम से जीवन की विषमताओं को स्वाभाविक बनाते हुए हम बच्चों को सभी सुख-सुविधाएँ उपलब्ध कराईं, साथ ही समय को देखते हुए बेटी-बेटे का फ़र्क न करके सबकी औपचारिक शिक्षा के प्रति सचेत रहे। आज अपने जीवन का अर्द्धशतक पार कर लेने पर आत्मालोचन की जो भी समझ आई है और बीती बातों का विचार करते हैं, तब लगता है कि साधन एवं सुविधा सम्पन्न होकर भी हम उनके कर्तृत्व का दशमांश भी नहीं छू पाये हैं।

बापूजी के जीवन के कई प्रसङ्गों को शब्दबद्ध करने का प्रयास किया है, फिर भी काफी कुछ छूट गया है, लेकिन स्थान की मर्यादा का पालन भी आवश्यक है। प्रस्तुत पुस्तक को केवल व्यक्तित्व और कृतित्व पर केन्द्रित किया है, किन्तु उनके रचना-सङ् ग्रह 'भावरङ्ग-लहरी' का साहित्य, सङ्गीत एवं नृत्य के सन्दर्भ में जो अध्ययन मैंने शोधप्रबन्ध में प्रस्तुत किया है, उसका प्रकाशन शीघ्रातिशीघ्र करने की इच्छा है। अच्छा साहित्य पढ़ने तथा अच्छा सङ्गीत सुनने का जो संस्कार हम सब बच्चों को मिला है, उसे सार्थक कर सकूँ इसके लिए ईश्वर की अनुकम्पा के साथ ही गुरुजनों के आशीर्वाद और स्वजनों के सम्बल की आकांक्षिणी हूँ।

अन्त में सङ्गीत-जगत् की महान विभूति तथा सहजता और निर्मल व्यक्तित्व की मूर्ति अपने बापूजी तथा दृढ़ सङ्कल्प और कर्मठता की मूर्ति अपनी माँ से बचपन से लेकर अबतक की अपनी अनेकानेक त्रुटियों के लिए क्षमायाचना के साथ सश्रद्ध-नमन।

-लयलीना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

समर्पण

पूज्य बापूजी पं० बलवन्तराय भट्ट

एवं

पूज्या सौ० माँ श्रीमती वसुन्धरा भट्ट

के प्रति

सादर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'स्वर-ताल-पद'

के शिल्पी

'पद्मश्री' पं० बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग'
(व्यक्तित्व एवं कृतित्व)

विषयानुक्रमणिका

रचनाकार का व्यक्तित्व १-५८

पं. बलवन्तराय भट्ट : एक व्यक्ति के रूप में (जीवन परिचय) १

जन्म एवं बाल्यकाल १

परिवेश ३

शालेय शिक्षण ३

- विक्टोरिया मेमोरियल स्कूल फॉर द ब्लाइंड : एक परिचय
- विद्यालय की प्रवृत्तियाँ
- विद्यालय की प्रवृत्तियों में बलवन्तराय की भागीदारी
- भाषा ज्ञान का विस्तार
- बलवन्तराय के व्यक्तित्व को रेखाङ्कित करने वाले शालेय-जीवन के कुछ महत्त्वपूर्ण प्रसङ्ग
- बलवन्तराय को 'सङ्गीताचार्य' बनाने में भाभासाहब की भूमिका

सङ्गीत का विशिष्ट शिक्षण ९

- पं० ओम्कारनाथ ठाकुर के शिष्यत्व में
- हिन्दी साहित्य से परिचय
- उपाधि ग्रहण
- 'सङ्गीताचार्य' पं० बलवन्तराय भट्ट
- गुरुवर्य पं० ओम्कारनाथ ठाकुर के व्यक्तित्व का प्रभाव

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में नियुक्ति एवं सेवानिवृत्ति १५

- वाद्यों के बहुज्ञ : भट्ट जी
- कर्तव्यनिष्ठ शिक्षक
- विश्वविद्यालय की गतिविधियों में सक्रिय सहयोग
- वर्तमान आवास

पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह १७

- गृहस्थ जीवन में प्रवेश
- परिवार
- सादगीभरा पारिवारिक जीवन

देश-विदेश भ्रमण २०

- गुरुजी के साथ भ्रमण का विवरण
- स्वतन्त्र रूप से भ्रमण का विवरण
- 'भैयाजी' के सहयोगी कलाकार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आध्यात्मिक रुचि एवं सत्सङ्ग २४
समाज सेवा २७
जीवन के कुछ विशिष्ट स्मरणीय प्रसङ्ग २८
– 'श्री कला सङ्गीतभारती' की स्थापना की पूर्वपीठिका
– स्वतन्त्र भारत के स्वर्णिम प्रभात में 'वन्दे-मातरम्' के दिव्य गायन के साक्षी
– 'श्री कला सङ्गीत भारती' की विशेष प्रस्तुतियाँ
– 'प्रणव-प्रसाद' में गुरुजी का आनन्दोद्गार 'शिष्याद् इच्छेत् पराजयम्'
– नाट्याचार्य पृथ्वीराज कपूर के स्नेहपाश में
– 'वन्दे-मातरम् शताब्दी समारोह' में 'वन्दे मातरम्' का गायन
– अमेरिका प्रवास से लौटते समय भावभीनी विदाई
सम्मान एवं पुरस्कार ३२
पं० बलवन्तराय भट्ट : एक 'वाग्गेयकार' के रूप में ३७
– 'वाग्गेयकार' की परिभाषा
– 'वाग्गेयकार' के लक्षणों के आधार पर 'भावरङ्ग' जी की रचनाओं का आकलन
'भावरङ्ग' का कृतित्व ५९-८०
मातृभाषा गुजराती में काव्य-सृजन ५९
कृति (भावरङ्ग लहरी) का महत्त्व : सामाजिक एवं ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में ६१
– शृङ्गारिक पदों की अधिकता
– गेय पदों में अशुद्ध पाठ की समस्या
– पदों में पाठगत अशुद्धि का कारण
– गेय पदों में पाठ-संशोधन की चेतना
– अशुद्ध पाठ के साथ चली आ रही कुछ बन्दिशों के उदाहरण
– मौखिक परम्परा के कारण एक ही पद के अनेक पाठ-भेद
– शृङ्गारिक रचनाओं के विकल्प का बीजारोपण
– 'भावरङ्ग लहरी' अति शृङ्गारिक पदों का विकल्प
– पं० ओम्कारनाथ ठाकुर की दृष्टि में कृति का महत्त्व
नृत्य की दृष्टि से 'भावरङ्ग लहरी' की उपादेयता ६८
कृति (भावरङ्ग लहरी - प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय भाग) की विषयवस्तु ७४
– विविध बन्धों में शास्त्रीय सङ्गीतोपयोगी रचनाएँ
– सङ्गीत-शास्त्र सम्बन्धी गहन विषयों पर परिचयात्मक लेख
– राग-विवरण एवं चलन तथा सङ्गीत-लिपि चिह्न-परिचय
– भावरङ्ग लहरी के तीनों भागों में पृथक्-पृथक् प्रकाशित सामग्री
– भावरङ्ग लहरी : प्रथम भाग
– भावरङ्ग लहरी : द्वितीय भाग
– भावरङ्ग लहरी : तृतीय भाग
कृति (रचनाओं) का वर्ण्य विषय ७६
पं० बलवन्तराय भट्ट के जीवन की झलकियाँ : चित्रों के माध्यम से ८१-१५२
(बलवन्तराय, 'सङ्गीताचार्य' श्री बलवन्तराय भट्ट से 'पद्मश्री' पं० बलवन्तराय भट्ट', भैयाजी, गुरुजी, बापूजी, नाना, दादा)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिशिष्ट-१ १५३-१७६

षड्ज - बलवन्तराय जी के कार्यक्रमों में प्रस्तुतिगत वैशिष्ट्य

रिषभ - गुरु एवं सङ्गीत के प्रति निष्ठा

गान्धार - विद्यापुत्र होने के दायित्व का निर्वाह

मध्यम - 'भावरङ्ग लहरी' की बन्दिशों के प्रस्तोता : गायक, वादक, नर्तक

पञ्चम - 'द्रुतगीतविनिर्माणम् ' के उदाहरणस्वरूप स्नेही कलाकारों एवं शिष्यवर्ग की सूची जिनके लि 'भैयाजी' या 'गुरुजी' ने उनकी आवश्यकतानुसार उनकी फर्माइश से बन्दिशें बनायीं।

धैवत - भैयाजी के हितैषी, स्नेही मित्र एवं शिष्य परिवार

निषाद - बलवन्तरायजी की विगत १२ पीढ़ियों के नाम

परिशिष्ट-२ १७७-२४९

षड्ज - बलवन्तरायजी द्वारा विभिन्न अवसरों पर लिखे गए लेख जो भावरङ्ग-लहरी तृतीय भाग तथा विभिन्न स्मारिकाओं में प्रकाशित हैं।

रिषभ - स्वर्ण-जयन्ती के अवसर पर शिष्यों, मित्रमण्डल एवं काशी के सङ्गीतानुरागियों द्वारा प्रदान किए गए मानपत्र

गान्धार - स्वर्ण-जयन्ती तथा अमृतोत्सव के अवसर पर स्नेही विद्वान् मित्रों श्री एस०आर० कण्णन् द्वारा तमिळ तथा पं० रतिनाथ झा द्वारा रचित संस्कृत में प्रशस्ति तथा उसका हिन्दी अनुवाद

मध्यम - अमृत महोत्सव के त्रिदिवसीय समारोह का विवरण

- बलवन्तराय जी की बन्दिशों पर हुई नृत्य-प्रस्तुतियों की प्रेस रिपोर्ट

पञ्चम - श्रीमती वसुन्धरा भट्ट के हस्तलेख में 'भावरङ्ग लहरी' की डायरी के कुछ पृष्ठ -

धैवत - बलवन्तरायजी की रचनाओं के माध्यम से उनके साङ्गीतिक एवं साहित्यिकयोगदान को रेखाङ्कित करते हुए प्रस्तुत किए गए शोध-प्रबन्धों का विवरण

निषाद - बलवन्तरायजी की प्रकाशित कुछ सी०डी० का विवरण

तार-षड्ज- का.हि.वि.वि. में पं. बलवन्तराय भट्ट के नाम पर दृष्टिबाधित छात्रों को दिये जाने वाले स्वर्ण पदक का विवरण।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची - २५०-२५१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रचनाकार का व्यक्तित्व

आप्तजनों के बीच 'भैयाजी' सम्बोधन से सम्बोधित होने वाले तथा भारत सरकार द्वारा 'पद्मश्री' के अलङ्करण से विभूषित पं. बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट सङ्गीत-जगत् में 'भावरङ्ग' उपनाम से जाने जाते हैं। 'भावरङ्ग-लहरी' इनकी मौलिक रचनाओं का सङ्ग्रह है, जो कि तीन भागों में (प्रथम भाग-१९६४[१], द्वितीय भाग १९७४ एवं तृतीय भाग १९८२) प्रकाशित है और उत्तर-भारतीय शास्त्रीय-सङ्गीत के विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं कलाकारों के लिए अत्यन्त उपयोगी है।

अनेकानेक बन्दिशों के रूप में मौलिक शब्द-रचना के साथ भावानुकूल राग-ताल का संयोजन कर साहित्य एवं सङ्गीत दोनों की सर्जना करते हुए एक रचनाकार के रूप में सहज ही 'वाग्गेयकार' का बिरुद प्राप्त किया है। साहित्य एवं सङ्गीत दोनों ही विधाएँ उच्चकोटि के सर्जन हेतु रचनाकार से एकान्तिक साधना की अपेक्षा रखती हैं। सङ्गीत की विधिवत् शिक्षा ग्रहण कर सङ्गीत-सर्जना की बात स्वाभाविक लगती है, किन्तु साहित्य, विशेष रूप से हिन्दी-साहित्य की औपचारिक शिक्षा ग्रहण न करके भी भट्ट जी ने सङ्गीत के साथ साहित्य-सर्जना में वह उत्कृष्टता कैसे अर्जित की जिस कारण वे विशिष्ट वाग्गेयकार के रूप में जाने जाते हैं, यह कौतूहल का विषय है।

'भावरङ्ग' जी की रचनाओं के श्रवण से सङ्गीत-रसिक समुदाय के साथ ही प्रबुद्धवर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले साहित्यकारों की श्रवणेन्द्रियाँ भी तृप्त होती हैं। ऐसी अनमोल सहस्राधिक रचनाएँ करने वाले 'पद्मश्री' पं. बलवन्तराय भट्ट के व्यक्तित्व और उस व्यक्तित्व से अभिन्न रूप से जुड़े उनके कृतित्व को जानने की जिज्ञासा होना नितान्त स्वाभाविक है। प्रस्तुत ग्रन्थ इसी जिज्ञासा के समाधान का विनम्र प्रयास है। यद्यपि जीवन के प्रत्येक अनुभव एवं घटनाओं को शब्दबद्ध करना सम्भव नहीं है तथापि उनके व्यक्तित्व-निर्माण में कारणभूत अधिकाधिक महत्त्वपूर्ण घटनाओं तथा सुहृद्जनों के प्रेमपूर्ण सहयोग का प्रसङ्गानुसार समावेश किया है।[२]

व्यक्तित्व का विश्लेषण दो दृष्टिकोणों से किया गया है। पहला, एक व्यक्ति के रूप में और दूसरा, उनके कार्यक्षेत्र के सन्दर्भ में, जिसके अन्तर्गत भट्टजी को एक सङ्गीतकार एवं साहित्यकार अर्थात् 'वाग्गेयकार' के रूप में देखा गया है। एक व्यक्ति के रूप में भट्टजी का जीवन-परिचय निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत प्रस्तुत है।

पं. बलवन्तराय भट्ट : एक व्यक्ति के रूप में (जीवन-परिचय)

जन्म एवं बाल्यकाल

गुजरात के भावनगर[३] में २३ सितम्बर सन् १९२१ के दिन श्री गुलाबराय पुरुषोत्तम भट्ट एवं सौ. हरकुँवर बा को दूसरी सन्तान के रूप में पुत्र-रत्न की प्राप्ति हुई, जिसका नाम उन्होंने बलवन्तराय रखा। गुलाबराय जी रेलवे की सामान्य नौकरी पर थे और परिवार काफी बड़ा था, अतः परिवार की आर्थिक स्थिति निम्न मध्यवर्ग की ही थी। गुलाबराय जी कविताएँ लिखते थे एवं माँ मधुर कण्ठ से लोकगीत गाती थीं। इसलिए बीजरूप में काव्य-प्रतिभा एवं सङ्गीत की प्रतिभा बालक ने पाई थी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

६ वर्ष की वय में स्थानीय राष्ट्रीय-विद्यालय में प्रवेश लिया, जहाँ बालपोथी (नर्सरी के समकक्ष) से लेकर कक्षा-४ तक शिक्षण की सुविधा थी। बाल-पोथी के अन्तर्गत कविताएँ, पहाड़ा तथा स्लेट पर गुजराती में अक्षरज्ञान तथा गिनती लिखना सीखने के कुछ समय बाद ही बलवन्तराय की नेत्र-ज्योति जाती रही और बाद की सारी पढ़ाई ब्रेल लिपि के माध्यम से हुई (कुछ ही वर्षों पूर्व ७५ वर्ष की अवस्था में उन्होंने १ से १० तक की गुजराती गिनती लिखी। उनका दुर्लभ हस्तलेख अमृतोत्सव की स्मारिका में सुरक्षित है)। बलवन्तराय बालवय से ही प्रखर मेधाशक्ति से सम्पन्न थे। विद्यालय में मात्र एक बार सुनकर ग्यारह का पहाड़ा (गुजराती में) सुनाना इसका एक छोटा उदाहरण है।

नेत्र-ज्योति रहते हुए जो अन्तिम घटना बलवन्तराय जी की स्मृति में अङ्कित है, वह है अपने रिश्ते की चचेरी बहन का विवाह, जिसमें वे अन्य बालकों के समान उत्साह-पूर्वक सम्मिलित हुए थे। उसके पश्चात् ही सन् २८ की गर्मी में उन्हें चेचक का भयङ्कर प्रकोप हुआ एवं माता-पिता समेत समस्त कुटुम्बीजनों को अपने हृदय पर पत्थर रखकर इस सत्य को स्वीकारना पड़ा कि नन्हें बालक को अब संसार को देखने-समझने के लिए पाँचों ज्ञानेन्द्रियों का वरदान प्राप्त नहीं है, क्रूर भाग्य ने दृष्टि छीन ली है और अब 'स्पर्श', 'श्रवण', 'घ्राण' और 'स्वाद' ही आगे की लम्बी जिन्दगी में उसके साथी होंगे। उक्त विवाह में मिले भेंट के कपड़े पिताजी ने अपने नेत्रहीन बच्चे को छूकर देखने दिए क्योंकि वह अब देख नहीं सकता था। बालक भी अचानक अपनी प्रवृत्तियों (खेल-कूद) पर लगे अप्रत्याशित प्रतिबन्ध से स्तम्भित हुआ, व्यथित हुआ। उसकी स्वयं की असमञ्जस पूर्ण मनःस्थिति तथा माता-पिता के दुःख का अनुमान कल्पनातीत है। नेत्र-ज्योति जाने के बाद अहमदाबाद के प्रसिद्ध नेत्र-विशेषज्ञ डॉ० अङ्कलेश्वरिया को भी बच्चे को दिखाया गया लेकिन उन्होंने सुधार की कोई आशा नहीं बताई।

बच्चे के अन्धकारमय भविष्य की कल्पना से मर्माहत माता-पिता को आशा की किरण दिखाई मामा श्री देवशङ्कर जेठालाल पण्ड्या ने। मामा अहमदाबाद में अध्यापक-प्रशिक्षण की पढ़ाई कर रहे थे। देश की विभिन्न शिक्षण-संस्थाओं के बारे में पढ़ते समय बम्बई स्थित 'विक्टोरिया मेमोरियल स्कूल फॉर द ब्लाइण्ड' का विवरण प्राप्त हुआ जो उन्होंने गुलाबराय जी के पास भेजा। गुलाबराय जी ने विद्यालय से पत्राचार करके विस्तृत विवरण मँगाया जिससे पता चला कि विद्यालय में ७ से २० वर्ष की वय तक के विद्यार्थियों को रखने का प्रावधान है। राष्ट्रीय विद्यालय में 'बाल-पोथी' के आगे का शिक्षण नेत्रहीनता के कारण बाधित हो गया था। जब बम्बई के विद्यालय की जानकारी मिली तो माँ को अपने बच्चे को इस स्थिति में अपने से इतनी दूर भेजने की कल्पना विकट लगी, लेकिन बच्चे के भविष्य को सँवारने की और कोई राह नहीं थी। पिताजी ने यह कहकर माँ को समझाया कि बेटा पढ़-लिखकर पण्डित बन जाएगा। 'मेरा बेटा पण्डित होकर आयेगा तो अपने शहर में उसका बहुत सम्मान होगा' कहकर माँ ने भारी मन से अपनी स्वीकृति दे दी और फिर बालक स्वयं भी पढ़ने-लिखने के प्रति उत्साहित था, अतः सन् १९२९ के अप्रैल महीने में पिता गुलाबराय जी बालक बलवन्तराय को को लेकर जन्मस्थान भावनगर से बहुत दूर बम्बई के विद्यालय पहुँचे। फाटक के अन्दर घुसते ही बरामदे में खड़े विद्यालय के मैनेजर श्री बहराम शाह ने बालक के छोटे कद को देखकर कहा 'अरे! यह तो बहुत छोटा है, यह यहाँ कैसे रहेगा?' उनका पहला ही वाक्य सुनकर पिताजी बहुत निराश हुए किन्तु फिर भी हिम्मत करके अन्दर गये और प्रिंसिपल श्री हरिप्रसाद छत्रपति से मैनेजर की असहमति की बात बताई, उन्होंने कहा 'आप चिन्ता मत करिए, मैं उन्हें समझा दूँगा', और बलवन्तराय को विद्यालय में प्रवेश मिल गया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिवेश

बम्बई के तारदेव इलाके में स्थित 'विक्टोरिया मेमोरियल स्कूल फॉर द ब्लाइण्ड' में प्रवेश मिलने के पूर्व भावनगर में आस-पास घर तथा बाहर दोनों ही जगह गुजराती ही बोलना और सुनना होता था। उस समय 'हिन्दी' के मात्र दो शब्दों से बालक का परिचय था। डाकिये के मुँह से सुने 'मालूम है' और 'क्या है?' के अलावा कुछ पता नहीं था। पड़ोस में रहने वाले सब लोग सामान्य काम-काज करने वाले थे जो घर-परिवार के सदस्यों के भरण-पोषण भर का कमाते थे। गुलाबराय जी उस समय भी कविता अवश्य लिखते होंगे, लेकिन नेत्र-ज्योति जाने के पूर्व तक, अर्थात् 'अन्ध-विद्यालय' (Blind School) में प्रवेश होने तक बलवन्तराय ने पिताजी को घर पर कविता बोलते हुए नहीं सुना था। माँ लोकगीत जरूर गाती थीं किन्तु किसी प्रतिभा, विशेष रूप से साहित्य, सङ्गीत अथवा अन्य ललित-कला सम्बन्धी गुणों के फलने-फूलने अथवा उचित दिशा-निर्देश की सम्भावना उस परिवेश में नहींवत् थी अथवा यों कहें कि उस वातावरण में ऐसी अपेक्षा करना ही अनुचित था।

यह प्रश्न मन में उठना स्वाभाविक है कि बालक बलवन्तराय में बीज रूप में स्थित साहित्य एवं सङ्गीत की प्रतिभा को निखार कर सामने लाने में कौन से प्रसङ्ग कारणभूत हुए? उन महत्त्वपूर्ण कारकों का उल्लेख इसी अध्याय में अन्यत्र यथास्थान किया गया है।

शालेय-शिक्षण

'विक्टोरिया मेमोरियल स्कूल फॉर द ब्लाइण्ड' में बलवन्तराय को कक्षा १ में प्रवेश मिला। यहाँ कक्षा ७ तक के शिक्षण की व्यवस्था थी। बलवन्तराय जी के व्यक्तित्व के विकास में इस विद्यालय की भूमिका अत्यन्त महत्त्वूपर्ण है। अतः विद्यालय और उसकी प्रवृत्तियों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है।

विक्टोरिया मेमोरियल स्कूल फॉर द ब्लाइण्ड : एक परिचय

इस विद्यालय में भिन्न-भिन्न प्रान्तों के विभिन्न आयु-वर्ग के विद्यार्थी छात्रावास[४] में रहते हुए शिक्षा ग्रहण करते थे। यहाँ अध्ययन के लिए आये छात्र से किसी तरह का शुल्क नहीं लिया जाता था। प्रवेश के समय रु. १०/- जमा (Deposit) के तौर पर लिए जाते थे, जो विद्यालय छोड़ते समय वापस होते थे। इसके साथ ही विभिन्न परीक्षाओं में अच्छे अङ्क मिलने पर पुरस्कार की राशि बच्चों को न देकर इकट्ठा होती थी जो उनके जमा (Deposit) पैसे के साथ जोड़कर वापस मिलती थी। (बलवन्तराय जी को सन् १९४१ में विद्यालय छोड़ते समय रू. ८९/- मिले थे) इसके अलावा शिक्षा, भोजन, कपड़े एवं छात्रावास में रहने की सब सुविधा निःशुल्क थी।

विद्यालय में शिक्षण का माध्यम गुजराती एवं मराठी था, विद्यार्थी अपनी आवश्यकतानुसार माध्यम चुन लेते थे। अनुशासन अत्यन्त कठोर था, समय से उठना, सोना, भोजन के पहले प्रार्थना में सम्मिलित होना, अपना बिस्तर समेटना आदि नियम से करना होता था।[५]

विद्यालय की प्रवृत्तियाँ

(अ) पढ़ाए जाने वाले विषय-गुजराती/मराठी, गणित, सङ्गीत (गायन, इसराज, तबला, हार्मोनियम, वॉयलिन, जल-तरङ्ग), सिलाई, बेंतकाम, मसाज एवं नवार बुनने का काम आदि।

अंग्रेजी-भाषा विषय के रूप में नहीं पढ़ाई जाती थी, किन्तु मेहरबान जी मास्टर अपनी रुचि से बच्चों को विलायत से आने वाली पत्रिकाएँ (Magazines) पढ़कर सुनाते थे और अर्थ समझाते थे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri.

(आ) विद्यालय में नियम से व्यायाम भी करवाया जाता था तथा नेत्रहीन बच्चे खेल सकें ऐसे खेल-कूद करवाए जाते। बच्चे गञ्जीफा[६] भी खेलते थे।

(इ) नियम से प्रतिदिन आधा घण्टा विद्यार्थियों को गुजराती तथा मराठी समाचार-पत्र पढ़कर सुनाया जाता था।

(ई) प्रत्येक शुक्रवार को मराठी, गुजराती और हिन्दी के भजन तथा शास्त्रीय-सङ्गीत की ध्वनि-मुद्रिका सुनाई जाती थी।

(उ) सङ्गीत की नियमित कक्षाओं के अतिरिक्त सीनियर विद्यार्थी प्रतिदिन शाम ७ बजे से ८ बजे तक १ घण्टा पुनरावृत्ति कक्षा (Revision Class) लेते थे।

(ऊ) प्रत्येक शनिवार को गुजराती एवं मराठी साप्ताहिक ब्रेल पत्रिका का प्रकाशन होता था।

(ए) लाइब्रेरी (कविता एवं कहानी की पुस्तकें)

(ऐ) आकाशवाणी के लिए रङ्गारङ्ग कार्यक्रम

इसके अतिरिक्त विद्यालय का महाराज निर्भय शङ्कर प्रत्येक रविवार को अच्छी कहानी की पुस्तकें पढ़कर सुनाता था। पीताम्बर रसोइया श्रीमद्भागवत सुनाता था। चपरासी समुद्र के किनारे तक सब बच्चों को घुमाने ले जाता था।

संक्षेप में समझें तो विद्यालय में नेत्र-ज्योति से वञ्चित तथा माँ-बाप एवं नाते-रिश्तेदारों के प्यार और सहानुभूति से कोसों दूर पड़ गये बच्चों को मात्र ब्रेल-लिपि (नेत्रहीनों द्वारा उपयोग में लाई जाने वाली लिपि जिसे वे उँगलियों के पोरों से छूकर पढ़ते हैं) सिखाने अथावा किताबी शिक्षा देने के अलावा एक अच्छा वातावरण देने की पूरी ईमानदार कोशिश रही जिससे भिन्न क्षमता या रुचि वाले बच्चों की प्रतिभा का भी विकास हो तथा वे स्वावलम्बी हो सकें, स्वयं की आजीविका कमा सकें। विकलाङ्गता की असहाय स्थिति होने पर भी वे परमुखापेक्षी होने की पीड़ा से बच सकें और सर्वोपरि समाज के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकें।

विद्यालय की प्रवृत्तियों में बलवन्तराय की भागीदारी

विद्यालय में रहते हुए बलवन्तराय ने गायन के अतिरिक्त इसराज, तबला, जलतरङ्ग, एवं हार्मोनियम बजाना सीखा था और इस कौशल का उपयोग अनेक विध करते रहे।

- ❖ विद्यालय की ओर से आकाशवाणी से प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों में भाग लिया जिसका विवरण निम्नवत् है-

१. सन् १९३३ के दिसम्बर माह में वाद्यवृन्द की प्रस्तुति में तबला वादन।

२. २८ जून १९३५ को स्वयं तबला बजाकर राग सोहिनी के छोटे ख्याल 'काहे अब तुम आए हो' का गायन।

३. सन् १९३६ में रङ्गारङ्ग कार्यक्रम में स्वतन्त्र जलतरङ्ग वादन।

जलतरङ्ग के साथ विद्यालय के तत्कालीन प्रबन्धक श्री रतनशा डी. भाभा की एक अत्यन्त हृदयस्पर्शी घटना बलवन्तराय जी के स्मृति पटल पर अङ्कित है। वे बताते हैं कि अभ्यास करते समय जलतरङ्ग के प्याले सरक जाते थे जिससे अत्यन्त कठिनाई होती थी। भाभा साहब ने इसे समझा और स्वयं एक लकड़ी का स्टैण्ड बनाकर उस पर कपड़ा बिछाया और प्याले के अगल-बगल कील ठोंकी। भाभा साहब के हृदय की विशालता का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुमान करने के लिए यह एक ही उदाहरण पर्याप्त है। वे विद्यार्थियों की हित-चिन्ता में उनके उत्कर्ष के लिए सदैव तत्पर रहे।

- १४ से १८ वर्ष की उम्र तक सीनियर विद्यार्थी के रूप में प्रतिदिन शाम ७ बजे से ८ बजे तक सङ्गीत की कक्षाएँ लेते रहे।
- वाद्यवृन्द के लिए गतें तैयार करते थे।
- विद्यालय की साप्ताहिक-पत्रिका 'सत्य-प्रकाश' का सम्पादन पाँच वर्षों तक किया।

गुजराती तथा मराठी भाषा में प्रत्येक शनिवार को 'ब्रेल' में पत्रिका निकलती थी। आरम्भ में गुजराती पत्रिका का नाम 'अरेबियन-आखला' था। गुजराती में 'आखला' का अर्थ होता है 'साँड़'। इसमें अधिकतर हास्य-प्रसङ्ग होते थे। इसमें छपने वाली सामग्री एकत्रित की जाती थी लेकिन 'ब्रेल' में लिखकर निकालने का जिम्मा किसी एक का होता था। बाद में पत्रिका का नाम 'सत्य-प्रकाश' रखा गया। बलवन्तराय के अलावा कभी-कभी अमृतलाल नाम के विद्यार्थी भी सम्पादन का कार्य करते थे। मराठी पत्रिका का नाम 'विजय-रङ्ग' बलवन्तराय ने रखा था।

'सत्य-प्रकाश' के प्रकाशन से सम्बन्धित एक घटना बलवन्तराय जी ने बताई-

उस समय श्री सोहराब मोदी चलचित्र-जगत् की प्रसिद्ध हस्तियों में से थे। वे एक बार विद्यालय देखने आये और उसके बाद प्रत्येक शनिवार को विद्यालय के १५ बच्चों को मुफ्त चलचित्र दिखाते थे। अपनी बारी आने पर बलवन्तराय 'नरसी भगत', 'सन्त ज्ञानेश्वर' और 'अमृत-मन्थन' आदि फिल्मों में जा पाये थे, लेकिन एक शनिवार को पत्रिका निकालने की प्रतिबद्धता के कारण 'सन्त तुकाराम' देखने (सुनने) नहीं जा पाए थे।

भाषा-ज्ञान का विस्तार-

विद्यालय में प्रवेश लेते समय बलवन्तराय केवल गुजराती भाषा से परिचित थे। विद्यालय में रहते-रहते तथा सहपाठियों के साथ छात्रावास में रहते हुए मराठी भाषा के शब्द भी कान पर पड़ते थे। आरम्भिक कुछ वर्ष तो विद्यालय परिसर में ही व्यतीत हुए, फिर कुछ वर्षों बाद जब विद्यालय के बाहर आना-जाना आरम्भ हुआ तब थोड़ी बहुत बम्बइया हिन्दी से भी परिचय हुआ। 'समान शीले व्यसनेषु सख्यम्' के अनुरूप बलवन्तराय की मैत्री भी ऐसे विद्यार्थियों से रही जो उन्हें उनकी रुचि के अनुरूप सामग्री (जानकारी) परोसते थे। लक्ष्मणराव देवरुखकर नामक महाराष्ट्रियन विद्यार्थी जाति से सोनार थे और उम्र में बलवन्तराय से बड़े थे, तथापि उनसे बलवन्तराय की मैत्री थी और वे भी उनके प्रति स्नेह रखते थे। देवरुखकर से बलवन्तराय को मराठी कवियों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त हुई थी।

सन् ३० में महात्मा गाँधी के आन्दोलन के दौरान हिन्दी गाना 'चरखा चला-चला के लेंगे, स्वराज लेंगे' सुना था। विद्यालय में सङ्गीत की कक्षाओं में यद्यपि हिन्दी गाने सीखते थे लेकिन उनके अर्थ मालूम नहीं थे, गाना याद कर लेते थे। अतः उस समय तक हिन्दी की विशेष समझ उत्पन्न नहीं हुई थी क्योंकि हिन्दी, भाषा के रूप में अध्ययन का विषय नहीं थी।

बलवन्तराय के व्यक्तित्व को रेखाङ्कित करने वाले शालेय-जीवन के कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण प्रसङ्ग -

विद्यालय की एक विशेषता यह थी कि पाठ्य-पुस्तकें कक्षा की मेज पर ही लगी रहती थीं। शङ्कर सोनी और बलवन्तराय की अनन्य मैत्री विद्यालय में प्रसिद्ध थी। सोनी बाद में साधु हो गये और शङ्कर भगत कहलाए।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कक्षा की नियमित पढ़ाई से अधिक जानने की अदम्य-लालसा के वशीभूत ये दोनों मित्र जब तीसरी कक्षा में पढ़ते थे तभी अपने खाली समय में चौथी और पाँचवीं कक्षा की पुस्तकें भी पढ़ चुके थे।

यहीं बलवन्तराय ने १३ वर्ष की वय में अपनी पहली गुजराती कविता लिखी और अमृतलाल प्रह्लादजी नामक विद्यार्थी (ये भी बलवन्तराय से वय में बड़े थे) को सुनाई। अमृतलाल के परिवार के लोग भाट-चारण थे और इनके एक रिश्तेदार श्री रघुनाथ ब्रह्मभट्ट 'रसकवि' की उपाधि से विभूषित थे, सो अमृतलाल को कविता का संस्कार परिवार से मिला था। बलवन्तराय जी की पहली गुजराती कविता निम्नवत् है जिसके भाव एवं भाषा अत्यन्त सरल हैं-

'करूँ विनती तने जगनाथ, विनय थी जोड़ी जुगल हूँ हाथ।
सुबुद्धि सर्वदा देजे, कुबुद्धि झट हरी लेजे।'

अमृतलाल यह सुनकर प्रसन्न हुए। बालमन की भावना से तथा प्रथम प्रयास के रूप में लिखी इन पंक्तियों के आगे अपनी पंक्तियाँ जोड़कर अमृतलाल ने कविता इस रूप में पूरी कर दी-

भक्ति आपी सुखी कर तूं, अखुट भण्डार भर ए तूं।
प्रभु तुझ मूर्ति ने धारूँ, रहो हरदम त्यां मन म्हारूँ।
निरन्तर नाम लइ तारूँ, करूँ सिद्ध कार्य हुं म्हारूँ।

इस तरह बालपन के इस प्रयास पर अपने स्नेही से उत्साह-वर्धन होना बलवन्तराय जी के विद्यालय के दिनों की स्मृतियों में विशेष है। इसके उपरान्त गुजराती में काव्य-लेखन का क्रम बना रहा और स्कूल से मिलने वाले श्रुतलेख (Dictation) के कागज़ों में से बचे ब्रेल के मोटे कागजों पर बलवन्तराय अपनी उद्भावनाओं को, अन्तःप्रेरणा से निःसृत भावनाओं को कील (ब्रेल लिपि की कलम) से उकेरते गये। ये ब्रेल के कागज अभी भी सुरक्षित हैं।[७]

विद्यालय में सप्ताह में दो दिन बुधवार एवं शनिवार को वाद्य की कक्षाएँ होती थीं। कक्षा में आधे घण्टे से अधिक तबला बजाने को नहीं मिलता था। छोटा होने के कारण विद्यार्थियों के हाथ में तबला-जोड़ी अभ्यास के लिए नहीं दी जाती थी और बलवन्तराय को तबला बजाने का बहुत अधिक चाव था, सो चुपचाप छत की मुँडेर पर ही अभ्यास करने लगे। यह बात जब भाभा साहब के कान पर पड़ी तो उन्होंने अपनी बेटी मीठा बहन की निजी तबला-जोड़ी तथा इसराज अभ्यास के लिए दिया। फिर बलवन्तराय प्रतिदिन नियम से डेढ़ घण्टे तबले का अभ्यास करने लगे। भाभा साहब विद्यालय के नियम का उल्लङ्घन नहीं करना चाहते थे, अतः बलवन्तराय की अपने अभ्यास के प्रति प्रतिबद्धता देखकर उन्होंने उसे सहायता करने का जो मार्ग खोजा वह अनुकरणीय है। बलवन्तराय को अभ्यास करने का कितना चाव था यह निम्न घटना से स्पष्ट होता है-

विद्यालय के सङ्गीत-शिक्षक श्री लक्ष्मणराव चौहान बीनकार भी थे। उन्होंने एक बार विद्यार्थियों को पखावज के गुणी कलाकार श्री कुदऊसिंह जी के अभ्यास की बात बताई। वे घर से दूर जङ्गल में रात ढाई बजे निकल जाते थे और पत्थर पर अभ्यास करते थे, साथ में पखावज लेकर नहीं जाते थे। इस बात से बलवन्तराय बहुत प्रभावित हुए और प्रातः जल्दी उठकर अभ्यास करना शुरू किया।

विद्यालय में रहते हुए गायन तथा अन्य वाद्यों की शिक्षा लेते हुए बलवन्तराय का सङ्गीत सीखने के प्रति रुझान एवं तत्सम्बन्धी प्रतिभा स्पष्ट उभरकर आई। विद्यालय में नियमित ध्वनि मुद्रिकाएँ सुनने के क्रम में वे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उ० फैयाज़ खाँ, उ० अब्दुल करीम खाँ, पं० नारायणराव व्यास एवं मास्टर वसन्त आदि का गायन सुन चुके थे। सङ्गीत के इतिहास में यह समय ऐसा था जब कुछेक हिन्दू कलाकारों के अलावा मुस्लिम कलाकारों का ही बोलबाला था। इसी समय विद्यालय के ही एक अन्य विद्यार्थी प्रभाकर कोलम्बेकर ने बलवन्तराय को पं. ओम्कारनाथ ठाकुर का नाम बताया और उनके गायन की प्रशंसा की। अपने समय के सभी हिन्दू-मुसलमान गायकों के बीच पण्डितजी शीर्ष स्थान पर प्रतिष्ठित थे और प्रचण्ड सूर्य के प्रकाश के समान ही उनके यशरूपी आलोक से सङ्गीताकाश प्रकाशित हो रहा था। फिर, अवकाश में बलवन्तराय अपने घर भावनगर गये। उनके घर के पास बाबूभाई व्यास नामक सज्जन रहते थे, जो सङ्गीतप्रेमी थे और स्थिति सम्पन्न थे। उनके पास कई कलाकारों की ध्वनि मुद्रिकाएँ थीं। वे जब अपने बरामदे में बैठकर ध्वनि मुद्रिकाएँ सुनते थे तो बलवन्तराय को उसका श्रवण-लाभ मिलता था। संयोग से एक बार ओम्कारनाथ जी के राग चम्पक एवं देशकार की ध्वनि मुद्रिका यहीं सुनने को मिली। युवावस्था का गायन। स्वरों का लगाव, कण्ठ का माधुर्य, चमकदार तानें, बलवन्तराय तो मन्त्रमुग्ध हो गये। अवकाश के बाद विद्यालय वापस आने पर समाचार-पत्रों में छपे पण्डित जी के सङ्गीत-विषयक गम्भीर चिन्तनपरक लेख पढ़कर किशोर बलवन्तराय के मन में उनका शिष्यत्व प्राप्त करने की इच्छा उपजी। लेकिन, उस विराट् व्यक्तित्व से सम्पर्क कैसे हो इस चिन्ता से वे कुछ अन्यमनस्क से रहने लगे।

विद्यालय के नियमित क्रियाकलापों के अतिरिक्त अवकाश के दिनों में जितने भी आयोजन होते उसमें दरी की बिछायत, दो दरियों के बीच कलाकारों के बैठने हेतु कालीन तथा कुर्सी-टेबुल आदि लगाने की व्यवस्था बलवन्तराय अपनी रुचि से, अत्यन्त व्यवस्थित रूप से, स्वयं ही करते थे। कुछ समय से इस कार्य में आई शिथिलता को भाभा साहब ने भाँपा और कारण जानना चाहा। बलवन्तराय ने बताया कि आगे सङ्गीत की शिक्षा पण्डित जी से लेना चाहते हैं किन्तु कोई संयोग नहीं बन रहा है। उसकी सङ्गीत सीखने की अदम्य लालसा, धैर्य और परिश्रमशीलता से सुपरिचित भाभा साहब बोल पड़े 'अच्छा! निन्यानबे प्रतिशत कोशिश मैं करूँगा, आगे एक प्रतिशत तुम्हारा भाग्य।'

और सचमुच, बलवन्तराय के ऊपर असीम स्नेह रखने वाले सदाशयी श्री रतनशा डी. भाभा कृतसङ्कल्प हो उचित अवसर तलाशने लगे। अचानक एक बार पण्डित जी से ट्रेन में मुलाकात हुई और उन्होंने अपने विद्यालय के नेत्रहीन विद्यार्थी की साङ्गीतिक प्रतिभा एवं उनसे शिक्षा लेने की इच्छा का उल्लेख किया। फिर २३ सितम्बर सन् १९३७ को भाभा साहब बलवन्तराय को लेकर पण्डित जी के खेतवाड़ी मेन रोड स्थित घिया बिल्डिंग में मिलने गये। उस दिन गुरुजी आरम्भिक कक्षा को राग भूपाली सिखा रहे थे। सिखाना हो जाने पर वे बलवन्तराय को सुनना चाहते थे, किन्तु गला खराब होने के कारण उस दिन उसने दिलरुबा पर राग गौड़ सारङ्ग सुनाया। सुनने के बाद उनकी प्रतिक्रिया थी 'हाथ मीठा है', लेकिन उसे विद्यार्थी के रूप में लेंगे या नहीं, इस बारे में उनका मन्तव्य पता नहीं चल सका और वे दोनों लौट आये।

इसी बीच पिता श्री गुलाबराय जी भी ओम्कारनाथ जी को इसी आशय का पत्र लिख चुके थे, किन्तु बात कुछ आगे नहीं बढ़ी। इधर, बलवन्तराय ने अपने पिता गुलाबराय जी को २३ सितम्बर के दिन पण्डित जी के यहाँ होकर आने की बात पत्र में लिखी और उसका भी सङ्केत किया कि अभी पण्डित जी से कोई उत्तर नहीं मिला है। मन में यह शङ्का थी कि उस महान् सङ्गीतकार का सान्निध्य-लाभ होगा या नहीं? उत्तर में पिताजी ने अपने पुत्र को ढाढ़स बँधाते हुए ये पंक्तियाँ लिखीं-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'सूरज फरे चन्दा फरे ग्रह-गण बधाँ फरता दिसे।
नूतन-दिने गुरु ने नमे आशीष फरती ना दिसे।।'

कुछ दिनों बाद भाभा साहब पुनः एक बार पण्डित जी के पास उनका आशय जानने गये, लेकिन बलवन्तराय सौराष्ट्री है जानकर पण्डित जी ने उसे शिष्य स्वीकार करने की बात सर्वथा अस्वीकार कर दी।[८] विशेष रूप से सौराष्ट्रियों के प्रति वे अपने पिछले अनुभवों के कारण पूर्वाग्रह-ग्रस्त थे, क्योंकि कुछ सौराष्ट्री विद्यार्थी योग्य होते हुए भी उनके कठोर अनुशासन एवं परिश्रम की कसौटी पर खरे नहीं उतरे थे और बीच में छोड़कर चले गये थे। भाभा साहब के विश्वास दिलाने पर भी कि बलवन्तराय अत्यन्त परिश्रमी एवं धैर्यवान् है, आपका पाठ्यक्रम पूरा करेगा, पण्डित जी उसे शिष्य के रूप में स्वीकार करने को तैयार नहीं थे। अन्ततः अन्तिम उपाय के रूप में भाभा साहब ने अपना मस्तक पण्डित जी के चरणों पर रख दिया और बोले 'जब तक आप बलवन्तराय को स्वीकार नहीं करेंगे, मैं इसे नहीं उठाऊँगा।' एक सामान्य परिवार के नेत्रहीन किशोर हेतु, कोई पारिवारिक सम्बन्ध न होने पर भी, किसी तरह के व्यक्तिगत लाभ की सम्भावना न होने पर भी, मैनेजर के पद का गर्व न रखते हुए सहृदयता की मूर्त्ति यह पारसी सज्जन कितने विश्वास के साथ एक विद्यार्थी की संस्तुति कर रहे हैं, यह देखकर पण्डित जी को अपने बालपन के दिन स्मरण हो आये (उन्हें भी उनके गुरुजी सङ्गीतावतार पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी के पास भेजने वाले सज्जन श्री शापुरजी मञ्चेरजी डूँगाजी पारसी ही थे) और वे भावुक हो उठे। विनती करने के भाभा साहब के सर्वथा अनूठे एवं अप्रत्याशित ढङ्ग ने उनके हृदय को झकझोर डाला एवं उन्होंने सौराष्ट्र के लोगों के प्रति अपने पूर्वाग्रह को छोड़ते हुए बलवन्तराय को अपने शिष्यत्व में लेने की स्वीकृति दे दी। इस प्रकार भाभा साहब के सत्प्रयासों से बलवन्तराय के लिए भारतवर्ष के श्रेष्ठ सङ्गीतकार एवं अन्यतम कलाकार के चरणों में गहन एवं विशिष्ट शिक्षण लेने का मार्ग प्रशस्त हुआ।

बलवन्तराय को 'सङ्गीताचार्य' बनाने में भाभा साहब की भूमिका

१ मार्च सन् १९३३ में 'विक्टोरिया मेमोरियल स्कूल फॉर द ब्लाइण्ड' (Victoria Memorial School for the Blind) के नये मैनेजर के रूप में श्री रतनशा डी. भाभा ने कार्यभार सँभाला था। ये पारसी सज्जन अत्यन्त सहृदय एवं सङ्गीत-प्रेमी थे। इन्होंने सङ्गीत के क्रिया-कलापों को बहुत बढ़ावा दिया।[९] इन्हीं के कार्यकाल में 'ब्लाइण्ड स्कूल' (Blind School) के कार्यक्रम अनेक बार आकाशवाणी से प्रसारित हुये। (विवरण पिछले पृष्ठों में यथास्थान उल्लिखित है) बालक बलवन्तराय के प्रति इनके हृदय में असीम स्नेह था। उन्होंने बालक के अन्दर सङ्गीत सीखने की अदम्य लालसा को पहचाना था और बालक से किशोर होने तक की वय में विद्यालय के क्रिया-कलापों में उसकी सहभागिता, अनुशासित-जीवन, मर्यादित व्यवहार, शान्त-स्वभाव, धैर्य और परिश्रमशीलता से वे सुपरिचित थे, साक्षी थे, और यही कारण था कि उसके उत्कर्ष के लिए भाभा साहब जो कुछ कर सकते थे, उन्होंने किया। स्वयं भट्ट जी का मानना है कि उनके उपकार से कभी उऋण नहीं हुआ जा सकता। कई ऐसे प्रसङ्गों का उल्लेख पहले हो चुका है जिसमें भाभा साहब की हेतु-रहित छात्र-वत्सलता के दर्शन होते हैं। उनकी उदारता के आगे मात्र नतमस्तक हुआ जा सकता है। शब्द उनकी कृतज्ञता-ज्ञापन के लिए अक्षम जान पड़ते हैं जब यह समझ में आता है कि उन्होंने बलवन्तराय के भविष्य को सँवारने हेतु केवल उसे योग्य गुरु तक पहुँचाने भर की सहायता कर अपने कर्त्तव्य की इतिश्री नहीं समझ ली, वरन् एक शुभेच्छु अभिभावक के रूप में तारदेव स्थित 'ब्लाइण्ड स्कूल' (Blind School)से खेतवाड़ी मेन रोड स्थित घिया बिल्डिंग में पण्डित जी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के विद्यालय 'सङ्गीत-निकेतन' तक अपने नेत्रहीन-विद्यार्थी को लाने ले जाने हेतु व्यक्तिगत रूप से एक चपरासी अण्णा जी की व्यवस्था की और स्वयं उसे इस कार्य के लिए पाँच रुपए मासिक वेतन देते थे।

इस तरह पीछे के सारे प्रसङ्गों से एक बात स्पष्ट होती है कि बलवन्तराय जी पं. ओम्कारनाथ ठाकुर जी के 'सङ्गीत-निकेतन' की सीढ़ियाँ चढ़ सके इसका पूरा-पूरा श्रेय श्री रतनशा डी. भाभा साहब को है।

सङ्गीत का विशिष्ट शिक्षण

'नूतन दिने गुरु ने नमे आशीष फरती ना दिसे' गुलाबराय जी का कथन सत्य सिद्ध हुआ। पं. ओम्कारनाथ ठाकुर जी ने बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट को अपना शिष्य बनाने की स्वीकृति दे दी। पण्डित जी सरीखे महान् सङ्गीतकार की स्वीकारोक्ति सामान्य परिवार के नेत्रहीन किशोर के जीवन की बहुत बड़ी उपलब्धि थी।

पं. ओम्कारनाथ ठाकुर के शिष्यत्व में

पिताजी ने विद्यारम्भ हेतु माघ शुल्क तृतीया का शुभ-मुहूर्त निकलवा कर भेजा, तदनुसार गुरुवार ३ फरवरी १९३८ के दिन बलवन्तराय पिता जी के निर्देशानुसार सवा सेर मिश्री लेकर पण्डित जी के यहाँ गये। फूल-माला अर्पित की एवं गुरुजी को साष्टाङ्ग प्रणाम किया। गुरुजी ने अपने इस नये शिष्य के सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखा। भाभा साहब ने उस ऐतिहासिक क्षण में अपने नेत्रहीन विद्यार्थी के हर्ष से उत्फुल्ल मुखमण्डल को देखा और परम सन्तोष अनुभव किया।[१०]

गुरुजी ने बलवन्तराय को सामूहिक कक्षा में द्वितीय वर्ष में बैठने की अनुमति दे दी। भाभा साहब उसकी साङ्गीतिक प्रतिभा से भली-भाँति परिचित थे अतः वे निराश हुए, बोले 'तुम्हें केवल सेकेण्ड इयर में लिया?' लेकिन किशोर ने बिना विचलित हुए उत्तर दिया 'कोई बात नहीं, मैं पूरा नया सीखूँगा।'

गायन के रु. ३/-और दिलरुबा के रु. ५/- इस प्रकार रु.८/- मासिक शुल्क पर शिक्षा आरम्भ हुई। पहले दिन राग हंसध्वनि का झपताल में निबद्ध ख्याल 'सुनिए ऊधो एक विनती हमारी' सीखा और वापस आने पर विद्यालय के अपने अनन्य मित्र शङ्कर जी को सीखा हुआ पद सुनाया और यह नित्य का क्रम बन गया। कक्षाएँ शाम ७ बजे से ८ बजे तक होती थीं और भाभा साहब की व्यवस्था के अनुसार अण्णा जी प्रतिदिन उन्हें गुरु-गृह तक ले जाते और वापस लाते। 'ब्लाइण्ड स्कूल' (Blind School) से गुरुजी का घर ३ मील की दूरी पर था। अतः ३ मील पैदल चलकर जाना तथा कक्षा के बाद आना यह क्रम बन गया। स्वभाव से परिश्रमी बलवन्तराय गुरुजी की दी हुई विद्या को अत्यन्त मनोयोग से ग्रहण करने लगे। भाभा साहब के वचन एवं विश्वास की रक्षा का दायित्व-बोध भी उन्हें सतत था। वर्षान्त में बलवन्तराय ने प्रायोगिक परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त किया। इसी समय की एक घटना है जो पं. ओम्कारनाथ जी ठाकुर की सहृदयता का परिचय देती है। श्री देवीदास मेहता नामक सज्जन पण्डित जी के परिचित थे, जो बलवन्तराय के परिवार के आर्थिक सङ्कट को जानते थे। उन्होंने पण्डित जी को बताया कि आपके विद्यालय का शुल्क जमा करने के लिए सम्भवतः बलवन्तराय की माँ को अपना मङ्गलसूत्र बेचना पड़ेगा। यह बात बलवन्तराय की अनुपस्थिति में हुई थी, अतः जब अगले माह वे रु० ८/- लेकर पहुँचे तो गुरुजी ने रु० २/- वापस करते हुए कहा कि तुम्हारी दो महीने की फीस हो गई, अर्थात् उन्होंने दिलरुबा की फीस माफ कर दी थी। कुछ समय बाद अपने शिष्य की योग्यता एवं निष्ठा देखकर उन्होंने पूरी फीस माफ कर दी।

सन् ३९ के अप्रैल माह में एक दिन कक्षा में गुरुजी ने तानों का अनुकरण करने को कहा। बलवन्तराय ने पूरी तैयारी के साथ तानों का अनुकरण किया। गुरुजी बहुत प्रभावित हुए और सामूहिक कक्षा से बदलकर उनके

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अकेले के शिक्षण के लिए अलग समय अपराह्न ३ से ४ बजे तक निश्चित किया। पण्डित जी ने दिलरुबा की कक्षा अलग से नहीं ली लेकिन किसी के साथ बजाते समय वे उपयुक्त सलाह देकर अपने शिष्य का मार्ग-दर्शन और ज्ञानवर्धन करते थे।

सन् १९४० में पण्डित जी के विद्यालय की ओर से 'ब्लेवेड्स्की लॉज' में आयोजित 'विष्णु दिगम्बर जयन्ती समारोह' में बलवन्तराय ने राग मुल्तानी गाया और खुले गले से तीन सप्तकों की तान ली। अपने मेधावी शिष्य के इस प्रदर्शन पर गुरुजी ने शाबाशी दी लेकिन साथ ही एक सीख भी दी, वे बोले 'तुमने आज मुल्तानी बहुत अच्छा गाया लेकिन यदि मञ्च पर बने रहना है तो सदैव ऐसा ही अभ्यास करना होगा।' उसी दिन पहली बार बलवन्तराय जी अपने गुरुजी के पीछे तानपूरा लेकर बैठे थे एवं गायन में सहयोग भी दिया था।

शिक्षा का क्रम यथावत् चलता रहा। गुरुजी ने स्वयं कठोर अनुशासन में रहकर शिक्षा प्राप्त की थी और वैसे ही अनुशासन एवं परिश्रम की अपेक्षा वे अपने विद्यार्थियों से रखते थे। गुरु की अपेक्षाओं पर शत-प्रतिशत खरे उतरते हुए बलवन्तराय विद्यादान लेते रहे।

एक शिक्षक होने के अतिरिक्त पण्डित जी ख्याति प्राप्त कलाकार थे। उनके कार्यक्रम के बिना सङ्गीत-समारोहों की शोभा अधूरी रहती थी। वह समय था जब रात-रात भर समारोह चलते थे।[११] पण्डित जी के शिक्षक रूप से बलवन्तराय भलीभाँति परिचित हो गये थे, अब समारोहों में उनके कलाकार-स्वरूप को भी निकट से देखने का अवसर मिला। सभागार में खचाखच भरा श्रोता-समूह किस तरह मन्त्र-मुग्ध होकर पण्डित जी को सुनता था यह तो बलवन्तराय कार्यक्रम के समापन पर तालियों की गड़गड़ाहट से जान पाते थे, लेकिन सङ्गत-कलाकारों द्वारा गुरुजी की गम्भीर आलापचारी तथा विलम्बित ख्याल के मुखड़े के प्रत्येक 'सम' पर 'वाह-वाह' के रूप में आनन्दोद्गार, तैयार तानों की वाहवाही-सब कुछ मञ्च पर उनके पीछे तानपूरे पर बैठकर सुनते थे। दिव्य-गायन का आनन्द तो अनिर्वचनीय होता ही था। गुरुजी के कार्यक्रमों को भी बलवन्तराय उतने ही मनोयोग एवं एकाग्रता से सुनते थे जितनी एकाग्रता से कक्षा का पाठ सीखते थे।

सन् १९४१ में ही गुरुजी ने बलवन्तराय की प्रगति से सन्तुष्ट होकर उन्हें आरम्भिक कक्षाएँ लेने को कहा। यह कक्षा प्रातः ८ बजे से ९ बजे तक लेनी थी। अण्णा जी के लिए दो बार आना-जाना सम्भव नहीं था, सो पण्डित जी के विद्यालय के ही एक अन्य विद्यार्थी श्री चन्द्रकान्त पुरोहित ने स्वेच्छया सहायता की। वे काफी दूर से 'ब्लाइण्ड स्कूल' (Blind School) आकर बलवन्तराय जी को पण्डित जी के विद्यालय पहुँचाते और कक्षा होने के उपरान्त वापस विद्यालय पहुँचाकर तब अपने काम पर जाते।[१२]

सन् १९४१ के ही जुलाई या अगस्त माह में बलवन्तराय जी ने अन्ध-विद्यालय छोड़ा।[१३] चूँकि पण्डित जी के विद्यालय का पाठ्यक्रम बाकी था अतः बम्बई में ही अन्यत्र, भूलेश्वर के पास कमरा लेकर रहने की व्यवस्था की। इस व्यवस्था को करने में भी चन्द्रकान्त भाई ने सहयोग किया था।[१४] भूलेश्वर से एक चपरासी ट्राम पर चढ़ा जाता था, तारदेव १३ नम्बर का टर्मिनस था, वहाँ उतर कर छड़ी के सहारे पण्डित जी के विद्यालय पहुँच जाते। बाद में रहने सम्बन्धी कुछ समस्या आई, बलवन्तराय ने गुरुजी को समस्या बताई। उसके बाद वे गुरुजी के साथ ही सोनावाला बिल्डिंग में रहने लगे।

अब बलवन्तराय जी की शिक्षा मात्र कक्षा की नियत समयावधि की नहीं रह गई थी। कार्यक्रम के दौरान भी वे काफी सीखते थे। गुरुजी भी अपने शिष्य की तीव्र ग्रहण-शक्ति से परिचित थे और कई बार कार्यक्रम के लिए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तैयार होकर वाहन आने की राह में बैठते थे, वहीं कुछ समझा देते थे। कुशाग्र बुद्धि से वे शीघ्र ही बताई हुई बात ग्रहण करते थे। गुरु भी शिष्य की इस क्षमता को बढ़ते हुए देखना चाहते थे, घटते हुए नहीं।

सन् १९४२, यह समय द्वितीय विश्वयुद्ध का था। जापान ने सिंगापुर पर बम गिराया था, फलस्वरूप अधिकांश गुजराती बम्बई छोड़कर दूसरे स्थानों पर चले गये और पण्डित जी भी बम्बई का अपना विद्यालय 'सङ्गीत-निकेतन' बन्द कर २९ मार्च ' ४२ को सूरत आ गये। आरम्भ में बलवन्तराय गुरुजी के साथ सूरत आये, फिर वापस अपने घर भावनगर चले गये, अतः शिक्षा का क्रम कुछ समय के लिए बाधित हुआ।

घर पर एक हार्मोनियम तथा तबला जोड़ी थी, सो अपनी स्वर-साधना तथा तबले का अभ्यास नियमित करते थे। अन्ध विद्यालय के श्रुतलेख (Dictation) से बचे कागजों पर उन्होंने अपने छोटे भाई अरविन्द से हिन्दी भजन पढ़वाकर ब्रेल में लिख लिया। इसी समय प्रश्नोराज्ञाति के समारोह में इनका गायन सुनकर श्री अनन्तराय पट्टणी, जो उस समय भावनगर राज्य के दीवान थे, उन्होंने बलवन्तराय के सामने सङ्गीत-विद्यालय खोलने का प्रस्ताव रखते हुए उन्हें वहाँ सिखाने को कहा लेकिन उन्होंने विनम्रता पूर्वक कहा कि मैं अभी अधूरा हूँ।

इधर अहमदाबाद में देसाई ब्रदर्स ने सङ्गीत-विद्यालय खोला था और वे उसके लिए योग्य अध्यापक चाहते थे। उन्होंने पण्डितजी से सम्पर्क किया। उन्होंने अपने होनहार शिष्य बलवन्तराय का नाम दिया और वे अहमदाबाद के इस सङ्गीत-विद्यालय में प्राचार्य के पद पर नियुक्त हुए। यह कार्य बहुत ही अल्पकाल का रहा, क्योंकि १ से ८ अगस्त तक विद्यालय चला और ९ अगस्त ' ४२ को 'भारत-छोड़ो' आन्दोलन के कारण विद्यालय बन्द करना पड़ा और बलवन्तराय एकाध महीने अहमदाबाद रहकर वापस भावनगर आ गये।

सूरत में स्थिर होने पर पण्डितजी ने विद्यालय पुनः चालू करने का मन बनाया और सन् ' ४३ में सूरत से भावनगर बलवन्तराय को पत्र भेजा। वे पुनः जून ' ४३ में गुरु-चरणों में आ गये और आगे का शिक्षण यहीं हुआ। आरम्भ में वे अपने ममेरे काका श्री दयाशङ्कर शुक्ल के यहाँ रहे फिर बम्बई के अपने मित्र श्री हरकान्त शुक्ल की मदद से एक कमरा 'नानी देसाई पोल' में किराए पर लिया। इस कमरे में वे जुलाई ' ५० तक रहे। शुरु में कुछ समय हरकान्त भाई के यहाँ भोजन करते थे, फिर होटल से मँगाने लगे। ये व्यवस्था महँगी भी थी और अनियमित भी। नानी देसाई पोल में इनके पड़ोसी चेरी परिवार ने इनकी काफी सहायता की। माताजी ध्यान रखतीं कि होटल से खाना आया कि नहीं, न आने पर घर बुलाकर आग्रह से भोजन करातीं। बलवन्त चेरी एवं नवीन चेरी दोनों भाई पण्डितजी के यहाँ आने-जाने में भी सहायता करते। इन्हीं लोगों ने फिर मकान-मालकिन से बात करके उसी के यहाँ खाने की व्यवस्था करवा दी। बलवन्तराय किराए के साथ भोजन का भी पैसा देते। यह समय काफी कठिन था। युद्ध का सङ्कट था अतः सन् ' ४३ के दिसम्बर में सबके राशन कार्ड बने। कुछ परिस्थितियाँ ऐसी बनीं कि बलवन्तराय को ३-४ साल गेहूँ की जगह ज्वार की रोटी और बिना चीनी के रहना पड़ा। लेकिन गुरुजी से सीखने के सौभाग्य के आगे इन परेशानियों को उन्होंने कभी महत्त्व नहीं दिया। सीखना ही एक मात्र ध्येय था।

सूरत के जिस मकान में वे रहते थे वहाँ प्रातःकाल की स्वर-साधना सम्भव नहीं दिखती थी। अतः अभ्यास का क्रम न छूटे एवं कोई आपत्ति न कर सके ऐसा उपाय उन्होंने सोचा। हाथ में सुरसोटा (तानपूरे की तरह छोटा वाद्ययन्त्र जो आधार स्वर प्रदान करता है) लेकर वे विद्यार्थियों के साथ ब्राह्म-मुहूर्त में पुल पार करके ताप्ती नदी के दूसरे छोर पर जाकर खुले में अभ्यास करते। इस प्रकार जीवन की चुनौतियों को स्वीकारते हुए, उनका सामना करते हुए वे कभी विचलित नहीं हुए। गुरुजी के प्रति अटूट श्रद्धाभाव, कठोर परिश्रम, धैर्य-पूर्वक सिखाना एवं स्वयं सीखना। यह क्रम सन् १९५० तक चला।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सूरत में भी बम्बई की भाँति बलवन्तराय सीखते हुए कक्षाएँ भी लेते रहे। गुरुजी केवल उनको सिखाते, बाकी सारे विद्यार्थियों को सिखाने की पूरी जिम्मेंदारी बलवन्तराय को सौंप दी थी, कई विद्यार्थी उनसे वय में बड़े थे लेकिन उनके प्रति पर्याप्त आदर-भाव रखते थे। सूरत के विद्यार्थियों में श्री कीकूभाई भगत (वय में बड़े) श्री शशिकान्त पाठक, श्री मनसुख भाई, श्री दिलीप दलाल एवं श्री गजेन्द्र त्रिवेदी आदि प्रमुख थे। कीकूभाई हिन्दी के प्राध्यापक थे, अत्यन्त सज्जन एवं उच्चकोटि की साहित्यिक अभिरुचि रखते थे। समान रुचि होने के कारण बलवन्तराय जी से इनका लगाव बहुत बढ़ा। कीकूभाई ने इन्हें काफी गुजराती साहित्य पढ़कर सुनाया। गुजरात के सन्त कवि अखा भगत की वाणी से दोनों ही बहुत प्रभावित थे।

हिन्दी साहित्य से परिचय

सूरत में आवास-व्यवस्था में मदद करने वाले श्री हरकान्त शुक्ल को हिन्दी की कोई परीक्षा देते समय अपने घर में पढ़ने में कुछ कठिनाई थी, अतः उन्होंने बलवन्तराय से उनके कमरे में बैठकर पढ़ने की सुविधा माँगी, उन्होंने सहर्ष कहा 'आप ज़रूर पढ़िए, लेकिन ज़ोर से बोलकर पढ़िए, जिससे मैं भी सुन सकूँ।' और इस तरह हिन्दी भाषा के अनेक लेखकों की गद्य एवं पद्य की रचनाओं से बलवन्तराय का परिचय हुआ।

उपाधि ग्रहण

३ फरवरी सन् '३८ को बम्बई में पण्डितजी के विद्यालय में प्रवेश करते समय किशोर बलवन्तराय के मन में पुलक और आह्लाद था। गुरुजी के सान्निध्य में लगभग एक तपावधि अर्थात् १२ वर्षों तक की गई साधना का सुफल प्रत्यक्ष था। चिर प्रतीक्षित दिन, २८ मई १९५०। सूरत में पण्डितजी के 'सङ्गीत-निकेतन' का पदवीदान समारोह! मुख्य अतिथि गुरुकुल काङ्गड़ी के कुलपति श्री बुद्धदेव विद्यालङ्कार थे। बलवन्तराय ने समारोह की सूचना पत्र द्वारा अपने शुभचिन्तक मैनेजर भाभा साहब को दी कि २८ मई को मुझे 'सङ्गीताचार्य' की पदवी दी जायेगी। उस दिन अन्य विद्यार्थियों को भी 'सङ्गीतालङ्कार' की उपाधि दी गई लेकिन १२ वर्षों का पाठ्यक्रम पूरा करके 'सङ्गीताचार्य' की पदवी पाने वाले बलवन्तराय अकेले थे। इस अवसर पर वे अपने छोटे भाई ऋषि कुमार को साथ लाए थे। भाभा साहब प्रत्यक्ष तो उपस्थित नहीं हो पाये थे लेकिन पण्डितजी को उन्होंने पत्र लिखा कि मुझे खुशी है कि बलवन्तराय ने आपका कोर्स पूरा किया। यह पत्र पं० ओम्कारनाथ जी ने अश्रुपूरित नेत्रों से भरी सभा में पढ़कर सुनाया और सबके सामने स्वीकार किया कि भाभा साहब जीते, ओम्कारनाथ हारा।

बलवन्तराय को बम्बई के विद्यालय में विद्यारम्भ के दिन प्रसाद देने वाली दीदी माँ मञ्च पर आईं और वात्सल्य से उनके कन्धे थपथपाकर बोलीं- 'भाई, तमारी फते थई छे' (आपकी फतह हुई है)। जीवन की अमूल्य उपलब्धि! भाभा साहब के वचन की रक्षा हुई उसका सन्तोष! 'सौराष्ट्र के लोग परिश्रम नहीं कर सकते' गुरुजी की इस धारणा को स्वयं एक उदाहरण बनकर बदला और सौराष्ट्र का गौरव बढ़ाया।

'सङ्गीताचार्य' पं. बलवन्तराय भट्ट

गुरुवर्य पं. ओम्कारनाथ ठाकुर के सान्निध्य में १२ वर्षों तक सङ्गीत का विशिष्ट शिक्षण लेने के उपरान्त बलवन्तराय जी ने उनके विद्यालय 'सङ्गीत निकेतन' से 'सङ्गीताचार्य' की सर्वोच्च पदवी प्राप्त की तथा गुरुजी के साथ समारोहों एवं यात्राओं में साथ रहने लगे। गुरुजी के कार्यक्रमों में उनके साथ पीछे तानपूरे पर बैठकर गायन में तो सहयोग करते ही थे, स्वतन्त्र रूप से भी कार्यक्रमों में उन्हें गायक कलाकार के रूप में ख्याति मिलने लगी। (विशेष विवरण देश-विदेश भ्रमण के अन्तर्गत दिया गया है।) किन्तु इनकी योग्यता मात्र गायक के रूप में ही

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मञ्च पर सामने नहीं आई, बल्कि एक अच्छे सङ्गतकार[१५] के रूप में भी उन्होंने अनेक बार अपनी प्रतिभा से साथी कलाकारों को मुग्ध एवं चमत्कृत किया। अपने गुरु पं. ओम्कारनाथजी का गायन में सहयोग करने के अतिरिक्त अलग-अलग कार्यक्रमों में भट्टजी ने तबले तथा इसराज पर सङ्गति कर वाद्यों पर अपने प्रभुत्व का परिचय दिया।

विधिवत् शिक्षा ग्रहण करके कार्यक्रम प्रस्तुत कर श्रोताओं की प्रशंसा पाना निःसंदेह किसी भी कलाकार की बड़ी उपलब्धि होती है। यहाँ सङ्गीतकार के रूप में कलाकार की प्रस्तुतीकरण सम्बन्धी कुशलता एवं सौन्दर्य-बोध मुख्य रूप से उभरकर सामने आता है। इससे भिन्न सङ्गीतकार का एक और स्वरूप होता है जो रचना-धर्मिता के साथ जुड़ा होता है और नए सङ्गीत की सर्जना करता है। यह अत्यन्त विशिष्ट स्थिति है। विशिष्ट इस अर्थ में कि रचनात्मक प्रतिभा में अन्तःप्रेरणा का बड़ा योगदान होता है और सङ्गीतकार का मानस अलग ढङ्ग से क्रियाशील होता है। अतएव नवीन अथवा मौलिक सङ्गीत-रचना करने हेतु विशिष्ट प्रतिभा की आवश्यकता होती है।

एक सफल गायक एवं अनेक वाद्यों के वादन में निपुण होने के साथ ही भट्टजी सङ्गीत-रचना की विलक्षण प्रतिभा से युक्त हैं। सङ्गीत-रचना की प्रवृत्ति उनमें आरम्भ से ही दीखती है। शालेय-जीवन के प्रसङ्गों से यह बात स्पष्ट होकर उभरी है कि विद्यार्थी जीवन में भी बलवन्तराय जी ने वाद्यवृन्द के लिए अनेक गतों का निर्माण किया था। स्वरचित गुजराती कविताओं को स्वर-ताल-बद्ध करने के अलावा बलवन्तराय जी ने गुजरात के श्री अखाभगत, श्रीन्हानालाल, श्री झवेरचन्द मेघाणी, श्री इन्दुलाल गाँधी, श्री बालमुकुन्द दवे, श्री दुलाभाई काग तथा श्री सुन्दरम् सरीखे प्रतिष्ठित, चिन्तनशील एवं प्रौढ़ कवियों की कविताओं को सङ्गीतबद्ध किया। अतः एक अच्छे गुरु के संरक्षण में दीक्षित होकर जहाँ बलवन्तराय जी में एक कलाकार के रूप में स्थापित होने की सारी सम्भावनाएँ दिखीं वहीं नवीन सङ्गीत एवं साहित्य का सृजन करने की उनकी विशिष्ट प्रतिभा में हमें सङ्गीतकार और साहित्यकार के संयोग से अनायास ही एक अनुपम 'वाग्गेयकार' के दर्शन हुए। इस प्रकार गहन शिक्षण के परिणाम स्वरूप एक 'कलाकार' तथा ईश्वरीय देन के रूप में विद्यमान सङ्गीत-सर्जना की अद्भुत क्षमता से युक्त 'रचनाकार', पं. बलवन्तराय भट्ट के व्यक्तित्व में समाहित हैं।

गुरुवर्य पं. ओम्कारनाथ ठाकुर के व्यक्तित्व का प्रभाव

गुरुजी के व्यक्तित्व ने भी बलवन्तराय को अत्यधिक प्रभावित किया। ओम्कारनाथ जी अध्ययनशील प्रवृत्ति के थे। यद्यपि सङ्गीत के अतिरिक्त अन्य औपचारिक शिक्षा या दूसरी डिग्री उनके पास नहीं थी लेकिन अपनी मातृभाषा गुजराती के अतिरिक्त मराठी एवं हिन्दी भाषा पर उनका अच्छा अधिकार था। पंजाब में कई वर्ष रहने के कारण पंजाबी भी बोल सकते थे। अंग्रेजी पहले नहीं जानते थे किन्तु यूरोप-भ्रमण के पूर्व उन्होंने उसका भी अभ्यास किया था। गुरुजी के साथ तथा बाद में स्वतन्त्र रूप से पंजाब भ्रमण करने के कारण भट्टजी भी पंजाबी भाषा कुछ समझ और बोल सकते हैं। सामान्यतः कलाकारों के साथ अनपढ़ होने का 'लेबल' चिपका होता है। इसका कारण यह है कि अधिकांश की मानसिकता केवल अपनी प्रायोगिक क्षमता के आधार पर मञ्च से श्रोताओं को प्रभावित करने की होती है। अपने विषय से सम्बद्ध शास्त्र को पढ़ने या समझने के प्रति वे अधिक रुचि नहीं रखते। संस्कृत ज्ञान का अभाव भी इस उदासीनता का एक कारण है क्योंकि सभी प्राचीन ग्रन्थ संस्कृत में ही हैं। पं. ओम्कारनाथ जी ठाकुर के व्यक्तित्व में यही अनोखी बात थी कि प्रतिष्ठित गायक होते हुए भी वे गम्भीर चिन्तन करते थे, सङ्गीत-विषयक अपने चिन्तन को व्याख्यान के माध्यम से वे सामने रखते थे। वे शास्त्र-विषयक गहन चिन्तन करने वाले पहले कलाकार हुए, जिन्होंने अनेक विषयों पर सोदाहरण व्याख्यान दिये एवं लेख लिखे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'राग और रस' तो उनका प्रिय विषय था ही, 'महागुजरात का सङ्गीतसत्त्व' विषय पर उनके पाँच व्याख्यान मुम्बई विश्वविद्यालय के पदवीदान सभागार खण्ड में हुए।[१६] उन्होंने 'प्रणवरङ्ग' उपनाम से शास्त्रीय सङ्गीतोपयोगी रचनाएँ कीं, 'सङ्गीताञ्जलि' के ७ भाग उनकी प्रयोग-पक्ष की विद्वत्ता एवं 'प्रणव-भारती' उनके शास्त्र-विषयक गहन चिन्तन के परिचायक हैं।

ऐसे मननशील गुरु के सान्निध्य का सुपरिणाम था कि शास्त्र को समझने की यह रुचि उनके विद्यापुत्र बलवन्तराय जी में भी आई। शास्त्र की चर्चा विद्यार्थियों के लिए लाभप्रद हो, आगे आने वाली पीढ़ी उसके प्रति सचेत हो, इस भावना से भट्टजी ने अपने रचना-सङ्ग्रह में, अपनी विदुषी गुरु-बहन एवं सहकर्मी डॉ. प्रेमलता शर्मा से अनुरोध करके उनके शास्त्र-सम्बन्धी सारगर्भित लेख को स्थान दिया (विस्तृत विवरण 'कृतित्व' के अन्तर्गत द्रष्टव्य)। इतना ही नहीं, 'सङ्गीत एवं मञ्चकला सङ्काय' तथा 'ओम्कारनाथ ठाकुर मेमोरियल ट्रस्ट' द्वारा १९९८ में आयोजित सङ्गोष्ठी 'मञ्चकला : अतीत, वर्तमान और भविष्य' में उद्घाटन सत्र के अध्यक्ष पद से बोलते हुए भट्टजी ने कहा था कि 'अपने बचपन में हमने 'शास्त्र' शब्द नहीं सुना था। सङ्गीत में गाना-बजाना सीखने के उपरान्त 'शास्त्र' भी कोई चीज है इसकी किञ्चित् मात्र भी कल्पना नहीं थी। बड़े सादे शब्दों में उन्होंने समाहार किया था कि बीते हुए कल में हमें शास्त्र की जानकारी नहीं थी, आज हमें जानकारी है, शास्त्र में बहुत कुछ समझने को है, लेकिन आने वाले कल में विद्यार्थी इस सम्पदा को सँजोए रखें, अधिकाधिक अध्ययन करें, मनन करें, शास्त्र से विरत न हों, इसके लिए आवयश्क है कि सरल भाषा में शास्त्र की बातें बताई जाएँ, जिससे अध्ययन करने वाले की रुचि बनी रहे, उसका रुझान बढ़े। इस प्रकार 'सङ्गीत' के क्रियापक्ष के साथ शास्त्र-पक्ष को भी सम्मान देने में बलवन्तराय जी ने अपने गुरुजी का पूरा अनुकरण किया।

ओम्कारनाथ जी अच्छा साहित्य पढ़ते थे। अपने नेत्रहीन विद्यार्थी की रुचि पहचान कर वे उसे भी काफी कुछ पढ़कर सुनाते थे। मुख्यतः रहीम के दोहे एवं गुजराती कवि न्हानालाल के काव्य-सङ्ग्रह 'प्रज्ञाचक्षु ना प्रज्ञाबिन्दु' की कविताएँ (न्हानालाल कवि करीब ३०-४० दिनों तक दृष्टि-बाधा से पीड़ित थे। यह काव्य-सङ्ग्रह उस समय लिखी कविताओं का है) वे उन्हें सुनाते थे। प्रवास के दौरान भी यही क्रम चलता था। पण्डित जी प्रतिवर्ष 'रामचरित मानस' का नवाह्न पारायण करते थे। उस समय अपने पारायण से समय निकालकर भी अपने विद्यार्थी को अच्छे प्रसङ्ग समझाते थे। इस प्रकार बलवन्तराय जी का साहित्य-प्रेम गुरुजी के सान्निध्य में परिपुष्ट होता गया।

गुरुजी स्वयं तबला भी बजाते थे। अतः उनसे गायन की शिक्षा के साथ ही तबले के अनेक बोल एवं लयकारी की बारीकियाँ भी बलवन्तराय जी ने समझी थीं।

गुरुजी जब बलवन्तराय को समारोहों में ले जाने लगे तब उन्होंने एक बात कही जो उस समय के चलन के अनुसार पारम्परिक गुरुओं की मानसिकता के सर्वथा विपरीत थी। उन्होंने कहा, यह ठीक है कि तुम मुझसे सीख रहे हो, लेकिन अब दूसरे कलाकारों को भी सुनो। इस प्रकार गुरुजी ने अपने शिष्य को घरानेदार ग्वालियर शैली की गायकी में पारङ्गत कर अन्य गुणी कलाकारों को सुनकर स्वविवेक से, हंसमति से अच्छी चीजें ग्रहण करने की स्वतन्त्रता दी। गुरु की इस सदाशयतापूर्ण उदारता का पूरा लाभ लेते हुए बलवन्तराय जी ने अपनी गायकी में अर्थात् ग्वालियर शैली की गायकी के साथ आगरा घराने की अच्छी चीजें ग्रहण कर मणि-काञ्चन संयोग कर अपनी विशिष्ट शैली बनाई।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में नियुक्ति एवं सेवा-निवृत्ति

बलवन्तराय जी ने अपना शालेय-शिक्षण समाप्त कर पं. ओमकारनाथ जी के शिष्यत्व में सङ्गीत में विशेष नैपुण्य प्राप्त किया। लेकिन जीविकोपार्जन की कोई स्पष्ट अवधारणा मन में नहीं बनी थी या यों कहें कि उसका विचार ही नहीं किया था। अतः अपने गुरु के साथ छाया की भाँति रहने वाले बलवन्तराय जी सङ्गीत-महाविद्यालय की स्थापना होने पर उनके साथ ही वाराणसी (काशी हिन्दू-विश्वविद्यालय) आए और असिस्टेण्ट प्रोफेसर[१७] के पद पर (२५०/-प्रतिमाह) नियुक्त हो गये। आजीविका कमाने के हेतु से एक अभ्यर्थी के रूप में आवेदन करके, चयन समिति के सम्मुख उपस्थित होने की प्रक्रिया से वे उस समय नहीं गुजरे थे। ओम्कारनाथजी द्वारा संस्तुत होने पर बलवन्तराय जी को सूरत में ही नियुक्ति-पत्र मिल गया था।

शनिवार १९ अगस्त सन् '५० को 'श्री कला सङ्गीत भारती' के उद्घाटन के उपरान्त सोमवार २१ अगस्त से कक्षाएँ आरम्भ हुईं। पहली कक्षा भी बलवन्तराय जी ने ली। महाविद्यालय का अपना भवन नहीं था अतः रुइया छात्रावास में छत पर कुछ कमरे खाली करवाए गये थे। विद्यालय का आवेदन-पत्र देने से लेकर प्रवेशार्थी छात्र-छात्राओं की प्रवेश-परीक्षा लेने का अधिकांश कार्य भट्टजी अकेले करते थे। कुछ समय पश्चात् कक्षाएँ लक्ष्मणदास अतिथि-गृह में होने लगीं और अन्ततः ६० के दशक में महाविद्यालय का अपना भवन हुआ। आज इस भवन के बगल में 'पं. ओम्कारनाथ ठाकुर प्रेक्षागृह' भी है।

आरम्भ में यह विद्यालय 'श्री कला सङ्गीत भारती' के नाम से जाना जाता था। फिर 'सङ्गीत एवं ललित कला महाविद्यालय' (College of Music and Fine Arts) कहलाने लगा। कालान्तर में 'ललित कला' अनुभाग के 'दृश्य-कला सङ्काय ' के रूप में स्वतन्त्र सङ्काय होने पर यह 'मञ्च-कला सङ्काय' (Faculty of Performing Arts) के नाम से जाना जाने लगा। महाविद्यालय के उद्घाटन का ऐतिहासिक दिन, तदुपरान्त रजत-जयन्ती, स्वर्ण-जयन्ती एवं हीरक जयन्ती प्रत्येक अवसर के साक्षी बलवन्तराय जी रहे हैं। किसी व्यक्ति और संस्था दोनों के लिए यह सुयोग अत्यन्त दुर्लभ है कि संस्था की स्थापना को देखने वाला व्यक्ति उसकी हीरक जयन्ती में भी उपस्थित रहे।

आरम्भिक दिनों में छात्राओं की कक्षा गुरुजी पं. ओम्कारनाथ जी 'महिला महाविद्यालय' (वीमेंस कालेज) में लेते थे, बाद में ये कक्षाएँ प्रतिदिन सायं ४ बजे से ६ बजे तक बलवन्तराय जी लेने लगे।[१८] इसी समय से ये छात्र-छात्राओं के बीच 'भैयाजी' कहकर सम्बोधित होने लगे। साथ ही कई वर्षों तक अपने निवास पर भैयाजी प्रत्येक रविवार को प्रातः ९ से १० तक लड़कों को भजन सिखाते थे, (इस कक्षा में विश्वविद्यालय के अनेक प्रोफेसर भी आते थे) तथा छात्राओं को 'महिला महाविद्यालय' (वीमेन्स कालेज) में प्रातः १० से ११ बजे तक। यह सिखाना पूर्णतया निःशुल्क था।

वाद्यों के बहुज्ञ : भट्टजी

'श्री कला सङ्गीत भारती' में भट्टजी की नियुक्ति गायन के प्राध्यापक के रूप में हुई थी, किन्तु आरम्भिक दिनों में सङ्गतकार के पद पर कोई नियुक्ति न होने के कारण कक्षाएँ लेने के उपरान्त महाविद्यालय में पधारने वाले विशिष्ट अतिथि कलाकारों के साथ आवश्यकतानुसार तबला अथवा हार्मोनियम पर सङ्गति प्रदान कर बलवन्तराय जी ने दोहरी भूमिका निभाई।[१९]

'श्री कला सङ्गीत भारती' में पधारने वाले अतिथि कलाकारों में श्री डी.वी. पलुस्कर के साथ इसराज पर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सङ्गति की। हार्मोनियम पर जिन कलाकारों के साथ सङ्गति की उनमें मुख्य नाम हैं- अपनी तैयारी के लिए प्रसिद्ध पाकिस्तान के गायक बन्धु उस्ताद नज़ाकत अली तथा उस्ताद सलामत अली, श्री शङ्कर राव नायक, कुमार गन्धर्व की प्रथम पत्नी श्रीमती भानुमति, श्रीमती हीराबाई बड़ोदेकर तथा स्वामी वल्लभदास जी।

सन् १९५३-५४ में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के 'सङ्गीत महाविद्यालय' में एक विदेशी शिष्ट-मण्डल के सम्मुख महाविद्यालय के ही तबला प्राध्यापक श्री रामकृष्ण लक्ष्मण पर्वतकर के एकल तबला-वादन में भट्टजी ने हार्मोनियम पर लहरा दिया। पर्वतकर जी अपने वादन में बहुत विकट लयकारी करते थे जिसमें लय कायम रखते हुए लहरा देना अत्यन्त कठिन कार्य था। उक्त कार्यक्रम में बलवन्तराय जी के सहयोग से प्रसन्न होकर उन्होंने कार्यक्रम के बीच में ही बलवन्तराय जी की ओर इशारा करते हुए कहा 'Only one man in india' (भारत में केवल एक व्यक्ति)। ऊपर के विवरण से स्पष्ट होता है कि पण्डितजी के यहाँ सीखते समय उन्होंने (बलवन्तराय जी ने) सङ्गति करने की जो विशेष जानकारी अपने गुरु से प्राप्त की थी उसका उपयोग उन्होंने अत्यन्त कुशलता से प्रतिष्ठित कलाकारों के साथ सङ्गत करते समय किया।

कर्त्तव्यनिष्ठ शिक्षक

भट्टजी ने ३० वर्षों तक निष्ठा से विद्यार्थियों को शिक्षा-दान दिया और एक आदर्श शिक्षक के रूप में प्रतिपल विद्यार्थियों को उपलब्ध रहे। संस्था के प्रति समर्पित भाव से काम करते हुए पद-लालसा से दूर, निजी स्वार्थ की चिन्ता न करके, प्रशासनिक नीतियों के शिकार होकर पदोन्नति से वञ्चित होकर भी उसे 'ईश्वरेच्छा' समझकर शिक्षक-कर्म से किञ्चित् मात्र भी विरत नहीं हुए, क्योंकि उन्होंने मात्र पदोन्नति को ही जीवन का ध्येय नहीं माना। आत्मश्लाघा से दूर, परनिन्दा से दूर, गुणग्राही, सिद्धान्तवादी बलवन्तराय जी अन्य सङ्गीतकारों की भाँति आयोजकों के आस-पास मनुहार करने नहीं गये, वरन् दूसरे शहरों के समारोह के अनेक अवसर यह कहकर छोड़े कि परीक्षा का समय है, विद्यार्थियों को कोई भी परेशानी हो, उसे हल करने के लिए हाज़िर रहना है। हाथ आये हुए मान-सम्मान एवं निजी उत्कर्ष के अवसरों को संस्था तथा छात्रों के हित में नकारना एवं उसके उपरान्त मन में कष्ट न होना यह सामान्य व्यक्ति के बस का नहीं है।

विश्वविद्यालय की गतिविधियों में सक्रिय सहयोग

विश्वविद्यालय में सेवा-काल के दौरान शिक्षा एवं परीक्षा सदृश नियमित कार्य के उपरान्त अन्य गतिविधियों में भी भट्टजी सदैव सहर्ष उपस्थित रहे। विश्वविद्यालय में प्रत्येक रविवार को प्रातः मालवीय भवन में विशिष्ट वक्ता द्वारा 'गीता-प्रवचन' की परम्परा रही है, जो आज भी यथावत् चालू है, इसके साथ अनेक सन्त-महात्मा तथा विशिष्ट विद्वानों के श्रीमद्भागवत एवं रामायण आदि पर प्रवचन सत्र होते रहे हैं। प्रवचनों के पूर्व कई बार भट्टजी ने अपने भजन-गायन से वातावरण को भक्तिमय बनाया। श्री कृष्ण जन्माष्टमी के अवसर का एक प्रसङ्ग उल्लेखनीय है। अवसर के अनुरूप प्रस्तुति हेतु उन्होंने 'सूरसागर' के कई पद पढ़े तथा एक पद का चयन कर उसे स्वरबद्ध किया 'नन्द जू आद जोतसी तुमरे घर को, पुत्र जनम सुनि आयो। नखत सोधि सब जोतिस गनि के चाहत तुमहिं सुनायो।' गायन के उपरान्त जब परम्परानुसार पं. राजमोहन उपाध्याय (ज्योतिषाचार्य तथा सङ्काय-प्रमुख, प्राच्यविद्या एवं धर्मविज्ञान सङ्काय) अपने वक्तव्य हेतु उठे तब बलवन्तराय जी द्वारा प्रस्तुत पद को लक्ष्य कर पं. रेवाप्रसाद द्विवेदी (साहित्याचार्य) ने विनोदपूर्वक कहा कि कृष्ण भगवान की जन्म-कुण्डली तो भैयाजी ने गा दी, अब बोलने के लिए कुछ शेष नहीं है। कहने का तात्पर्य यह है कि मात्र भजन गाने की ड्यूटी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

समझ कर कोई भी भजन प्रस्तुत करके भी कर्तव्य की इतिश्री हो सकती थी, किन्तु अवसर के अनुरूप आयोजन के साथ अपनी पूरी संलग्नता के साथ तथा आयोजकों के प्रति भी आत्मीयता एवं उनकी विद्वत्ता के प्रति सम्मान के भाव से ही इस तरह के अनेकानेक आयोजनों को सार्थक बनाने में बलवन्तरायजी ने पूरी निष्ठा का परिचय दिया। इसी प्रकार अनेक बार राष्ट्रीय पर्वों यथा गणतन्त्र-दिवस एवं स्वतन्त्रता-दिवस के अवसर पर एम्फीथियेटर ग्राउण्ड में 'वन्दे मातरम्' का गान किया। विश्वविद्यालय के प्रेक्षागृह 'स्वतन्त्रता-भवन' के शिलान्यास के अवसर पर बलवन्तराय जी ने अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल द्वारा रचित, रगों में जोश भरने वाली रचना 'सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है, देखना है ज़ोर कितना बाज़ुए कातिल में है' के ओजपूर्ण गायन से उपस्थित जन-समुदाय को रोमाञ्चित कर दिया था।

सत्तर के दशक में भट्टजी पदोन्नति प्राप्त कर 'रीडर' हुए एवं सन् १९८१ में सेवा-निवृत्त हुए।

वर्तमान आवास

भट्टजी की सेवानिवृत्ति के समय उनकी पुत्री लयलीना (इस पुस्तक की लेखिका) की नियुक्ति विश्वविद्यालय स्थित महिला महाविद्यालय में नृत्य की प्रवक्ता के रूप में हो चुकी थी। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय परिसर स्थित न्यू जी/१९, अरविन्द कॉलोनी का निवास उसके नाम पर आवण्टित हुआ और वे उस मकान में दिसम्बर १९८७ तक रहे। फरवरी १९८८ में लयलीना का विवाह होना था अतः वह मकान छोड़कर लगभग सवा तीन वर्ष वाराणसी में ही विश्वविद्यालय परिसर के समीप गाँधीनगर, नरिया में किराए के मकान में रहे। उसी दौरान नरिया में ही रोहित नगर कॉलोनी में अपना मकान 'नाद-तनु' बनाया। इस समय ज्येष्ठ पुत्र राहुल सांस्कृतिक कोटा के अन्तर्गत गोरखपुर में उत्तर-पूर्व रेलवे में नियुक्त हो चुके थे, अतः भट्टजी, पत्नी तथा दो सन्तानों विभास और भैरवी के साथ थे। नतिनी श्रुतिवन्दना भी साथ ही थी। उस समय विभास तथा भैरवी दोनों स्नातक की पढ़ाई कर रहे थे। अपनी पढ़ाई के साथ-साथ विभास ने बहुत हिम्मत से मकान बनवाने का गुरुतर कार्य सम्पन्न किया। मार्च १९९१ में बलवन्तराय जी 'नाद-तनु' में रहने आ गये। सम्प्रति राहुल परिवार समेत वाराणसी आ गये हैं एवं पिताजी तथा माँ के साथ 'नाद-तनु' में रह रहे हैं।

पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह

यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि जब काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में नियुक्ति के साथ ही वाराणसी में रहना तय हो गया तब भट्टजी ने अपने तीन छोटे भाइयों ऋषिकुमार, ललितकुमार तथा राजेन्द्र को अच्छी शिक्षा दिलाने के विचार से भावनगर से अपने पास बुला लिया। इनकी विद्यालय से लेकर स्नातकोत्तर तक की शिक्षा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय तथा काशी विद्यापीठ में हुई।

बटुक भाई (बलवन्तराय जी को घर में पुकारने का नाम) के साथ रहते-रहते तीनों भाइयों को शास्त्रीय सङ्गीत सुनने की रुचि पनपी। सबसे छोटे भाई राजेन्द्र ने सङ्गीत महाविद्यालय यानि
'श्री कला सङ्गीत भारती' से तबले में डिप्लोमा का पाठ्यक्रम भी किया। भट्टजी पढ़ाई के अतिरिक्त तीनों भाइयों की निजी रुचि एवं प्रतिभा के अनुसार उन्हें प्रोत्साहित करते रहे।

विचलित हुए बिना किसी भी समस्या का समाधान खोजने की प्रवृत्ति बलवन्तराय जी में आरम्भ से रही। अपने इसी गुण के कारण वे सीमित साधनों के साथ भी अपने छोटे भाइयों के व्यक्तित्व-निर्माण की सजगता के साथ ही उनकी छोटी-छोटी इच्छाओं का ध्यान रख सके तथा असफलता की स्थिति में निराशा न घेर ले इस तरह उनके

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मन का समाधान भी करते रहे। सभी भाई अपनी-अपनी औपचारिक शिक्षा के साथ ही विभिन्न गतिविधियों में भाग लेते रहे। भैयाजी के सत्प्रयासों से तीनों भाई अच्छे सम्मानजनक पदों पर काम करते हुए सेवानिवृत्त हुए हैं।[२०]

अपने तीनों छोटे भाइयों को, जिन्हें वे पुत्रवत् स्नेह करते थे, अच्छी शिक्षा दिलाने के उद्देश्य से अपने साथ बनारस लाये और इस प्रकार पारिवारिक जिम्मेदारी निभाने में पूरा सहयोग दिया। नेत्रहीनता इस कर्तव्यबोध एवं उसके समुचित निर्वहन में कहीं बाधा नहीं बनी। यह निर्णय उन्होंने उस समय लिया था जब वे एकाकी थे। निश्चय ही यह साहस अनुकरणीय है।

गृहस्थ जीवन में प्रवेश

सन् १९५५ की वसन्त पञ्चमी (२८ जनवरी) के दिन महाराष्ट्रियन कन्या कुमारी वसुन्धरा तळवलकर के साथ विवाहबद्ध होकर भट्टजी ने गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया। अपने विद्यापुत्र बलवन्तराय के गृहस्थाश्रम में प्रवेश की खुशी में गुरुजी ने ६ फरवरी १९५५ को अपने आवास पर प्रीतिभोज का आयोजन किया था। परिवार के दायित्वों को निभाते हुए वसुन्धरा जी ने भट्टजी की रचनाओं को व्यवस्थित रूप से लिखने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। नेत्रहीनता के कारण बलवन्तराय जी स्वयं पुस्तक प्रकाशन हेतु स्वरलिपि नहीं लिख सकते थे, अतः वे अपने शिष्यों को प्रत्येक बारीकी बताते, लिखवाते फिर पढ़वाकर उसे सुनते। यह काम अत्यन्त धैर्य और परिश्रम का था। इस कार्य में भी वसुन्धरा जी ने सहायता की। (जिस समय पं. ओम्कारनाथ जी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय स्थित 'महिला महाविद्यालय' (वीमेन्स कालेज) में कक्षाएँ लेते थे उस समय वे भी उनकी कक्षाओं में जाती थीं अतः सङ्गीत की आरम्भिक जानकारी उन्हें थी ही)। स्वरलिपि लिखने वाले छात्रों का अधिक समय व्यतीत न हो इसलिए वे पहले से ही बड़े कागजों पर विभिन्न तालों की मात्रानुसार लकीरें तथा ताली-खाली के चिह्न बनाकर तैयार रखती थीं। रचना-सङ्ग्रह के प्रकाशन के बाद भी प्रत्येक प्रति में छपाई के बाद की त्रुटियों को उन्होंने स्वयं ही सुधारा। इस प्रकार विशेष रूप से 'भावरङ्ग-लहरी' के प्रथम भाग के प्रकाशन में सहधर्मिणी के रूप में वसुन्धरा जी का सहयोग अत्यन्त मूल्यवान है।

परिवार

बलवन्तराय जी एवं वसुन्धरा जी की सन्तानों में चार पुत्रियाँ एवं दो पुत्र हैं। वे सभी साहित्य तथा सङ्गीत की विभिन्न विधाओं से जुड़े हुए हैं। सभी बच्चों की शिक्षा वाराणसी में ही हुई। शिक्षा के साथ-साथ सभी बच्चे विभिन्न सांस्कृतिक गतिविधियों में विशेष रूप से प्रो. प्रेमलता शर्मा (भैयाजी की गुरु-बहन तथा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के सङ्गीत-शास्त्र की अध्यक्षा) द्वारा निर्देशित संस्कृत के नाटकों तथा गुजरात मण्डल एवं महाराष्ट्र मण्डल द्वारा आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रमों एवं खेल-कूद में भाग लेते रहे। सभी अपनी शिक्षा पूर्ण कर अपने-अपने क्षेत्र में कार्यरत हैं तथा विवाहोपरान्त अपने परिवारों के साथ हैं। ज्येष्ठ पुत्री स्वरवन्दना वर्तमान में वाराणसी के कमच्छा स्थित वसन्त कन्या महाविद्यालय में कण्ठ सङ्गीत की एसोसिएट प्रोफेसर के रूप में कार्यरत हैं। उनके पति प्रो० कृष्णकान्त शर्मा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत विद्या धर्म विज्ञान सङ्काय में सांख्य-योग के प्रोफेसर हैं। स्वरवन्दना एवं कृष्णकान्त की सन्तानों में श्रुतिवन्दना एवं अभिनव दोनों ही इंजीनियर हैं। श्रुतिवन्दना ने भरतनाट्यम् की भी शिक्षा ली है। द्वितीय पुत्री लयलीना (इस पुस्तक की लेखिका) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय स्थित महिला महाविद्यालय में नृत्य (भरतनाट्यम्) की एसोसिएट प्रोफेसर के रूप में कार्यरत हैं। उनके पति प्रो. सुधाकर भट महिला महाविद्यालय में वाद्य-सङ्गीत (सितार) के प्रोफेसर पद पर थे, जो अब सेवानिवृत्त हुए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हैं। लयलीना और सुधाकर का बेटा विनायक इस समय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में बी.कॉम. प्रथम सेमेस्टर का छात्र है। तीसरी पुत्री गीतसुधा जयपुर के राजस्थान सङ्गीत संस्थान में वरिष्ठ व्याख्याता (सितार) के पद पर है तथा उनके पति श्री सतीश पारीक निजी व्यवसाय के अतिरिक्त हवाइयन गिटार (भारतीय शास्त्रीय सङ्गीत) की शिक्षा दे रहे हैं। अक्षरा एवं प्रथमेश इनकी सन्तानें हैं। अक्षरा बी.कॉम. द्वितीय वर्ष तथा प्रथमेश कक्षा १० के छात्र हैं। दोनों ही अपने पिता से गिटार की शिक्षा ले रहे हैं। पुत्र राहुल पूर्वोत्तर रेलवे में सांस्कृतिक कोटा के अन्तर्गत नियुक्त हुए हैं तथा सम्प्रति कर्मचारी एवं कल्याण निरीक्षक के पद पर कार्यरत हैं। तबला इनका मुख्य वाद्य है तथापि गायन, सितार-वादन एवं अभिनय का भी चाव है। हार्मोनियम भी सहजता से बजाते हैं। राहुल ने सामाजिक विडम्बनाओं पर प्रहार करती हुई अनेक व्यङ्ग्य कविताएँ भी लिखी हैं। पत्नी इला भी पूर्वोत्तर रेलवे में खेल-कूद कोटा के अन्तर्गत चयनित हैं तथा सम्प्रति कार्यालय अधीक्षक के पद पर कार्यरत हैं। राहुल एवं इला की दो पुत्रियाँ हैं चारुकेशी तथा अलङ्कृता। चारुकेशी कक्षा १० तथा अलङ्कृता कक्षा ६ की छात्रा है। दोनों को ही गायन एवं नृत्य में रुचि है। राहुल के बाद बलवन्तराय जी एवं वसुन्धरा जी की जुड़वाँ सन्तान हैं विभास और भैरवी। विभास हरियाणा में जवाहर नवोदय विद्यालय में ट्रेण्ड-ग्रेजुएट टीचर के रूप में इतिहास, नागरिक शास्त्र तथा भूगोल विषयों के अध्यापक हैं। सङ्गीत की विधिवत् शिक्षा नहीं ली है किन्तु गायन में रुचि है। इतिहास तथा कला संबंधी सामग्रियों के संकलन और प्रदर्शनी सजाने का विशेष चाव है। पत्नी श्वेता सम्प्रति गृहिणी हैं। इन्होंने इलाहाबाद के प्रसिद्ध सङ्गीतज्ञ पं. रामाश्रय झा जी से व्यक्तिगत रूप से शास्त्रीय सङ्गीत की शिक्षा ली है। इन दोनों की पुत्री शताक्षी है जो इस समय कक्षा ४ में है। उसे भी नृत्य में रुचि है। भैरवी पुणे में है तथा आंशिक रूप से निजी व्यवसाय करती हैं। इन्होंने भी भरतनाट्यम् की शिक्षा ली है। भैरवी के पति श्री अनिल चिपळूनकर का फोटो लेमिनेशन का स्वतन्त्र व्यवसाय है। इन दोनों का पुत्र आलाप कक्षा १२ का छात्र है। कागज को मोड़कर आकृति बनाने की कला 'ओरिगामी' में उसकी विशेष रुचि है।

सादगी भरा पारिवारिक जीवन

जीवन-परिचय के अन्तर्गत बलवन्तराय जी के व्यक्तित्व के अनेक पक्षों के बारे में जानकारी हुई है। एक अनुशासित एवं परिश्रमी छात्र तथा धैर्यवान शिक्षक की छवि सबके सामने है। एक 'वाग्गेयकार' के रूप में समुचित मान-सम्मान अर्जित किया, फिर भी उनका व्यक्तिगत जीवन यानि निजी पारिवारिक जीवन अत्यन्त सादगी भरा रहा है। बालवय में Blind School के अनुशासन के अनुसार अपने सब काम स्वयं करने का जो अभ्यास पड़ा वह आज जीवन के ९० वर्ष पूरे कर लेने पर भी यथावत् है। उनके क्रियाकलापों में इतनी सहजता है तथा किसी भी काम को करने के लिए इतनी तत्परता से उद्यत होते हैं कि देखने वाले सहसा विश्वास नहीं कर पाते कि वे दृष्टिबाधा से पीड़ित हैं। घर में बच्चों को इस बात का बोध ही नहीं हुआ कि 'न देख पाना' बापूजी की कोई समस्या है।

देहरादून से आने वाली ब्रेल-लिपि की पुस्तकें तो वे स्वयं पढ़ लेते थे किन्तु छपी सामग्री के रूप में आने वाली गुजराती और मराठी भाषाओं की पत्रिकाएँ, गीताप्रेस (गोरखपुर) से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'कल्याण' के अङ्क, सङ्गीत कार्यालय (हाथरस) से प्रकाशित 'सङ्गीत' के अङ्क अधिकतर वसुन्धरा जी पढ़कर सुनाती थीं। परिवार अथवा मित्रजनों के पत्र पढ़ने हों या पत्र लिखवाना हो अथवा समाचार-पत्र पढ़ना हो तभी उन्हें पत्नी या बच्चों की सहायता लेनी पड़ती थी अन्यथा दूध वाला आया तो स्वयं पतेला लेकर हाजिर, उबले आलू छीलने हों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तो बच्चों के साथ बैठ गये, मटर छीलना हो तब तैयार, पूरियाँ बनानी हों तो गोले (लोई) बनाने को तैयार, अर्थात् घर के हर काम में हाथ बँटाने की तैयारी।

ब्रेल पुस्तकों में विशेष रूप से हेलन केलर की आत्मकथा से अत्यन्त प्रभावित थे। हेलन नेत्रहीन होने के साथ ही मूक और बधिर भी थी। इस तिहरी अपङ्गता से ग्रस्त बालिका को उसकी गवर्नेस ऐन मैन्सफील्ड सल्लिवान ने कितने धैर्य एवं सूझबूझ के साथ अपने आस-पास की वस्तुओं से परिचित कराया यह सब पढ़कर इनकी अपनी धारणा बलवती हुई कि आरम्भिक असफलताओं से निराश न होकर सच्ची निष्ठा से सतत प्रयत्नशील रहें तो कुछ भी असम्भव नहीं है।

पुस्तक में से जो अंश वे पहले दिन पढ़ते उसकी कहानी दूसरे दिन सुबह कॉफी पीते समय सबको सुनाते। इन पुस्तकों में जासूसी उपन्यास भी आते थे जिनकी कहानियों में उनकी कोई रुचि नहीं थी किन्तु अंग्रेज़ी का अभ्यास बना रहे इसलिए उसे भी पढ़ते। अंग्रेज़ी की इन पुस्तकों में कई बार ऐसे शब्द होते ही थे जिनका अर्थ मालूम नहीं होता था। ऐसे शब्दों की Spelling पढ़ते समय वे याद कर लेते थे तथा बाद में जब कोई बच्चा खाली हो तब उससे Dictionary दिखवा कर अर्थ मालूम करते।

रहन-सहन में बहुत सादगी, कोई तड़क-भड़क नहीं किन्तु बच्चों की शिक्षा अथवा गृहस्थी की अन्य आवश्यकताओं के लिए साधन उपलब्ध कराने हेतु सदैव तत्पर रहे। इन सबके बीच उनका स्वयं का अभ्यास तथा आकाशवाणी के प्रसारण सुनने का क्रम निर्बाध चलता रहा। अपने पुराने विद्यार्थियों (डॉ. चित्तरञ्जन ज्योतिषी, श्री कनक राय त्रिवेदी, डॉ. प्रदीप कुमार दीक्षित, डॉ. वनमाला पर्वतकर, श्री अजित भट्टाचार्य, डॉ. अर्चना दीक्षित आदि) को भी जो सङ्काय में नियुक्त हो चुके थे तथा अन्य विद्यार्थियों को भी आवश्यकतानुसार (किसी को राग का विस्तार समझना हो या किसी कार्यक्रम में प्रस्तुत करने के लिए नई बन्दिश सीखनी हो) समय देते थे। इस अतिरिक्त शिक्षण का उन्होंने कोई भी शुल्क कभी नहीं लिया। यही कारण है कि आज उनके शिष्य-प्रशिष्य सभी उनकी सेवा करने को हर सम्भव तत्पर रहते हैं।

देश-विदेश भ्रमण

बलवन्तराय जी ने अपने गुरु 'सङ्गीत-मार्तण्ड' पं. ओम्कारनाथ ठाकुर जी के साथ भारत के छोटे-बड़े अनेक शहरों के सङ्गीत-समारोहों में भाग लिया। सन् १९४१ से उन्होंने गुरुजी के साथ भ्रमण प्रारम्भ किया।

गुरुजी के साथ भ्रमण का विवरण

- सन् '१९४१ में वे कराची गये, जहाँ गुरुजी के कार्यक्रम के अतिरिक्त उनका भी स्वतन्त्र रूप से गायन का कार्यक्रम हुआ।
- प्रतिवर्ष दिसम्बर माह के अन्त में कलकत्ता में आयोजित कान्फ्रेन्स में जाते रहे।
- सन् '४३ में इलाहाबाद जाना हुआ।
- सन् '४४ में ही सर्वप्रथम वाराणसी आगमन हुआ।
- वाराणसी आगमन के पूर्व शिमला भी जाना हुआ।
- सन् '४४ में गयाजी जाना हुआ।
- सन् '४५ के बाद पंजाब में अमृतसर, लाहौर एवं ल्यालपुर में कार्यक्रम हुआ।
- सन् '४७ में लगभग पूरे दक्षिण भारत का दौरा किया तथा उसी समय पाण्डिचेरी स्थित 'अरविन्द

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आश्रम' में भी गये।

- राजस्थान में माउण्ट आबू भी कार्यक्रम के सिलसिले में जाना हुआ। यहाँ एक घरेलू बैठक में बलवन्तराय जी ने दिलरुबा बजाया।
- जैनों के प्रसिद्ध देलवाड़ा मन्दिर में पण्डितजी ने भजन प्रस्तुत किया था। यहाँ गाने के लिए गुरुजी ने कोई पारिश्रमिक नहीं लिया था। बलवन्तराय जी के लिए यह यात्रा विशेष रूप से स्मरणीय इसलिए है कि गुरुजी ने मन्दिर के व्यवस्थापकों से विशेष अनुरोध करके अपने नेत्रहीन विद्यार्थी को मन्दिर की दीवारों की महीन नक्काशी स्पर्श कर अनुभव करने की अनुमति प्राप्त की थी।[२१]
- सन् '५२ में भारतीय सांस्कृतिक सद्भावना दल के सदस्य के रूप में अफगानिस्तान तथा सन् '५५ में नेपाल की यात्रा की। यहाँ भी अलग से भट्टजी के गायन का कार्यक्रम हुआ। गुरुजी इस सद्भाव-मण्डल के प्रमुख थे। गुरुजी के साथ भट्टजी ने भारत-भ्रमण किया ही, उसके अलावा अन्य दिग्गज गायक-वादकों को सुना और इस तरह अपने ज्ञान एवं अनुभव का भण्डार भरते रहे। बाद में इन्होंने स्वतन्त्र रूप से भी कार्यक्रम के सिलसिले में भारत के बड़े भाग एवं विदेश की यात्रा की जिसमें गायन के कार्यक्रम के अतिरिक्त शिक्षक शिविर तथा सोदाहरण व्याख्यान भी सम्मिलित हैं।

स्वतन्त्र रूप से भ्रमण का विवरण

'भावरङ्ग' जी ने जहाँ-जहाँ भ्रमण किया उसका संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है, इसमें भारत के राजनैतिक नक्शे के अनुसार प्रदेशवार स्थान का सूचन किया गया है-

- उत्तर प्रदेश में – कार्यस्थली वाराणसी के अतिरिक्त लखनऊ, कानपुर, बरेली तथा इलाहाबाद।
- मध्य प्रदेश (वर्तमान छत्तीसगढ़) में – मैहर, रतलाम, इन्दौर, भोपाल, रायपुर, खैरागढ़, नागपुर, अमरावती तथा जबलपुर।
- बिहार (वर्तमान झारखंड) में – पटना, छपरा, गया, आरा एवं जमशेदपुर।
- गुजरात में – बड़ौदा, आणन्द, राजकोट, भावनगर, सूरत, अङ्कलेश्वर, भरुच, साणन्द, अहमदाबाद, उकाई एवं कच्छ।
- उड़ीसा में – भुवनेश्वर एवं बहरामपुर।
- बङ्गाल में – कलकत्ता एवं उसके समीप श्रीरामपुर।
- महाराष्ट्र में – पूना, बम्बई तथा शोलापुर।
- कर्णाटक में – धारवाड़ तथा हुबली।
- पञ्जाब में – अमृतसर।
- राजस्थान में – अलवर, अजमेर, उदयपुर तथा जयपुर।

१९८० में बलवन्तराय जी को ३ माह के अमरीका प्रवास पर ले जाने के लिए एक नेत्रहीन अमरीकन छात्रा श्रीमती हैरिएट ह्यूरी ने बहुत प्रयत्न किया। इसके पूर्व सन् १९६७ में Pennsylvania University के प्रो. हेराल्ड एस. पावर्स 'विश्व-सङ्गीत शिक्षा-योजना' के अन्तर्गत अमरीकन छात्रों को भारतीय शास्त्रीय सङ्गीत में शिक्षित करने हेतु भट्टजी के गायन (६५ रागों के) को ध्वनिमुद्रित कर ले गये थे।

हैरियट के इस प्रयास में अन्य कई अमरीकन छात्रों ने भी सहयोग दिया था, जो भट्टजी से पहले भी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वाराणसी आकर सङ्गीत की शिक्षा ले चुके थे और इनकी शिक्षण-पद्धति से अत्यधिक प्रभावित थे। स्वयं अत्यन्त सामान्य स्थिति की होकर भी जितनी सूझ-बूझ एवं योजनाबद्ध तरीके से हेरियटजी ने सारा प्रबन्ध किया, वह उनकी गुरु के प्रति निष्ठा को ही द्योतित करता है। उनकी आन्तरिक इच्छा थी गुरुजी (भट्टजी) को अमरीका ले जाने की। अन्ततः उनकी दृढ़ इच्छा शक्ति और आत्मबल के कारण यह प्रवास सम्भव हो पाया।

अमरीका तथा कनाडा प्रवास में भी गायन के कार्यक्रम के साथ ही भट्टजी ने दो स्थानों पर सोदाहरण व्याख्यान भी दिये।

अमरीका तथा कनाडा प्रवास का विवरण निम्नलिखित है-

- Wesleyan University
- Amherst College
- University of Pennsylvania
- Princeton University
- Dartmouth College, Hanover
- Old Cambridge Baptist Church, Boston
- Alternative Museum
- Asia House
- University of Minnesota
- Chicago
- University of Illinois
- University of Indiana, Bloomington
- Sonoma State College, California
- Pasadena College
- San Diego State University आदि में कार्यक्रम के अतिरिक्त
- WGBH Radio पर भी कार्यक्रम का प्रसारण हुआ।

भैयाजी के सहयोगी कलाकार

पिछले पृष्ठों में बलवन्तराय जी के देश-विदेश के भ्रमण के विवरण से स्पष्ट है कि उन्होंने कार्यक्रम के सिलसिले में गुरुजी के साथ तथा स्वतन्त्र रूप से काफी भ्रमण किया है। स्वाभाविक है कि भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न सहयोगी कलाकारों के साथ उन्होंने मञ्च सम्भाला है। इसके उपरान्त देश के कई शहरों में आकाशवाणी के कलाकार के रूप में गायन प्रस्तुत किया है, अतः भिन्न-भिन्न कलाकारों के साथ परस्पर सम्वाद एवं उठने-बैठने का क्रम बनता रहा है। ऐसी अनेक औपचारिक एवं अनौपचारिक बैठकों के दौरान बलवन्तराय जी के आडम्बरहीन सरल व्यक्तित्व से उनके परिवारजनों, मित्रमण्डल एवं शिष्य समुदाय के समान ही उनके मञ्च के साथी यानि सङ्गतकार भी प्रभावित हुए हैं। जीवन की सादगी और व्यक्तित्व की सरलता 'लयकारी' करते समय मञ्च पर कैसे चमक बिखेरती है इसके वे साक्षी हैं। मञ्च पर उनके सर्वथा निराले रूप से वे अत्यन्त प्रभावित हैं। उनकी गायकी में आलापचारी के साथ राग की बढ़त, अनायास ही राग वाक्यों के साथ सजने वाले शब्द-भाव-लय के विविध शृङ्गार, बोल-बाँट, तैयार तानें, सुन्दर तिहाइयाँ तथा सर्वोपरि क्लिष्ट लयकारी है जिसका वे सभी आनन्द उठाते रहे हैं। भारत के अनेक श्रेष्ठ सारङ्गी-वादकों, वायलिन-वादकों एवं तबला-वादकों ने अत्यन्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आदर एवं प्रेमभाव से 'भैयाजी' के साथ सङ्गत की है, जिनका नामोल्लेख मैं यहाँ आवश्यक समझती हूँ।

सारङ्गी-वादकों में मरहूम उ. अब्दुल मज़ीद खाँ (बम्बई), स्व. पं. गोपाल मिश्र, (वाराणसी) मरहूम उ. नज़ीर अहमद तथा मरहूम उ. अज़ीज़ खाँ (आकाशवाणी इलाहाबाद), मरहूम उ. मोइनुद्दीन खाँ (इन्दौर), पं. रामनारायण (आकाशवाणी बम्बई), स्व. श्री दत्ताराम पर्वतकार (सूरत), श्री मधुकर खाडेलकर (पूणे), स्व. पं. हनुमान मिश्र (वाराणसी), स्व. श्री इन्दर लाल (दिल्ली), स्व. पं. बच्चालाल मिश्र (आकाशवाणी वाराणसी), स्व. पं. नारायण मिश्र तथा श्री सन्तोष मिश्र (दोनों वाराणसी), उ. सुल्तान खाँ (आकाशवाणी राजकोट) उ. अब्दुल मसीत खान तथा उ. अब्दुल लतीफ खान ने अत्यन्त प्रेमपूर्वक सङ्गति की है।

तबला-वादकों में 'ना धि धिं ना' के बादशाह स्व. पं. अनोखे लाल मिश्र (वाराणसी), स्व. पं. नारायण राव इन्दौरकर (बम्बई), पं. चतुरलाल (दिल्ली), मरहूम उ. अल्लारखा खाँ (आकाशवाणी बम्बई), उ. रहमान खाँ (अहमदाबाद), पं. निखिल घोष (बम्बई) एवं उनके पुत्र श्री नयनज्योति, उ. सुलेमान खाँ (इन्दौर), पं. शङ्कर घोष, (कलकत्ता), स्व. पं. सामता प्रसाद उर्फ गुदई महाराज, स्व. पं. किशन महाराज, स्व. पं. नागेश्वर प्रसाद मिश्र, स्व. पं. बद्री महाराज, पं. ईश्वरलाल मिश्र, पं. छोटेलाल मिश्र, स्व. श्री प्रकाश महाराज, श्री किशोर कुमार मिश्रा, श्री कामेश्वर नाथ मिश्र, तथा श्री विनोद लेले (सभी वाराणसी), पं. सुरेश तळवलकर (पुणे), श्री आनन्द गोपाल बन्दोपाध्याय (कलकत्ता), उ. करामतुल्लाह खाँ (कलकत्ता), उ. काले खाँ तथा लक्ष्मण सिंह (दोनों अमृतसर), श्री शीतला प्रसाद मिश्र (लखनऊ) उ. हबीबुद्दीन खाँ, उ. अहमद जान थिरकवा, श्री. करामत खाँ, उ. फैयाज़ खाँ, पं. लालजी श्रीवास्तव तथा श्री. किरण देशपाण्डे आदि प्रमुख हैं। अमेरिका के प्रो. हेराल्ड एस. पावर्स द्वारा ली गई Studio recording में स्व० श्री बाबूलाल पखावजी (वाराणसी) ने सङ्गत की थी।

वायलिन-वादकों में दक्षिण तथा उत्तर भारतीय शैली में समान रूप से सिद्धहस्त कलाकार विद्वान् श्री एम.एस. गोपालकृष्णन् (चेन्नै), श्री पन्नालाल चौरसिया (वाराणसी), डॉ. वसन्त रानडे (वरिष्ठ प्राध्यापक, इन्दिरा कला सङ्गीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़) तथा श्री वी० बालाजी (विद्यार्थी काल में) ने सङ्गति की है। सन् १९५९ में बम्बई के एक कार्यक्रम में बलवन्तराय जी के गायन के शिष्य डॉ. दामोदर होता ने (विद्यार्थी काल में) तबले पर सङ्गत की है।

हार्मोनियम पर साथ देने में आप के शिष्य डॉ. चित्तरञ्जन ज्योतिषी, श्री मणिभाई जे. शाह (अहमदाबाद), स्व. श्री शुकदेव भट्ट, स्व. श्री ध्रुव जी खण्डकौका (वाराणसी), श्री जयन्त स्वादिया (अहमदाबाद), श्री लक्ष्मीपति शुक्ल तथा श्री बाबूलाल अन्धारिया (भावनगर), श्री ओमप्रकाश चौरसिया (विद्यार्थी काल में) तथा श्री उमा शङ्कर मिश्र (प्रशिष्य, दोनों वाराणसी) के नाम प्रमुख हैं।

बलवन्तराय जी के प्रति इन कलाकारों के प्रेम एवं सम्मान को व्यक्त करने वाले तीन विशिष्ट प्रसङ्गों का उल्लेख यहाँ कर रही हूँ-

पहला प्रसङ्ग स्व. पं. ओम्कारनाथ जी की प्रथम पुण्यतिथि के आयोजन का। श्रद्धाञ्जलि हेतु सङ्गीत समारोह की आयोजन समिति की ओर से बनारस के प्रसिद्ध सारङ्गी-वादक पं. गोपाल मिश्र को स्वतन्त्र-वादन हेतु आमन्त्रित किया गया था। गोपाल जी पण्डित जी के साथ खूब बजा चुके थे और उनका पितृवत् आदर करते थे। उन्होंने कहला भेजा कि आएँगे भी और बजाएँगे भी, लेकिन अकेले नहीं। भैयाजी गाएँगे तब हम सङ्गत करेंगे और वही हमारी श्रद्धाञ्जलि होगी। हाँ, आयोजकों से उन्होंने एक निवेदन किया कि बहुत जाड़ा है, उँगलियाँ ठिठुर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जाएँगी, गाड़ी का प्रबन्ध करवा दें। आयोजन समिति ने उनकी इच्छा का मान रखा, उनके लिए गाड़ी की व्यवस्था की गई और निःसन्देह प्रथम पुण्यतिथि का वह कार्यक्रम यादगार कार्यक्रम हुआ, जिसमें बलवन्तराय जी ने राग कोमल आसावरी के पश्चात् राग भैरवी में 'तांडी याद लगी' टप्पा गाकर गुरु को स्मरण किया।

तबला-वादक पं. नारायण राव इन्दौरकर जी (जिन्होंने गुरुजी के कार्यक्रमों में कई बार सङ्गति की थी) किसी कार्यवश वाराणसी पधारे थे तथा अचानक सबसे मिलने की इच्छा से सङ्काय पहुँच गये। तत्कालीन सङ्काय प्रमुख प्रो. लालमणि मिश्र ने उनसे स्वतन्त्र तबला-वादन प्रस्तुत करने का अनुरोध किया, जिसके लिए वे राजी नहीं हुए, परन्तु बोले कि अगर बलवन्तराय दरबारी गायेंगे तब मैं उनकी सङ्गत करूँगा। अतः लालमणि जी ने बलवन्तराय जी को इन्दौरकर साहब के प्रस्ताव को बताते हुए गायन प्रस्तुत करने का अनुरोध किया। पितृतुल्य इन्दौरकर साहब के प्रस्ताव का सम्मान करते हुए बलवन्तराय जी ने भी स्वीकृति दी और आधे घण्टे के अन्दर सङ्काय के प्रार्थना कक्ष में गायन का एक यादगार कार्यक्रम हुआ जो परस्पर प्रेम और सम्मान के अद्भुत सामञ्जस्यपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ।

तीसरा स्मरणीय प्रसङ्ग है बनारस के लब्धप्रतिष्ठ तबला-वादक पं. किशन महाराज के साथ का। अवसर था उनके गुरु एवं ताऊ तालसम्राट स्व. पं. कण्ठे महाराज की प्रथम पुण्यतिथि का। (पं. कण्ठे महाराज, पं. ओम्कारनाथ जी के खास प्रशंसकों में से थे।) इसी अवसर पर वे अपने आवास के नवनिर्मित 'गणेश कक्ष' का उद्घाटन भी करना चाहते थे, जिसके लिए भैयाजी को निमन्त्रित करने वे स्वयं काशी हिन्दू विश्वविद्यालय स्थित सङ्गीत सङ्काय आये तथा उनसे गायन प्रस्तुत करने का अनुरोध किया। उस समय भट्ट जी के शिष्य डॉ० चितरञ्जन ज्योतिषी एवं सङ्काय के तबला सङ्गतकार श्री ईश्वरलाल मिश्र वहीं उपस्थित थे। ज्योतिषी जी बोल पड़े गुरुजी के साथ आप सङ्गत करें तो अवसर विशेष हो जायेगा। किशन महाराज ने भी तत्क्षण स्वीकृति दी और वह कार्यक्रम भी यादगार कार्यक्रम हुआ जिसमें भट्ट जी ने राग अहीर ललित प्रस्तुत किया था।

इसी प्रकार देश के विभिन्न अवसरों पर प्रस्तुत ऐसे अनेक कार्यक्रम हैं जो अभी भी श्रोताओं की स्मृति में हैं।

आध्यात्मिक रुचि एवं सत्सङ्ग

पं. बलवन्तराय भट्ट जी के व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों का अध्ययन करते समय यह बात स्पष्ट हुई है कि आरम्भ से ही उनकी रुचि अध्यात्म की ओर रही है। अचिर संसार के भौतिक सुखों की प्राप्ति हेतु अपनी शक्ति एवं मूल्यवान समय दोनों ही नष्ट करने की उनकी मानसिकता नहीं रही। अधिकाधिक सुख प्राप्त करने की लालसा या नाम कमाने की अन्धी होड़ में भट्टजी की आसक्ति कभी नहीं रही। जीवन में अनेक ऐसे अवसर आये जब कर्त्तव्य को वरीयता देकर जागतिक दृष्टि से होने वाले बड़े लाभ को उन्होंने अस्वीकार कर दिया। छोटी-बड़ी अनेक असफलताओं को उन्होंने अपने मन पर बोझ नहीं बनने दिया। 'निराश नहीं होना, प्रयत्न चालू रखना' यही उनका उपदेश है, गुरुमन्त्र है, अपने विद्यार्थियों के लिए। जिस समाधान और जीवट के साथ बलवन्तराय जी ने जीवन की कठिनाइयों का सामना किया है वह आत्मबल कहाँ से सञ्चित हुआ? किस प्रभाव से वे इस जटिल संसार में रहते हुए भी आत्मा के उन्नयन की ओर आकर्षित रहे? आत्मबल के उस उत्स को यहाँ देखने का प्रयास किया गया है।

बलवन्तराय जी का जन्म निम्न मध्यवर्ग के परिवार में हुआ था, अतः बचपन लगभग अभावग्रस्त रहा,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सुविधाभोगी नहीं। अल्पायु में चेचक के प्रकोप से मिली दृष्टिहीनता को दैवयोग मानकर स्वीकार किया एवं घर-परिवार से काफी दूर 'ब्लाइण्ड स्कूल' (Blind School) के कड़े अनुशासन में २० वर्ष की वय तक जीवन बिताया। इसी बीच पं. ओमकारनाथ जी ठाकुर के यहाँ सङ्गीत सीखने, सिखाने तथा निज के अभ्यास में संलग्न रहने का क्रम चालू रहा।

जहाँ चर्म-चक्षु छिन जाने के कारण भौतिक संसार की तड़क-भड़क से आकर्षित होकर उसे प्राप्त करने के लोभ से वे बचे रहे, वहीं बचपन से लेकर युवा होने तक (V.M. School for the Blind तत्पश्चात् पण्डित जी के पास सीखने का समय) का जीवन कड़े सङ्घर्ष का रहा। दोनों ही विद्यालयों में विद्यार्थियों से जितने कड़े अनुशासन की अपेक्षा रहती थी, उन स्थितियों में 'सुविधा' और 'साधन' के बारे में विचार करने का अवकाश भी नहीं था। आर्थिक स्थिति भी साधनहीनता का एक कारण थी।

ऐसा नहीं है कि प्रत्येक नेत्रहीन व्यक्ति भौतिकता की लालसा से अपने को निस्पृह रख पाता है अथवा मात्र आत्मा के उन्नयन की ओर ही अपना ध्यान केन्द्रित करता है। अध्यात्म की ओर झुकाव व्यक्तिगत रुचि पर भी बहुत निर्भर करता है। भट्ट जी के सन्दर्भ में आत्मा के उन्नयन के प्रति सजगता और प्रयत्न के पीछे मुख्य कारण उनकी अपनी अभिरुचि है, नेत्रहीनता एवं जीवन की विषम परिस्थितियाँ तो अपर कारण हैं।

वय के साथ जैसे-जैसे बलवन्तराय जी का मानस परिपक्व होता गया और गुजराती तथा हिन्दी के श्रेष्ठ-कवियों की कृतियों को सुनने का अवसर मिला, उनकी आध्यात्मिक रुचि को बल मिला। कालान्तर में अनेक साधु-सन्तों के सत्सङ्ग का लाभ मिला एवं उनके प्रवचनों को भट्टजी ने आत्मसात् किया। गुजरात के कवियों में विशेष रूप से कवि न्हानालाल के अतिरिक्त अखाभगत की वाणी से वे प्रभावित हुए।[२२] अखाभगत जाति से सोनार थे, अत्यन्त सज्जन एवं ईमानदार। जीवन के कुछ अत्यन्त कटु अनुभवों से व्यथित होकर वे गुरु की खोज में काशी आये थे, यहाँ एक महात्मा के सान्निध्य में तीन वर्ष रहकर वापस अहमदाबाद चले गये। वहाँ जाने के बाद उन्होंने लिखना आरम्भ किया। विशेष रूप से सत्सङ्ग की महिमा पर ही अधिक लिखा। उदाहरणार्थ-

श्वान, शूकर ने विडाल, खर, तेना टोळा नुं जे जन्त।
तेने मूके हरि करी, जेने मळे सतगुरु सन्त।।

अर्थात् जिसे सद्गुरु का मार्ग-दर्शन एवं साथ मिल जाए वह कुत्ते, सूअर, बिल्ली और गधे जैसे जीव को भी भगवान् बना देता है।

काशीवास करने के कारण अखाभगत ने कुछ पद हिन्दी में भी लिखे थे। एक उदाहरण-

अचानक ज्ञान - घटा घिर आई,
अनुभव जल बरखा बड़ी बूँदन, कर्म की कीच रेलाई
x x x x x x x x x x x x x
शुक सनकादिक शेष सराहे सोई अखापद पाई।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में नियुक्ति के बाद एक प्रसङ्ग महत्त्वपूर्ण है जिससे स्पष्ट हो जाता है कि भट्ट जी ने आर्थिक दृष्टि से अन्य कोई सम्बल न होने पर भी मात्र पैसा कमाने को अपना लक्ष्य नहीं समझा। अगस्त सन् '५० में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में 'श्री कला सङ्गीत भारती' की स्थापना हुई थी। उसी वर्ष दशहरे की छुट्टियों में बलवन्तराय जी वापस भावनगर गये। छुट्टियाँ समाप्त होने पर बनारस न आकर बम्बई श्री चन्द्रकान्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पुरोहित के यहाँ चले गये। विश्वविद्यालय की कार्यालयीय व्यवस्था तथा कतिपय अन्य कारणों से खिन्न होकर उन्होंने नौकरी छोड़ने का मन बना लिया था एवं एक ढङ्ग से अज्ञातवास कर रहे थे। बनारस में भी किसी को कुछ बताया नहीं था। बम्बई से वे अन्यत्र जाना चाहते थे किन्तु पुरोहित जी ने जाने नहीं दिया और भट्टजी के बम्बई में होने की खबर अन्य मित्र को दी। घाटकोपर में पुरोहित जी के यहाँ रहते हुए वे जगु भाई नामक व्यक्ति के बच्चों को सङ्गीत सिखाने लगे। बच्चों को सिखाने का पैसा वे नहीं लेते थे। पुरोहित जी की सूचना पर पण्डित जी के अन्य शिष्य श्री प्रागजी डोसा ने चुपचाप दीदी माँ (पं. ओम्कारनाथजी की मानी हुई बहन) को बलवन्तराय जी के बम्बई में होने की सूचना दी। वे सूरत से आईं और भट्टजी को कहा 'तुम्हें बनारस अच्छा लगे या न लगे, तुम्हें वहाँ रहना है, माँ समान दीदी माँ की बात वे टाल नहीं सके, फिर गुरुजी का पत्र भी आ गया। भट्टजी वापस ११ अप्रैल ५१ को बनारस आ गये। बम्बई छोड़ते समय जगु भाई ने बलवन्तराय जी को उनकी रुचि परख कर गाँधी जी के प्रवचनों का सङ्ग्रह 'राम-नाम-आधार' तथा अंग्रेजी भाषा में स्वामीरामतीर्थ-साहित्य के १० खण्ड भेंट में दिए। इस तरह अनायास उनके पास भौतिकता की लालसा से निर्लिप्त दो महापुरुषों की विचारधारा के रूप में साहित्य एकत्रित हो गया।

बलवन्तराय जी को जिन महात्माओं एंवं सन्तों का सत्सङ्ग-लाभ मिला उनमें से कुछ नाम इस प्रकार हैं- स्वामी स्वयंज्योति तीर्थ जी (स्वामी रामतीर्थ के शिष्य श्री नारायण तीर्थ एवं उनके शिष्य स्वयंज्योति जी)। स्वयंज्योति जी भट्टजी के दूर के रिश्ते में भी थे एवं उनके ऊपर अपार स्नेह रखते थे। दूसरा महत्त्वपूर्ण नाम है लक्ष्मण-किलाधीश श्री सियारामशरण जी महाराज का, ये प्रायः मालवीय भवन में कथा करने आते थे। इनके अतिरिक्त प्रत्यगात्मानन्द स्वामी, श्री कृपालु महाराज, श्री दैवरात महाराज, पं. गोपीनाथ कविराज, श्री अतुल कृष्ण गोस्वामी, माता आनन्दमयी, सुश्री विमल ठकार तथा पूज्या शरद वल्लभा बेटी जी महाराज आदि से भट्टजी का काफी मिलना हुआ। स्नेही जनों में विख्यात थियोसॉफिस्ट श्री रोहित मेहता तथा डॉ. राजेन्द्र नारायण शर्मा (भूतपूर्व प्रोफेसर, हिन्दी, काशी विद्यापीठ) से विशेष विचार-विमर्श एवं वैचारिक आदान-प्रदान का क्रम वर्षों तक चला। अनेक अवसरों पर स्थानीय श्री रामकृष्ण मिशन तथा श्री साधुबेला आश्रम में भजन-गायन हेतु तथा श्री नागरी प्रचारिणी सभा में 'मानस' के गायन हेतु जाते रहे। नागरी प्रचारिणी सभा में 'मानस' की चौपाइयों के गायन की सूचना समाचार-पत्र में पढ़कर तत्कालीन चान्सलर काशीनरेश श्री विभूति नारायण सिंह जी ने व्यक्तिगत निमन्त्रण भेजकर भट्टजी को बुलवाया। अनेक वर्षों तक भट्ट जी ने 'बुढ़वा-मंगल'[२३] के अवसर पर काशीनरेश के निमन्त्रण पर 'मानस' की चौपाइयों का गायन किया।

इस प्रकार बलवन्तराय जी की आध्यात्मिक रुचि सत्-साहित्य के श्रवण से पनपी और सन्तों के सान्निध्य में पल्लवित हुई। गुजराती भाषा के उनके आरम्भिक लेखन में भी भौतिक संसार के भ्रम-जाल में न फँसकर सही मार्ग खोजने का सन्देश मिलता है। युवावस्था में जब सामान्यतया व्यक्ति सांसारिक आकर्षणों में बँधकर जीवन की कोमल कल्पनाओं के सहारे सुखद एवं रङ्ग-बिरङ्गे स्वप्न देखने की अभिलाषा रखता है, उस समय भी २९ वर्ष की अवस्था में भट्टजी द्वारा लिखी गुजराती कविता 'आत्मदर्शन' इस बात का सङ्केत देती है कि 'देह' से परे 'चैतन्य' के तत्त्व को पहचान पाना एक अत्यन्त विशिष्ट वैचारिक स्तर के बिना सम्भव नहीं।

यहाँ बलवन्तराय जी की एक रचना प्रस्तुत है जो उन्होंने अखाभगत की वाणी से प्रेरित होकर लिखी है जिसमें निराकार, अरूपी, स्वयं-प्रकाशित, समत्व, अनन्त में विहार तथा कुछ भी घटित होने के लिए किसी वस्तु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की अपेक्षा का न होना इस तरह के भाव व्यक्त हुए है-

स्थायी - अवधू! ऐसा रूप तुम्हारा।
रूप अरूपी, रङ्ग रङ्गीला, बिना अगन उजियारा।।

अन्तरा -१ नाहिंन सजत सजाव न कोऊ, आपै आप सँवारा।
बना न बिगरा सहज सलोना, समता का सिङ्गारा।।

अन्तरा-२ पञ्छीवत पथ अम्बर माँहि, धरा-धर्म सों न्यारा।
भूतल जाल परी परछाँई, आप अनन्त विहारा।।

अन्तरा -३ ध्याता ध्येय ध्यान होइ आपहि, ब्रह्म भाव विस्तारा।
आतम में परमातम पाया, त्रिभुवन तारनहारा।।[२४]

पं. ओमकारनाथ ठाकुर 'प्रणव-रङ्ग' जैसे गुरु की कृपा भट्ट जी के जीवन की अनमोल धरोहर है, भगवद्-भक्ति जीवन का लक्ष्य तथा सङ्गीत द्वारा भगवद्-भजन कर पाने का सन्तोष ही उनके व्यक्तित्व का सही अर्थों में परिचय है। निम्न पंक्तियों से भट्टजी के व्यक्तित्व में संश्लिष्ट आध्यात्मिक-रूप की पुष्टि होती है।

नेत्रहीन तन मोंहि प्रिय, भयौ नाद सन्धान।
नारद सों वर पायऊ, सीयराम गुनगान।।
सीयराम गुणगान, गीत प्रीत सों गाऊँ।।
स्वर-पद-ताल-विधान, 'भावरङ्ग' रङ्गाऊँ।।
गीत-राग-सर हंसमति, सद्गुरु कृपा प्रमान।
पान करौं हरिगान रस 'प्रणव रङ्ग' वरदान।।[२५]

समाज-सेवा

बालवय में ही दृष्टिबाधा से पीड़ित बालक बलवन्तराय ने अपने घर भावनगर से सैकड़ों मील दूर बम्बई के V.M. School for the Blind में अपना शालेय शिक्षण प्राप्त किया था। उस अबोधवय में अत्यन्त कड़े अनुशासन में रहना पड़ा तथा आरम्भ में छोटी-छोटी त्रुटियों के लिए मार भी खानी पड़ी। नेत्रज्योति न होने से कई चीजों से वञ्चित रहना पड़ा, अतः एक नेत्रहीन व्यक्ति के सामने आने वाली कठिनाइयों से वे पूर्णतया परिचित थे। सूरत में रहते हुए भट्टजी National Association for the Blind नामक संस्था से जुड़ गये। बाद में इसकी शाखा बम्बई में भी खुली। इस संस्था से जुड़कर उन्होंने नेत्रहीन विद्यार्थियों को 'ब्रेल अलार्म घड़ी' (Braille Alarm Clock) तथा केवल नेत्रहीनों द्वारा प्रयोग में लाई जाने वाली विशेष छड़ी[२६] निःशुल्क दिलवाने की व्यवस्था की। स्थिति-सम्पन्न व्यवसायियों से तथा रोटरी क्लब जैसी संस्थाओं से सम्पर्क करके यह सहायता कार्य किया।

स्वयं समय देखने के लिए घड़ी एवं रास्ते में अकेले चलने के लिये छड़ी एक नेत्रहीन व्यक्ति की अनिवार्य आवश्यकता होती है। साथ ही यह ब्रेल घड़ी विकलाङ्गता का कष्ट और तज्जन्य सीमाओं के रहते हुए भी उस व्यक्ति में आत्मविश्वास पैदा करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

नेत्रहीन-भाई-बहनों को सहायता करने की उनकी प्रवृत्ति काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में नियुक्त होकर वाराणसी आने के उपरान्त भी बनी रही। 'नेत्रहीन सहायक सङ्घ' तथा National Federation for the Blind

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की वाराणसी शाखा के अध्यक्ष पद से भट्टजी ने लगभग दो दशक तक सेवा कार्य किया। अपने सम्पर्क का उपयोग उन्होंने अपने लिए नहीं, वरन् नेत्रहीन विद्यार्थियों की सहायता हेतु किया। घड़ी तथा छड़ी वितरण के अतिरिक्त स्थानीय हनुमान प्रसाद पोद्दार अन्ध-विद्यालय में कुर्सी बुनना सीखने वाले बच्चों को Plastic के Cane उपलब्ध करवाए। स्थानीय डीजल रेल कारखाना के महाप्रबन्धक तथा जन-सम्पर्क अधिकारी से मिल कर उन्हें भी नेत्रहीन सहायक सङ्घ का सदस्य बनाया तथा नेत्रहीन विद्यार्थियों को काम दिलवाने में मदद की। डी.एल. डब्ल्यू. के परिसर में प्रदर्शनी लगाकर नेत्रहीन बच्चों को विविध कार्य करते हुए दिखाया जाता था, तथा इसी प्रकार स्थानीय टाउन हॉल में लगभग एक महीने तक चलने वाली प्रदर्शनी में भी नेत्रहीन सहायक सङ्घ का एक स्टॉल लगवा कर नेत्रहीन व्यक्तियों के उपयोग की वस्तुएँ तथा उनके द्वारा किए जा सकने वाले कार्यों को भी दिखाया जाता था, जिससे समाज के अन्य लोग उन्हें भी समाज के हित में उपयोगी समझें।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ. कालूलाल श्रीमाली से मिलकर विश्वविद्यालय की सभी कक्षाओं के नेत्रहीन विद्यार्थियों हेतु निःशुल्क शिक्षा की तथा परीक्षा में आधे घण्टे का समय अधिक देने की व्यवस्था करवाई। इस प्रकार व्यक्तिगत अनुभव के कष्टों को याद रखते हुए बलवन्तराय जी दूसरों के दुख को कम करने तथा हर सम्भव सहायता करने की भावना से समाज सेवा का कार्य करते रहे।

जीवन के कुछ विशिष्ट स्मरणीय प्रसङ्ग

प्रत्येक मनुष्य के जीवन में अनेक ऐसी घटनाएँ घटती हैं जिनकी अमिट छाप आजीवन उसके तथा अन्य निकटवर्ती जनों के मानस पटल पर अङ्कित रहती हैं। ये घटनाएँ निजी पारिवारिक जीवन, कार्यक्षेत्र से सम्बद्ध अथवा अधिक विस्तृत पैमाने पर राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व की भी हो सकती हैं। भट्टजी भी ऐतिहासिक महत्त्व के अनेक गौरवपूर्ण क्षणों के साक्षी रहे हैं। यहाँ कुछ ऐसे प्रसङ्गों का उल्लेख कर रही हूँ जिनका समावेश 'जीवन-परिचय' के अन्तर्गत नहीं हुआ है।

'श्री कला सङ्गीत भारती' की स्थापना की पूर्व पीठिका

सन् १९४३ के अक्टूबर माह में पं. ओम्कारनाथ जी ठाकुर इलाहाबाद विश्वविद्यालय के सङ्गीत सम्मेलन में आये थे तब महामना पं. मदन मोहन मालवीय जी के दर्शनार्थ भी गये थे। मालवीय जी उस समय अस्वस्थ थे। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि काशी हिन्दू विश्विविद्यालय में सङ्गीत का महाविद्यालय खुले, अतः पण्डित जी से उनका आग्रह था कि वे उनके स्वप्न को साकार करने में सहयोग दें। पण्डित जी की पहली प्रतिक्रिया थी कि मैं बँध कर नहीं रह सकता। कारण स्पष्ट था। पं. ओम्कारनाथ जी उस समय सङ्गीताकाश में चमकते हुए सूर्य के समान थे, अतः देश के प्रत्येक छोटे-बड़े सङ्गीत समारोह के आयोजक उनकी उपस्थिति चाहते थे। स्वयं अनुशासन के आग्रही होने के कारण वे भली-भाँति जानते थे कि संस्थागत प्रणाली में बँध जाने पर बारम्बार कार्यक्रम के लिए जाना सम्भव नहीं होगा और उचित भी नहीं होगा। फिर भी मालवीय जी ने उनसे पुनः विचार करने को कहा। इस मुलाकात के समय भट्टजी अपने गुरुजी के साथ ही थे। जब उन्होंने मालवीय जी के चरण स्पर्श किये तब गुरुजी ने अपने विद्यार्थी का परिचय देते हुए कहा कि यह मेरा विद्यार्थी है और सर प्रभाशङ्कर पट्टणी की ज्ञाति का है। पट्टणीजी भावनगर राज्य के दीवान थे। प्रसन्न होते हुए साधुमना मालवीय जी ने आशीर्वाद दिया 'चिरञ्जीव'। भट्टजी इस अवसर को अपना बड़ा सौभाग्य मानते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना कर समाज में लड़के और लड़कियों दोनों को ही शिक्षा का अवसर सुलभ कराने में महामना के अमूल्य योगदान के बारे में भट्टजी सुन चुके थे। महामना विशेष रूप से युवाओं में देश-प्रेम की भावना जागृत करना चाहते थे इसी कारण वे औपचारिक शिक्षा के साथ ही विद्यार्थियों के चरित्र-निर्माण पर अत्यधिक बल देते थे। ऐसी दूरगामी दृष्टि रखने वाले युगपुरुष का साक्षात्कार नितान्त सहजता से होना तथा उतनी ही आत्मीयता से आशीर्वाद प्राप्त करना उनके लिए विशेष महत्त्व का है। इस घटना ने भट्टजी के हृदय पर गहरा प्रभाव छोड़ा। नेत्रहीनता के कारण साक्षात् मिलने का सौभाग्य होने पर भी वे उनको चर्मचक्षुओं से नहीं देख सकते थे, किन्तु उनके स्वभाव की सरलता, धर्म के प्रति आस्था तथा गुण ग्राहकता को उन्होंने अनुभव किया।

इस घटना के पश्चात् लगभग दो वर्षों के बाद यानि सन् १९४५ में ओम्कारनाथ जी का आगमन काशी में हुआ तथा काशी के रईस श्री माधवराम सण्ड के यहाँ उनका निवास था। इस यात्रा में पण्डित जी के साथ बलवन्तराय जी के अतिरिक्त श्री चीमनलाल त्रिवेदी भी थे, जिनका मानना था कि पृथक् रूप से सङ्गीत का विश्वविद्यालय खुले। अतः पण्डित जी ने तत्कालीन कुलपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् से इस सन्दर्भ में बात की। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने इस प्रस्ताव पर आने वाली कानूनी कठिनाइयों, वित्तीय समस्याओं तथा प्रशासनिक सीमाओं से अवगत कराते हुए स्पष्ट किया कि दो विश्वविद्यालयों के बीच कुछ दूरी होना अनिवार्य है। अतः महाविद्यालय के रूप में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का अङ्ग होने से ही हम सहायता कर पाएँगे। इस प्रकार अनेक सम्भावनाओं पर विचार करके सङ्गीत महाविद्यालय खोलने पर सहमति हो गई तथा पं. ओम्कारनाथ ठाकुर ने भी महाविद्यालय का प्राचार्य पद सम्भालने की स्वीकृति दे दी।

अन्ततोगत्वा सन् १९४९ के दिसम्बर माह में विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर सङ्गीत महाविद्यालय खोलने की आधिकारिक घोषणा की गई। शनिवार १९ अगस्त १९५० के दिन 'श्री कला सङ्गीत भारती' नाम से विश्वविद्यालय में सङ्गीत महाविद्यालय का उद्घाटन हुआ। इस समय पं. गोविन्द मालवीय कुलपति थे। सदा की भाँति बलवन्तराय जी इस उद्घाटन समारोह में अपने गुरुजी के साथ उपस्थित थे। वे भी विश्वविद्यालय में नियुक्त हुए थे। यहाँ यह उल्लेख अस्थानीय नहीं होगा कि दिनाङ्क २१ अगस्त को उन्होंने ही श्री राजाभाऊ सोनटक्के की गायन की पहली कक्षा ली थी।

सङ्गीत महाविद्यालय में नियुक्ति के व्याज से काशीवास का अवसर मिला, इसे बलवन्तराय जी महामना के दर्शन एवं उनसे मिले आशीर्वाद का ही पुण्यलाभ मानते हैं। पवित्रता की मूर्ति, महामना के उदार व्यक्तित्व के प्रति उनका हृदय श्रद्धावनत था ही, लोकमङ्गल की भावना से सम्पृक्त, दृढ़ निश्चयी, कर्म के प्रति आस्थावान्, उनके धर्मपरायण व्यक्तित्व को रेखाङ्कित करते हुए उन्होंने १९६१ में मालवीय जी की जन्मशताब्दी के अवसर पर 'महामना-स्तुति' लिखी तथा उसे राग-तालबद्ध कर अपने नेतृत्व में सङ्गीत एवं ललित कला सङ्काय के छात्र-छात्राओं से प्रस्तुत करवाया। उक्त रचना के शब्द इस प्रकार हैं-

स्थायी - हे! महामना महान् ।
आज भव्य भारत गावत तव विमल यशोगान।

अन्तरा - बीते वर्ष शत एक, हुए अनघ तव दिव्य अवतरण,
पुण्यश्लोक! तव सुकृत स्मरत लोकमङ्गलकरन,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कर्मवीर पुनि धर्मवीरवर, धन्य नाम तव मदन मोहन को
रङ्गयो 'भाव' हिय सर्वदा शिव समान।[२७]

यही रचना बाद में भी सङ्गीत सङ्काय के रजत-जयन्ती समारोह में (१९७५) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के पूर्व छात्र समागम (२००८) तथा भावरङ्ग ध्वनि-मुद्रिका लोकार्पण समारोह में (दिसम्बर २००८) आदि अनेक अवसरों पर सफलतापूर्वक प्रस्तुत की गई।

स्वतन्त्र भारत के स्वर्णिम प्रभात में 'वन्दे मातरम्' के दिव्य गायन के साक्षी

सैकड़ों वर्षों की पराधीनता के पश्चात् भारतवर्ष ने 'बापू' के रूप में ऐसा नेतृत्व पाया जिसने ब्रिटिश साम्राज्य की सैन्य शक्ति को अहिंसा की शक्ति के आगे घुटने टेकने को बाध्य किया। हज़ारों देशभक्तों का अपने तिरङ्गे को प्रतिष्ठित करने के लिए किया गया बलिदान रङ्ग लाया। १४ अगस्त सन् १९४७ बीतने के साथ पराधीन भारत के अन्धकारमय युग की समाप्ति होनी थी। १५ अगस्त का स्वर्णिम विहान स्वतन्त्र भारत का होना था और देश को इस ऐतिहासिक अवसर का भव्य स्वागत करना था।

उस समय पं. ओम्कारनाथ जी कार्यक्रम के सन्दर्भ में दक्षिण भारत की यात्रा पर थे। वहीं १०-११ अगस्त को Madras Radio के Director ने उनसे सम्पर्क करके सरदार वल्लभभाई पटेल का सन्देश दिया कि आप को 'वन्दे मातरम्' गाना है। पण्डित जी की शर्त थी कि गाएँगे तो पूरा गाएँगे। शर्त स्वीकृत हुई। उसके अनुसार पण्डित जी अपने प्रज्ञाचक्षु शिष्य को साथ लेकर दिल्ली पहुँचे। १५ अगस्त प्रातः ६.३० बजे All India Radio के Studio में खड़े होकर पण्डित जी ने पूरा 'वन्दे मातरम्' गाया। नव प्रभात के भव्य स्वागत में 'वन्दे मातरम्' के दिव्य गान से सारा देश रोमाञ्चित था, उस ऐतिहासिक अवसर पर भी बलवन्तराय जी अपने गुरुजी के पीछे दाहिने हाथ तानपूरा लेकर खड़े थे। ऐसे क्षणों का साक्षी होना भी अपने आप में गौरव की बात है।

'श्री कला सङ्गीत भारती' की विशेष प्रस्तुतियाँ

'श्री कला सङ्गीत भारती' की स्थापना के पश्चात् आरम्भिक वर्षों में महाविद्यालय की ओर से मञ्च-प्रस्तुति के रूप में अनेक अभिनव प्रयोग हुए। 'श्री कला सङ्गीत भारती' का प्राचार्य पद सँभालते हुए पण्डित जी ने हिन्दी साहित्य के मूर्धन्य कवि श्री जयशङ्कर 'प्रसाद' की दो अनमोल कृतियों 'कामायनी' (महाकाव्य) तथा 'कामना' (नाटक) के चुने हुए अंशों को स्वरबद्ध कर छात्राओं से अभिनीत करवाया था जिसकी स्मृति आज भी सुज्ञ दर्शकों के स्मृति-पटल पर ज्यों की त्यों अङ्कित है। 'कामायनी' तथा 'कामना' के सन्दर्भ में यह उल्लेख अप्रासङ्गिक न होगा कि पं. ओम्कारनाथ ठाकुर जी की स्वरों के प्रति सम्वेदनशीलता, राग के हार्द का ज्ञान, काकु-प्रयोग के प्रति चेतना एवं साथ ही उनकी साहित्य के प्रति गहरी समझ ही प्रसङ्ग तथा भावानुकूल स्वर-योजना के लिए कारणभूत हुई। 'कामना' के गद्य सम्वादों को स्वरबद्ध करना अपने आप में एक बड़ी चुनौती थी, जिसका कुशलतापूर्वक निर्वाह हुआ। इन प्रयोगों को देखकर हिन्दी के विद्वान पं. पद्मनारायण आचार्य जी की प्रतिक्रिया थी कि 'कामायनी' के मर्म को ठीक-ठीक अब समझ पाया हूँ। कहना न होगा कि इस महत् प्रयास में बलवन्तराय जी ने सदा की भाँति पूरा सहयोग किया। 'कामायनी'[२८] के मञ्चन के समय अर्थात् ३ दिसम्बर १९५० को बलवन्तराय जी वाराणसी में नहीं थे, किन्तु सन् १९५२ में 'कामना' के पार्श्व-सङ्गीत में इसराज पर सङ्गति की थी। सन् १९६० में श्री रमणलाल व देसाई द्वारा लिखित नाटक 'बैजू बावरा' की प्रस्तुति में बलवन्तराय जी ने पार्श्व-गायन किंया था जो कि यादगार प्रस्तुति थी। इस नाटक का निर्देशन प्रेमलता शर्मा जी ने किया था।[२९]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'प्रणव-प्रसाद' में गुरुजी का आनन्दोद्गार 'शिष्याद् इच्छेत् पराजयम्'

विश्वविद्यालय से सेवा निवृत्त होने के बाद पण्डित जी कुछ समय तक विश्वविद्यालय के सिंहद्वार के पास लङ्का में रहे। कुछ समय पश्चात् उन्होंने भड़ौंच में एक बहुत बड़ा मकान लिया। उस मकान का नाम 'प्रणव-प्रसाद' रखा गया जिसका गृह-प्रवेश ५ अक्टूबर १९६५ में दशहरा के दिन रखा गया। इस अवसर पर पण्डित जी के कई स्नेही मित्र अलग-अलग स्थानों से भड़ौंच पहुँचे थे। बलवन्तराय जी एवं प्रेमलता शर्मा जी वाराणसी से भड़ौंच गये थे। आरम्भिक हवन पूजन के उपरान्त गुरुजी ने हार्मोनियम मँगवाकर माताजी (माँ दुर्गा) की स्तुति में २-३ श्लोक गाये जिसके बाद वहाँ उपस्थित लोगों ने पण्डित जी से गायन प्रस्तुत करने का आग्रह किया। उन्होंने तुरन्त अपने शिष्य को इङ्गित करते हुए कहा कि अब आप लोग इनको सुनिए, इनके पास जो है वह मेरे पास भी नहीं है। अपने शिष्य की योग्यता पर कितना भरोसा था। गुरु के आदेश को टालने का कोई प्रश्न ही नहीं उङ्गता था। उस दिन भट्टजी ने अपनी कुछ बन्दिशें सुनाईं और ताल का विशेष प्रदर्शन किया जिसमें पूर्ण एकाग्रता नितान्त आवश्यक है। दोनों हाथों से दो अलग तालों को प्रदर्शित करते हुए मुँह से तीसरे ताल का ठेका बोलते हुए एक साथ 'सम' का दिग्दर्शन किया। अपने शिष्य का ताल के ऊपर ऐसा प्रभुत्व देखकर गुरुजी की प्रसन्नता का पारावार नहीं रहा एवं उनके मुख से निकला 'शिष्याद् इच्छेत् पराजयम्'।

नाट्याचार्य पृथ्वीराज कपूर के स्नेहपाश में

सन् १९६८, मुम्बई में गुरुवर स्व. पं. ओम्कारनाथ ठाकुर की प्रथम पुण्यतिथि का आयोजन था। मञ्च पर श्री प्रागजी डोसा, श्री चीमनभाई पटेल (भू०पू० मुख्यमंत्री) श्री पृथ्वीराज कपूर और श्री बलवन्तराय जी के साथ एक अन्य नेता आसीन थे। श्री पृथ्वीराज कपूर ने मञ्च पर सबसे यथोचित आदर-सम्बोधन करते हुए बलवन्तराय जी के हाथ में हाथ देते हुए कहा "बलवन्तराय जी, नमस्कार, मैं पृथ्वीराज कपूर।" इस व्यवहार से अभिभूत भट्ट जी के मुख से निकला "धन्य हैं वो जो विनम्र हैं, क्योंकि 'पृथ्वी' का 'राज' उन्हीं का है।" यह सुनकर पुनः पृथ्वीराज जी ने झुककर भट्ट जी का हाथ चूम लिया।

'वन्दे मातरम्' शताब्दी समारोह में 'वन्दे मातरम्' का गायन

स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौरान जन-जन में राष्ट्रीयता की भावना को जागृत करने में साहित्यकारों की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण रही है। मातृभूमि की भक्ति में देश-प्रेम को व्यक्त करने वाली अनेक कविताएँ एवं गीत बहुप्रचलित हुए। उसमें बाङ्ग्ला भाषा में रचित बङ्किम बाबू के 'आनन्द मठ' का प्रसिद्ध गीत 'वन्दे मातरम्', श्री रामप्रसाद बिस्मिल की रचना 'सर फरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है, देखना है ज़ोर कितना बाज़ुए क़ातिल में है' तथा राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त द्वारा रचित महाकाव्य 'भारत-भारती' अति विशिष्ट स्थान रखते हैं।

'वन्दे मातरम्' गीत की अनेक धुनें हैं। स्वयं कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने इसे राग-देश में बाँधा था, वही धुन आज भी आकाशवाणी के केन्द्रों से प्रातः प्रसारित होती है। स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौरान काँग्रेस के अधिवेशनों में पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी अपने विद्यार्थियों के साथ राष्ट्रभावना वाले गीत प्रस्तुत करने जाते थे। ऐसे अवसरों के लिए पलुस्कर जी ने 'वन्दे मातरम्' को राग बङ्गीय काफी में बाँधा था। पं. ओम्कारनाथ जी ने अपने गुरुजी द्वारा बनाई धुन को इस तरह सजाया कि वह उनकी अपनी पहचान बन गई। 'वन्दे मातरम्' गीत में निहित ओज, माधुर्य तथा भक्ति आदि समस्त भावों का निचोड़ उनके प्रस्तुतीकरण में था। काकु-प्रयोग में सिद्धहस्त पण्डित जी ने भावानुकूल स्वर संयोजन के साथ अपने कण्ठ की समृद्धि का भरपूर प्रयोग करते हुए इसे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दिव्य गान बना दिया था। अपने गुरु के सान्निध्य में उनके गायन की बारीकियों को आत्मसात् करने वाले भट्टजी ने भी मौलिकता के साथ अनेक बार गणतन्त्र दिवस तथा स्वतन्त्रता दिवस जैसे राष्ट्रीय पर्वों पर विश्वविद्यालय के एम्फी थिएटर मैदान तथा मालवीय भवन में उसी 'वन्दे मातरम्' का ओजपूर्ण गान किया है।

इन अनेक अवसरों में विशिष्टतम है काशी के विख्यात भारतमाता मन्दिर के प्राङ्गण में 'वन्दे मातरम्' के शताब्दी समारोह का अवसर। इस आयोजन का शुभारम्भ दिनाङ्क १ अक्टूबर १९७६ को हुआ, जिसकी अध्यक्षता काशी विद्यापीठ के तत्कालीन कुलपति प्रो. राजाराम शास्त्री ने की थी। समारोह समिति के महामन्त्री डॉ. भानुशङ्कर मेहता के विशेष आग्रह पर भट्टजी ने उस समारोह में अपने गुरुजी द्वारा स्वरबद्ध किया 'वन्दे मातरम्' पूरी भव्यता के साथ प्रस्तुत किया। उस भावपूर्ण तथा ओजस्वी प्रस्तुति से उपस्थित जन-समुदाय भाव-विह्वल हो उठा।[३०]

अमेरिका प्रवास से लौटते समय भावभीनी विदाई

कार्यक्रमों एवं सोदाहरण व्याख्यानों के सिलसिले में स्वतन्त्र रूप से देश-विदेश भ्रमण के विवरण के अन्तर्गत इस बात का उल्लेख मात्र हुआ है कि श्रीमती हेरियट ह्यूरी नामक एक नेत्रहीन महिला (इन्होंने वाराणसी में बलवन्तराय जी से व्यक्तिगत रूप से सङ्गीत की शिक्षा भी ली थी) ने ही भट्टजी के अमरीका प्रवास की योजना बनाई थी। प्रवास के दौरान एक भारतीय परिवार के साथ उनके (स्वयं भट्टजी, पं. छोटेलाल मिश्र जो तबला सङ्गत हेतु वाराणसी से ही साथ गये थे तथा भट्टजी की ज्येष्ठ सुपुत्री स्वरवन्दना) ठहरने की व्यवस्था से लेकर विभिन्न संस्थाओं एवं विश्वविद्यालयों में गायन तथा व्याख्यान आयोजित करने के साथ ही अमेरिका भ्रमण करने की पूरी रूपरेखा अत्यन्त कुशलता से बनाई थी। वहाँ कुछ एक विद्यार्थी व्यक्तिगत रूप से सीखने भी आते थे। डेनियल बिटकर नाम का विद्यार्थी जो भट्टजी से वाराणसी में रहते हुए गायन एवं वंशी सीख रहा था, स्वयं सेक्साफोन (पाश्चात्य सुषिर वाद्य) का अच्छा वादक है।

अमेरिका प्रवास पूरा करके जब भट्टजी को भारत आना था उस दिन यानि ४ दिसम्बर १९८० को Daniel Bittker तथा Steven Gorn ने विदाई के रूप में New York के J.F. Kennedy Air Port पर ही 'भैरवी' की धुन बजाई। विदा देने के इस अनोखे तरीके को याद करके वे अभी भी अभिभूत हो उठते हैं। शास्त्रीय सङ्गीत के रसिक यह जानते ही हैं कि 'भैरवी' सामान्यतया कार्यक्रम के समापन अंश के रूप में गाई-बजाई जाती है। उन विदेशी विद्यार्थियों की भारतीय शास्त्रीय-सङ्गीत के प्रति समझ, सूझ-बूझ तथा भावना निश्चय ही प्रशंसनीय है।

सम्मान एवं पुरस्कार -

पुरस्कार - एक कलाकार एवं सङ्गीतज्ञ के रूप में तो भट्टजी को राज्य स्तर पर एवं राष्ट्रीय स्तर पर अनेक सम्मान प्राप्त हुए हैं। पुरस्कारों में विशेष उल्लेखनीय है साहित्य लेखन की प्रतियोगिता का अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार। यह पुरस्कार इसलिए विशेष महत्त्व का है क्योंकि इसमें एक सङ्गीतकार की साहित्य-सृजन सम्बन्धी विलक्षणता को मान्यता मिली है। भट्टजी को मिले कुछ महत्त्वपूर्ण पुरस्कार एवं सम्मानों का विवरण कालक्रमानुसार निम्नवत् है-

- सन् १९४९ में बलवन्तराय जी को ऑल इण्डिया म्यूज़िक कान्फ्रेंस, कलकत्ता की ओर से आयोजित 'तानसेन विष्णु-दिगम्बर प्रतियोगिता' में श्री नारायण विनायक पटवर्धन के साथ संयुक्त रूप से प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

- १९५८ में ज्यूइश ब्रेल इन्स्टीट्यूट, अमरीका द्वारा नेत्रहीनों के लिए आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय साहित्य प्रतियोगिता में इनकी गुजराती कविता 'आत्मदर्शन' पुरस्कृत हुई थी। इस प्रतियोगिता में २९ भाषाओं में ३९ देशों की ६०० प्रविष्टियाँ थीं, जिसमें से २ पुरस्कार भारत आये। एक पुरस्कार बलवन्तराय जी का था। यह कविता भट्टजी ने सन् १९५० में लिखी थी। 'आत्मदर्शन' शीर्षक वाली वह गुजराती कविता इस प्रकार है–

हुँ देह नहीं चैतन्य रूप, उपमेय नहीं हुँ तो अनूप।
आत्मा अविनाशी पूर्ण सार, विश्वे तेनो समरस प्रसार,
ए अचल राज्य नो अमर भूप, हुँ देह नहीं चैतन्य रूप।।
आनन्द अनादि गङ्ग वहे, वेदो पण न्हाता 'नेति' कहे,
एवा जल नो हुँ अतल कूप, हुँ देह नहीं चैतन्य रूप।।
थावा–जावा नो भाव नहीं, म्हारा–तारा नो दाव नहीं,
छे एकमेव बस एक रूप, हुँ देह नहीं चैतन्य रूप।।

ऊपर लिखित गुजराती कविता का हिन्दी अनुवाद–[३१]

मैं देह नहीं चैतन्य रूप, उपमेय नहीं मैं तो अनूप।
आत्मा अविनाशी पूर्ण सार, जग में उसका समरस प्रसार,
उस अमित राज्य का अमर भूप, मैं देह नहीं चैतन्य रूप।।
आनन्द अनादि गङ्ग बहे, जहँ निगम नहाते 'नेति' कहें,
ऐसे जल का मैं अतल कूप, मैं देह नहीं चैतन्य रूप।।
मेरे–तेरे का दाव नहीं, होने–मिटने का भाव नहीं,
हूँ एकमेव बस एक रूप। मैं देह नहीं चैतन्य रूप।।

सम्मान – सङ्गीत के क्षेत्र में बलवन्तराय जी को उनके अप्रतिम योगदान हेतु अनेक सरकारी एवं गैर–सरकारी संस्थाओं ने सम्मानित किया, उपाधियाँ दीं। इनमें से कुछ प्रमुख का उल्लेख यहाँ प्रस्तुत हैं–

- सन् ७८–७९ उ.प्र. सङ्गीत नाटक अकादमी.. एवॉर्ड
- सन् १९८१ गुजरात राज्य सङ्गीत नाटक अकादमी .... एवॉर्ड
- सन् १९८६–८७ भावाञ्जलि .... 'सङ्गीत मानस हंस' एवॉर्ड
- सन् १९८८ सङ्गीत कला केन्द्र, आगरा .... 'सङ्गीत चिन्तामणि' एवॉर्ड
- सन् १९९० भारत सरकार .... 'पद्मश्री'
- सन् १९९२ पश्चिम क्षेत्र अन्तर्विश्वविद्यालय युवा महोत्सव, भावनगर विश्वविद्यालय ....सम्मान
- धोलकिया स्कूल ऑफ म्यूज़िक, शिहोर .... सम्मान
- सन् १९९७ 'ग्रितमा' ....'काशी स्वर–गङ्गा' सम्मान
- सन् १९९७ पं. ओम्कारनाथ ठाकुर सङ्गीत महाविद्यालय, पटना सिटी ... पं. ओम्कारनाथ ठाकुर शिरोमणि सम्मान
- सन् १९९७ पटना में ही एक अन्य आयोजन में गुरु गोविन्द सिंह के जन्मदिवस के अवसर पर बलवन्तराय जी को एक 'सरोपा' तथा रुद्राक्ष एवं स्फटिक की माला देकर सम्मानित किया गया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

- सन् १९९८ उत्तर-प्रदेश सङ्गीत नाटक अकादमी .... रत्न-सदस्यता
- सन् २००० उत्तर-प्रदेश सरकार संस्कृति विभाग .... सम्मान
- सन् २००१ कुमार गन्धर्व फाउण्डेशन, बम्बई .... सम्मान
- सन् २००४ केन्द्रीय सङ्गीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली ....एवॉर्ड
- सन् २००७ इलाहाबाद की संस्था 'कल्चरॉल' द्वारा... सम्मान
  यह सम्मान प्रसिद्ध गायिका श्रीमती कमला बोस अपने पिताश्री की स्मृति में प्रतिष्ठित कलाकारों को देती हैं।
- सन् २००८ मध्य प्रदेश सरकार .... कालिदास सम्मान
- संस्कार भारती सम्मान, वाराणसी एवं बड़ौदा द्वारा .... सम्मान
- इसके अतिरिक्त 'स्वदेशी-मेला' तथा 'काशी-सांस्कृतिक-सङ्कुल' के शिलान्यास के अवसर पर उत्तर-प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल श्री सूरजभान द्वारा सम्मानित हुए।
- कबीर की ६००वीं जयन्ती के उपलक्ष्य में आयोजित समारोह में हिमाचल प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल श्री विष्णुकान्त शास्त्री द्वारा 'काशी-विभूति' का सम्मान दिया गया।
- इसके अतिरिक्त जीवन के दो महत्त्वपूर्ण पड़ावों पर अर्थात् जीवन के स्वर्णिम ५० वर्ष पूर्ण करने के अवसर पर दिनाङ्क १२ मार्च १९७२ को नेत्रहीन सहायक सङ्घ, वाराणसी के साथ मिलकर पं. राम सहाय सङ्गीत विद्यालय, गुजराती मण्डल-काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, सङ्गीत संसृति सङ्गम-वाराणसी तथा अन्य कला-प्रेमियों एवं भैयाजी के मित्रमण्डल तथा विद्यार्थी समुदाय ने भव्य समारोह करके उनका नागरिक अभिनन्दन किया।[३२]

- दिनाङ्क २१, २२ एवं २३ सितम्बर ९६ को ७५ वर्ष पूरे करने के उपलक्ष्य में 'अमृतोत्सव' का आयोजन हुआ। जिसमें २१, २२ तथा २३ सितम्बर लगातार तीन दिनों में 'भावरङ्ग जी' की कुल १४४ बन्दिशों का गायन स्थानीय तथा बाहर से पधारे कलाकारों ने मिलकर किया।[३३]

- दिनाङ्क ९ मई, २०११ को सङ्गीत एवं मञ्चकला सङ्काय के पं. ओम्कारनाथ ठाकुर प्रेक्षागृह में अपने नाना की ९०वीं जन्मजयन्ती के निमित्त डॉ० श्रुतिवन्दना शर्मा ने 'भावरङ्ग लहरी' के तीनों भागों में से चुनी हुई बन्दिशों पर भरतनाट्यम् शैली में नृत्य किया तथा २३ सितम्बर, २०११ को उनके जन्मदिन पर उनके आवास 'नादतनु' पर वही प्रस्तुति दुहराई।

- दिनाङ्क ४ अक्टूबर, २०१२ को सङ्गीत एवं मञ्चकला सङ्काय के गुरुवासरीय कार्यक्रम के अन्तर्गत सङ्काय की ओर से भट्टजी का ९१वीं वर्षपूर्ति पर अभिनन्दन स्वरूप 'प्रणवरङ्ग' एवं 'भावरङ्ग' की रचनाओं पर सोदाहरण व्याख्यान हेतु स्वरवन्दना शर्मा और लयलीना भट (लेखिका) को आमंत्रित किया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

टिप्पणियाँ एवं सन्दर्भ

१ प्रथम भाग के द्वितीय संस्करण का प्रकाशन नव भारत साहित्य मन्दिर, अहमदाबाद ने किया है। परिवर्द्धित तृतीय संस्करण का प्रकाशन वर्ष २०१२ में हुआ है।

२ जीवन के विविध पक्षों की विस्तृत एवं प्रामाणिक जानकारी मुझे स्वयं पूज्य बापूजी तथा पू.सौ. माँ से प्राप्त हुई है।

३ भट्टजी के जन्म के समय अर्थात् स्वातन्त्र्यपूर्व भारत के राजनैतिक नक्शे में गुजरात एवं महाराष्ट्र मिलाकर मुम्बई इलाका कहलाता था। उस समय भावनगर रियासत थी। राजकोट में अंग्रेज अफसर रहता था, जो रियासतों पर ध्यान रखता था।

४ केकी नाम का एक बच्चा था जो थोड़े दिन बाहर से आता-जाता था, बाकी छात्र वहीं रहते थे। २० वर्ष से अधिक वय के लोग 'हैप्पी होम' (Happy Home) नामक संस्था में रहते थे वहाँ से विद्यालय आकर पढ़ते थे।

५ भोजन के लिए तीन घण्टी बजती थी। तीसरी घण्टी पर विद्यार्थी यदि अपने पीढ़े पर प्रार्थना के लिए खड़ा न हो तो भोजन नहीं मिलता था।

६ गञ्जीफा ताश के पत्ते की तरह का खेल है।

७ श्रुतलेख (Dictaction) से बचे इन पृष्ठों पर बलवन्तराय जी ने बाद में अपने सङ्ग्रह हेतु अन्य कवियों की कविताएँ भी लिखीं। अवकाश में घर जाने पर छोटे भाई से कविताएँ पढ़वाकर ब्रेल लिपि में सुरक्षित किया।

८ भावनगर से बलवन्तराय के पिता का पत्र पाकर वे समझ गये थे कि यह सौराष्ट्र का रहने वाला है।

९ ये विद्यालय में 'रेडियो' भी लाए ताकि बच्चे अधिकाधिक कार्यक्रम सुन सकें।

१० इस दिन पूजन के उपरान्त पण्डित जी की मानी हुई बहन श्रीमती मञ्जुलाबहन ना. दवे (जिन्हें सब 'दीदी माँ' कहते थे) ने नए विद्यार्थी के हाथ में प्रसाद दिया एवं आगे हमेशा ममतामयी माँ की तरह उनका ध्यान रखा। खाली समय में वे बलवन्तराय को 'कल्याण' मासिक भी पढ़कर सुनाती थीं। (बापूजी से प्राप्त जानकारी)

११ अपने नए विद्यार्थी की सीखने की क्षमता एवं मर्यादापूर्ण आचरण से वे काफी प्रभावित थे। १९४१ से वे उसे समारोहों में तथा यात्रा में साथ रखने लगे।

12 कुछ समय बाद पण्डित जी तारदेव में ही सोनावाला बिल्डिंग की चौथी मञ्जिल पर रहने आ गये जो 'अन्ध विद्यालय' (Blind School) के काफी पास था।१३ १९४१ में 'अन्ध विद्यालय' (Blind School) छोड़ने के पश्चात् बलवन्तराय जी को भावनगर के महाराज श्री कृष्णकुमार सिंह जी बहादुर के समय व्यक्तिगत विभाग (Private Department) से १ साल तक खर्च के लिए मासिक रू. ३०/- मिलते थे।

१४ चन्द्रकान्त जी के नाना भूलेश्वर के पास एक बड़े वैष्णव मन्दिर में 'बाल-भोगिया' के रूप में कार्य करते थे। मन्दिर की ओर से उन्हें रहने के लिए कमरे मिले थे। बलवन्तराय चन्द्रकान्त जी के साथ भोजन करते थे अतः उन रू. ३०/- में से वे कमरे का किराया एवं खाने का पैसा देते थे।

१५ सङ्गतकार के रूप में बलवन्तराय जी की विशिष्ट योग्यता का विवरण इसी अध्याय में 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में नियुक्ति एवं सेवानिवृत्ति' के अन्तर्गत दिया गया है।

१६ सङ्गीतमार्तण्ड 'पद्मश्री' पं. ओम्कारनाथ ठाकुर 'प्रणवरङ्ग' जीवन कवन सुमन', खण्ड दो में उद्धृत, डॉ. अर्चनदीप दीक्षित, पृ. २

१७ बाद में विश्वविद्यालय में लेक्चरर, रीडर और प्रोफेसर की ग्रेडिंग होने पर भट्टजी लेक्चरर कहलाए।

१८ 'महिला महाविद्यालय' (वीमेन्स कालेज) में कक्षा लेने का क्रम करीब डेढ़-दो वर्ष चला।

१९ आरम्भिक दिनों में श्री कला-सङ्गीत भारती में हार्मोनियम अथवा सारङ्गीवादक की नियुक्ति नहीं हुई थी। किसी न किसी कारण से तबला अध्यापक नियुक्ति के कुछ समय बाद या तो नौकरी छोड़ देते थे या किसी कारणवश उनकी सेवा समाप्त कर दी जाती। अतः आरम्भ के लगभग एक वर्ष तक महाविद्यालय के अधिकतर कार्यक्रमों में भट्टजी ने ही तबले अथवा हार्मोनियम पर सङ्गति की। तबले का पाठ्यक्रम था, किन्तु प्राध्यापक न होने की स्थिति में तबले की कक्षाएँ भी लीं। (बापूजी से प्राप्त जानकारी)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२० बलवन्तराय जी के अमृतोत्सव (७५वीं वर्षगाँठ) के अवसर पर प्रकाशित स्मारिका में तीनों काकाओं के स्वतन्त्र आलेखों में पू. बापूजी (उनके बड़े भाई) के प्रति अपार सम्मान एवं कृतज्ञता की भावना व्यक्त हुई है। उनके द्वारा उल्लिखित छोटी-छोटी घटनाएँ बापूजी की परिश्रमशीलता, धैर्य, सूझ-बूझ और सर्वोपरि प्रेमभाव का स्पष्ट चित्र सामने रखती हैं।

२१ शिल्प की उस अद्भुत कारीगरी को सुरक्षा की दृष्टि से सामान्य जनों को छूने की अनुमति नहीं थी।

२२ शैली की दृष्टि से निर्भीक कथन एवं प्रतिपाद्य की दृष्टि से गुजराती साहित्य में अखाभगत का वही स्थान है जो हिन्दी साहित्य में कबीर का। अखा की वाणी को भट्टजी ने काशी आने के बाद ही पढ़ा था, उनके रिश्ते के भाई हेमन्त पाठक ने जो का०हि०वि०वि० में आयुर्वेद के विद्यार्थी थे, उन्हें पुस्तक दी थी।

२३ होली के उपरान्त पड़ने वाले पहले मङ्गलवार को मनाया जाने वाला काशी का पारम्परिक भव्य सांस्कृतिक उत्सव। काशिराज अपने रामनगर किले में मङ्गलवार, बुधवार एवं गुरुवार तीन दिनों तक उत्सव का आयोजन करते थे।

२४ भावरङ्ग-लहरी, बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट, भाग-२, वाराणसी, १९७४, पृ. ३२७

२५ भावरङ्ग अमृत महोत्सव (स्मारिका), सम्पा. स्वरवन्दना शर्मा, वाराणसी, १९९७, पृ. ८

२६ इस छड़ी के नीचे का एक चौथाई भाग लाल तथा शेष सफेद होता है। उपयोग में न होने पर उसे मोड़ करके छोटा किया जा सकता है।

२७ भावरङ्ग-लहरी, उपरिलिखित, भाग-१, पृ. ३२७

२८ 'कामायानी' में सौ. माँ (पूर्वाश्रम नाम वसुन्धरा तळवलकर) ने इड़ा के लिए पार्श्वगायन किया था। उस समय वे विवाहबद्ध नहीं हुई थीं।

२९ बैजू का अभिनय श्री बी.वी. कारन्त ने किया था जो उस समय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से हिन्दी में स्नातकोत्तर तथा श्री कला सङ्गीत भारती में गायन के विद्यार्थी थे। श्री कारन्त बाद में दिल्ली के राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के निदेशक भी हुए।

३० भावरङ्ग अमृत महोत्सव, उपरिलिखित, पृ. ५४

३१ श्री कला सङ्गीत भारती के प्रथम दशक पूर्ति समारोह (सन् १९६१) के अवसर पर प्रकाशित पत्रिका 'नाद ह्रप' में उक्त पुरस्कृत गुजराती कविता का हिन्दी रूपान्तर प्रकाशित है।

३२ यह समारोह 'कनकोत्सव' स्थानीय श्री सनातन धर्म इण्टर कालेज के प्राङ्गण में आयोजित हुआ था।

३३ दिनाङ्क २३ सितम्बर की शाम यह समारोह स्थानीय श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार अन्ध विद्यालय में आयोजित किया गया। दोनों ही अवसरों पर सङ्गीत समारोह का आयोजन हुआ और 'स्मारिका' प्रकाशित की गई।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पं० बलवन्तराय भट्ट : एक 'वाग्गेयकार' के रूप में

सङ्गीतकार बन्धुओं, सहकर्मियों एवं अन्य आप्तजनों के बीच 'भैयाजी' नाम से सम्बोधित होने वाले भट्टजी के व्यक्तित्व का पर्याय 'वाग्गेयकार' रूप है। आज सङ्गीत-जगत् में वे न केवल एक शिक्षक एवं गायक कलाकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं, अपितु एक विशिष्ट वाग्गेयकार अर्थात् विलक्षण रचनाकार के रूप में समादृत हैं। भावोद्रेक की दृष्टि से परखें तो साहित्य एवं सङ्गीत का अद्भुत सन्तुलन इनकी रचनाओं में देखने को मिलता है। भैयाजी की रचनाओं को सुनकर उसके उभय-पक्षों अर्थात् सङ्गीत-पक्ष एवं काव्य-पक्ष पर डॉ० भानुशङ्कर मेहता (वाराणसी के जाने माने नागरिक, सङ्गीत एवं साहित्य के रसिक, रङ्गमञ्च से जुड़े हुये तथा व्यवसाय से पैथोलॉजिस्ट) ने अपना अभिमत प्रस्तुत किया था 'सङ्गीत भी शत-प्रतिशत और कविता भी शत-प्रतिशत'।[१]

भट्टजी के 'वाग्गेयकार' (साहित्य एवं सङ्गीत दोनों की सर्जना करने वाला) रूप की स्थापना सङ्गीत-शास्त्र के ग्रन्थों में बताये गये लक्षणों के अनुसार सम्यक् उदाहरणों के साथ प्रस्तुत है।

'वाग्गेयकार' की परिभाषा :

पं० शार्ङ्गदेव कृत 'सङ्गीत-रत्नाकर' मध्ययुग के सङ्गीत-शास्त्र के ग्रन्थों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। उसके तीसरे अध्याय 'प्रकीर्णकाध्याय' में 'वाग्गेयकार' की परिभाषा निम्न श्लोक द्वारा दी है-

'वाङ् मातुरुच्यते गेयं धातुरित्यभिधीयते। वाचं गेयं च कुरुते यः स वाग्गेयकारकः'।।[२]

स्पष्ट है कि 'वाक्' और 'गेय' यानि काव्य-रचना के साथ-साथ जो स्वर-लय-रचना भी करता है उसे 'वाग्गेयकार' की संज्ञा दी गई है।

भारतीय सङ्गीत के परिदृश्य में 'वाग्गेयकार' की भूमिका किस तरह एक गायक से भिन्न है तथा किन विशिष्ट गुणों के कारण उसका स्थान गायक की अपेक्षा ऊँचा माना गया है इसका विस्तृत विवेचन प्रो० प्रेमलता शर्मा ने निम्नलिखित शब्दों में किया है- 'भारतीय सङ्गीत में सर्जनात्मकता दो धाराओं में गतिशील होती है, एक 'निबद्ध' और दूसरी 'अनिबद्ध'। दोनों धाराओं में गहरा सम्बन्ध है किन्तु फिर भी इतना निश्चित है कि निबद्ध धारा के साधक 'वाग्गेयकार' में सङ्गीत के अतिरिक्त साहित्य के संस्कार और काव्य-रचना की योग्यता अर्थात् काव्य-रचना के लिये आवश्यक व्याकरण, छन्द आदि के ज्ञान की भी अपेक्षा रहती है। अनिबद्ध के विस्तार को निबद्ध से निश्चित दिशा मिलती है। निबद्धगत पद से वैचारिक और भावानात्मक धरातल, ताल से आवर्तन की मर्यादा और उठान का बिन्दु और स्वर-योजना से राग के विशिष्ट सञ्चारों की सूझ अनिबद्ध के विस्तार के लिये मिलती है। इसलिए विस्तार की दृष्टि से अनिबद्ध की तुलना में निबद्ध संक्षिप्त होने पर भी सङ्गीत के समूचे परिदृश्य में उसकी भूमिका का महत्त्व बहुत अधिक है। इसलिए वाग्गेयकार का स्थान गायक की अपेक्षा ऊँचा है।[३]' 'वाग्गेयकार' की परिभाषा समझने के उपरान्त प्रो० प्रेमलता शर्मा के उपर्युक्त विवेचन से यह बात अत्यन्त स्पष्ट है कि एक गायक सङ्गीत की मौलिक रचना की प्रतिभा से युक्त होते हुये जब काव्य-सर्जना की क्षमता से युक्त होता है तब वह 'वाग्गेयकार' की श्रेणी में आ जाता है। अतः काव्य-सर्जना की क्षमता होना वह विशिष्ट गुण है जो कि एक सङ्गीतकार के वाग्गेयकार होने के लिए अनिवार्य रूप से अपेक्षित है।

शार्ङ्गदेव अपने ग्रन्थ में उत्तम वाग्गेयकार के २८ लक्षण बताते हैं, जो इस प्रकार हैं-

शब्दानुशासनज्ञानमभिधानप्रवीणता। छन्दःप्रभेदवेदित्वमलङ्कारेषु कौशलम् ।।
रसभावपरिज्ञानं देशस्थितिषु चातुरी। अशेषभाषाविज्ञानं कलाशास्त्रेषु कौशलम् ।।
तूर्यत्रितयचातुर्यं हृद्यशारीरशालिता। लयतालकलाज्ञानं विवेकोऽनेककाकुषु।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रभूतप्रतिभोद्भेदभावत्वं सुभगगेयता। देशीरागेष्वभिज्ञानं वाक्पटुत्वं सभाजये।।
रोषद्वेषपरित्यागः सार्द्रत्वमुचितज्ञता। अनुच्छिष्टोक्तिनिर्बन्धो नूत्नधातुविनिर्मितिः।।
परचित्तपरिज्ञानं प्रबन्धेषु प्रगल्भता। द्रुतगीतविनिर्माणं पदान्तरविदग्धता।।
त्रिस्थानगमकप्रौढ़िर्विविधालप्तिनैपुणम्। अवधानं गुणैरेभिर्वरो वाग्गेयकारकः।।[४]

अब इन्हीं शास्त्रोल्लिखित लक्षणों के आलोक में बलवन्तराय जी की रचनाओं की विशेषताओं के आधार पर तथा उनमें निहित 'वाग्गेयकार' को रेखाङ्कित करने का प्रयास किया है।

'वाग्गेयकार' के लक्षणों के आधार पर 'भावरङ्ग' जी की रचनाओं का आकलन :

'सङ्गीत-रत्नाकर' में उल्लिखित श्लोक के अनुसार पहला लक्षण 'शब्दानुशासन' है, जिसका तात्पर्य है व्याकरण-शास्त्र का ज्ञान। इसके अन्तर्गत भाषा की रचना से सम्बन्धित समस्त तत्त्वों यथा – समास, वचन, काल, लिङ्ग, सन्धि एवं विभक्ति का समावेश होता है। इस दृष्टि से भाषागत त्रुटि न हो यह वाग्गेयकार होने की पहली शर्त या अनिवार्यता है। उक्त लक्षण की कसौटी पर भट्टजी की रचनाएँ निर्दोष या त्रुटिरहित हैं। इस कथन की पुष्टि में उपयुक्त उदाहरण (समास एवं सन्धि के) नीचे प्रस्तुत हैं।

शब्दानुशासन :

उदाहरण १. स्थायी – नाचति वृषभानु-नन्दिनी, सोहति मुखहास-मन्दिनी, आनन्द-कन्दिनी।।
अन्तरा १– मनमोहन श्याम-सङ्गिनी, 'भावरङ्ग' अधिक रङ्गिनी,
ताल की तरल तरङ्गिणी, अति उर उमङ्गिनी।
अन्तरा २– रासेश्वर-हृदय-रञ्जिनी, केकि-नृत्य-गर्व-गञ्जिनी,
भव-विकार-दल-प्रभञ्जिनी, नयना-सुधाञ्जनी।।[५]

उक्त पद में समास के उदाहरण-

१. वृषभानु-नन्दिनी .... षष्ठी तत्पुरुष या सम्बन्ध तत्पुरुष
२. श्याम-सङ्गिनी .... षष्ठी तत्पुरुष या सम्बन्ध तत्पुरुष
३. रासेश्वर हृदय-रञ्जनी .... षष्ठी तत्पुरुष या सम्बन्ध तत्पुरुष
४. केकि-नृत्य-गर्व-गञ्जिनी .... षष्ठी तत्पुरुष या सम्बन्ध तत्पुरुष
५. भव-विकार-दल-प्रभञ्जनी ...... षष्ठी तत्पुरुष या सम्बन्ध तत्पुरुष
६. नयना-सुधाञ्जनी .... सप्तमी तत्पुरुष या अधिकरण तत्पुरुष

सन्धि के उदाहरण

१. रासेश्वर = रास + ईश्वर (अ + ई = ए) गुण सन्धि
२. सुधाञ्जनी = सुधा + अंजनी (आ + अ = आ) दीर्घ सन्धि

उदाहरण २ स्थायी – रास-रमणी राधिका, मधुर स्नेह-साधिका।
अन्तरा – पद-नूपुर-रव-रुनझुन, नर्तन-गति नव छिन-छिन,
निरखत हिय श्याम मगन, नवल-भाव-रसिका।।
सञ्चारी– बरन्यो नहिं जाय रूप, कहत सन्त-कवि अनूप,
माधव-मुख-विमल-चन्द्र-चारुचन्द्रिका।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आभोग - वृन्दावन सरस धाम, गावत गायन ललाम,
ध्रुवपद वरदान दीजे स्वर-लय-पद-पालिका।।[६]

उपर्युक्त पद में समास का उदाहरण

१. रास-रमणी .... सप्तमी तत्पुरुष या अधिकरण तत्पुरुष
२. स्नेह-साधिका .... षष्ठी तत्पुरुष या सम्बन्ध तत्पुरुष
३. पद-नूपुर-रव .... षष्ठी तत्पुरुष या सम्बन्ध तत्पुरुष
४. नर्तन-गति .... षष्ठी तत्पुरुष या सम्बन्ध तत्पुरुष
५. नवल-भाव-रसिका .... कर्मधारय, षष्ठी तत्पुरुष
६. सन्त-कवि .... द्वन्द्व
७. माधव-मुख-विमल-चन्द्र-चारुचन्द्रिका .... षष्ठी तत्पुरुष, कर्मधारय, षष्ठी तत्पुरुष
८. स्वर-लय-पद-पालिका .... द्वन्द्व, षष्ठी तत्पुरुष

उदाहरण- ३ करुणामय श्री कृष्णचन्द्र भगवान्
अशरण - शरण, सन्त-सुखदायक, पुरुषोत्तम अभिधान,
परमपर कृष्णचन्द्र भगवान् ।। करुणामय ......
लीलामय प्रभु सकल कलामय,कलातीत पुनि, निगम नेति अनुमान,
भजन-मगन मुनि गात निरन्तर लीलामय भगवान,
राधिकाराधित श्री भगवान् , माधव कृष्णचन्द्र भगवान् । करुणामय .....
गोकुल की गलियन में नाचत, दहि महि मागत कान्ह।
मधुपुरी जाई बहुरि नहिं आए, गोपि-ग्वाल के प्राण।
अद्‌भुत राग-त्याग सन्धान, अनुपम कृष्णचन्द्र भगवान। करुणामय .....
सज्जीवन सङ्गीत मन्त्र के गायक सिद्ध सुजान,
वंशीधर, रासेश्वर, नटवर, योगेश्वर जग जान, जगद्‌गुरु कृष्णचन्द्र भगवान् ,
जगदीश्वर कृष्णचन्द्र भगवान् ।। करुणामय ......
भारत में पारथ-रथ हाँक्यो विना - शस्त्र - अभियान,
सन्मुख भीष्म चक्र धरि धाए, भक्ताधीन प्रमाण, साधुजन-रक्षक श्री भगवान् ,
दुरितहन कृष्णचन्द्र भगवान् ।। करुणामय ......
समता का सिंगार सुहावन, पावन प्रेम निधान।
'भावरङ्ग' भारत-मानस की पुनीत यह पहचान।।
प्रेमरस कृष्णचन्द्र भगवान् , गीतरस कृष्णचन्द्र भगवान् ।
ब्रह्मरस कृष्णचन्द्र भगवान् , जय श्री कृष्णचन्द्र भगवान् ।। करुणामय ......'[७]

सन्धि के उदाहरण

१. पुरुषोत्तम = पुरुष + उत्तम (अ + उ = ओ) गुण सन्धि
२. कलातीत = कला + अतीत (आ + अ = आ) दीर्घ सन्धि
३. राधिकाराधित = राधिका + आराधित (आ + आ = आ) दीर्घ सन्धि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

४. सज्जीवन = सत् + जीवन	(त् + ज = ज्ज)	श्चुत्व सन्धि (व्यञ्जन)
५. रासेश्वर = रास + ईश्वर	(अ + ई = ए)	गुण सन्धि
६. योगेश्वर = योग + ईश्वर	(अ + ई = ए)	गुण सन्धि
७. जगदीश्वर = जगत् + ईश्वर	(त् + ई = द)	जश्त्वसन्धि (व्यञ्जन)
८. भक्ताधीन = भक्त + अधीन	(अ+ अ = आ)	दीर्घ सन्धि

अभिधान प्रवीणता : इससे तात्पर्य है 'अमरकोशादि' में प्रवीणता। इस गुण के अन्तर्गत एक ही शब्द के अनेक पर्याय ज्ञात हों एवं उनकी योजना सटीक हो ऐसी अपेक्षा रहती है। अथवा, एक ही शब्द का प्रयोग कितने अर्थों में हुआ है, इस प्रकार शब्द को रखने की अथवा कहने के ढंग की विशिष्टता है। इसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है जिसमें 'सारङ्ग' शब्द अनेक अर्थों में प्रयुक्त हुआ है–

स्थाई - राग सारङ्ग–समय शुभ सुहावन, मङ्गल अवसर सचराचर पावन।
अन्तरा - १ भूमिधर सारङ्ग के बड़ भ्राता, जन्मे श्री राम जगत सुखदाता।
शारङ्गधर रामप्रभु–दर्शन–हित, रथसमेत व्योम–सारङ्ग स्तम्भित।।
अन्तरा - २ दिं दिं दुं दुं दुन्दुभि बाजहिं, तन दिर तन दिर तन तान करतहि।
गात सारङ्ग चतुरङ्ग मधुर गुनि, सुनि सुगीत हिय हुलसे सुर नर मुनि।।
अन्तरा - ३ स्वर्ण- सारङ्ग–त्वच सिय मन भावत, शारङ्ग लिए हरि सवेग धावत।
शर लगत स्वरूप प्रगट्यो लखन वद, तनु तजि मारीच पायो परम पद ।।[८]

इस प्रकार हम देख रहे हैं कि प्रस्तुत पद में 'भावरङ्ग' जी ने 'सारङ्ग' शब्द का क्रमशः दोपहर, सर्प/शेष, शार्ङ्गधनुष, सूर्य, राग, हिरण तथा पुनः धनुष इस प्रकार छह भिन्न अर्थों में प्रसङ्गानुकूल प्रयोग किया है।

छन्दः प्रभेदवेदित्वम् : स्पष्ट है कि वाग्गेयकार के लिए छन्दशास्त्र का सम्यक् ज्ञान होना आवश्यक है। बलवन्तराय जी ने तबले की शिक्षा ली थी एवं उनका झुकाव आरम्भ से ही तबले की ओर था अतः छन्दों में विशेष रुचि थी। वाराणसी में स्थायी होने के पश्चात् उन्हें 'छन्द–प्रभाकर' पढ़ने का अवसर भी मिला। उनकी गेय रचनाओं में मुख्य रूप से मात्रिक सम छन्दों के अन्तर्गत 'दीप' (१० मात्रा), 'तोमर' (१२ मात्रा), 'उल्लाला' (१३ मात्रा), मधुमालती, हाकलि एवं सुलक्षण (१४ मात्रा), 'पादाकुलक' तथा 'चौपाई' (१६ मात्रा), आनन्दवर्धक (१९ मात्रा) अरुण (२० मात्रा) सुजान (२३ मात्रा), रूपमाला (२४ मात्रा) गीतिका (२६ मात्रा), सरसी (२७ मात्रा), हरिगीतिका तथा सार (२८ मात्रा), लावनी, ताटङ्क और कुकुभ (३० मात्रा) तथा वीर (३१ मात्रा) आदि का प्रयोग हुआ है।

उन्होंने गेय रचनाओं के अतिरिक्त अपने रचना–सङ्ग्रह में रागों का विवरण प्रस्तुत करते समय राग-बोधक कविताएँ विभिन्न छन्दों में दी हैं, जिसमें दोहा, सोरठा तथा चौपाई जैसे बहुप्रचलित छन्दों के अतिरिक्त विधाता तथा हरिगीतिका छन्द के अन्तर्गत फारसी बहर मुतफायलुन, चन्द्र, झूलना, सारस, गीतिका तथा उल्लाला आदि हैं। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं।

मात्रिक सम छन्द- जिस छन्द के चारों चरणों में एक समान मात्राएँ हों परन्तु वर्ण क्रम एक सा न हो वह मात्रिक सम छन्द होता है।

दीप -(१० मात्राएँ, अन्त ।।। ऽ ।)

लक्षण - धातृ सह दस दीप, रखहु चरण समीप।
तिहुँ लोक अब नीप, दशरत्थ कुल दीप।।[९]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

| | | S | | | | S |

उदाहरण - स्थायी - बिन श्याम बिलखात, हौं आलि दिन रात।

| | | S | | | | S |

अतहि जिय अकुलात, बिरथा जोबन जात।।

| | | S | | | | S |

अन्तरा - मन की तपन मोरे, तन को नित सुखात।

| | | S | | | | S |

इक पल नहिं सहात, नयन जल बरसात।।[१०]

प्रस्तुत पद में स्थायी में 'जोबन' का 'जो' तथा अन्तरा में 'मोरे' का 'रे' विकल्प से लघु माना जायेगा।

तोमर -(१२ मात्राएँ, अन्त S ।)

लक्षण - तोमर सु द्वादश पौन, नहिं बीर धारैं मौन।

प्रचण्ड कृतान्त समान, रणभूमि में रण ठान ।।[११]

S | S |

उदाहरण - स्थायी - प्रथम नाद को प्रसार, नाद सों बरन बिचार।

S | S |

बरनन सों पद-प्रचार, पद सरजत बचन सार ।।

S | S |

अन्तरा - वाणीकृत व्यापार, निखिल विश्व को ब्यौहार।

S | S |

'भाव' अस स्वभाव सिद्ध, जग पर नादाधिकार।[१२]

मात्राओं की गणना की दृष्टि से अन्तरे की प्रथम पंक्ति 'वाणीकृत व्यापार' की ११ मात्राएँ बनती हैं, किन्तु उक्त पंक्ति की सङ्गीत रचना में व्यापार के 'व्या' अक्षर की ३ मात्राएँ हैं, दीर्घ का कर्षण सङ्गीत-रचना की दृष्टि से औचित्यपूर्ण है। ब्यौहार शब्द का 'ब्यौ' विकल्प से लघु होगा।

उल्लाला - (१३ मात्राएँ, अन्य नाम चन्द्रमणि)

'छन्द-प्रभाकर' के अनुसार उल्लाला की १३ मात्राएँ हैं तथा चरणान्त में लघु-गुरु सम्बन्धी नियम न होना बाताया है जैसा कि लक्षण से स्पष्ट है।

लक्षण - उल्लाला तेरा कला, नियम न लघु गुरु अति भला।

सेवहु नित हरि-हर चरण, गुरु गुण गावहु हो शरण।।[१३]

डॉ० विजयपाल सिंह ने उल्लाला को २६ मात्रा के अन्तर्गत रखा है एवं १३, १३ की यति से प्रथम उल्लाला बताया है।[१४] अस्तु, दोनों के अनुसार १३ की संख्या पुष्ट होती है और दूसरा कोई तात्त्विक अन्तर न होने से 'छन्द-प्रभाकर' के मत के उल्लाला को १३ मात्राओं के अन्तर्गत ही प्रस्तुत किया है-

उदाहरण स्थाई - रे तार तोर अवतार, गान आधार कहावे।

जस जोगी की सुषुमना, ध्यान आधार कहावे।।

अन्तरा - जहँ त्रिविध ताप की तपन, अखिल संसार तपावे।

तहँ 'भावरङ्ग' इक तू ही प्रेमरस धार बहावे।।[१५]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्तिम पंक्ति में 'तू' विकल्प से लघु माना जायेगा।

हाकलि - (१४ मात्राएँ, अन्त ऽ)

लक्षण - शिव दस विद्या हाकलि गा, गिरिवर धारी अरु बलि गा।
संतत जो गुण गाय भजै, तौ सुख साज समाज सजै।।[१६]

छन्द प्रभाकर में पूर्वाचार्यों द्वारा बताए 'हाकलि' के अन्य नियम के बारे में लिखा है कि इसके पहले और दूसरे चरण में ११ वर्ण और तीसरे और चौथे में १० वर्ण माने हैं परन्तु मुख्य नियम 'त्रै चौकल गुरु-हाकलि' है।

ऽ ऽ
उदाहरण- स्थायी - निरखत ही मन मोह लियो, जादू सखि जदुनाथ कियो।
ऽ ऽ
नख-शिख लखत हरषत हियो, सरबस भाव प्रभुपद दियो।[१७]

उक्त पद वर्णों की गणना के अनुसार नहीं किन्तु 'त्रै चौकल गुरु हाकलि' के अनुरूप है। मात्रिक छन्द के अन्तर्गत होने के कारण मात्रा की गणना का औचित्य समझ में आता है।

सुलक्षण - (१४ मात्रा, अन्त ऽ ।) इसमें ४-४ मात्राओं के बाद गुरु-लघु रहते हैं।

लक्षण - मुनि मुनि पौन सुलछन तौन, अस को भेद पावै जौन।
सब तजि धार हरि पद प्रीति, सीख हमारि मानौ मीत ।[१८]

ऽ । ऽ । ऽ । ऽ ।
उदाहरण - मग हति ताड़का एक बाण, निज पद दीन्ह दयानिधान।
ऽ । ऽ । ऽ । ऽ ।
विश्वामित्र आश्रम आइ, सानुज मूल फल मधु खाइ ।।[१९]

ऊपर के छन्द में 'एक' का 'ए' विकल्प से लघु होगा।

पादाकुलक- (१६ मात्राएँ, ४ चौकल)

लक्षण - चौकल चार जहाँ पर आनो, छन्द सु पादाकुलक बखानो।
गुरु पिङ्गल बहु भेद लखाए, तिन महँ 'भानु' कछुक इत गाए।[२०]

उदाहरण स्थायी - मधुर-मधुर मिल गायन करिए, वादन मधुर चतुर्विध करिए।
अन्तरा - गायन-वादन-नर्तन मिलकर, शास्त्र-विहित सङ्गीत उचरिए।
गुन पावन गुनि सङ्ग विचरिए।[२१]

ऊपर के पद में एक पंक्ति की स्थाई है जिसमें छन्द के २ चरण (४ चौकल समेत) बने हैं। अन्तरे की पहली पंक्ति में भी २ चरण (४ चौकल समेत) मिल रहे हैं। इस प्रकार छन्द के लक्षण 'चौकल चार जहाँ पर आनो, छन्द सु पादाकुलक बखानो' के अनुसार स्थाई की एक पंक्ति तथा अन्तरे की पहली पंक्ति से छन्द के चार चरण पूरे हो जाते हैं एवं अर्थ भी अपने में पूर्ण है। अन्तरे की दूसरी पंक्ति छोड़ने से पद के अर्थ की कोई हानि नहीं होती। गाते समय निःसन्देह सभी पंक्तियों का गायन होगा, किन्तु छन्द ढूँढने या समझने हेतु २ पंक्तियाँ = ४ चरण पर्याप्त हैं।

चौपाई - (१६ मात्राएँ, अन्त में ऽ । न हो)

लक्षण - सोरह क्रमन जतन चौपाई, सुनहु तासु गति अब मन लाई।
त्रिकल परे सम कल नहिं दीजै, दिए कहूँ तो लय अति छीजै।।
सम सम सम सम सम सुखदाई, विषम विषम सम समहू भाई।
विषम विषम सम विषम विषम सम, विषम दोय मिलि जानिय इक सम।।[२२]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'क्रमन' तथा 'जतन' की व्याख्या करते हुए छन्द-प्रभाकर में स्पष्ट किया है कि सोलह मात्राओं में 'क्रम न' अर्थात् गुरु-लघु अथवा चौकलों का कोई क्रम नहीं। क्रमन = क्रमपूर्वक, क्रम इतना कि सम के पीछे सम तथा विषम के पीछे विषम कल हो इसी का जतन करें। जत न = अन्त में जगण (।ऽ।) और तगण (ऽऽ।) न पड़े अर्थात् गुरु-लघु न हो।

ऽऽ ऽऽ

उदाहरण- उभय ग नी स्वर लागत नीके। साँझ समय मन भाव सभी के।।

ऽऽ ऽऽ

आरोहण रि ध वर्जित कीन्हा। हंसङ्किकिणी सब सुख दीन्हा।।[२३]

प्रस्तुत चौपाई राग-लक्षण के हेतु से है, जिसमें राग हंसङ्किकिणी की जानकारी यथा ग, नि स्वरों के उभय प्रकारों (कोमल तथा शुद्ध) का प्रयोग, गान-समय सायंकाल तथा आरोह में रे, ध स्वरों का वर्जित होना बताया है।

अरुण - (२० मात्राएँ, ५, ५, १० अन्त ऽ।ऽ)

लक्षण - पञ्च सर, दिसिहिं धर, अरुण शुभ छन्द में।
राम भज, मोह तज, परो कह फन्द में।।[२४]

ऽ।ऽ ऽ।ऽ

उदाहरण- स्थायी - सुमर श्री राम को, सुखद घनश्याम को, भक्त-तरु काम को, मन्त्र-वर नाम को।।

ऽ।ऽ ऽ।ऽ

अन्तरा - सकल गुन-धाम को, भज भव विराम को। हृदय में रङ्ग भर, 'भाव' निष्काम को।।[२५]

प्रस्तुत पद में मूल रूप में १०, १० की यति है, किन्तु चरण की पहली १० मात्राओं में ५, ५ की यति आसानी से मिल रही है।

रूपमाला - (२४ मात्रा, १४, १०, अन्त ऽ।) अन्य नाम मदन

लक्षण - रत्न दिसि कल रूपमाला, साजिए सानन्द।
राम ही के शरण में रहि, पाइए आनन्द।।
जातु हौ बन बादिही गल, बाँधि के बहु तन्त्र।
धामहीं किन जपत कामद, राम नाम सुमन्त्र ।।[२६]

ऽ।

उदाहरण- स्थायी - रे नर राम रामहि गाउ।

ऽ।

अन्तरा १- अघ अनेक नसात छिन में, मिटत जम को दाउ।

ऽ।

अन्तरा २ - हृदय ज्ञान प्रकाश प्रकटत, भक्ति-भाव प्रभाउ।[२७]

मात्रिक अर्द्ध सम छन्दों के अन्तर्गत भट्टजी द्वारा लिखे गये दोहे एवं सोरठे काफी संख्या में हैं।

दोहा - लक्षण- 'जान विषम तेरा कला, सम शिव दोहा मूल।'

तथा

जान विषम राखैं 'सरन', अन्त सु सम ह्वै जात।
सङ्कट तेरो शिव हरैं, सुनि दोहा अवदात।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दोहा अत्यन्त प्रसिद्ध छन्द है जिसके विषम अर्थात् पहले और तीसरे चरण में १३ तथा सम अर्थात् दूसरे और चौथे चरण में ११ मात्राएँ होती हैं। ऊपर दिये गये दोहे के लक्षण-छन्द का पिङ्गलार्थ छन्द-प्रभाकर के रचयिता भानु कवि ने दिया है जिसके अनुसार 'जान विषम' अर्थात् पहले और तीसरे चरण के आदि में जगण । ऽ। नहीं होना चाहिए। तथा अन्त में 'स र न' सगण (। । ऽ), रगण (ऽ । ऽ) तथा नगण (। । ।) हो। समचरण की ११ मात्राएँ इस प्रकार हों कि उनके अन्त में 'जात' जगण (। ऽ ।) अथवा तगण (ऽ ऽ ।) हो।[२८]

उदाहरण के रूप में दो दोहे प्रस्तुत हैं, एक राग-लक्षण से सम्बद्ध है दूसरा भक्तिपरक है –

रि ध वर्जित मध्यम उभय, ग नि कोमल कमनीय।
'मधुस्वरावलि' श्रवण- मधु, साँझ समय रमणीय।।[२९]
दोष दैन्य दारुण दलन, रावणारि श्रीराम।
भक्ति ज्ञान वैराग्य धन, देहु दयाघन राम।।[३०]

सोरठा – लक्षण – सम तेरा विषमेश, दोहा उलटे सोरठा।

दोहा के समान सोरठा भी अत्यन्त प्रसिद्ध छन्द है जिसमें सम चरणों में १३ तथा विषम में ११ मात्राओं का विधान है। छन्द-प्रभाकरकार ने सोरठा के बारे में विशेष सूचन किया है कि सोरठा के सम चरणों में जगण । ऽ । का निषेध है। सोरठा के सम पद के आदि में त्रिकल के पश्चात् दो गुरु नहीं आते।[३१]

उदाहरण- स्थायी- व्योम भूमि भर दीन, भेरी शङ्ख निनाद कर।
अन्तरा - कौरव हृदय विदीर्ण, प्रमुदित पाण्डव वीर वर।[३२]

एक अन्य सोरठा द्रष्टव्य है जो राग-भूपाली के लक्षण से युक्त है –

बिनु म नि मधुर बखान, शान्त, रात्रि, ग ध स्वर सघन।
भूपाली भल गान, 'स ध़ स रे गऽ सुन्दर वदन।।[३३]

अलङ्कारेषु कौशलम् : अलङ्कारों का प्रयोग भाषा में सौन्दर्य का आधान करता है। त्रुटिरहित व्याकरण-सम्मत भाषा को कवि अपनी विशेष सौन्दर्य-बुद्धि द्वारा शब्दालङ्कारों तथा अर्थालङ्कारों के आभरणों से सज्जित कर काव्य को सर्वथा नवीन एवं मोहक कलेवर प्रदान करता है। भट्ट जी के काव्य में अलङ्कारों का विपुल वैभव दीखता है। शब्दालङ्कारों के अन्तर्गत यमक तथा पुनरुक्ति प्रकाश तो हैं ही, विशेष रुझान अनुप्रास की ओर है, उसमें भी अन्त्यानुप्रास में वे सिद्धहस्त हैं।

लक्षण के आधार पर शब्दालङ्कारों के उदाहरण

अनुप्रास – इस अलङ्कार में वर्ण या वर्ण-समूह अनेक (दो या अधिक) बार आता है। अनुप्रास के चार भेद हैं- छेकानुप्रास, वृत्यनुप्रास, श्रुत्यनुप्रास एवं अन्त्यानुप्रास।

छेकानुप्रास – लक्षण- वर्ण या वर्ण समूह का दो बार आना।

वृत्त्यनुप्रास – लक्षण- वर्ण या वर्ण समूह का तीन या अधिक बार आना।

श्रुत्यनुप्रास – लक्षण- एक स्थान से उच्चारण होने वाले बहुत से वर्णों का प्रयोग होना।

अन्त्यानुप्रास – लक्षण-शब्दों या चरणों के अन्त में, अन्तिम दो स्वरों की, बीच के व्यञ्जन सहित आवृत्ति होना।[३४]

उदाहरण – छेक १. दरसन दे प्रीतम प्यारे अन्तरपट पल करहु उघारे।[३५]
२. कैलास में भोर भयी, जागी जगदम्बा मङ्गलकारिणी।[३६]

उदाहरण – वृत्ति आज बजावत बाजा ब्रज जन बरही के अति उछाह भरे नन्द राजा।[३७]
'ज' वर्ण तथा 'ब ज' वर्णद्वय का तीन बार आना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उदाहरण - श्रुति १. शीतल मन्द सुगन्ध बहत पवन वन उपवन [३८] 'त' वर्ग

२. मोर पपीहा मौन भए सब [३९] 'प' वर्ग

उदाहरण – १ में तवर्ग के 'त', 'द', 'ध' तथा 'न' का तथा उदाहरण– २ में पवर्ग के 'प', 'ब' 'भ', एवं 'म' वर्णों का प्रयोग।

उदाहरण - अन्त्य- मारुति ज्ञानमूरति, रामपद रति, काम–उपरति सदासन्तमति विचरत अबाध गति [४०]

रति (तीन बार), मति तथा गति में अन्तिम दो स्वरों की वर्ण सहित आवृत्ति है। अनुप्रास के उदाहरण में एक पद और प्रस्तुत है जिसमें छेक, वृत्ति और अन्त्य तीनों का सुन्दर गुम्फन है–

स्थायी - बलि बलि जाऊँ मैं जसुमति के लाड़ले लाल पै।
गोपेश गोपाल पै, विश्वरूप विशाल पै।।
अन्तरा - कंस काल कराल पै, मुनि मानस मराल पै।
राधिकेश रसाल पै, भावेश भवपाल पै।।[४१]

लक्षण-लाटानुप्रास – जब कोई शब्द अनेक बार आए, अर्थ प्रत्येक बार एक ही हो, पर अन्वय प्रत्येक बार भिन्न हो। अर्थात् या तो भिन्न शब्द के साथ हो, या यदि एक ही शब्द के साथ हो तो भिन्न प्रकार का हो।[४२]

उदाहरण - स्थायी - खेलन चली सुन्दरी, ब्रजबाम, सुखधाम श्याम सन।
अन्तरा- शरद रास-रसिका, मनो चन्द्रिका मधुरी मिली चन्द्र सन।[४३].

'सन' शब्द का 'संग' अर्थ अभिन्न है, दो बार प्रयुक्त हुआ है, दो अलग शब्दों के साथ।

लक्षण-यमक – जब कोई शब्द अनेक बार आए और अर्थ प्रत्येक बार भिन्न हो। कभी–कभी पूरा शब्द दुबारा न आकर उस शब्द का कुछ अंश आता है, उस अवस्था में भी यमक होता है। कभी–कभी एक शब्दांश और एक शब्द का भी यमक होता है। शब्दांश के यमक में दोनों शब्दांश अर्थहीन होते हैं। यमक कई प्रकार का होता है–

१– सार्थक + सार्थक, २– निरर्थक + निरर्थक, ३– सार्थक + निरर्थक / निरर्थक + सार्थक [४४]।

उदाहरण - १. स्थायी - ऐसो निलज लाल तेरो है री माई।
हमन की आत–जात मग में चुनरिया झटहि लेत झटकाई।[४५]

उदाहरण - २. स्थायी - कान्हा तोपे नाहीं चलत पिचकारी
रङ्गन को नहिं रङ्ग सुहावत, देह तुम्हारी कारी।[४६]

उदाहरण १ में 'झट' तथा उदाहरण २ में 'कारी' यमक है। यमक के सन्दर्भ में एक पद और देखना उचित है जिसमें एक ही शब्द 'सारङ्ग' विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ है।

उदाहरण - ३. राग – सारङ्ग–समय शुभ सुहावन ××× भूमिधर सारङ्ग के बड़ भ्राता × शारङ्ग–धर रामप्रभु – दर्शन–हित × रथसमेत व्योम सारङ्ग स्तम्भित ××× गात सारङ्ग चतुरङ्ग मधुर गुनि ××× स्वर्ण – सारङ्ग–त्वच सिय मन भावत ××× शारङ्ग लिए हरि सवेग धावत।[४७]

ऊपर के उदाहरण में सारङ्ग शब्द विभिन्न अर्थों में प्रयुक्त हुआ है – १– दोपहर २– सर्प (शेष–नाग) ३– विष्णु ४– सूर्य ५– सारङ्ग नामक राग ६– हरिण और ७– धनुष।

लक्षण-श्लेष – जब वाक्य में एक से अधिक अर्थ देने वाले शब्द या शब्दों का प्रयोग किया जाये और इस प्रकार एक से अधिक अर्थों का बोध कराया जाय।[४८]

उदाहरण- राधे तोपे श्याम–रङ्ग मैं डारूँ।[४९]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यह पंक्ति होली के प्रसङ्ग की है। श्याम-रङ्ग से दो अर्थ ध्वनित होते हैं १- श्याम रङ्ग= काला रङ्ग (गहरा रङ्ग जो राधा के गौर वर्ण पर उभर कर दिखेगा), २- श्याम रङ्ग = कृष्ण का रङ्ग (कृष्ण का प्रेम, जो राधा के अन्तस् को आह्लादित कर देगा)

पुनरुक्ति प्रकाश - लक्षण- जब शब्द की आवृत्ति हो, प्रत्येक बार अर्थ अभिन्न हो और अन्वय भी अभिन्न हो।[५०] पं. बलवन्तराय भट्टजी की अनेक रचनाओं में अनुप्रास एवं शब्दांश-यमक की ही भाँति पुनरुक्ति-प्रकाश का सुन्दर प्रयोग दिखाई देता है।

उदाहरण - १. होरी होरी होरी खेलत नन्दलाल × उड़ावत **भर भर भर** गुलाल ××× **अणु-अणु** भावरङ्ग भ्राजे।[५१]

उदाहरण -२. **बन-बन** बहार आई ××× पंछिन **मिल-मिल** गाई ××× बेलन फूलन लता-पता सरस **झूम-झूम** चमर डुलाई।[५२]

उदाहरण-१ में 'होरी', 'भर', तथा 'अणु' एवं उदाहरण-२ में 'बन', 'मिल', तथा 'झूम' शब्द पुनरुक्ति के रूप में आए हैं।

लक्षण के आधार पर अर्थालङ्कार के उदाहरण :

भट्टजी की रचनाओं में शब्द के चमत्कार के साथ-साथ अर्थ का चमत्कार भी परिलक्षित होता है। यह चमत्कार विशेष रूप से उपमा, मालोपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, प्रतीप, स्वभावोक्ति, स्मरण, उदाहरण, विरोधाभास, अतिशयोक्ति एवं असङ्गति आदि के माध्यम से व्यक्त हुआ है।

उपमा- लक्षण- उपमा अलङ्कार में किसी वस्तु को दूसरी वस्तु के समान बताया जाता है। दोनों वस्तुओं में कोई साधारण-धर्म अर्थात् ऐसा गुण होता है जो दोनों में पाया जाता है। उसी साधारण-धर्म के कारण दोनों में समानता बताई जाती है। उपमा में इन चार बातों का होना आवश्यक है-

१. उपमेय - जिसका वर्णन किया जाता है।
२. उपमान - वह प्रसिद्ध वस्तु जिससे तुलना की जाती है।
३. वाचक शब्द - जिस शब्द के द्वारा तुलना की जाती है।
४. साधारण- धर्म - वह गुण, जिसके द्वारा उपमेय और उपमा की समानता देखी जाती है।

कभी-कभी ये चारों बातें कविता में स्पष्ट होती हैं ऐसी स्थिति में यह **पूर्णोपमा** कहलाता है। कभी-कभी कोई एक अथवा दो चीजें व्यक्त नहीं होतीं, उनका अध्याहार करना होता है। वहाँ वह **लुप्तोपमा** होता है। उपमा अलङ्कार के वाचक शब्द हैं - सा, समान, सम, सदृश, सरिस, तुल्य, इव, यथा, जैसे, जैसा, ऐसा, ज्यों, यों, जिमि आदि।[५३]

उदाहरण- कुरु शर होत लीन हरि तन में, **जस** दामिनी सावन घन में।[५४]

उत्प्रेक्षा - लक्षण -जब एक वस्तु में दूसरी वस्तु की सम्भावना की जाये, अर्थात् एक वस्तु को दूसरी मान लिया जाय। इस सम्भावना के लिये अर्थात् उत्प्रेक्षा के लिये वाचक शब्द हैं - मानों, मनो, मनु, मनहुँ, जानो, जनु, सा आदि।[५५]

उदाहरण - १. **स्थायी -** खेलन सखि श्याम संग, निकस आईं भर उमङ्ग, लिए संग पिचकारी।
अन्तरा - मनहु राग-रागिनियाँ, करत 'भाव' रङ्ग-रलियाँ[५६] ×××।

प्रस्तुत पद में कृष्ण और गोपियों की राग-रागिनियों के साथ उत्प्रेक्षा की गई है। वाचक शब्द- 'मनहु'।

उदाहरण - २. **स्थायी -** कुञ्जन में कूकत कोयलिया × **मनो** बजत बसन्त की मुरलिया ।
अन्तरा - कली-कली पर गूँजे भँवरा × **मनो** करत स्वर-साधन ऋतुराज गवैया।[५७]

उक्त पद में वाचक शब्द 'मनो' द्वारा कोयल की कूक की वसन्त की मुरली से तथा भँवरे के गुँजन की स्वर-साधना से उत्प्रेक्षा की गई है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रतीप – लक्षण– जब उपमेय के सामने उपमान का तिरस्कार किया जाय।[५८]

उदाहरण – १. मुख देखे चन्द छबि लाजे, मधु मन्द करधना बाजे।[५९]

उदाहरण – २. कोटिन सरद चन्द सम सुहावनो, लखि राधा वदन मदन लजावनो।[६०]

दोनों प्रसङ्गों में उपमेय के सामने उपमान को लज्जित बताया है।

स्मरण – लक्षण –जब पहले देखी गई या सुनी हुई वस्तु की उसके समान किसी अन्य वस्तु को देख सुनकर स्मृति हो आए।[६१]

उदाहरण – १. घिर आए छाए घनश्याम गगन।
सखि देख–देख हिय छाय रही छब मोहन की घनश्याम बरन।[६२]

उदाहरण – २. सजनी श्याम घन छाए री, छाई छबि मन भाए की।[६३]

उदाहरण – ३. ए री घन आयो मन भायो, श्याम रङ्ग देख जिया सुख पायो।[६४]

ऊपर के तीनों उदाहरणों में काले बादलों को देखकर कृष्ण के स्मरण का उल्लेख है।

रसभावपरिज्ञानम् : सङ्गीत की पारम्परिक रचनाएँ अधिकांश श्रृङ्गार एवं भक्ति–भाव की हैं। पारम्परिक रचनाओं की तुलना में बलवन्तराय जी की रचनाओं में कथ्य की बहुत विविधता एवं विस्तार है और यही विस्तार 'रस' की विविधता प्रदान करता है।

'रस' की दृष्टि से 'भावरङ्ग–लहरी' के पदों को देखेंगे तो उसमें श्रृङ्गार के दोनों पक्षों संयोग एवं वियोग का प्रचुर मात्रा में वर्णन है। नीति, दर्शन एवं उपदेश–परक पद शान्त–रस के अन्तर्गत आते हैं। काम–दहन के प्रसङ्ग में रौद्र–रस तथा महाभारत एवं रामायण के युद्ध सम्बन्धी कतिपय प्रसङ्गों तथा हनुमत् स्तुति में वीर रस का दर्शन होता हे। भक्ति के पदों में दास्य–भाव की भक्ति की ओर झुकाव दीखता है। वात्सल्य के भी अनेक पद हैं।

उदाहरण – श्रृङ्गार (संयोग)

१. स्थायी – पिय सन चली नवेली, अनन्त सुहागिनी अनुरागिनी बड़भागिनी।
अन्तरा – अतख बनी मूरत मन भावनी, लास्य निरत शत काम लजावनी
केदार–नटवर सन गावति, भावभरी रसरङ्गिनी मधुरागिनी।।[६५]

२. स्थायी – आए री मोरे मन्दरवा, आज प्रात प्रीतम सखि श्याम–सुँदरवा।
अन्तरा – मधुर मन्द हँस–हँस अत 'भावरङ्ग' रङ्गाए, बात कीन्ही रहस–रहस,
आज प्रात प्रीतम सखि, श्याम–सुन्दरवा।।[६६]

उदाहरण – श्रृङ्गार (विप्रलम्भ)

१. स्थायी – रटना लगी श्याम नाम की,
दिन न चैन, निन्दिया न रैन, छबि देखन चहूँ सुखधाम की।
अन्तरा – खान–पान कछु नहिं भावे, घर–आँगन मोहे न सुहावे,
रह्यो न जाय 'भावरङ्ग' बिन, सखि मैं पुनि–पुनि छबि देखन चहूँ सुखधाम की।[६७]

२. स्थायी – ए री कोयलिया ! बन की मुरलिया ! जा बज पियु के देस।
अन्तरा – हे अनुरागिनी, ले मधुरागिनी, कहियो मोर सन्देस,
'तुमरी सुहागिन भई बैरागिन, कियो अमङ्गल भेष

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अब पियु आओ रस बरसाओ, 'भावरङ्ग' हृदयेश!
मुरलिया जा बज पियु के देस।[६८]

उदाहरण - वात्सल्य

स्थायी - अतही हुलसी जसोदा माई,
देख्यो आवत नाचत-गावत अपनो कुँवर कन्हाई।
अन्तरा - लाड़ प्यार सों सुत समुझावति, 'भावरङ्ग' नित आवो बेगि घर,
भूख-प्यास तोहे कछु नहिं लागत ? कहति भरति हिय लियो लाल उर लाई।[६९]

उदाहरण - रौद्र

स्थायी - होई मदमत्त चल्यो मदन, सुरनकाज शिवजी को तप चलन, बहुबल धर।
अन्तरा - सुमन चाप पर साधे पंच शर लगे महादेव को, समाधि भङ्ग, कोप्यो महाकाल,
अनल नेत्र निरख्यो, स्मर थर-थर, जार्‍यो कियो छार छिन में[७०]

उदाहरण - करुण

स्थाई - विलपति वैदेही घन वन में।
अन्तरा- शोकाकुल खग-मृग-तरु-पल्लव, क्रन्दन स्वर कण-कण में।
वाल्मीकि के वचन सदय सुनि, सिय निवसी ऋषिगण में।
जाये सुत कुश-लव रघुमणि जो, राजत रामायण में,
विलसति वैदेही जन-मन में।।[७१]

उदाहरण - शान्त

स्थाई - मारुति ज्ञानमूरति रामपदरति काम उपरति,
सदा सन्तमति विचरत अबाध गति।
अन्तरा १- हे अपार बलधृति ! परम द्युति, अङ्ग-प्रत्यङ्ग वज्राङ्ग,
हे हनुमान यति! स्मरत सद्य हरत संसृति।
अन्तरा २- परम कृपालु प्रभु प्रणत-प्रति, देखत कराल अति दुष्टमति,
सतव्रत - प्रताप तुम अभय कीन्ह माँ सीयसती,
'भावरङ्ग' माँगत तव चरनन की नित, हेतु - रहित भक्ति।[७२]

देशस्थितिषु चातुरी : 'देशस्थिति' में चातुरी अर्थात् पाञ्चाल, गौड़ आदि देशों की संस्कृति का सूक्ष्म अध्ययन। संस्कृति के अध्ययन से तात्पर्य है स्थान-विशेष के निवासियों की रुचि एवं मानसिकता की समझ या परख। इसे दो सन्दर्भों में समझा जा सकता है। पहला कलाकार के सन्दर्भ में- इससे यह तात्पर्य है कि जिस स्थान पर कलाकार का प्रदर्शन आयोजित है वहाँ के समुदाय की रुचि एवं स्तर का ध्यान रखते हुए कार्यक्रम प्रस्तुत करना, जिससे श्रोता-समूह उसका ग्रहण सुगमता-पूर्वक कर सकें। दूसरा सन्दर्भ है विद्यार्थी और शिक्षक का। शिक्षा के समय विद्यार्थी की क्षमता देखकर उसे सिखाना, क्योंकि प्रत्येक विद्यार्थी की ग्रहण-शक्ति का स्तर भिन्न होता है। एक वागेयकार के रूप में इस क्षेत्र में 'भावरङ्ग' जी की उपलब्धि उल्लेखनीय है। उन्होंने जहाँ स्थापित कलाकारों की आवश्यकतानुसार अत्यन्त क्लिष्ट एवं चमत्कार-पूर्ण रचनाएँ की हैं (विशेष अनुरोध वाली रचनाओं की सूची परिशिष्ट १- पञ्चम के अन्तर्गत दी है), वहीं अति सामान्य क्षमता वाले विद्यार्थी भी सरलता से सीख सकें ऐसी छोटी और सरल रचनाएँ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विविध बन्धों (बड़ा-ख्याल, छोटा-ख्याल, ध्रुपद, धमार एवं तराना) में की हैं। उदाहरणार्थ-राग-बिहाग का बड़ा ख्याल- का कहिए [७३], राग-भैरव का बड़ा ख्याल- राघव राजाराम [७४], राग भिन्नरागेश्री का छोटा ख्याल- मुकुट धरे श्री राम [७५], राग भूपाली का छोटा ख्याल- निरख निरख छबि [७६], राग-मारु बिहाग का तराना- तदरे तन रे दीं तान दी [७७], राग-भूपाली का ध्रुपद-नाद- देव तोरी शरण [७८] तथा राग-जलधर केदार का धमार- धिट तिट बजे ताल धमार [७९] आदि।

अशेष भाषा विज्ञानम् : इस गुण के अन्तर्गत एक 'वाग्गेयकार' अनेक भाषाओं का ज्ञाता हो ऐसी अपेक्षा की जाती है। भट्टजी अपनी मातृभाषा गुजराती के अतिरिक्त मराठी एवं हिन्दी पर प्रभुत्व रखते हैं। गुजराती एवं हिन्दी में काव्य रचनाएँ की हैं। पंजाबी भी समझते हैं। संस्कृत पहले सीखी तो नहीं थी किन्तु उसके प्रति आदर एवं अनुराग इतना है कि आकाशवाणी से प्रसारित होने वाले 'भाषा-शिक्षा' कार्यक्रम के अन्तर्गत 'संस्कृत-शिक्षा' का प्रसारण नियमित सुनते थे। साथ ही पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर की पुस्तक माला का अध्ययन किया। इस अध्ययन का प्रभाव उनकी रचनाओं में स्पष्ट परिलक्षित होता है। संस्कृत में भी अनेक रचनाएँ की हैं। 'आत्मदर्शन' काव्यसंग्रह में गुजारती, हिन्दी और संस्कृत काव्यों का सङ्कलन प्रकाशित है।

कलाशास्त्रेषु कौशलम् : कलाओं के शास्त्र की अभिज्ञता। भट्टजी को शास्त्रों के अध्ययन में रुचि है, यही कारण है कि उन्होंने अपनी गुरुबहन प्रेमलता जी से आग्रह करके सङ्गीत-शास्त्र-विषयक निबन्ध लिखवाए तथा उन्हें अपने रचना-सङ्ग्रह में सम्मिलित किया।

तूर्यत्रितयचातुर्यम् : इस गुणविशेष से तात्पर्य है गायन, वादन तथा नर्तन में प्रवीणता। एक ही व्यक्ति का इन तीनों कलाओं में पारङ्गत होना तो बहुत ही विलक्षण बात है। सामान्यतः दो कलाओं में निष्णात कलाकार तो मिल जाते हैं। 'वाग्गेयकार' से यह अपेक्षा सम्भवतः इसलिए है क्योंकि भारतीय परम्परा में 'सङ्गीत' के अन्तर्गत इन तीनों ही विधाओं का समावेश है। भट्टजी की कुशलता एक गायक एवं वादक कलाकार के रूप में तो है ही, तीसरी कला अर्थात् नृत्य सीखने अथवा देखने की सम्भावना नेत्रहीनता के कारण सम्भव नहीं थी। यद्यपि नेत्रहीनता भट्टजी के जीवन का सत्य है जिस कारण वे अधिकतम वस्तुएँ या घटनाएँ चर्मचक्षु से देख पाने से वञ्चित रहे, तथापि इनकी अनेक रचनाएँ ऐसी हैं जिसमें राधा-कृष्ण व ब्रजवनिताओं के गीत एवं नृत्य का वर्णन है या ऐसे प्रसङ्ग हैं जो नृत्यमय प्रस्तुति के उपयुक्त हैं। अनेक रचनाओं की नृत्यमय प्रस्तुति सफलतापूर्वक हुई भी है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं-

उदाहरण १. राधिका रास खेलन चली आज
सखिन संग सज सिंगार, षोडश प्रकार, लै साज।[८०]

ध्यान देने की बात है कि नृत्य में भाव-भङ्गिमाओं का प्रदर्शन प्रमुख है अतः यह मुख्यतः दृश्यकला है। प्रस्तोता अथवा नर्तकी अपने को आकर्षक बनाने के लिए विशेष वेश-विन्यास एवं रूप-सज्जा का आश्रय लेते हैं। यों भी नारी शृङ्गार एवं आभूषण-प्रिय मानी जाती है। उक्त पद की पंक्तियों में सोलह सिंगार का सन्दर्भ भी आया है। 'रास' सामूहिक होता है अतः सखियों का साथ होना भी स्वाभाविक है। नृत्य के लिए सङ्गत अनिवार्य है अतः 'साज' (वाद्य) साथ ले चलना भी स्वाभाविक है।

एक अन्य पद 'नाचति वृषभुान-नन्दिनी में '**ताल की तरल तरङ्गिनी**' तथा '**केकि-नृत्य-गर्व-गञ्जिनी**'[८१] कहकर श्री राधाजी की तालज्ञता, नृत्य-कुशलता, श्रेष्ठता एवं विलक्षणता को बताया है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पद-न्यास के साथ नूपुर-ध्वनि एवं प्रतिक्षण होने वाले नवीन अङ्ग-विक्षेप या भङ्गिमा को इन शब्दों में व्यक्त किया है-

उदाहरण २. रास-रमणी राधिका मधुर स्नेह- साधिका,
पद-नूपुर-रव रुनझुन, नर्तन गति नव छिन-छिन,
निरखत हिय श्याम मगन नवल भाव-रसिका।।[८२]

उदाहरण ३. कुहुकी कोयलिया नाचे मोर।
श्याम सुन्दर सन गाति राधिका
नाचत थै थै तत्त थै ता थै, तत् तत् थैऽत थैऽत थैऽत थै[८३]. . . . . . .

इसमें नृत्य के वर्णन के साथ नृत्य के बोल अत्यन्त स्वाभाविक लगते हैं। अन्य पद द्रष्टव्य है-

उदाहरण ४. स्थाई - वेणु-स्वर वन रञ्जित, आकाश अवनि गुञ्जित, दमकत दस दिसि नन्दित।
अन्तरा - गोपि-कान्ह, गोपि-कान्ह चतुरङ्गी करत गान,
नाचत सुताल बन्धान, धिकिट तगिन धिकिट तगिन धा गदिगन
दिगन दिगन दिगन दिगन क्ड़ान तत्ता धा, क्ड़ान तत्ता धा ....[८४]

ऊपर जो उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं वे पूरी बन्दिश न होकर उसकी एक-दो पंक्तियाँ हैं। अब एक उदाहरण पूरी कविता का प्रस्तुत है।

उदाहरण ५. स्थायी- श्याम गोपि, श्याम गोपि मण्डली बनी, वेणु-गीत अति पुनीत, गात ताल स्वर धनी।।
अन्तरा -शब्द-भाव कृष्ण चन्द्र, राधा रस-चन्दिनी, नृत्य-गीत मण्डल छवि, दर्शन श्रुति पावनी।।
मुरली डफ झाँझ मजिर, कर तारी रमणी, 'भावरङ्ग' दिग्‌दिगन्त, ऊँकार गुञ्जत धुनि।।[८५]

हृद्यशारीरशालिता : इससे तात्पर्य है 'हृद्य' अर्थात् मनोरम शारीर (शरीर के साथ उत्पन्न कण्ठ ध्वनि)। इसका सम्बन्ध 'वागेयकार' के रचना सम्बन्धी गुण से सीधे न होकर प्रयोग-पक्ष से सम्बन्धित है (बनाई गई रचना गाकर सुनाना जरूरी है) साथ ही व्यक्तिनिष्ठ भी है। भट्टजी का कण्ठ-धर्म शास्त्रीय-सङ्गीत प्रस्तुत करने के सर्वथा अनुकूल है।

लय-ताल-कला-ज्ञानम् : लय और ताल के अतिरिक्त 'कला' का भी उल्लेख है जिसका तात्पर्य ताल की निःशब्द क्रिया से है। 'ताल' पर भट्टजी का विशेष प्रभुत्व है। कठिन लयकारियों को उन्होंने साधा है, यथा १६ मात्रा में ७, १०, १२ अथवा १४ मात्रा की बन्दिशों को प्रस्तुत करना तथा उसमें भी तिहाइयों के साथ 'सम' पर आना। यह विलक्षण प्रदर्शन उन्होंने अनेक बार मञ्च पर किया है। लयकारी की यह विलक्षणता उनकी अनेकानेक रचनाओं में दृष्टिगोचर होती है। सामान्य रूप से कठिन माने जाने वाले तथा अल्पप्रचलित ताल 'आड़ाचौताल' पर उनका विशेष प्रभुत्व है एवं उसे अधिकाधिक गाकर एवं अनेक रचनाएँ बनाकर प्रचार में लाने का श्रेय भट्टजी को जाता है। लय के चमत्कारपूर्ण प्रयोग एवं तालों के वैविध्य के कारण वे अन्य कलाकारों से अलग पहचान रखते हैं। 'भावरङ्ग-लहरी' के तीन भागों में कुल ३५ विभिन्न तालों में रचनाएँ प्रकाशित हैं। ताल का यह वैविध्य दुर्लभ है।

विवेकोऽनेककाकुषु : अनेक काकुओं का ज्ञान। यह प्रयोग-पक्ष से सम्बन्धित गुण है। रचना-प्रक्रिया में ध्वनि के कोमल या कठोर प्रयोग, आघात सहित अथवा रहित प्रयोग इसी आधार पर किये जाते हैं। इसका विवेकपूर्ण प्रयोग कार्यक्रम में प्राणों का सञ्चार करता है। 'रसानुभूति में काकुभेद का स्थान'[८६] शीर्षक से एक-प्रपत्र भट्टजी ने पढ़ा था जो भावरङ्ग-लहरी के तृतीय-भाग में सङ्गृहीत है। साथ ही 'सङ्गीत-रत्नाकर' में वर्णित रागकाकु के अनुसार राग का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भाग किन स्वरों में स्पष्ट होता है उसे बन्दिश में कैसे सजाया जाय, यह रचना के सन्दर्भ में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रभूतप्रतिभोद्भेदभावत्वं : नवनवोन्मेषशालिनी बुद्धि। लक्षण के इस निकष पर भी 'भावरङ्ग' जी सफल सिद्ध हुए हैं। अनेक नवीन रागों तथा तालों का निर्माण किया है।[८७]

सुभगगेयता : सुश्रव्यता। इसे दो तरह से समझा जा सकता है। पहला तो स्पष्ट सुनाई देना, अर्थात् गायक के उच्चारण एवं क्रियाएँ (कण्ठगत) सुश्राव्य होनी चाहिए। अस्पष्ट एवं दोषपूर्ण उच्चारण से, रसिकों को गाई जाने वाली बन्दिश का अर्थग्रहण करने में कठिनाई होती है। भट्टजी के सन्दर्भ में डॉ० नागेन्द्रनाथ उपाध्याय (भू०पू० अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) के उद्गार महत्त्वपूर्ण हैं- 'प्रायः सङ्गीतज्ञ गाते समय बोलों के उच्चारण को इतना विकृत कर देते हैं कि उसके भाव तक पहुँचना श्रोता के लिए असम्भव हो जाता है और वह ऊबने लगता है। 'भावरङ्ग' जी के गायन में भजनों की पंक्तियों का इतना स्पष्ट और सहज उच्चारण रहता है कि श्रोता बड़ी सरलता से भावानुभव की चरम स्थिति तक पहुँच जाता हैं'[८८] सुभगगेयता का दूसरा अर्थ हो सकता है, जो सुनने में मधुर लगे अर्थात् श्रुति-मधुरता।

देशीरागेष्वभिज्ञानम् : देशी रागों का ज्ञान। भट्टजी को अपनी गुरु-परम्परा से प्राप्त तथा अन्य परम्पराओं के रागों की अवधारणा स्पष्ट है। साथ ही उत्तर भारतीय, दक्षिण भारतीय तथा ओडिसी पद्धति के रागों के तुलनात्मक अध्ययन की विशेष रुचि है। जिसका उनके ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर निर्देश मिलता है।

वाक्पटुत्वं सभाजये : यह गुण व्यक्तित्व सम्बन्धी है। सभा में बोलने की कला से भी बलवन्तराय जी सुपरिचित हैं। ऐसे अनेक अवसर आये जब इन्हें पूर्व सूचना के बिना ही बोलने के लिये मञ्च पर आमन्त्रित किया गया और वे अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से बोले। एक अन्य प्रसङ्ग अमरीका प्रवास का है। वहाँ अंग्रेज़ी में उन्होंने प्रायः घण्टे भर का व्याख्यान दिया। व्याख्यान हो जाने के पश्चात् हैरियट (जिन्होंने उनका अमरीका प्रवास आयोजित किया था) पास आईं और बोलीं कि गुरुजी, आप कितना अच्छा बोले, मैं कई दिनों से चिन्तित थी कि अंग्रेज़ी में आप कितना बोल पायेंगे। मैंने कल्पना नहीं की थी, इतने अधिकार से आप बोले। अस्तु।

रोष-द्वेष-परित्याग: रोष-द्वेष से रहित होना भी व्यक्तित्व सम्बन्धी गुण है। प्रो० प्रेमलता शर्मा 'भैयाजी' के व्यक्तित्व के इस गुण को 'अदोषदर्शी'[८९] कहकर रेखाङ्कित करती हैं।

सार्द्रत्वम् : चित्त का भीगापन या सरसता। यह गुण भी व्यक्तित्व सम्बन्धी है। बलवन्तराय जी का स्वभाव पूर्णतया ऊपर लिखित गुण के अनुरूप है, रुक्षता उनके व्यवहार में नहीं है। अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ रहते हुये भी वे आप्तजनों के अनुकूल रहते हैं। दूसरे के सुख-दुःख में सहभागी हो सकना ही सरसता होती है। इस आर्द्रता के कारण ही उनकी रचनाओं में और गायन की प्रस्तुति में भावाभिव्यक्ति का विशेष स्थान रहता है।

उचितज्ञता : उचित-अनुचित का ज्ञान। भट्टजी में औचित्य-विचार के प्रति विशेष प्रेम एवं आग्रह है। उन्होंने 'भावरङ्ग-लहरी' के प्रथम भाग में 'लेखक का निवेदन' के अन्तर्गत औचित्य-विचार के सन्दर्भ में आनन्दवर्धन के 'ध्वन्यालोक' के तृतीय उद्योत से यह श्लोक उद्धृत करते हुये लिखा है-

'अनौचित्यादृते नान्यद् रसभङ्गस्य कारणम् । प्रसिद्धौचित्यबन्धस्तु रसस्योपनिषत् परा।'

अर्थात् अनौचित्य को छोड़ रसभङ्ग का और कोई कारण नहीं हो सकता। दूसरे शब्दों में प्रसिद्ध औचित्यपूर्ण रचना ही रस तक पहुँचने का श्रेष्ठ माध्यम है। 'औचित्य सम्बन्धी इस उपदेश को ग्रहण करते हुये मैंने अपनी रचनाओं में औचित्य-निर्वाह के हेतु गीतवाक्य, रागवाक्य तथा ताल की गति एवं यति, इन सभी बातों में सामञ्जस्य रखने का यथाशक्ति प्रयास किया है।[९०]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनुच्छिष्टोक्तिनिर्बन्धो : अनुच्छिष्ट अर्थात् जो जूठी न हो, अछूती उक्ति। इस गुण से तात्पर्य है कि जो भी रचना हो वह सर्वथा नवीन हो। कथ्य भले ही पारम्परिक हो किन्तु उक्ति या कथन मौलिक हो। इस 'नवीन' या 'मौलिक' का सृजन भट्टजी के कथ्य तथा नवीन राग-ताल सम्बन्धी सृजन में भी दर्शनीय है।

नूत्नधातुविनिर्मिति : नूतन 'धातु' अर्थात् गेय का निर्माण। स्वर-रचना की मौलिकता की ओर सङ्केत है। इसके अन्तर्गत पद अथवा गीत का रचयिता भिन्न व्यक्ति होता है, अर्थात् पद किसी और का किन्तु स्वर-रचना अपनी। इस दृष्टि से भी देखें तो स्वरचित बन्दिशों के अतिरिक्त बलवन्तरायजी ने गुजरात के प्रतिष्ठित कवियों जैसे श्री न्हानालाल, श्री झवेरचन्द मेघाणी, श्री दुलाभाई काग, श्री इन्दुलाल गाँधी, श्री अखाभगत तथा श्री बालमुकुन्द दवे आदि के अनेक गीतों को भावानुरूप राग-ताल में बाँधा है।

उदाहरणार्थ-

- आपणे ते देश केवा आपणे विदेश केवा, आपणे प्रवासी पारावार नां हे जी। — राग जोगिया
- प्रभुजी ने पडदा माँ राख मा, पुजारी तारा आतम ने ओझल मां नाख मा — राग भीमपलासी
- तुज शरणुं ए अम परम व्योम हरिं ॐ हरि ॐ हरि ॐ — राग भैरवी
- एवी एक पूनम नी रात हती — राग पीलू
- एक वार सागर ढंढोड़्यो तो पूनमे — राग अडाणा
- दरिया ने तीर एक रेती नी ओटली, ऊँची अटूली अमे बाँधी जी रे — राग मिश्र देश
- मधराते मुज बारणूं ठेली करतुं आ कोण अवाज — राग मालकौंस
- जल मां दीप तणायो जाय — राग सोहिनी
- मारी वीणा ने तुं वागवा देजे, जाती जुवानी ने जागवा देजे — राग देश
- शतदल पद्म मां पोढेलो परिमल दाखवो होय जो दीठेलो — राग देश
- एजी काची रे माटी नी काया कूलडी की स्वर-रचना गुजराती लोक-गीत के रूप में की है जो भट्टजी की उत्कृष्ट स्वर-रचनाओं में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।

गुजराती कविताओं के अतिरिक्त गोस्वामी तुलसीदास, भक्त शिरोमणि सूरदास, ब्रह्मानन्द, सन्त कबीर तथा मीराबाई आदि के पदों एवं भजनों के साथ ही संस्कृत के अनेकों श्लोकों को भी स्वरबद्ध कर विद्यार्थियों को सिखाया है तथा स्वयं भी समारोहों में प्रस्तुत किया है। उनके द्वारा गाये तथा विद्यार्थियों को सिखाए कुछ चुने हुए भजनों की सूची इस प्रकार है-

- नैहरवा हमका न भावे — राग भैरवी
- चकई री चल चरन सरोवर, जहाँ न प्रेम वियोग — राग आसावरी
- जाकी गति है श्री हनुमान की — राग पीलू
- सुरति सुहागिन जाग — राग अडाणा
- अब मैं नाच्यो बहुत गुपाल — राग बिहाग
- अचानक ज्ञान घटा घिर आई — राग काफी
- नन्दजू आदि जोतिसी तुमरे घर को, पुत्र जन्म सुनि आयो — राग भीमपलासी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परचित्तपरिज्ञानम् : दूसरे के चित्त की समझ। व्यक्तित्व सम्बन्धी यह गुण भट्टजी में यथेष्ट मात्रा में विद्यमान है।

प्रबन्धेषु प्रगल्भता : प्रबन्धों के भेदों का प्रौढ़ ज्ञान। यहाँ अत्यन्त संक्षेप में 'प्रबन्ध' का परिचय देना उपयोगी होगा। भारत में 'प्रबन्ध' गायन की प्राचीन परम्परा रही है। समसामयिक शास्त्रीय-सङ्गीत की बन्दिशों में प्रबन्ध का शास्त्रोक्त रूप लुप्तप्राय है। प्रबन्ध अपेक्षाकृत लम्बी रचनाएँ होती थीं जिनमें ४ धातुएँ तथा ६ अङ्ग होते थे। इन्हीं की संख्या में फेर-बदल से प्रबन्ध के अनेक भेद-उपभेद होते थे। प्रबन्ध की रचना में काव्य का भी बहुत महत्त्व था। अब प्रबन्ध गायन की परिपाटी तो नहीं रही, किन्तु शास्त्रीय लक्षणों के आधार पर अधुना प्रचलित 'ख्याल' (विलम्बित अथवा द्रुत) अथवा अन्य रचनाएँ यथा- दादरा और ठुमरी आदि 'प्रकीर्ण-प्रबन्ध' के अन्तर्गत समझी जा सकती हैं, जो अपने आप में पूर्ण हैं और स्वतन्त्र रूप से गाई जा सकती हैं। आकार में अन्य प्रबन्धों की अपेक्षा काफी छोटी होती हैं। जबकि 'प्रबन्ध' के अन्य भेदों यथा सूड-प्रबन्ध एवं आलिक्रम-प्रबन्ध में भी एक रचना के अन्तर्गत अङ्गों के रूप में अनेक गीतों का समावेश होता है, इन गीतों में पूर्वापर सम्बन्ध होना अपेक्षित होता है, या कहें उसकी अनिवार्यता होती है।'[११]

प्रबन्ध के ज्ञान की दृष्टि से प्रकीर्ण-प्रबन्ध के अन्तर्गत 'भावरङ्ग' जी ने सहस्राधिक रचनाएँ की हैं, साथ ही प्रबन्ध के कुछ अन्य अल्प प्रचलित प्रकारों में भी रचना का उत्कृष्ट नमूना सामने रखा है। चतुरङ्ग-प्रबन्ध तथा कैवाड़-प्रबन्ध की सुन्दर रचना भट्टजी के रचना- सङ्ग्रह में उपलब्ध है। 'भावरङ्ग' जी द्वारा रचित 'चतुरङ्ग' एवं 'कैवाड़-प्रबन्ध' के उदाहरण प्रस्तुत हैं-

चतुरङ्ग-प्रबन्ध : 'इसे ही आजकल 'चतरङ्ग' कहते हैं, जिसके ४ अङ्ग होते हैं। १- किसी भी भाषा में शब्द-रचना, २- तराने के बोल ३-सरगम और ४- तबले या मृदङ्ग के बोल अथवा किसी अन्य भाषा की शब्द रचना, सामान्यतः फारसी अथवा संस्कृत की कोई छोटी सी रचना 'चतरङ्ग' की बन्दिश के अन्तिम भाग में लगा दी जाती है।'[१२]

'चतरङ्ग' के उदाहरण के रूप में जो बन्दिश नीचे दी जा रही है, वह राग-अड़ाना तथा द्रुत तीनताल में निबद्ध है जिसमें शब्द-रचना के रूप में श्रीकृष्ण के होली खेलने का वर्णन है, तत्पश्चात् सरगम, तराने के बोल तथा अन्त में पाटाक्षर हैं। यह रचना बहुत प्रसिद्ध हुई है तथा अनेक नृत्य कलाकारों द्वारा नृत्यबद्ध कर अनेक बार प्रस्तुत की गई है।[१३]

स्थायी - होरी होरी होरी खेलत नन्दलाल।
चन्दन अतर कुमकुम केसर उड़ावत भर भर भर गुलाल।

अन्तरा - मच्यो शोर, बढ़यो घोर चहुँ ओर, विविध बाजने बाजे
चञ्चल मधुर सुरन परन भेद गाजे अणु-अणु 'भावरङ्ग' भ्राजे (शब्द)
सां रें ग॒ं मं ग॒ं मं, रें सां रें सां रें, सां नि॒सां नि॒ सां, नि॒ध नि॒ध नि॒,
प म प म प, म ग॒ म ग॒ म, रे सा रे सा रे, सा नि॒ सा (सरगम)
दिर दिर दिर दिर दिर दिर तन तनूँ, (तराने के बोल)
कड़ान किड्नग तिरकिटतक धिरकिटतक धाति धा तान्
धिरकिट किड़नग तिरकिटतक धिरकिट तक धा,
धिरकिट किड्नग तिरकिटतक धिरकिटतक धा,
धिरकिट किड्नग तिरकिट तक धिरकिटतक धा, धा।[१४] (तबले के विशेष बोल)

कैवाड़-प्रबन्ध : 'इसमें पाट वर्णों अर्थात् तबला अथवा मृदङ्ग के बोलों से सार्थक अथवा निरर्थक गेय-रचना बनाई जाती है।'[१५] कैवाड़ प्रबन्ध के अन्तर्गत भट्टजी की जो रचना यहाँ उदाहरणार्थ प्रस्तुत है वह 'त्रिवट' कहकर जानी जाती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निम्नलिखित 'त्रिवट' राग मालकौंस तथा द्रुत आड़ाचौताल में निबद्ध है–

स्थायी- त्रक धिकिट धान धान धान धा ता धा, तिरकिट तक धा, धिरकिट तक धा,
धुमकिट तक धा, तान धा तान धा तान धा ता धा ता धा।

अन्तरा - क्ड़ान् धा धुमकिट तक गदिगन धा धा धा, धिरकिट तक धा,
तक्घ्ड़ान् धुमकिट तक गदिगन धा धा धा धा, दिगन धा दिगन धा,
तिगन धा तिगन धा, तक धुमकिट तकिट तका,
धिट कतान धिट कतान कत् गदिगन धा, ता धा, ता धा, ताधा।[९६]

यह मात्र पाटाक्षरों से निर्मित गेय रचना है जिसमें बलवन्तराय जी ने लयकारी का अद्भुत प्रयोग किया है। सार्थक कैवाड़ में भी भट्टजी ने रचना की है। जिसकी प्रथम पंक्ति है–

स्थायी - तरा ना रे नर तुं धरि या तन। त्रिगुणतम तोयधि,
ताते धिक् धिक् रे तुमरो या नर-तन धारन[९७]

द्रुतगीतविनिर्माणम् : इसके लिए प्रचलित शब्द है आशु कवि, जो शीघ्रता से गीत-रचना कर सकता हो। यह शक्ति 'भावरङ्ग' जी में किस परिमाण में है इसका उदाहरण अचम्भित करने वाला है। एक ही दिन में प्रातःकाल ६ बजे से लेकर अपराह्न २ बजे तक में १५ नवीन रचनाएँ हो जाना कोई सामान्य घटना नहीं है। इसके उपरान्त उन्हें स्मृति में रखकर अपराह्न २ बजे एक के बाद एक लिखवाना। संयोग से शास्त्रीय सङ्गीत की उनकी पहली रचना भी ऐसे ही हुई थी। आज विद्यार्थी ने कहा और दूसरे दिन नई नचना तैयार। (सम्बद्ध घटना का विवरण आगामी पृष्ठ पर है) विद्यार्थी या दूसरे कलाकार मित्रों ने बहुत ही कम समय देकर नयी बन्दिश माँगी और माँगने वाले की आशा और अपेक्षा से कहीं अधिक तीव्र गति से उनका मानस क्रियाशील हो गया।

सन् १९८० में अमरीका प्रवास के दौरान भी भट्टजी की इस विशेषता का उदाहरण देखने को मिला। श्री लक्ष्मी गणेश तिवारी (सङ्गीत सङ्काय के पुराने छात्र) ने राग गोरखकल्याण में नयी बन्दिश सिखाने का अनुरोध किया क्योंकि पहले सीखी हुई बन्दिश के भाव अत्यधिक शृङ्गारिक होने से विद्यार्थियों को समझाते समय बहुत असमञ्जस का सामना करना पड़ता था। उनकी समस्या सुनते ही बलवन्तराय जी ने राग गोरखकल्याण की अपनी एक बन्दिश 'सखिन मिल गावो मङ्गल-गान'[९८] उन्हें सुनायी। जिसमें तानों के छोटे-छोटे टुकड़े गुँथे हुए थे। उनकी प्रतिक्रिया थी कि यह क्लिष्ट है मुझे आसान चाहिए। उनके आश्चर्य की सीमा नहीं रही जब उन्हें उनके अनुरोध के अनुसार नयी आसान बन्दिश मिल गई वह भी एक घण्टे से कम समय के अन्दर। तीनताल में बद्ध उक्त बन्दिश के बोल हैं– 'खेलन चली सुन्दरी, ब्रज-बाम सुख-धाम श्याम सन'।[९९]

सामान्यतया निज की उद्भावनाओं से प्रेरित होकर ही रचनाकार रचनाएँ करते हैं और बलवन्तरायजी ने भी की हैं। किन्तु विद्यार्थीगण अथवा अन्य कलाकारों की आवश्यकतानुसार उनकी फर्माइश से भी उन्होंने अनेकानेक रचनाएँ की हैं। यह फर्माइश भी अलग-अलग तरह की रही है। कहीं किसी विशेष राग-ताल की फर्माइश हुई तो कहीं बन्ध के प्रकार की अथवा कथ्य की। किसी को सरल बन्दिश चाहिये तो किसी को क्लिष्ट। सबको सन्तुष्ट करते हुये उन्होंने उनकी इच्छानुसार रचनाएँ बनाकर दे दीं।[१००]

पदान्तर विदग्धता : विभिन्न पद अथवा प्रबन्ध के भेद-विशेष का निर्माण। संख्या की दृष्टि से विभिन्न पद अनेक हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

त्रिस्थानगमकप्रौढि : तीनों स्थान अर्थात् तीनों सप्तकों यथा मन्द्र, मध्य तथा तार में गमक (क्रिया-विशेष) की प्रवीणता। यह प्रयोग-पक्ष से सम्बद्ध गुण है जो भट्टजी के गायन में विद्यमान है। ग्वालियार घराने की गायकी की यह विशेषता भी है जिसमें भट्टजी दीक्षित हैं।

विविधालप्ति नैपुणम् : आलप्ति में निपुणता। यह भी प्रयोग सम्बन्धी गुण है। १२ वर्षों की कठिन साधना के परिणाम-स्वरूप प्रयोग सम्बन्धी समस्त गुणों का भट्टजी की गायकी में होना स्वाभाविक है।

अवधान : आचार्य शार्ङ्गदेव ने 'वाग्गेयकार' का अन्तिम और महत्त्वपूर्ण लक्षण अवधान को माना है। अवधान से तात्पर्य एकाग्रता से है। किसी भी नवीन उद्भावना के लिए एकाग्रचित्त होना अनिवार्य है तभी व्यक्ति अन्तर्मुखी होकर सृजन का कार्य कर सकता है। अवधान-गुण भट्टजी के सन्दर्भ में न केवल रचनाशीलता के समय उद्घाटित होता है अपितु कार्यक्रमों में वे जो कठिन लयकारी का काम सहजता-पूर्वक करते हैं वह 'अवधान' का ही परिणाम है।

लक्षणों के अनुसार उदाहरणों से स्पष्ट है कि भट्टजी एक 'वाग्गेयकार' के रूप में प्रतिष्ठित हैं। अब यह देखना है कि उनके अन्दर का 'वाग्गेयकार' किन परिस्थितियों में उद्घाटित हुआ ? अपनी मातृभाषा गुजराती में वे पहले भी कविताएँ करके उसे स्वरबद्ध कर चुके थे। एक दृष्टि से यह कार्य भी उन्हें 'वाग्गेयकार' का बिरुद दे सकता था, किन्तु सम्भवतया संख्या की विशालता यहाँ न थी, उसी कारण कथ्य या भावों के अनुरूप स्वर-रचना तो सुन्दर थी किन्तु ताल एवं लय सम्बन्धी उनके वैशिष्ट्य एवं वैचित्र्य के प्रदर्शन का अवसर यहाँ नहीं था। सर्वोपरि, यह प्रयास उस समय का था जब वे गुरुजी के यहाँ विद्या-ग्रहण कर रहे थे, विद्यालय के अन्य विद्यार्थियों को विद्या-दान कर रहे थे एवं गुरुजी के साथ देश-भ्रमण कर रहे थे। इतना अवश्य था कि इन कविताओं को स्वरबद्ध कर गाने पर बलवन्तराय जी को अपने मित्रों से प्रशंसा प्राप्त होती थी। अनेक अवसरों पर उनके गुरुजी ने भी शब्दों के अनुसार भावानुकूल स्वर-योजना पर अपने विद्यार्थी की मुक्त-कण्ठ से सराहना की जिससे इस दिशा में प्रयासरत रहने का प्रोत्साहन मिला।

वास्तव में पं० ओम्कारनाथ जी ठाकुर जैसे ओजस्वी एवं तेजोमय व्यक्तित्व को गुरु-रूप में पाकर उनसे विद्या-दान लेना, यही बलवन्तराय जी का परम लक्ष्य था, मूल ध्येय था। अतः रचना-कौशल होते हुए भी गुरु के सामने अपने व्यक्तित्व की स्वतन्त्र-सत्ता स्थापित करने का विचार भी उनके लिए कल्पनातीत था। इसी समय का एक प्रसङ्ग है जिसने भट्टजी के रचना-कौशल की विलक्षणता को उद्घाटित किया और उनके रचना-संसार ने एक नया मोड़ लिया।

बात सन् '४९ की है जब बलवन्तरायजी सूरत में विद्यालय के अन्य विद्यार्थियों को सिखाते हुए शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। उनकी कक्षा में गजेन्द्र त्रिवेदी नाम का एक विद्यार्थी था। उसकी वय उस समय १५ वर्ष की थी। अपने हाईस्कूल के वार्षिकोत्सव में उसे गायन प्रस्तुत करना था, अतः कक्षा में सीखे हुए अपने पसन्द के राग 'पटदीप' का वह अभ्यास करने लगा। बन्दिश के बोल थे–

स्थाई - पिया नाहिं आए, कैसे करूँ मोरी आली।
अन्तरा- जबसे गये मोरी सुधहूँ न लीन्ही, किन दुतियन बिलमाए।।[१०१]

गजेन्द्र के पिताजी को इन शब्दों पर आपत्ति थी, लेकिन उसे वही राग प्रिय था। अतः यह समस्या उसने अपने शिक्षक बलवन्तराय जी के सामने रखी कि पिताजी यह बन्दिश गाने नहीं देंगे और मुझे यही राग पसन्द है। बलवन्तरायजी ने उसकी बात सुन ली और दूसरे ही दिन कक्षा में उसे पटदीप राग में ही एक नई रचना (छोटा-ख्याल) सिखाई। शास्त्रीय सङ्गीत की यह उनकी पहली रचना थी जो उनकी मातृभाषा में नहीं थी। तीनताल में निबद्ध राग पटदीप की रचना के शब्द इस प्रकार हैं –

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थाई- अनहद बाजे री सखि सुनहु पियारी धुनि एक रस, गगन महल गाजे।
अन्तरा- ताल मृदङ्ग बेनु गत न्यारी, सुनत भई मत सुरत बावरी
सुनहु पियारी धुनि एक रस शून्य महल साजे।।[१०२]

कहते हैं 'आवश्यकता आविष्कार की जननी है'। इसे प्रकारान्तर से देखें तो एक विद्यार्थी की आवश्यकता से एक सङ्गीतकार का प्रादुर्भाव साहित्यकार के रूप में, वाग्गेयकार के रूप में हुआ। भट्टजी की यह पहली रचना भाव की उँचाई, राग के निरूपण एवं ताल के गठन का सुन्दर सामञ्जस्य होने के कारण विशिष्ट है ही। इसका महत्त्व इसलिए भी बढ़ जाता है क्योंकि पं० ओम्कारनाथ ठाकुर ने अपनी पुस्तक 'सङ्गीताञ्जलि' भाग ४ में अपने विद्यार्थी की इस रचना को भी स्थान दिया।[१०३]

सन्दर्भ-सूची :

१. भावरङ्ग अमृत महोत्सव, (स्मारिका) अमृत महोत्सव में मुख्य अतिथि पद से डॉ० भानुशंकर मेहता का वक्तव्य, पृ० १५
२. सङ्गीत रत्नाकर, आनन्दाश्रम संस्करण, ३/३
३. भारतीय सङ्गीत में वाग्गेयकार की भूमिका : तदनुसार 'भावरङ्ग' के कार्य का आकलन, प्रेमलता शर्मा, भावरङ्ग अमृत महोत्सव, (स्मारिका) पृष्ठ ५७।
४. सङ्गीतरत्नाकर, उपलिखित, ३/३-९
५. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, पृ० ९०।
६. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ० ८१।
७. बापूजी की निजी डायरी से
८. वही
९. छन्दप्रभाकर, पृ० ४४।
१०. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ० ९७।
११. छन्दप्रभाकर, पृ० ४४।
१२. भावरङ्ग-लहरी, भाग २, पृ० ११५।
१३. छन्दप्रभाकर, पृ० ४५।
१४. भारतीय काव्य शास्त्र, विजयपाल सिंह पृ० १५५।
१५. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, तृतीय परिवर्धित संस्करण, सम्पा. स्वरवन्दना शर्मा पृ० ७४।
१६. छन्दप्रभाकर, पृ० ४६।
१७. भावरङ्ग-लहरी, भाग २, पृ० १५३।
१८. छन्दप्रभाकर, पृ० ४६।
१९. बापूजी की निजी डायरी से
२०. छन्दप्रभाकर, पृ० ४७।
२१. भावरङ्ग-लहरी, भाग ३, पृ० ४।
२२. छन्दप्रभाकर, पृ० ४९।
२३. भावरङ्ग-लहरी, भाग २, पृ० २०२।
२४. छन्दप्रभाकर, पृ. ५५।
२५. भावरङ्ग-लहरी, भाग ३, पृ० ३३१।
२६. छन्दप्रभाकर, पृ. ६१
२७. भावरङ्ग-लहरी, भाग २, पृ० ४२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२८. छन्दप्रभाकर, पृ० ८१
२९. भावरङ्ग-लहरी, भाग ३ पृ. ६७।
३०. बापूजी की निजी डायरी से
३१. छन्दप्रभाकर, पृ. ८६
३२. बापूजी की निजी डायरी से
३३. भावरङ्ग-लहरी, भाग ३ पृ. १।
३४. अलङ्कार-पारिजात, पृ. – ५
३५. भावरङ्ग-लहरी, भाग १, पृ० सं० ५८।
३६. वही, पृ० सं० ९४।
३७. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ० सं० २५१।
३८. बापूजी की निजी डायरी से
३९. वही
४०. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, पृ. सं. ३४।
४१. बापूजी की निजी डायरी से
४२. अलङ्कार-पारिजात, पृ. ९
४३. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं० २७२।
४४. अलङ्कार-पारिजात, पृ० सं० १२
४५. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ. सं० २१।
४६. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, तृतीय परिवर्धित संस्करण, सम्पा. स्वरवन्दना शर्मा पृ.७१।
४७. बापूजी की निजी डायरी से
४८. अलङ्कार – पारिजात, पृ० १४
४९. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, तृतीय परिवर्धित संस्करण, सम्पा. स्वरवन्दना शर्मा पृ. ७१।
५०. अलङ्कार पारिजात, पृ० ११।
५१. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, पृ० १०६।
५२. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ. सं. ९३।
५३. अलङ्कार-पारिजात, पृ० २४, २५।
५४. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं. ३४३।
५५. अलङ्कार-पारिजात, पृ० ३७।
५६. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं. १४१।
५७. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, पृ. सं. ११७।
५८. अलङ्कार-पारिजात, पृ. ४१
५९. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ. सं. २५२।
६०. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं. ७८।
६१. अलङ्कार-पारिजात, पृ. ४५
६२. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ. सं. २४५।
६३. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं. २६९।
६४. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३ पृ. सं. १३९।
६५. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ. सं. २७७।
६६. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ. सं. १०१।
६७. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, पृ. सं. १७९।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

६८. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ. सं. ३१६।
६९. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ. सं. १६४।
७०. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं. २५३।
७१. बापूजी की निजी डायरी से।
७२. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, पृ. सं. ३४।
७३. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं. २७९।
७४. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं. १९३।
७५. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं. ११५।
७६. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं. ६।
७७. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं. १०७।
७८. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, पृ. सं. १।
७९. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ. सं. २८०।
८०. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, पृ. सं. १२४।
८१. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, पृ. सं. ९०।
८२. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ. सं. ८१।
८३. बापूजी की निजी डायरी से
८४. वही
८५. वही
८६. नवम्बर ७६ में प्रयाग सङ्गीत समिति, इलाहाबाद की स्वर्ण-जयन्ती पर आयोजित 'सङ्गीत में रसतत्त्व' परिसम्वाद में प्रस्तुत निबन्ध (भावरङ्ग-लहरी तृतीय भाग में पुनर्प्रकाशित)
८७. इससे सम्बद्ध विशेष विवरण 'कृतित्व' के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया है।
८८. भावरङ्ग के साङ्गीतिक कृतित्व का समीक्षात्मक अध्ययन (शोध-प्रबन्ध) श्रीमती आरती श्रीवास्तव, पृ. १६८, गोरखपुर विश्वविद्यालय सन् १९९३।
८९. 'अदोषदर्शी' हमारे भैयाजी, प्रेमलता शर्मा, भावरङ्ग अमृत महोत्सव (स्मारिका) पृ० ४९।
९०. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, पृ० सं० ८।
९१. प्रबन्ध का शास्त्रीय अध्ययन, एक संक्षिप्त दिग्दर्शन, प्रेमलता शर्मा भा रं० ल०, भाग-१, बलवन्तराय भट्ट, पृ० २१।
९२. प्रबन्ध का शास्त्रीय अध्ययन, संक्षिप्त दिग्दर्शन, प्रेमलता शर्मा, भावरङ्ग-लहरा भाग-१, बलवन्तराय भट्ट, पृ०२२।
९३. विशेष विवरण परिशिष्ट-१ के 'मध्यम' के अन्तर्गत दिया गया है।
९४. भावरङ्ग- लहरी, भाग- १, पृ० सं० १०६।
९५. प्रबन्ध का शास्त्रीय अध्ययन, संक्षिप्त दिग्दर्शन, प्रेमलता शर्मा, भावरङ्ग-लहरा भाग-१, बलवन्तराय भट्ट, पृ० २२।
९६. भावरङ्ग-लहरी भाग-१, पृ० सं० १३८।
९७. भावरङ्ग-लहरी भाग-२, पृ० सं० ३१४।
९८. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, पृ० सं० २६९।
९९. भावरङ्ग-लहरी, भाग-३, पृ० सं० २७२
१००. फर्माइश से बनायी हुई बन्दिशों की सूची परिशिष्ट-१ के अन्तर्गत 'पञ्चम' में दी गई है।
१०१. सङ्गीताञ्जलि, चतुर्थ भाग, प्रथम संस्करण, ओम्कारनाथ ठाकुर, पृ० ५७।
१०२. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, पृ०सं० ६४।
१०३. सङ्गीताञ्जलि, चतुर्थ भाग, प्रथम संस्करण, ओम्कारनाथ ठाकुर, पृ० ६५।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'भावरङ्ग का कृतित्व'

यह सर्वविदित है कि विशिष्ट वाग्गेयकार के रूप में भट्टजी को प्रतिष्ठा दिलाने वाली उनकी रचनाएँ हैं जो कि उत्तर भारतीय शास्त्रीय सङ्गीत में प्रस्तुति हेतु लिखी गई हैं एवं 'भावरङ्ग-लहरी' के रूप में उनका यह कृतित्व सबके सामने है।

शास्त्रीय-सङ्गीत की रचनाएँ करने के पूर्व पं० बलवन्तराय भट्टजी ने अपनी मातृभाषा गुजराती में भी कविताएँ लिखीं और उनको स्वरबद्ध किया। यह लेखन वाराणसी में स्थायी होने के पूर्व का था, विशेष रूप से जब वे सूरत में थे, अतः यह बात उनके मित्रगण, गुरुजी तथा कुछ आप्त निकट-सम्बन्धी ही जानते थे। 'भावरङ्ग-लहरी' के पूर्व उन्हीं के कृतित्व के दूसरे पक्ष के रूप में गुजराती में लिखे उनके साहित्य की संक्षिप्त चर्चा अस्थानीय नहीं होगी।

मातृभाषा गुजराती में काव्य-सृजन :

पं० बलवन्तराय भट्टजी ने सर्वप्रथम अपनी मातृभाषा गुजराती में काव्य-सर्जना की तथा उनको स्वर-ताल-बद्ध किया, इन्हें गीत की श्रेणी में रखना समुचित होगा। कुछ कविताएँ गुजराती पत्रिकाओं एवं समाचार-पत्र में भी प्रकाशित हुई थीं जिसकी प्रति अपने पास न रखने से वह विस्मृत हो चुकी हैं। डॉ० स्वरवन्दना शर्मा (भट्टजी की ज्येष्ठ पुत्री) ने भट्टजी की उपलब्ध समस्त (११) गुजराती रचनाओं तथा कुछ हिन्दी एवं संस्कृत की कविताओं का सम्पादन 'आत्मदर्शन' नाम से सन् २००५ में किया है। गुजराती कविताएँ संख्या में अधिक न होने पर भी उनका प्रतिपाद्य विषय गम्भीर भावों तथा कवि की आध्यात्मिक प्रवृत्ति की ओर इङ्गित करता है। ये सारी रचनाएँ सन् ५० तथा उसके पहले अर्थात् २९ वर्ष की आयु से पहले लिखी गई हैं। इसी समय की एक कविता 'आत्मदर्शन' सन् ५८ में अमरीका के ज्युइश ब्रेल इंस्टीट्यूट द्वारा नेत्रहीनों के लिए आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय साहित्यिक प्रतियोगिता में पुरस्कृत हुई।

वाराणसी में स्थायी रूप से रहने के कारण हिन्दी से सम्पर्क बढ़ने तथा शास्त्रीय-सङ्गीत की रचनाओं में ही पूरी तरह संलग्न हो जाने के कारण गुजराती में लेखन का क्रम छूट गया। यहाँ दो गुजराती कविताएँ मूल-पाठ तथा भावार्थ सहित प्रस्तुत हैं-

पहली कविता का शीर्षक है 'कईं कविता करतां करतां' जिसका अर्थ है कुछेक कविताएँ करते करते-

कईं कविता करतां करतां में सरिता स्नेहल दीठी,
एक घूँट अनेरो पीतां कईं भूल्यो कड़वी मीठी,
कईं ग्रन्थो लाख उघड़तां मड़ी एक सनातन चिट्ठी,
ए अक्षर बेज उकलतां में दुनिया जोई अदीठी,
कईं गीत हजारो गातां आ जीभ जणाय अजीठी,
एक आतम सूर अलपतां ओलाणी उर अंगीठी,
कईं कविता करतां करतां ......'[१]

संक्षेप में कविता का अभिप्राय यह है कि स्नेह के अपूर्व अलौकिक आनन्द में द्वन्द्व भाव बिसरा दिया जाता है। अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए बलवन्तरायजी लिखते हैं कि ज्ञान-लाभ के लिए लाखों ग्रन्थों के पन्ने पलटते हुए अचानक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक ऐसी सनातन चिट्ठी मिली जिसके दो ही अक्षर (राम) पढ़कर मैंने अनदेखी दुनिया ही मानों देख ली, अर्थात् भौतिक संसार की नश्वरता तथा सृष्टि का रहस्य समझ में आ गया। कविता का समापन करते हुए उन्होंने लिखा है कि हजारों गीत गाते-गाते जीभ जूठी लगने लगी लेकिन आत्मा के एक ही सुर का आलापन करने पर अन्तस्तल में धधकने वाली ज्वाला बुझ गई और हृदय शान्त हो गया।

दूसरी कविता है 'पंथ प्रवासी' :

तुं भूल्यो पन्थ प्रवासी, तुज मारग चाल तपासी ।
आ विषयवाट अन्धारी डग भरतां मां भयकारी,
जो अन्तरदीप प्रकाशी, तुज मारग......
कईं भान विना तुं भटके, पण अहिं तहिं अथडी अटके
ले केडी एक चकासी, तुज मारग ......
नहिं कायर थावुं भाई, भलभला भूल्या छे आंहि
ग्रही सद्गुरु पद सुखराशी, तुज मारग....
सत्चित्ते ध्यान धरी ने, गुणदेही सर्व भूली ने
जप अनघ नाम अविनाशी, तुज मारग ......
बल राखी तुं बलवन्ता उठ आतम आप अनन्ता
जा निर्गुण देश निवासी, तुज मारग ......[२]

कविता का सार है कि, हे प्रवासी ! तुम अपना पन्थ भूल गए हो, अतः अपना मार्ग अच्छे से देख भाल कर, समझकर तभी आगे बढ़ो। विषयों से लिप्त यह मार्ग अन्धकार से भरा हुआ है, जहाँ एक डग भरने में भी भय लगता है, अतः अन्तस् का दीप जलाकर उस प्रकाश से इस अन्धकार को विदीर्ण कर अपना मार्ग पहचानो और तब आगे चलो। बेध्यान होकर चलने से, सावधानी न रखने से तुम यहाँ-वहाँ ठोकर खाकर गिरोगे, अर्थात् मोह के फन्दे में फँसकर तुम अपने लिए विघ्न पैदा करोगे, अतः एक ऐसी पगडण्डी (सँकरा रास्ता) अपने लिए चुनो जो तुम्हारा सही दिशानिर्देश करे और गन्तव्य तक पहुँचने में मदद करे। भट्टजी ने आगे लिखा है कि यहाँ, इस संसार में कायर होकर नहीं जीना है, अर्थात् , कठिनाइयों से डरकर प्रवास अधूरा छोड़कर अपने लक्ष्य को नहीं गँवाना है। यहाँ तो बड़े-बड़े ज्ञानी भी भ्रमित हो गये हैं, अतः सत्गुरु की शरण लेकर अपने मार्ग को ढूँढो, जो कि असीम सुख की राशि को देने वाला होगा। सत्य के प्रकाश को ध्यान में रखकर शारीरिक गुण (सत्व, रज, तम) को भुलाकर अविनाशी एवं निष्पाप नाम, अर्थात् ईश्वर के नाम का जाप करो और अपने मार्ग को देखभाल कर तब आगे बढ़ो।

इस कविता के अन्तिम छन्द में कवि की आत्म विस्तार की भावना मिलती है जहाँ कवि ने अपने अन्दर बल का संचय कर आत्मा के अनन्त तक उत्कर्ष करने तथा निर्गुण देश में निवास करने की बात कही है। सामान्य मनुष्य के सन्दर्भ में उसे आत्मबल का सहारा लेकर आत्मा के विकास से संसार के द्वेष और मत्सर से निरपेक्ष होकर त्रिगुणातीत की स्थिति की प्राप्ति का सन्देश दिया है।

सन् '५० तथा उसके पूर्व लिखी इन गुजराती कविताओं में भट्टजी ने किसी उपनाम का आश्रय नहीं लिया है, बल्कि चार-पाँच कविताओं में 'बलवन्त' नाम का ही प्रयोग हो गया है। अनायास 'शरद-विहार' शीर्षक से लिखी कविता जिसमें कृष्ण की भक्ति है, बलवन्त नाम के साथ भावरङ्ग आ गया है- 'भावरङ्गे भगवन्त भर्या भोम ने अनन्त बहुनामी बलवन्त गाऊँ श्री हरि हरि।'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वास्तविकता यह है कि भट्टजी ने शास्त्रीय सङ्गीत की आरम्भिक १००-१२५ रचनाएँ 'रागरङ्ग' उपनाम से की थीं किन्तु कुछ समय पश्चात् 'रागकल्पद्रुम' नामक ग्रन्थ में एक अन्य कवि का वह उपनाम दखकर उन्होंने अपना उपनाम 'भावरङ्ग' स्थिर कर लिया।

इस प्रकार 'भावरङ्ग' जी की कविता यात्रा गुजराती से आरम्भ होकर हिन्दी के पथ पर अग्रसर होती गई। उनके आरम्भिक लेखन में ही मानव मूल्यों के सूत्र स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं। जहाँ एक ओर उनकी कविताओं में माया-मोह से ग्रस्त विकट जीवन की राह से उबरने के लिए सत्गुरु की शरण जाने की सलाह मिलती है, वहीं दो अक्षरों के शब्द 'राम' नाम के बोध हो जाने मात्र से संसार के रहस्य को समझ लेने की स्वीकारोक्ति है, इस आध्यात्मिक चेतना का स्वर भट्टजी की हिन्दी रचनाओं में अपने प्रौढ़तम रूप में मुखर हुआ है।
गुजराती कविता के माध्यम से भट्टजी के साहित्य में भावों की गम्भीरता को देखने के उपरान्त उनकी कृति 'भावरङ्ग-लहरी' को निम्नलिखित दृष्टियों से देखने का प्रयास किया है-

कृति (भावरङ्ग लहरी) का महत्त्व : सामाजिक एवं ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में :

उत्तर-भारतीय शास्त्रीय-सङ्गीत में रचनाओं की दृष्टि से 'भावरङ्ग-लहरी' के महत्त्व को समझने हेतु तथा सङ्गीत की दृष्टि से ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में उसका विवेचन करने हेतु तत्कालीन सामाजिक सन्दर्भों में समाज में सङ्गीत एवं सङ्गीतकारों की शोचनीय स्थिति को देखना उपयुक्त होगा।
स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पूर्व तक का अर्थात् बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक का भारतीय सामाजिक परिवेश ऐसा रहा कि विशेष रूप से सम्भ्रान्त परिवार के बच्चों के लिए सङ्गीत अथवा नृत्य की शिक्षा लेना प्राय: वर्जित था। इसका मुख्य कारण था पेशेवर सङ्गीतकारों एवं सङ्गीत-शिक्षकों की आचरण-सम्बन्धी शिथिलता। इसी कारण सभ्य समाज इन्हें हेय दृष्टि से देखता था एवं उनके साथ किसी भी तरह का सम्बन्ध रखने वाले भी संशय के घेरे में आ जाते थे। अत: एक तरह से यह वर्ग सामाजिक निषेध का सामना कर रहा था। सन् १८९० के आसपास का समय अर्थात् १९वीं शताब्दी का उत्तरार्ध, वह समय था जब समाज में गायकों-वादकों की स्थिति अत्यन्त कष्टप्रद, शोचनीय एवं अपमानजनक थी। 'रियासतों एवं देवस्थानों पर गायकों को नौकरी तो मिल जाती थी, परन्तु बहुसंख्यक गायकों को तवायफों को सिखाकर जीविका चलानी पड़ती थी। प्रतिष्ठित समाज में सङ्गीत के लिए नगण्य स्थान था। आम धारणा यह थी कि सङ्गीत सीखने पर लड़का बुरी सङ्गत में पड़ेगा, अत: लड़कों के सङ्गीत सीखने के लिए माँ-बाप की सम्मति नहीं होती थी। जब लड़कों का यह हाल था तब लड़कियों को सङ्गीत सिखाने का प्रश्न उठाना ही व्यर्थ था। अधिकतर सङ्गीतकारों एवं सङ्गीत-शिक्षकों को तवायफों के साथ व्यसन लग जाते थे, अत: शिष्ट समाज उनका बहिष्कार करता था'।[३]

शृङ्गारिक पदों की अधिकता : अपने बच्चों को सङ्गीत सिखाने के प्रति अभिभावकों का जो निषेधात्मक रवैया था उसका दूसरा कारण था गाई जाने वाली रचनाओं में शृङ्गारिक भावों की अतिशयता। किशोर वय के अथवा उससे भी कम वय के बालक-बालिकाओं के मुँह से अत्यधिक शृङ्गारिक रचना शोभनीय नहीं लगती। शास्त्रीय सङ्गीत की भिन्न-भिन्न गान-शैली के रूप में ध्रुपद, धमार (अपेक्षाकृत प्राचीन परम्परा-लगभग मध्यकालीन इतिहास) तथा ख्यालों (ध्रुपद के बाद प्राय: १८वीं शताब्दी से प्रारम्भ) के रूप में गाई जाने वाली रचनाएँ अधिकतर पिया, सास, ननद, एवं सौतन तक ही घूमती रहती थीं।

उदाहरणार्थ- 'सास ननद मोरी जनम की बैरन' अथवा, 'सास मोरी दूती ननद मोरी बैरन'
नीचे कुछेक उदाहरण हैं जिनके कथ्य में शृङ्गार की अधिकता परिलक्षित होती है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उदाहरण - १ राग-बिलासखानी तोड़ी का धमार

स्थाई - ए मोरी अँगिया दरकी जात, फाग खेलन गहे राखूँ चीरे,
श्याम कैसे रहेगी लाज मोरी

अन्तरा- लिपट लिपट झकझोरे, झोर करे जोर मोरि चुरियाँ करकाईं,
हमरी भीजे, मोरी।[४]

उदाहरण - २ राग - सोहिनी (तीनताल)

स्थाई - काहे अब तुम आए हो मेरे द्वारे, सौतन संग जागे अनुरागे, रस पागे पागे।

अन्तरा - मीठी मीठी बतियाँ करो न 'मनरङ्ग' तुम, वहीं जाओ
जिनके छतियन सों लागे।[५]

उदाहरण - ३ राग-पूर्वी (तिलवाड़ा)

स्थायी - पियरवा की बाँह सो मोहे भावे, लागे गरवा ए पिया।

अन्तरा - तू जिन लजावही, तो सी तू बड़भागन, सुलछनी नार, पियरवा।।[६] आदि।

ऐसा नहीं है कि नीति एवं दर्शन से सम्बन्धित या भक्तिभाव के पद इन बन्दिशों में बिलकुल नहीं थे। जिन राज-दरबारों के आश्रय में सङ्गीतकार होते थे उन संरक्षकों के मन-मिजाज़ के अनुरूप तथा विशेष रूप से उनकी स्तुति में, मङ्गल-कामना-परक बधावा अथवा विजय की गाथा से सम्बद्ध विषय ही पद के रूप में अधिक प्रयुक्त होते थे। उदाहरणार्थ-एक ध्रुपद में औरंगजेब के पराक्रम और प्रताप का वर्णन है। उसे औलिया और जिन्दापीर कहा है-

आयो आयो रे महाबली आलमगीर, जाकी धाक देखे कोउ धरे न धीर।
अपबली तपबली आली जंग जोरै तेउ अटल गम्भीर
दछिन दलमले, विकट गढ़ हलहले।
जाकी तौ धुआई (दुहाई) फिरै दरियातीर।
चकतावंस सुलितान औरंगजेब साहिन में साहि औलिया जिन्दपीर।[७]

एक अन्य उदाहरण बधावा का है-

राग-दरबारी कानड़ा- (तीनताल) :

बन्धनवा बाँधो रे बाँधो, सब मिलके मालनिया, महमद शा प्यारे के घर काज ।। धृ० ।।
सदारङ्गीले तानन सों बधावा गाओ माइरी सब सायत्सो आज।।१।।[८]

'अनेक ध्रुवपदों में सङ्गीत-शास्त्र के रहस्य सूत्र-रूप में ग्रथित हैं, तो अनेक ध्रुपद ऐतिहासिक घटनाओं के स्मारक हैं। हिन्दी साहित्य के मध्यकाल की सभी काव्यगत प्रवृत्तियों के सुन्दरतम उदाहरण ध्रुवपदों में सुरक्षित हैं।'[९] सब तरह की रचनाएँ गुणियों के पास होने पर भी राज दरबारों में तथा सामान्य जनता के बीच श्रृङ्गारिक पद ही बहु प्रचलित थे। सभा-समारोहों में सामान्य जनता की मानसिकता मनोरञ्जन की रहती है, अतः उस परिवेश में स्वाभाविक रूप से श्रृङ्गारिक पदों का गायन ही इच्छित होता है। समझ में आता है कि नीति-परक बन्दिशें अथवा अन्य अच्छी बन्दिशें कलाकारों के पास धरोहर के रूप में सुरक्षित रहीं एवं प्रचार में दूसरी ही बन्दिशें अधिकाधिक आईं। इस समय भी 'हवेली-सङ्गीत'[१०] में गाये जाने वाले पद भक्ति-प्रधान एवं उच्च भाव-भूमि के थे, क्योंकि यहाँ अष्टछाप के कवियों के पद ही शास्त्रीय सङ्गीत की रागदारी में बँधकर ध्रुपद के रूप में गाये जाते थे। लेकिन इनका प्रयोग विशुद्ध रूप से मन्दिर के प्राङ्गण तक सीमित था जन-सामान्य में नहीं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गेय पदों में अशुद्ध पाठ की समस्या : यह हुई 'गेय' रचनाओं के वर्ण्य-विषय सम्बन्धी बात। अन्य कठिनाई थी 'गेय' के 'पाठ' सम्बन्धी। गाई जाने वाली अनेक बन्दिशों में 'पाठ' की अशुद्धि पाई जाती है। अर्थ की दृष्टि से देखने पर शब्दों का पूर्वापर सम्बन्ध सटीक नहीं बैठता। 'गेय' की 'पाठ' गत अशुद्धि का एक बहुत बड़ा कारण सामान्य शिक्षा के प्रति उदासीनता एवं गुरु-शिष्य परम्परा से चलने वाली शिक्षा-प्रणाली रही है। अब वह प्रणाली, जो मौखिक परम्परा के रूप में भी जानी जाती है एवं जिसने वर्षानुवर्ष, पीढ़ी दर पीढ़ी इस कला की गूढ़ बातों को सँजोकर रखा एवं एक से एक महान् कलाकार दिये, किस रूप में इस दोष (पाठगत आशुद्धि) के लिए उत्तरदायी है यह समझना अप्रासङ्गिक न होगा-

पदों में पाठगत अशुद्धि का कारण : 'शास्त्रीय-सङ्गीत की शिक्षा प्रायः संस्थागत न होकर गुरु-शिष्य परम्परा पर ही अवलम्बित रही है- (आधुनिक युग में सङ्गीत-शिक्षण की सर्वप्रथम संस्था सन् १८८६ में बड़ौदा में मौलाबक्श द्वारा स्थापित हुई थी।)[११] तत्कालीन अनुशासन के अनुसार शिष्य अपने गुरु से कुछ भी पूछने का साहस नहीं कर सकते थे। 'कतिपय गुरुओं के पास सिखाने का ढंग यह होता था कि सारे विद्यार्थी (नए-पुराने) एक साथ गुरु के सामने वीरासन पर बैठते थे। पुराने विद्यार्थी आगे और नये पीछे। गीतों के शब्द लिखवाने की प्रथा नहीं थी। गुरुजी बन्दिशें सिखाते, विद्यार्थी जैसा सुनाई दिया वैसा उच्चारण करते, जिसमें कई बार शब्द कुछ बदल गये।'[१२] सङ्गीत की अनेक बन्दिशें अरबी, फारसी, पंजाबी एवं राजस्थानी भाषामें होने से उन सभी भाषाओं के सम्यक् ज्ञान के अभाव में अशुद्ध उच्चारण के साथ गाई जाने लगीं, जिससे उसका अर्थ बैठाने में कठिनाई भी होती थी। विभिन्न भाषाओं की कुछ अत्यन्त प्रसिद्ध बन्दिशों के शब्द यहाँ प्रस्तुत हैं। विभिन्न भाषा-भाषी गायकों द्वारा अलग-अलग भाषाओं की बन्दिशों के कई शब्द भाषा-विशेष के ज्ञान के अभाव में तथा वर्ण विशेष के उच्चारण की प्रान्तीय विशेषता या सीमा से उच्चरित होने के कारण भी कालान्तर में विकृत हो गये अथवा बदल गये। दोनों कारणों से एक ही बन्दिश के कई (भिन्न) 'पाठ' घराना विशेष के प्रतिनिधि कलाकारों द्वारा गाये जाते हैं। शास्त्रीय सङ्गीत में प्रयुक्त होने वाली विभिन्न भाषाओं की बन्दिशों के उदाहरण इस प्रकार हैं-

१-राग - भीमपलासी (भाषा-पंजाबी) :

स्थायी - ढोलन मेंडे घर आवी वे, सोणा मियाँ, मैं वी तेंडे सदके जाँवा।
अन्तरा - मुख वेखाँ त म जीवाँ, सदारँगीले दरस बिन पावाँ[१३]

२-राग - जोगी आसावरी (भाषा - मिश्रित) :

स्थायी - मैनूं मत मारवे मियाँ, मैं तो तेरी पाके नजारदी देखन वालिया ।। धृ ।।
अन्तरा - शोरी नजार दी ताबिन लेंदा न दिखायत चेतन दिल दुखंदा ।।१।।[१४]

३-राग - पूरिया- तीनताल (भाषा-राजस्थानी) :

स्थायी - थें काँई रार करो, जाणो नाही थाँसूं करकर झगरो
अन्तरा - सबलोग जाणे छे मुने सिंघलदीप री राणी और थें छैल तुरकवा दिलिय नगर को[१५]

४-राग शुद्ध कल्याण-चौताल (भाषा-अरबी, फारसी, उर्दू मिश्रित) :

स्थायी - हादी अल्ला साहेब साँई सत्तार रब करीम रहीम आलीम हाकीम
अन्तरा - पाक बेनियाज़ पाक लतीफ पाक जात पर्दा पोश दानाबीना।[१६]

वस्तुस्थिति यह थी कि गुरु स्वयं कठिनाई समझ में आने पर भी अपने गुरु से सीखी बन्दिश में स्वतः कोई फेर-बदल करना नहीं चाहते थे। बन्दिशें सीखते समय बन्दिशें लिखवाने का विधान न होने के कारण, गाना सुनकर ही याद करना होता था। (कोई भी चीज लिखित रूप में होने से शब्दों का पूर्वापर सम्बन्ध स्पष्ट है या नहीं यह तत्क्षण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

समझ में आता। मौखिक शिक्षण प्रणाली में इसका अभाव पाठ के भ्रष्ट होने का एक प्रमुख कारण रहा।) दूसरी बात, पुराने समय में गुरु एक बार में पूरी बन्दिश (स्थायी एवं अन्तरा) नहीं सिखाते थे। जिस दिन स्थाई सिखाई उसके बाद उसका अन्तरा दो हफ्ते बाद या कभी-कभी महीनों बाद भी सिखाया जाता। इसके अलावा विलम्बित (बड़ा-ख्याल) की अनेक बन्दिशें अति विलम्बित लय में होने से एक ही अक्षर का कर्षण कई मात्राओं तक होने से एक अर्थपूर्ण शब्द का उच्चारण होने में काफी समय लगता। अतः कोई शब्द गाते समय अगर उसका अर्थ नहीं बैठा तो जल्दी उस पर ध्यान नहीं जाता था क्योंकि गाते समय गायक का पूरा ध्यान रागदारी के अनुसार अक्षर विशेष पर गमक और खटकों की क्रिया और ताल की मात्राओं और लय पर रहता था क्योंकि कलाकार समुदाय में राग-ताल सम्बन्धी ऐसी त्रुटियाँ कभी भी क्षम्य नहीं होती थीं।

ख्यालों की बन्दिशों के सर्वप्रथम रचयिता 'सदारङ्ग' एवं 'अदाङ्गग' का नाम सङ्गीत-जगत् में अत्यन्त आदर के साथ लिया जाता है। ये १८वीं शती में हुए। ये मुहम्मद शाह 'रंगीले' (१७१९-४०) के दरबार में थे। यद्यपि स्वयं मुख्य रूप से ध्रुपद गायक थे लेकिन उन्होंने सैकड़ों ख्याल की बन्दिशों का निर्माण किया तथा अपने शिष्यों को सिखाया। 'सदारङ्ग' 'अदारङ्ग' इनका उपनाम था, इनका वास्तविक नाम न्यामत खाँ और फिरोज़ खाँ था। बाद में ये रामपुर के अली मुहम्मद खाँ के दरबार में भी जाते थे। इनकी बनाई हुई बन्दिशें अत्यन्त लोकप्रिय हुईं। आज भी प्रत्येक कलाकार इनकी कोई न कोई बन्दिश अवश्य जानता ओर आदरपूर्वक गाता है।

गेय पदों में पाठ संशोधन की चेतना :

गेय पद के पाठ-संशोधन की चेतना से सम्बन्धित एक महत्त्वपूर्ण प्रसङ्ग है। राग-मल्हार में विलम्बित ख्याल की एक पारम्परिक रचना है 'बाजत ततत बितत घन सिखरा' जिसमें चार प्रकार के साङ्गीतिक वाद्यों तत् , वितत, घन और सुषिर का उल्लेख है। बन्दिश को गाते समय 'ततत बितत' गाया जाता है, पहले शब्द में इस तीसरे 'त' का कोई प्रयोजन नहीं है। अतः जब बलवन्तराय जी ने ओम्कारनाथ जी से इस बारे में बात की तो बोले उनके गुरुजी ने यह बन्दिश इसी तरह सिखाई और उनके गुरुजी को भी उनके गुरु ने ऐसे ही सिखाई अर्थात् परम्परा से तीसरा 'त' चला ही आ रहा है। लेकिन जब इस अतिरिक्त अनावश्यक 'त' को छोड़कर बलवन्तराय जी ने 'बाजत तत बितत' इस प्रकार गाया तो गुरुजी ने उसे स्वीकृति दी, परम्परा के नाम पर उसे ही यथावत् गाने का आग्रह नहीं रखा।

यह उदाहरण शब्द के त्रुटिपूर्ण प्रयोग का था। एक अन्य उदाहरण सही शब्द के गलत स्थान पर तोड़ने का है। राग-भूपाली का प्रसिद्ध तीनताल है-

स्थायी - जब से तुम सन लागली प्रीत नवेली प्यारे बलमा मोरे।

अन्तरा - जो मैं न देखूँ तोहे कल ना परे मोहे, चर्चा करे सब सहेलरी।[१७]

इस बन्दिश की अन्तिम पंक्ति में 'सब सहेलरी' को स्वर-रचना के अनुसार गाते समय 'सबस' और 'हेलरी' इस तरह उच्चारित किया जाता है। उसे भी बलवन्तराय जी ने स्वर-रचना यथावत् रखते हुए 'सब सहेलरी' इस तरह गाया तो गुरुजी ने उनके इस औचित्यपूर्ण परिवर्तन को सहर्ष स्वीकृति दी।

'सदारङ्ग' और 'अदारङ्ग' जैसे महान रचनाकारों की भी अनेक बन्दिशें मौखिक-परम्परा में हस्तान्तरण की प्रक्रिया में 'अशुद्ध पाठ' के दोष से अपने को बचा न सकीं एवं भ्रष्ट रूप में आज तक गाई जाती हैं।

अशुद्ध पाठ के साथ चली आ रही कुछ बन्दिशों के उदाहरण : राग बागेश्री-बहार के ताल-अद्धा में निबद्ध इस बन्दिश के बोल देखें जिसमें अर्थ या शब्द का कोई विशेष चमत्कार समझ में नहीं आता किन्तु रागदारी के अन्तर्गत बन्दिश के शब्दों के साथ ताल के तोल का यह उत्कृष्ट उदाहरण है-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उदाहरण - १ स्थाई - ए ताबे रोको ना कोऊ नाहिं, हम सन तुम सन परे को काम।
अन्तरा - याद करोगे वे तो याद रहोगे 'सदारङ्ग' नेहा में।[१८]
एक अन्य पारम्परिक रचना जो कि राग-खट में है, उसके बोल इस प्रकार हैं-
उदाहरण - २ स्थायी - को आयो दरवजवा मंदल बाजो ठाढ़िले दरवान वाला जिनके चरणवा ला गिन दीन गोश।
अन्तरा - औलिया अंबिया गौश कुतुबुद्दीन औले चलो मोरी बैंया पकर सब, वाहु रे साहिब रंग भेटवा।[१९]

मौखिक परम्परा के कारण एक ही पद के अनेक पाठ भेद : राग-विभास की तीनताल में निबद्ध अत्यधिक प्रसिद्ध बन्दिश जो आज भी बहुत गायी जाती है, उसके आरम्भिक शब्द हैं 'केस कुँवरवा जायल हमरा'। इस बन्दिश के पाँच पाठ उपलब्ध हुए हैं। इन सभी पाठों को देखने से भली-भाँति स्पष्ट होता है कि थोड़े-थोड़े अन्तर से कैसे शब्द बदल जाते हैं। राग-विभास की यह रचना भट्टजी ने अपने गुरुजी पं० ओम्कारनाथजी से नहीं, बल्कि पहले ही Blind School में सीखी थी, जिसके शब्द हैं-

स्थायी - केस कुँवरवा जायल हमरा, मोरे घरवा नाहिन गन परिवार रे।
अन्तरा - मम्मद सा के सदारंगीले, प्रेम पियाला जब तें अपने ऊपर तन मन वार रे।

गुरुजी, पं० ओम्कारनाथ जी की पुस्तक 'सङ्गीताञ्जलि' के पञ्चम भाग पृष्ठ सं० १११ में उक्त रचना के बोल इस प्रकार हैं-

स्थायी - केस (कृष्ण) कुँवरवा जाइल हमरा, मोरे घरवा नाहिन कन कन वार रे कनवार।
अन्तरा - मम्मदशा के सदा रंगीले, प्रेम दीवाना ता ते तुमरे ऊपर तन-मन वार, तन-मन वार।

पं० विनायक राव पटवर्धन जो कि ओम्कारनाथ जी के गुरुभाई थे अर्थात् वे भी पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी के ही शिष्य थे, उनकी पुस्तक में इसी बन्दिश के शब्द इस प्रकार हैं-

स्थायी - कैसे कुमरवा जाइल हमरा, तोरे घरवा नैन फरकन वार रे।
अन्तरा - मौमदशाके सदारंगीले प्रेम पियाला जब तें, अपने हूँ तन उनपर वार रे।[२०]

पं० दत्तात्रेय विष्णु पलुस्कर जी ने इसी बन्दिश को ध्वनिमुद्रिका में गाया है जिसके शब्द इस प्रकार हैं-

स्थायी - केस कुँवरवा जायल हमरा, मोरे गरवा नायन गर कन वार रे।
अन्तरा - मम्मदसा के सदारंगीले, प्रेम पियाला जब तें अपने ऊपर तन मन वार रे।[२१]

ऊपर के तीनों पाठ अर्थात् ओम्कारनाथ जी की पुस्तक से, पटवर्धन जी की पुस्तक से तथा पलुस्कर जी की ध्वनि मुद्रिका से प्राप्त एक ही परम्परा अर्थात् ग्वालियर घराने की परम्परा से है। दत्तात्रेय पलुस्कर जो डी०वी० पलुस्कर के नाम से ज्यादा पहचाने जाते हैं वे पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर के पुत्र थे, किन्तु उनकी छोटी वय में ही विष्णु दिगम्बर जी दिवङ्गत हो गये थे, अत: पिता से सङ्गीत-शिक्षा का लाभ उन्हें नहीं मिला था और उनकी सङ्गीत-शिक्षा पं० विनायक राव पटवर्धन जी के पास हुई थी। फिर भी पटवर्धन जी की पुस्तक में जो पाठ है उससे डी०वी० पलुस्कर जी के गाये हुये शब्दों में काफी अन्तर है, अतः ऐसा लगता है कि यह बन्दिश पलुस्कर जी ने किसी और से सीखी होगी।

इसी बन्दिश का एक और पाठ पं० वि०ना० भातखण्डे जी की पुस्तक में उपलब्ध है जो इस प्रकार है-

स्थाई - कास्कुवँरवा जाइल हमरा मोरे दरवा नायन घर कल वार दें
अन्तरा - मौंमदसा तुम सदारंगीले प्रेमपियाला नायन अपने ऊपर सुन भर वार दें।[२२]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ऊपर के पाँचों पाठों को देखने से समझ में आता है कि स्थायी-अन्तरा दोनों की ही आरम्भिक पंक्ति सभी में एक है सिवाय पटवर्धन जी की पुस्तक के पाठ में, जहाँ 'केस कुँवरवा' के स्थान पर 'कैसे कुँवरवा' मिलता है। अन्तर आया है 'घरवा', 'गरवा' और 'दरवा' में तथा 'गन परवार रे', 'कन कन वार रे', घर कल वार दे, 'गर कन वार रे तथा नैन फरकन वार रे' में। अन्तरे में सभी पाठों में 'प्रेम-पियाला' है वहाँ ओम्कारनाथ जी की पुस्तक में 'प्रेम-दीवाना' मिलता है। पाँचों 'पाठों' में कोई भी पाठ पूरी तरह शुद्ध नहीं लगता, अतः वास्तविक शब्द-रचना क्या रही होगी, अथवा इसकी पाठ-शुद्धि कैसे सम्भव है, यह भी शोध का विषय है।

इस तरह की सैकड़ों बन्दिशें हैं जो अशुद्ध पाठ के साथ चली आ रही हैं। अस्तु, इसका विकल्प न होने से वे ही अशुद्ध शब्दों वाली रचनाएँ, अपने सबल सङ्गीत-पक्ष के कारण श्रोताओं की प्रशंसा पाती रहीं। ऐसा इसलिए सम्भव हुआ क्योंकि स्वरों में चित्त को पिघलाने वाली वह शक्ति है जो अपनी परिपूर्णता के लिए किसी बाह्य-तत्त्व की अपेक्षा नहीं रखती। स्वर स्वयं में रञ्जक है- 'स्वतो रञ्जयति श्रोतृचित्तं स स्वर उच्यते'[२३] अतः परिचत्तानुरञ्जन का कार्य सङ्गीत द्वारा यथावत् होता रहा।

जब गेय पदों के पाठ-शुद्धि या समीक्षण की बात सामने आई है तब यह उल्लेख करना अप्रासङ्गिक न होगा कि 'केन्द्रीय सङ्गीत नाटक अकादमी' नई दिल्ली द्वारा बख्शू नायक के एक हजार ध्रुपदों के सङ्ग्रह 'सहसरस' का Critical Edition सन् १९६२ में प्रकाशित हुआ है और पाठ-संशोधन का यह महत्त्वपूर्ण कार्य प्रो० प्रेमलता शर्मा जी द्वारा सम्पादित हुआ है।[२४]

पद्यांश के पाठ संशोधन की चर्चा करते हुए प्रेमलता जी ने राग पूरिया की मौखिक परम्परा से प्राप्त 'सदारङ्ग' की एक बन्दिश का सन्दर्भ देते हुए लिखा है- 'मौखिक परम्परा से प्राप्त बन्दिश के बोल थे-

सपने में आये पी जब तें मोरी माँ, सौतन की कल बिगर गई, पकर न सकी पल उघर गई।

यहाँ सवाल उठता है कि स्वप्न बिल्कुल व्यक्तिगत अनुभव है, उसकी जानकारी भला सौतन को कैसे मिली? इस पर एक उत्तर आया कि नायिका ने स्वयं ही उत्साह के कारण सौतन को बताया होगा। पर यह बात कुछ जमती नहीं। 'रागकल्पद्रुम' में 'सौतन' की जगह 'मो तन' पाठ भेद मिला। यह देखते ही समस्या सुलझ गई। सपने में प्रियतम को देखकर अपने तन की हालत (सुध-बुध) बिगड़ना स्वाभाविक है और आगे की पंक्ति से उसका मेल बैठता है।[२५] उक्त रचना के पूरे बोल इस प्रकार हैं-

स्थायी - सपने में आये जब से पी मोरी माँ, सौतन की कल बिगर गई
अन्तरा - हूँ जो चहूँ 'सदारङ्ग' के भेटन को माई री, पकर ना सकी, पल उघर गई।[२६]

यही बन्दिश पं० भातखण्डे जी की पुस्तक में इस प्रकार है-

स्थाई - सपने में आये जबतें मोरी माँ, सुख चैन की कल बिगर गई।
अन्तरा - हूँ जो चाहूँ 'सदारङ्ग' गहबे को, मोइ पकर ना सकी पल उघर गई।[२७]

अस्तु, इस दिशा में बहुत काम करने की आवश्यकता है, सम्भावना है।

शृङ्गारिक रचनाओं के विकल्प का बीजारोपण :

सङ्गीतकारों के व्यसन-वशीभूत होने के कारण ही सङ्गीत एक विषय के रूप में अत्यन्त कष्टसाध्य विद्या होने के उपरान्त भी समाज में प्रतिष्ठित नहीं था, इस कटु-सत्य को पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्करजी ने पहचाना। वे जानते थे कि यदि सङ्गीत-शिक्षक सदाचारी हो तो सङ्गीत को अवश्य सम्मान मिलेगा। सङ्गीत की विद्या सही ढंग से जनसाधारण तक पहुँचाने के लिए विद्यालय खोलने की प्रेरणा उन्हें हुई और सन् १९०१ में उन्होंने सर्वप्रथम लाहौर में विद्यालय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

खोला। बाद में इसकी अन्य शाखाएँ बम्बई में खुलीं। अत: जब विद्यालय का प्रचार होने लगा एवं कट्टर धार्मिक परिवेश में पले-बढ़े सम्भ्रान्त परिवार के बच्चे विद्यालय में प्रवेश लेने लगे तब पलुस्कर जी सिखाई जाने वाली बन्दिशों के प्रति सचेत हो गये। वे इसे अच्छी तरह समझते थे कि अत्यधिक शृङ्गारिक रचनाएँ सीख कर जब विद्यार्थी घर में अभ्यास करेंगे तब घर के लोग इसे नापसन्द करेंगे। शास्त्रीय सङ्गीत के 'गेय' के कथ्य (बन्दिशों के अर्थ) के प्रति यह सजगता गम्भीर वैचारिकता की ओर इङ्गित करती है। इस वैचारिक परिवर्तन को क्रियान्वित करते हुए पलुस्कर जी ने अत्यधिक शृङ्गारिक रचनाओं को छोड़कर भक्त कवियों के पदों का आधार लिया और तुलसीदास, सूरदास, मीराबाई एवं नानक साहब के पदों को रागदारी में बाँधा। ये रचनाएँ, 'सङ्गीत बाल प्रसाद' नामक पुस्तक के तीन भाग में छपवाईं (राग बागेश्री में जय जय गिरिवर राज किसोरी, राग ललित में उगेउ अरुण अवलोकहु ताता, राग दुर्गा में मङ्गलमय निज निज भवना तथा राग सारङ्ग में जय जय सुरनायक आदि)।[२८] अपने गुरु की परम्परा को चालू रखते हुए स्वनामधन्य कलाकार, 'सङ्गीत-मार्तण्ड' पं० ओम्कारनाथ जी ठाकुर ने अपने मधुर कण्ठ एवं भावपूर्ण प्रस्तुतीकरण से अनेक भजन यथा कबीरदास के 'रे दिन कैसे कटि हैं जतन बताय जैयो' तथा 'अमर वह देसवा' सूरदास के 'मैया मोरी मैं नहिं माखन खायो' तथा मीराबाई के प्रसिद्ध भजन 'जोगी मत जा' आदि गाकर श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध किया। रागदारी के अन्तर्गत भी राग-मालकौंस में मीराबाई का प्रसिद्ध पद 'पग घुंघरु बाँध कर नाची' गाकर सम्मेलनों में उन्होंने अद्‌भुत समाँ बाँधा। और उन्हीं के अर्थात् पं० ओम्कारनाथ ठाकुर के सुयोग्य शिष्य, स्वर और शब्दों के अद्‌भुत शिल्पी, प्रतिष्ठित वाग्गेयकार, 'सङ्गीताचार्य' पं० बलवन्तराय भट्ट ने जब सङ्गीत-जगत् को विषय-वैविध्य तथा राग एवं ताल-वैविध्य के साथ 'भावरङ्ग-लहरी' के रूप में मौलिक रचनाएँ अर्पित कीं तब सङ्गीत-जगत् में उसका पर्याप्त स्वागत हुआ।

'भावरङ्ग-लहरी' अति शृङ्गारिक पदों का विकल्प :

अत: यह समझ में आता है कि मौखिक-परम्परा से प्राप्त अत्यधिक शृङ्गारिक भावों से परिपूर्ण तथा अधिकांश भ्रष्ट शब्दों वाली बन्दिशें जो पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित हो रही थीं तथा जिनमें बदलाव सम्भव न था, ऐसी परिस्थितियों में सङ्गीतोद्धारक पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी द्वारा आरम्भ किये गये अभियान को भट्टजी के प्रयास से गति मिली और अनायास ही विकल्प सामने होने से खण्डित पाठ वाली रचनाओं का स्थान 'भावरङ्ग-लहरी' की रचनाओं ने ले लिया। इस प्रकार ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में तथा वर्तमान परिप्रेक्ष्य में 'भावरङ्ग-लहरी' का महत्त्व एक रचना-सङ्ग्रह के रूप में निर्विवाद एवं स्वयंसिद्ध है क्योंकि इसमें प्रकाशित रचनाएँ शब्दों एवं भावों के सौष्ठव से युक्त एवं अत्यधिक शृङ्गारिकता के दोष से मुक्त हैं। वर्तमान समय में सङ्गीत भी अन्य विषयों के समानान्तर संस्थागत शिक्षण प्रणाली में समाविष्ट है। शिक्षा एवं परीक्षा दोनों दृष्टियों से समय की आवश्यकता के अनुसार रचना के बोल विद्यार्थियों को लिखित रूप में उपलब्ध कराना शिक्षक का धर्म है। इस बिन्दु से भी 'भावरङ्ग' जी की कृति का महत्त्व बढ़ जाता है क्योंकि यहाँ शिक्षक तथा विद्यार्थी एवं कलाकार तथा श्रोता किसी को अशुद्ध पाठ की समस्या का सामना नहीं करना पड़ता।

पं० ओम्कारनाथ ठाकुर की दृष्टि में कृति का महत्त्व :

भावरङ्ग-लहरी के प्रथम भाग के प्रकाशन के समय गुरुजी पं० ओम्कारनाथ जी ठाकुर जीवित थे। अपने सुयोग्य विद्यार्थी के रचना- सङ्ग्रह की विशिष्ट बातों का उल्लेख उन्होंने 'प्राक्कथन' में निम्नलिखित शब्दों में किया है-'.......... मध्ययुग की परम्परा से सम्प्राप्त शास्त्रीय-सङ्गीत के पदों में अर्थ और भाव की सिद्धि दुर्लभ ही होती है। ध्रुवपद और ठुमरी शैली के पदों में तो फिर भी देवादिक स्तुति, प्रकृति-वर्णन, होरी का शृङ्गार-परक वर्णन,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नायक-नायिका भेद के आधार पर शृङ्गार-निरूपण इत्यादि विषयों के समावेश से अर्थ-भाव की अभिव्यक्ति प्राप्त होती है, किन्तु आज जो शैली सर्वाधिक प्रचलित है, उस ख्याल-शैली के पदों में शब्द-अर्थ-सौष्ठव का प्रायः नितान्त अभाव पाया जाता है। साथ ही राग के स्वर-रूप और तदाश्रित उसके भाव-रूप के साथ पद के शब्दार्थ का समन्वय भी क्वचित् ही दिखाई देता है। ये दोनों न्यूनताएँ सभी सहृदयों को सर्वदा खटका करती हैं। इन्हें दूर करने का प्रस्तुत रचना- सङ्ग्रह में सबल और सफल प्रयास है। उपर्युक्त दिशा में आधुनिक युग में कुछ अन्य प्रयास भी हुये हैं। उन सबकी तुलना में प्रस्तुत सङ्ग्रह का अपना वैशिष्ट्य है।[२९]

'भावरङ्ग' जी की रचनाओं की संख्या, पदों में भाव की उत्कृष्टता एवं भावानुकूल स्वर-लय-विधान से ठाकुर जयदेव सिंह अत्यन्त प्रभावित थे एवं उन्हें 'अभिनव-अदारङ्ग' कहा करते थे।[३०]

नृत्य की दृष्टि से भावरङ्ग लहरी की उपादेयता :

स्वर-लय के साधक पं. बलवन्तराय भट्ट ने मौलिक शब्द-रचना को अनुरूप स्वर-ताल, योजना से सजाकर 'बन्दिश' के रूप में सङ्गीतानुरागियों के समक्ष पूरी दक्षता से प्रस्तुत किया है। इन बन्दिशों की विपुल संख्या जहाँ एक ओर बन्दिशों या रचनाओं के कथ्य में वैविध्य का दर्शन कराती है वहीं दूसरी ओर बन्दिशों में प्रयुक्त विविध अलङ्कार, छन्द, नाद-व्यञ्जना, शब्द-शक्तियाँ एवं बिम्ब-विधान भाषिक चारुता के सशक्त प्रमाण हैं। सुन्दर एवं सटीक शब्द-प्रयोगों द्वारा अभिव्यक्त भावों की विलक्षणता से प्राप्त बिम्ब ही अभिनेयता का अवसर प्रदान करते हैं। शब्द-रचना के माध्यम से प्राप्त बिम्ब ही वह प्रेरक तत्त्व है जो एक नर्तक की कल्पना को उद्वेलित करता है। नितान्त स्वाभाविक है कि स्वर और ताल में बद्ध होकर शब्द-रचना में निहीत भाव जब 'बन्दिश' के रूप में मुखरित होते हैं तब एक सहृदय कलाकार उन अमूर्त भावों को अपनी आङ्गिक मुद्राओं, विशेष रूप से मुखज अभिनय द्वारा मूर्त करने को तत्पर हो जाता है। स्पष्ट है कि बन्दिश की नृत्यात्मकता ही नर्तक अथवा नर्तकी को अव्यक्त रूप से आमन्त्रित करती है।

भारत में प्रचलित शास्त्रीय-नृत्य की सभी शैलियों में प्रस्तुतीकरण के दो पक्ष स्पष्ट रूप से परिलक्षित होते हैं। एक है 'नृत्त' जो कि शैली विशेष का तकनीकी पक्ष है, दूसरा है 'नृत्य' या 'अभिनय' जो कि उसका भाव-पक्ष है। 'नृत्त' तथा 'नृत्य' पारिभाषिक शब्द हैं तथा विभिन्न नाट्यशास्त्रीय ग्रन्थों में इनकी भिन्न-भिन्न विशेषताओं को रेखाङ्कित किया गया है।

'नृत्त' को परिभाषित करते हुए अभिनय-दर्पणकार श्री० नन्दिकेश्वर ने 'भावाभिनयहीनं तु नृत्तमित्यभिधीयते'[३१] कहकर 'नृत्त' को भावों के अभिनय से मुक्त रखा है। 'नृत्तं ताललयाश्रितं[३२], कहकर आचार्य धनञ्जय ने अपने ग्रन्थ 'दशरूपक' में तालपक्ष की प्रधानता को इङ्गित किया है, वहीं पं० शार्ङ्गदेव ने 'सङ्गीत-रत्नाकर' में निम्न श्लोक द्वारा नृत्त को परिभाषित किया है-

गात्र विक्षेपमात्रं तु सर्वाभिनयवर्जितम् ।।२७।।
अङ्गिकोक्तप्रकारेण नृत्तं नृत्तविदो विदुः।[३३]

तीनों परिभाषाओं का सार यह है कि आङ्गिकाभिनय के अन्तर्गत, मुख्यतः ताल तथा लय पर आश्रित गात्र-विक्षेप मात्र ही 'नृत्त' है जो भावों के अभिनय से रहित है। इसका तात्पर्य यह है कि आङ्गिक चेष्टाओं द्वारा सौन्दर्य की सृष्टि ही 'नृत्त' का प्रयोजन है। भाव-सम्प्रेषण नहीं। अतः इसके सहयोगी सङ्गीत के रूप में अर्थ अभिप्रेत करने वाले पद या गीत की आवश्यकता नहीं होती वरन् केवल बोल, स्वरावलि (भरतनाट्यम् शैली में जतिस्वरम्) अथवा निरर्थक अक्षरों या शुष्काक्षरों की योजना जैसे 'तराना' या 'तिल्लाना' अथवा केवल पाटाक्षरों से निर्मित रचना यानि 'त्रिवट' आदि का प्रयोग अभीष्ट है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'नृत्त' के विपरीत 'नृत्य' को परिभाषित करते हुए आचार्य नन्दिकेश्वर ने लिखा है-

रसभावव्यञ्जनादियुक्तं नृत्तंमितीर्यते।
एतन्नृत्यं महाराजसभायां कल्पयेत् सदा ।।[३४]

आचार्य धनञ्जय ने 'अन्यद् भावाश्रयं नृत्यं'[३५] कहकर नृत्य को परिभाषित किया है और पं० शार्ङ्गदेव-

'आङ्गिकाभिनयैरेव भावानेव व्यनक्ति यत्।
तन्नृत्यं मार्गशब्देन प्रसिद्धं नृत्यवेदिनाम् ।।[३६]

कहकर नृत्य को गात्र-विक्षेप मात्र से अलग करते हैं। उपर्युक्त तीनों परिभाषाएँ 'नृत्य' में भावों पर ही बल देती हैं। इस प्रकार आङ्गिक अभिनय होते हुए भी 'नृत्त' और 'नृत्य' के बीच भेदक तत्त्व भावाभिनय है, क्योंकि स्वर और ताल के आश्रित तो दोनों ही हैं चाहे वह सार्थक पद की रचना हो या निरर्थक पद की। भावाभिनय के लिए आवश्यक है कि सार्थक शब्दों की योजना के रूप में भजन, ग़ज़ल अथवा ठुमरी जैसा कोई कथात्मक आधार कलाकार के पास हो जिसके भावों को वह आङ्गिक मुद्राओं के द्वारा प्रेक्षक वर्ग तक संप्रेषित करे। इस सन्दर्भ में यह उल्लेख करना आवश्यक है कि अभिनय के अन्तर्गत कथक शैली में प्रस्तुत किया जाने वाला 'गत-भाव' ऐसा प्रकार है जिसमें केवल लहरे की सङ्गति पर ही संक्षिप्त भाव-प्रदर्शन होता है, वहाँ गीत का आधार नहीं लेते, उदाहरणार्थ घूँघट की गत, पनघट की गत, माखन-चोरी आदि। गत-भाव के प्रदर्शन के समय किसी गीत का आधार नहीं लेते, किन्तु कलाकार के मानस में वह कथानक क्रियाशील रहता है। प्रेक्षकों की दृष्टि से उद्घोषणा यानि कौन सा गत-भाव प्रस्तुत होगा, इस रूप में एक सूत्र आधार का काम करता है।

प्रत्येक गेय-रचना, नृत्य-रचना के अनुकूल नहीं होती। नृत्य के प्रस्तुतिकरण हेतु गीत की स्वर-रचना ऐसी होनी चाहिए जिसमें प्रत्येक शब्द का भाव मुखरित हो। गायन में शब्द के उच्चारण को इतना समय अवश्य मिले जिससे उसके साथ आङ्गिक क्रियाओं का सामञ्जस्य अच्छी तरह बैठे। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात हैं कि नृत्य के अभिनय हेतु शब्द-रचना ऐसी हो जिसमें कोई घटना क्रम हो अथवा ऐसा विषय हो जिसमें कथा का विकास दिखे। ईश-स्तुति सम्बन्धी ऐसा पद जिमसें उदार, महान्, शालीन, सौम्य जैसे भावात्मक विशेषणों का बाहुल्य हो उसकी तुलना में ऐसी स्तुतिपरक रचना जिसमें क्रिया-सम्बन्धी गुण विशेष का अथवा घटना का उल्लेख है, अभिनय हेतु अधिक उपयुक्त होगी। जिस प्रकार साहित्य में काव्य की एक पंक्ति अथवा गद्य के एक ही वाक्य की व्याख्या अत्यन्त विस्तार से की जाती है उसी प्रकार एक मँजा हुआ और अनुभवी कलाकार गीत की एक-एक पंक्ति के भाव का विस्तार करता है। अभिनय द्वारा गीत के भाव का विस्तार ही नृत्य के आङ्गिक अभिनय को नाट्य के आङ्गिक से पृथक् करता है।

भारत में प्रचलित सभी शास्त्रीय नृत्य शैलियों में 'नृत्य' एवं 'अभिनय' की अपनी विशिष्ट बन्दिशें हैं जिनकी रचना महान् गुरुओं की साधना का प्रतिफल होने के साथ ही उनकी कल्पनाशीलता का प्रमाण है।

समय के साथ जैसे-जैसे आवागमन के साधन सुलभ होने लगे और देश-विदेश में कलाकारों का आवागमन अपेक्षाकृत आसान हुआ, सभी (विभिन्न शैली के गुरुओं एवं कलाकारों) को दूसरी शैलियों के कलाकारों एवं शैली विशेष की विशेषताओं को देखने-समझने का अवसर अधिकाधिक मिलने लगा।

कलाओं की विशेषता यही है कि कभी भी उसका स्वरूप एक ढाँचे में बँधकर नहीं रहा। कला में मूल तत्त्वों की अक्षुण्णता के साथ प्राचीन से लेकर अर्वाचीन काल तक के बृहत् कालखण्ड में अभिव्यक्ति एवं प्रस्तुतीकरण के स्तर पर अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन दृष्टिगोचर हुए हैं। नए आयाम उपलब्ध होने से विभिन्न शैलियों के बीच भी स्वयमेव आदान-प्रदान की प्रक्रिया क्रियाशील हो जाती है। आज के समय में प्रान्तविशेष के व्यक्ति को अपने स्वाभाविक रुझान के अनुसार दूसरे प्रान्त की नृत्य शैली को देखने तथा सीखने का भी अवसर उपलब्ध है। आज दक्षिण की नृत्य शैली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भरतनाट्यम मात्र दक्षिण भारत के कर्णाटक, तमिलनाडु अथवा आँध्रप्रदेश में ही केन्द्रित न रहकर उत्तर-भारत, महाराष्ट्र एवं गुजरात आदि प्रान्तों में भी विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षा के विषय के रूप में सम्मिलित है। दक्षिण भाषा-भाषी न होकर भी दूसरे प्रान्त के लोग इसे सीखकर अपना Career बना रहे हैं। इस परिस्थिति ने भरतनाट्यम् के लिए जो नया आयाम खोला है, वह है दक्षिण की भाषाओं (तमिल, तेलुगु, कन्नड़) के स्थान पर हिन्दी, ब्रज अथवा अवधी के साहित्य को कथ्य के रूप में अपनाया जाना। विगत् ४०-५० वर्षों में यह प्रवृत्ति बढ़ी है। परिणामस्वरूप दक्षिणेतर प्रान्तों में इसका दर्शकवर्ग बढ़ा है। ऊपर उल्लिखित भाषाओं में जनमानस को सबसे अधिक प्रभावित करने वाला साहित्य है गोस्वामी तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरित मानस' महाकवि सूरदास तथा मीराबाई द्वारा रचित पद।

अतः अपनी पारम्परिक रचनाओं के साथ ही नृत्य के क्षेत्र में दूसरी भाषाओं के पदों पर भारतनाट्यम् शैली में भी अभिनय प्रस्तुत हो रहा है। (यह तथ्य स्मरणीय है कि दक्षिण में मराठा शासक महाराज सर्फोजी, जो स्वयं कला उपासक थे, उनके द्वारा रचित 'निरूपणों' की भाषा मराठी है।) रचनात्मकता की दृष्टि से इस प्रकार के प्रयोग स्वागतयोग्य हैं।

नई रचनाओं की इस प्रवृत्ति में नृत्याचार्यों को 'भावरङ्ग' जी की बन्दिशों के रूप में बहुमूल्य सामग्री उपलब्ध हुई है।

'भावरङ्ग' जी द्वारा रचित ठुमरियाँ (यद्यपि ये संख्या में कम हैं) भावों के अभिनय का अच्छा अवसर प्रदान करती हैं। यहाँ उदाहरण स्वरूप दो ठुमरियाँ प्रस्तुत हैं जो एकल अभिनय हेतु उपयुक्त हैं-

उदाहरण - १ **स्थायी -** ए री कोयलिया ! बन की मुरलिया !
जा बज पियु के देस।
अन्तरा - हे अनुरागिनी ले मधुरागिनी कहियो मोर सँदेस
तुमरी सुहागिन भई बैरागिन, कियो अमङ्गल भेस।
अब पियु आओ, रस बरसाओ, 'भावरङ्ग' हृदयेश,
मुरलिया ! जा बज पियु के देस।[३७]

प्रस्तुत ठुमरी के बोल नायिका के वियोग की अवस्था को बताते हैं। इसमें अभिनय के विस्तार की पर्याप्त सम्भावना है। कोयल की कूक सुनकर नायिका में विरह की प्रतीति का बढ़ना, उसके द्वारा कोयल से अनुनय करना कि वह उसके प्रीतम के देश जाकर बजे और अपनी वाणी द्वारा उसकी (नायिका की) दशा का वर्णन करे। जिसमें विशेष रूप से उसके द्वारा अमङ्गल वेश धारण किए जाने का समाचार भी दे। इस पंक्ति में नायिका के शृङ्गारादि से विरत होने एवं आभूषणों से हीन होने को अत्यन्त विस्तार से दिखाया जा सकता है।

उदाहरण - २ **स्थायी -** गोरी ! काहे गुमान भरी,
यह तन जुगत जतन करि राखत, छिन में छार ढरी।
अन्तरा- काल कराल तकत है पल-पल, टेढ़ी आँख करी,
'भावरङ्ग' भूली तूल भामिनी, अब तो चेत अरी।[३८]

सामान्यतया ठुमरी शृङ्गारपरक होती है यह उपदेशात्मक है। इसमें कलाकार उपदेशक की भूमिका लेकर नायिका को सम्बोधित कर इस जीवन की नश्वरता को बता सकते हैं। सम्बोधन की पहली ही पँक्ति, 'गोरी ! काहे गुमान भरी' इसमें 'गुमान' शब्द का अभिनय द्वारा पर्याप्त विस्तार हो सकता है। जिस-जिस बात का नायिका को गुमान हो सकता है। यथा यौवन, आकर्षक देह-यष्टि, धन-सम्पत्ति, दास-दासी, कुल तथा नायक का अनुराग आदि। प्रत्येक अङ्ग पर पहने जाने वाले आभूषणों की विविधता से उसके गुमान को बताया जा सकता है। विविध बहुमूल्य वस्त्र,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

केशसज्जा, चन्दन आदि का लेप जो नायिका द्वारा अपने को सुन्दरतम रूप में प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति को दिखाते हैं, उनको अभिनय द्वारा दिखाकर अपने यौवन एवं रूप में संसार की नश्वरता से अनभिज्ञ नायिका का बोधन करना है कि काल की कुटिल गति उसके रूप तथा यौवन को भी आक्रान्त कर लेगी और एक दिन सब राख में मिल जाएगा।

एक अन्य पद उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत है। यह अपेक्षाकृत लम्बी पद-रचना है जो भजन के समकक्ष रखी जा सकती है-

नटवर कियो नाम नर्तन में।
लीलामय रस बस ह्वै नाच्यो, मधुमय सन्त वचन में।।
ग्वालिनि के घर आँगन नाच्यो, आँख राखि माखन में।
नैक कान्ह बन नाच्यो कुञ्जन, गोकुल की गोपिन में।।
एक बार जमुना जल नाच्यो, कालिय नाग फनन पे।
कलाकार अस सुन्यो न देख्यो, नर्तक को त्रिभुवन में।।
भारत के रन-आँगन नाच्यो, चक्र धारि वीरन में।
धीर भीष्म पुलकित प्रभु भेटन, सफल होई निज प्रन में।।
निखिल ब्रह्माण्ड निसदिन नाच्यो, अग जग के कन-कन में।
व्यापक रूप सोई मुनि ध्यावत, समाधि के साधन में।।
राग-ताल बन नाच्यो रसिया, सङ्गीताराधन में।
सोई रूप मम हृदय बसो प्रभु, 'भावरङ्ग' रञ्जन में।
प्रभु तव गीत-प्रीति पावन में।।[३९]

इस पद में कृष्ण के अद्भुत नर्तन का वर्णन है। भिन्न-भिन्न अवसरों पर भिन्न उद्देश्य से किए गए नृत्य का अपना दर्शन है, अपना महत्त्व है। इसके अन्तर्गत बालक कृष्ण द्वारा कालिय-मर्दन का प्रसङ्ग जिसमें उन्होंने कालिय के फण पर नृत्य किया, माखन-चोरी के प्रसङ्ग, महारास का प्रसङ्ग जिसमें उन्होंने प्रत्येक गोपी के साथ अनेक रूप धरकर एक साथ ही मण्डलाकार नृत्य प्रस्तुत किया तथा रणभूमि में रथ का पहिया लेकर दौड़ना, सभी का नृत्यमय विनियोग हो सकता है। प्रत्येक पद्यांश में भिन्न कथा है अतः प्रत्येक अभिनय के अंश के पश्चात् 'नृत्त' के अंश डाले जा सकते हैं जिसमें रचनाकार इस बात का ध्यान रखें कि कथ्य के भाव के अनुरूप बोलों की तथा बोलों के अनुरूप 'नृत्त' की रचना करें। अर्थात् कालिय-मर्दन के प्रसङ्ग अथवा रण-भूमि में रथ का पहिया लेकर दौड़ने के प्रसङ्ग के उपरान्त की नृत्त की रचना में अपेक्षाकृत कठोर वर्णों की रचना से बने बोल एवं तदनुरूप उद्धत अङ्ग-विक्षेप तथा गोपियों के साथ रास के प्रसङ्ग में मृदु वर्णों के योग से निर्मित बोल तथा तदनुरूप सुकुमार अङ्ग-विक्षेप की योजना औचित्यपूर्ण एवं गीत के भाव को बल प्रदान करने वाली होगी।

'भावरङ्ग' जी की अनेक रचनाएँ समूह में प्रस्तुत करने के लिए अत्यन्त उपयुक्त हैं। समूह की नृत्य-रचना में प्रवेश एवं निर्गमन में विविधता की पर्याप्त सम्भावना होती है। या तो सभी का प्रवेश एक साथ (एक के बाद एक क्रमशः) कराया जाता है, या दो-दो की संख्या में अथवा जैसी नृत्य रचनाकार की रुचि या कथानक की आवश्यकता हो। उसी प्रकार मञ्च पर पात्रों के प्रवेश के स्थान या कोण भी भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। प्रवेश की भाँति निर्गमन में भी वैविध्य अपना सकते है। 'भावरङ्ग' जी की रचनाओं में विशेष रूप से कृष्ण-चरित सम्बन्धी वे पद सामूहिक प्रस्तुति हेतु उपयुक्त हैं जिनमें राधा एवं ब्रजवनिताओं के साथ रास के प्रसङ्ग हैं अथवा होली का प्रसङ्ग है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उदाहरण – १	स्थायी –	मची अत धूम ब्रज में खेलत हरि फाग भर अनुराग लास्य-विभाग ब्रज में
	अन्तरा –	उड़ावत रङ्ग दस दिसि में रंग्यो निज रङ्ग सों आकास जगत निवास ब्रज में।[४०]
उदाहरण – २	स्थायी-	बाजत ताल मृदङ्ग, होरी के रङ्गीले ढंग।
	अन्तरा-	ब्रज की नारी गावत गारी छिरकत रङ्ग, हरि के अङ्ग।[४१]
उदाहरण- ३	स्थायी-	सखियन पकर्‍यो श्याम बिहारी, लकुटि कमरिया छीन लई पर बंसी देख बलिहारी।
	अन्तरा-	पलट्यो 'भावरङ्ग' गोपिन को, बिनती करत सब हारीं, बजा-बजा मुरली मनमोहन भूलीं हमहि गँवारी।[४२]
उदाहरण-४	स्थायी-	होरी होरी होरी खेलत नन्दलाल। चन्दन अतर कुमकुम केसर, उड़ावत भर-भर-भर-गुलाल
	अन्तरा-	मच्यो शोर बढ़्यो घोर चहुँ ओर विविध बाजने बाजे, चञ्चल मधुर सुरन परन भेद गाजे, अणु – अणु 'भावरङ्ग' भ्राजे, सां रें ग॒ मं-रें-सां रें सां रें-सां नि॒ सां नि॒ सां-नि॒ ध॒ नि॒ ध॒ नि॒-प म-प म-प- म ग॒ म ग॒ म-रे सा रे सा रे-सा नि॒ सां दिर दिर दिर दिर दिर दिर तन तनूं कड़ान किड़नग तिरकिट तक धिरकिट तक धा तिधा तान् धिरकिट किड़नग तिरकिट तक धिरकिट तक धा, धिरकिट किड़नग तिरकिट तक धिरकिट तक धा, धिरकिट किड़नग तिरकिट तक धिरकिट तक धा, धा[४३]

ऊपर की रचना चतुरङ्ग कही जाती है जिसमें सार्थक शब्द, निरर्थक शब्द, सरगम तथा पाटाक्षर चारों का योग होता है। सार्थक शब्द की रचना के रूप में इसमें उत्साह के वातावरण में कृष्ण द्वारा होली खेलने का वर्णन है।

इसको नृत्य में प्रस्तुत करने हेतु होली खेलने की तैयारी से कृष्ण और ग्वाल-बालों का प्रवेश दिखाया जाना चाहिए। इसके उपरान्त गीला रङ्ग तैयार करना, पिचकारी भरना, व रङ्ग डालना, गुलाल मलना आदि क्रियाएँ अभिनय से प्रदर्शित करनी चाहिए। होली में क्रमशः दूसरे सखाओं का प्रवेश बढ़ाना होली के प्रसङ्ग को स्वाभाविक बनाएँगी। होली खेलते समय ढोल-मँजीरा बजाकर वातावरण में उत्साह का सञ्चार होता है, जिसका कि उक्त रचना में सङ्केत भी है। अतः 'विविध बाजने बाजे' शब्दों के साथ ढोल, मँजीरा, झाँझ तथा करताल आदि वाद्यों के बजाने का अभिनय इसमें जोड़ा जा सकता है। इसके उपरान्त इसमें दी गई सरगम तथा पाटाक्षर तो पूर्णतया नृत्त की रचना के उपयुक्त हैं ही, जिसमें रचनाकार अपनी कल्पना के अनुसार नृत्त-रचना करने को स्वतन्त्र है।

इसमें मुख्य रूप से कृष्ण के होली खेलने का प्रसङ्ग है। यद्यपि इसमें 'गोप-कुमार' या 'सखा' जैसे शब्दों का प्रयोग नहीं हुआ है तथापि 'मच्यो शोर बढ़्यो घोर चहुँ ओर', यह वर्णन टोली में होली खेलने का दृश्य उपस्थित करता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'नृत्य' के विपरीत 'नृत्त' भावाभिनय से मुक्त है अतः इसके सहयोगी सङ्गीत के रूप में राग-तालबद्ध स्वरावलि अथवा तराने प्रयुक्त होते हैं। भट्ट जी द्वारा रचित तराने भी लय के वैशिष्ट्यपूर्ण प्रयोगों के कारण समारोहों में छा जाते हैं। चूंकि इसमें कथानक नहीं होता अतः इसकी प्रस्तुति एकल, युगल अथवा सामूहिक किसी भी रूप में हो सकती है। यहाँ कुछ तरानों तथा त्रिवट की सूची प्रस्तुत है जो नृत्य प्रस्तुति हेतु उपयुक्त हैं-

राग	बन्ध प्रकार	ताल
चन्द्रकौंस	तराना	द्रुत आड़ाचौताल[४४]
बिहाग	,,	आड़ाचौताल[४५]
मियाँ मल्हार	,,	आड़ाचौताल[४६]
हमीर	,,	आड़ाचौताल[४७]
जैत	,,	आड़ाचौताल[४८]
श्री	,,	आड़ाचौताल[४९]
पटदीप	,,	आड़ाचौताल[५०]
सारङ्ग	,,	द्रुत तीनताल[५१]
अहीर भैरव	,,	द्रुत तीनताल[५२]
शुद्ध सारङ्ग	,,	द्रुत तीनताल[५३]
आभोगी	,,	द्रुत तीनताल[५४]
जोग	,,	द्रुत तीनताल[५५]
दुर्गा	,,	द्रुत तीनताल[५६]
मालकौंस	त्रिवट	द्रुत आड़ाचौताल[५७]
रागेश्री	तराना	द्रुत एकताल[५८]

विभिन्न तालों में लय के विशिष्ट प्रयोगों में युक्त अनेकानेक तराने एवं त्रिवट नर्तक कुशलता को प्रदर्शित करने की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। इन तरानों में तबले के बोलों का तिहाईयुक्त प्रयोग, ताल की अलग-अलग मात्राओं से स्थाई-अन्तरे का उठान, रचना में निहित बलाघात तथा चमकदार ढंग से सम का दिग्दर्शन विशेष रूप से आकर्षित करते हैं।

पहले उल्लेख हो चुका है कि रचना के क्षेत्र में पं० बलवन्तराय भट्ट का कौशल इस अर्थ में महत्त्वपूर्ण है कि जहाँ एक ओर उन्होंने लय के विशेष कौशल से युक्त क्लिष्ट रचनाएँ की हैं, जिनमें कई आवर्तनों तक चलने वाले तबले के लम्बे बोल हैं (जिनके उच्चारण का गायक को विशेष अभ्यास करना पड़ता है) वहीं सामान्य क्षमता वाला विद्यार्थी भी गा सके ऐसी सरल रचनाएँ भी तबले के नितान्त सरल बोलों के साथ बनाई हैं। दोनों प्रकार की रचनाओं में नए विधानों का अपना अलग आनन्द है।

यह सर्वमान्य है कि गीत की शब्द रचना से जो बिम्ब उभरता है, वही नृत्यकार को रचना करने के लिए प्रेरित करता है, तथापि प्रत्येक मनुष्य में सम्वेदना का स्तर भिन्न होता है, अतः बिम्ब को नृत्य-रचनाकार ने किस रूप में ग्रहण किया है यह उसकी प्रस्तुति से स्पष्ट होता है। गीत के माध्यम से जो बिम्ब प्राप्त होता है, रचनाकार अपनी कल्पना प्रवणता से ही उसकी पुनः सृष्टि नृत्य-रचना के रूप में करता है और अनेकविध विस्तार कर सकता है। अतः एक ही रचना होने पर भी भिन्न शैली एवं विभिन्न कलाकारों के द्वारा उसके अनेक संस्करण प्राप्त हो सकते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कृति (भावरङ्ग-लहरी प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय भाग) की विषयवस्तु (Content) :

'कृतित्व' के अन्तर्गत पं० बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट 'भावरङ्ग' द्वारा 'भावरङ्ग-लहरी' के तीनों भागों में प्रकाशित सामग्री को निम्नलिखित बिन्दुओं से देखना क्रम प्राप्त है- **विविध बन्धों में शास्त्रीय सङ्गीतोपयोगी रचनाएँ :** 'भावरङ्ग-लहरी' का प्रणयन सङ्गीत के विद्यार्थियों एवं सङ्गीतानुरागियों के लिए विशेष रूप से हुआ है। अतः स्वाभाविक है कि उत्तर-भारतीय शास्त्रीय-सङ्गीत में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न गीत-प्रकार (जिन्हें शास्त्रीय शब्दावली में 'बन्ध' कहते हैं) यथा- विलम्बित ख्याल (बड़ा ख्याल), द्रुत ख्याल (छोटा ख्याल) तथा मध्य लय के ख्याल, ध्रुपद, धमार, चतुरङ्ग, ठुमरी, भजन, तथा रागों के लक्षण गीत के माध्यम से ही भट्टजी की साङ्गीतिक एवं काव्यगत् सर्जना सामने आई है। उनके रचना- सङ्ग्रह में ऊपर उल्लिखित बन्धों के अतिरिक्त सार्थक शब्द-योजना के अन्तर्गत देशगीत जो सामूहिक गान के उपयुक्त हैं तथा निरर्थक शब्द-योजना के प्रकार जैसे तराना एवं त्रिवट भी काफी संख्या में हैं।

सङ्गीतशास्त्र सम्बन्धी गहन विषयों पर परिचयात्मक लेख :

बलवन्तराय जी के गुरुजी सिद्धहस्त प्रयोक्ता होने के साथ ही सैद्धान्तिक पक्ष के अध्ययन के प्रति भी रुचि रखते थे। उनके सान्निध्य से अपने विषय के गहन शास्त्र को समझने की जिज्ञासा बलवन्तराय जी में भी आई। यही कारण है कि उन्होंने अपने रचना- सङ्ग्रह में अपनी विदुषी गुरुबहन डॉ० प्रेमलता शर्मा से आग्रह पूर्वक 'भावरङ्ग-लहरी' में प्रकाशन हेतु सङ्गीतशास्त्र के ऐसे विषयों पर लेख माँगे जिनकी अवधारणा बहुत स्पष्ट नहीं थी लेकिन जिन्हें जानना आवश्यक है। एक दृष्टि से ये विषय उपेक्षित थे जिन पर बहुत काम नहीं हुआ था। शास्त्र-विषयक ग्रन्थ संस्कृत भाषा में होने से साधारणतया विद्यार्थी उनके अध्ययन में रुचि नहीं दिखाते एवं उसकी उपयोगिता नहीं समझ पाते। संस्कृत भाषामें लिखे गये सङ्गीत के शास्त्रग्रन्थों में उपलब्ध ज्ञान के अथाह भण्डार में से कतिपय दुरूह विषयों को हिन्दी भाषा में सुलझे हुए रूप में विद्यार्थियों एवं जिज्ञासुओं को 'भावरङ्ग-लहरी' में सुलभ कराकर भट्टजी ने उस खाई को भरने की दिशा में प्रयास किया है।

राग-विवरण एवं चलन :

गुरुजी की पुस्तक 'सङ्गीताञ्जलि' में राग-विवरण उपलब्ध होने से भट्टजी ने विनयवश अपने प्रकाशन (भावरङ्ग लहरी, प्रथम भाग) में केवल रचनाओं को स्थान दिया था। इस ग्रन्थ को देखकर प्रसिद्ध दार्शनिक एवं सङ्गीत तथा साहित्य के मर्मज्ञ 'पद्मविभूषण' ठाकुर जयदेव सिंह जी ने भट्टजी से अनुरोध किया कि आगामी प्रकाशन में रचनाओं के साथ रागों की जानकारी भी अवश्य दें जिससे यह ग्रन्थ, मात्र रचना- सङ्ग्रह की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण न रहकर रागदारी सीखने वाले विद्यार्थियों के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध हो।

ठाकुर जयदेवसिंह जी की सदाशयतापूर्ण सलाह के फलस्वरूप रचनाओं में प्रयुक्त रागों के विवरण भावरङ्ग-लहरी द्वितीय एवं तृतीय भाग की उपलब्धि हैं। प्रारम्भ में सूत्र कथन और बाद में विस्तृत व्याख्या की प्राचीन भारतीय पद्धति के अनुसार आरम्भ में राग-बोधक लक्षण (कविता अथवा छन्द) कहकर, बाद में उन राग-लक्षणों का विस्तृत विवरण दिया है। इन रागबोधक कविताओं में मुख्य रूप से दोहा, सोरठा, चौपाई, हरिगीतिका, वसन्ततिलका, विधाता, उल्लाला, पदपादाकुलक एवं मुतफायलुन (फारसी) आदि प्रचलित और अप्रचलित छन्दों का प्रयोग किया है। रागों के शास्त्रीय परिचय के साथ रागों के चलन से परिचित कराने के लिए संक्षिप्त मुक्त आलाप एवं तानें भी दी हैं।

अपने गुरु द्वारा मौखिक परम्परा से प्राप्त ज्ञान के अतिरिक्त राग-विवरण सम्बन्धी अन्य ग्रन्थों के विचार तथा दूसरे घराने में प्रचलित मतों का उल्लेख तो है ही साथ ही भारत के शास्त्रीय सङ्गीत की अन्य पद्धतियों यथा दाक्षिणात्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तथा ओडिसी सङ्गीत की राग-पद्धति का राग-रूप सम्बन्धी साम्य की दृष्टि से अध्ययन प्रस्तुत किया है, जो इसकी विशेषता है।

सङ्गीत-लिपि-चिह्न परिचय :

पुस्तक में सङ्गीत-लिपि चिह्न-परिचय दिया गया है। उत्तर- भारतीय सङ्गीत में स्वरबद्ध रचनाओं को लिपिबद्ध करने की दो-तीन पद्धतियाँ प्रचलित हैं। भट्टजी ने अपने गुरुजी की पुस्तक 'सङ्गीताञ्जलि' षष्ठ भाग में अपनाई गई स्वरलिपि-पद्धति का अनुकरण किया है। परिचय के अन्तर्गत तीनों सप्तकों (मन्द्र, मध्य एवं तार) के चिह्न, विकृत स्वरों के चिह्न, स्वरों के विशेष प्रयोग सम्बन्धी क्रियाओं यानि 'कण', तथा 'आन्दोलन' आदि के चिह्न, ताल के मात्रा एवं विभागदर्शी चिह्न, विभिन्न मात्रांशों के चिह्न, सम, खाली तथा ताली निदर्शक चिह्न तथा स्वरों तथा शब्दों के दीर्घ उच्चार को दर्शाने वाले चिह्नों का समावेश है।

कुछ अप्रचलित तालों एवं स्वनिर्मित तालों के ठेके दिए हैं जो गायन के अतिरिक्त अवनद्ध वाद्य यानि तबला या पखावज के विद्यार्थियों के लिये विशेष उपयोगी हैं।

भावरङ्ग-लहरी के तीनों भागों में पृथक् - पृथक् प्रकाशित सामग्री :

भावरङ्ग-लहरी, प्रथम भाग : (प्रकाशन वर्ष-१९६४, कुल पृष्ठ २२१)

इसमें भट्टजी द्वारा ५० रागों एवं २५ तालों में कुल १२६ रचनाएँ प्रकाशित हैं। डॉ० प्रेमलता शर्मा द्वारा लिखित निबन्ध 'प्रबन्ध का शास्त्रीय अध्ययन: एक संक्षिप्त दिग्दर्शन' इसकी उपादेयता में वृद्धि करता है। पारम्परिक राग एवं तालों के अतिरिक्त भट्टजी के स्वयं के बनाये हुये कुछ नये राग एवं ताल भी हैं। स्वर सन्निवेश के नवीन प्रयोग के रूप में पुस्तक के इस भाग में इन्द्रधनु, नवरत्न, मधुश्याम, तैलङ्गराज, पञ्चम रागेश्री तथा भावेश्वरी जैसे स्वनिर्मित रागों को स्थान दिया है। आरम्भ के दो राग इन्द्रधनु एवं नवरत्न वास्तव में 'रागमालिका' है जिसमें नाम के अनुरूप क्रमशः सात एवं नौ रागों का उपयोग किया गया है।

स्वनिर्मित तालों में सप्तरश्मि (मात्रा-२१) एवं विलास (मात्रा-२२) दोनों ध्रुपद अङ्ग के ताल तथा ख्याल अङ्ग से आड़ा त्रिताल (मात्रा-९) पञ्चताल (मात्रा-१३) उडुराज (मात्रा-१९) तथा उल्लास (मात्रा-२०) में रचनाओं को बद्ध किया है।

भावरङ्ग-लहरी, प्रथम भाग (द्वितीय संस्क़रण), प्रकाशन वर्ष : १९९५

प्रकाशक -नवभारत साहित्य मन्दिर, अहमदाबाद।

भावरङ्ग-लहरी, प्रथम भाग (तृतीय परिवर्धित संस्करण), प्रकाशन वर्ष : २०१२

प्रकाशक : शारदा संस्कृत संस्थान, जगतगंज, वाराणसी।

भावरङ्ग-लहरी, प्रथम भाग के तृतीय परिवर्धित संस्करण का संपादन भट्ट जी की जेष्ठ पुत्री डॉ. स्वरबन्दना शर्मा ने किया है। इसमें प्रथम संस्करण की मूल वस्तु यथावत् रखते हुए ५१ अतिरिक्त रचनाओं (३६ स्वर-लिपि सहित तथा १५ कविता) को समाविष्ट किया है। इसके अतिरिक्त सभी ५० रागों का विवरण, (लक्षण मूलक छन्द के साथ) तथा राग का चलन, मुक्त आलाप एवं तान के रूप में दिया है जो प्रथम संस्करण में नहीं दिया गया था।

भावरङ्ग-लहरी, द्वितीय भाग : (प्रकाशन वर्ष- १९७४, कुल पृष्ठ ३५९) :

इसमें कुल ५६ रागों तथा २० तालों में १३१ रचनाएँ हैं। इसके अतिरिक्त एक शब्द-रचना विद्यार्थियों द्वारा क्षमतानुसार स्वविवेक से स्वरबद्ध करने के लिए दी है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राग की दृष्टि से प्रथम भाग के मात्र २ रागों देश एवं भैरवी की पुनरावृत्ति है किन्तु उन रागों में बद्ध रचनाएँ नवीन हैं तथा प्रथम भाग में प्रयुक्त तालों के अतिरिक्त अन्य तालों का भी प्रयोग किया है। प्रथम भाग की भाँति इसमें भी स्वरचित रागों एवं तालों का समावेश है। नवीन स्वर सन्निवेश के रूप में राग-दयावती, कलावर्धिनी एवं श्याम-देश को पुस्तक में स्थान मिला है। स्वनिर्मित तालों में ताल चन्द्रास्त (मात्रा-१७), सरसी (मात्रा-२७), वेद (मात्रा-१४) तथा पौराणिक (मात्रा-१८) का प्रयोग हुआ है, साथ ही सङ्गीत-लिपि चिह्न-परिचय भी दिया है। एक हितैषी की दृष्टि से दी गई ठाकुर जयदेव सिंह की सलाह का सम्मान करते हुये भट्टजी ने 'भावरङ्ग-लहरी' के द्वितीय-भाग में राग-वर्णन भी समाविष्ट किया। प्रो० प्रेमलता शर्मा जी का 'सङ्गीत में निबद्ध और अनिबद्ध' शीर्षक से सारगर्भित निबन्ध इस द्वितीय भाग का अंश है।

भावरङ्ग-लहरी, तृतीय भाग : (प्रकाशन-वर्ष १९८२, कुल पृष्ठ ४२९) :

इस भाग में प्रथम एवं द्वितीय भाग में प्रयुक्त रागों के अतिरिक्त ७ भिन्न रागों एवं २ भिन्न तालों में बन्दिशें हैं। कुल ६४ रागों में १९० रचनाएँ हैं। द्वितीय भाग के समान इसमें भी राग सम्बन्धी विवरण है। प्रथम भाग में जिन रागों का विवरण नहीं दिया गया था, ऐसे अधिकांश रागों का वर्णन इस तृतीय भाग में समाविष्ट किया है। प्रथम एवं द्वितीय भाग की भाँति इसमें भी सङ्गीत-लिपि चिह्न-परिचय दिया गया है तथा स्वनिर्मित रागों में रचनाएँ की हैं यथा हंस सारङ्ग, मधुस्वरावलि, भिन्न-रागेश्री तथा श्याम-केदार।

इस भाग की विशेषता यह है कि इसमें विभिन्न अवसरों पर बलवन्तराय जी द्वारा प्रस्तुत दो शोध-प्रपत्र एवं एक लेख भी प्रकाशित हुआ है, जो निम्नवत् है-

१. 'ख्याल का प्रस्तुतीकरण'- (अगस्त ७६ में म०प्र० सङ्गीत-सभा के १३वें वार्षिक अधिवेशन के अन्तर्गत 'कमलादेवी सङ्गीत महाविद्यालय' रायपुर की रजत-जयन्ती के उपलक्ष्य में आयोजित सङ्गीत सेमिनार तथा सम्मेलन के समय प्रस्तुत निबन्ध)

२. 'रसानुभूति में काकुभेद का स्थान'- (नवम्बर ७६ में प्रयाग सङ्गीत समिति, इलाहाबाद की स्वर्ण-जयन्ती पर आयोजित 'सङ्गीत में रसतत्त्व' विषयक परिसम्वाद में प्रस्तुत निबन्ध)

३. 'मेरे श्रवण-लोचन द्वारा किया गया पू० गुरुवर्य पं० ओम्कारनाथ जी ठाकुर का श्रवण-दर्शन'- (स्मारिका नाद-वंदना म्यूजिक सर्कल, वाराणसी वर्ष १९७७ में प्रकाशित लेख)

भावरङ्ग-लहरी के अतिरिक्त उनकी अनेक रचनाएँ सङ्गीत कार्यालय, हाथरस से प्रकाशित होने वाली मासिक पत्रिका 'सङ्गीत' तथा गान्धर्व महाविद्यालय मण्डल की पत्रिका 'सङ्गीत कला विहार' में भी समय-समय पर प्रकाशित होती रही हैं। भट्टजी की काव्य-प्रतिभा तीन भाषाओं- मातृभाषा गुजराती, राष्ट्रभाषा हिन्दी एवं देवभाषा संस्कृत में देखने को मिलती है।

कृति (रचनाओं) का वर्ण्य-विषय :

इन तीनों भागों के अन्तर्गत रचनाओं का वर्ण्य-विषय विभिन्न देवी-देवता स्तुति, प्रकृति-वर्णन, उपनिषद्-मन्त्रों तथा श्रीमद्भगवत् गीता के श्लोकों का छायानुवाद, पौराणिक प्रसङ्ग, बोधपरक नीति-वचन, दार्शनिक-सिद्धान्त, नाम-महिमा, सङ्गीत की महिमा, गुरु-स्तवन, देशभक्ति, शृङ्गार की संयोग एवं विप्रलम्भ अवस्थाएं (जिसके अन्तर्गत सहज ही विभिन्न नायिकाओं के दर्शन हो जाते हैं) आदि हैं।

इस विषयों में लीलाओं का स्थान प्रमुख है। लीलाओं के पदों की विशेषता यह है कि वैसे तो ये पद अलग-अलग समय में लिखे गये हैं किन्तु प्रसङ्गानुसार उन्हें यदि क्रम से व्यवस्थित किया जाए तो उसमें कथा की तारतम्यता के साथ क्रमशः विकास परिलक्षित होता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कथ्य की दृष्टि से 'भावरङ्ग' जी के रचना-संसार को तीन श्रेणियों में विभाजित कर सकते है-

क- कृष्ण- चरित सम्बन्धी पद

ख- राम-चरित सम्बन्धी पद

ग- विविध

कृष्ण – चरित के अन्तर्गत जन्म से लेकर महाभारत तक के प्रसङ्गों का समावेश हुआ है- उदाहरणार्थ,

कृष्ण – जन्म की बधाई, नामकरण, माता का बालक को जगाना, बालपन की क्रीड़ा एवं माता की चिन्ता, गोचारण, पनघट-लीला, गोपियों का जसोदा के प्रति उलाहना, गोपियों की शिकायत पर माता का तर्क, माता का कृष्ण को समझाना, होली के प्रसङ्ग, राधा एवं गोपियों के साथ नृत्य एवं गीत के प्रसङ्ग, रूप-वर्णन, कृष्ण के मथुरावास एवं उद्धव के प्रसङ्ग, सुदामा का प्रसङ्ग, मुरली, राधा (रूप-वर्णन एवं स्तुति) तथा महाभारत के प्रसङ्ग।

इसी प्रकार राम-चरित के अन्तर्गत जन्म से लेकर परम-धाम-गमन तक के प्रसङ्गों को उन्होंने अपनी रचना का विषय बनाया है।

राम-जन्म, अहिल्या-उद्धार, सीता द्वारा गौरी-पूजन, राम-विवाह, वनवास (अ) भरत का भारद्वाज मुनि के आश्रम में आना (आ) भरत का चित्रकूट जाना एवं राम की पादुका ग्रहण करना (इ) राम-लक्ष्मण का ऋष्यमूक पर्वत आकर सुग्रीव से भेंट करना (ई) हनुमान का समुद्र लाँघकर लङ्का पहुँचना एवं अशोक वाटिका में सीता को राम की मुद्रिका देना (संक्षिप्त सुन्दर काण्ड) (उ) लङ्का में वानर एवं भालुओं की सहायता से युद्ध (ऊ) लक्ष्मण के मूर्च्छित होने पर हनुमान द्वारा सञ्जीवनी लाना (ए) रावण-वध, हनुमान द्वारा भरत को वनवास के उपरान्त राम का सीता एवं लक्ष्मण समेत अयोध्या पहुँचने की सूचना, राम का अयोध्या आगमन, राम का राजमुकुट धारण करना, राम के दरबार की शोभा, अवधपुरवासियों का सौभाग्य, लोकापवाद, सीता का त्याग, लव-कुश द्वारा राम के दरबार में रामायण का गायन तथा राम का परम धाम गमन।

इसी प्रकार विविध के अन्तर्गत उन पदों को रखा गया है जो ऊपर उल्लिखित लीला पदों के अतिरिक्त हैं। इसमें-

स्तुतिपरक पद (अ-शङ्कर, आ-गणेश, इ-राम, ई-कृष्ण, उ-हनुमान, ऊ-दुर्गा, ए-सरस्वती, ऐ- पार्वती), सूक्तियों का भावानुवाद, नाम-महिमा, ऊँकार-महिमा, सङ्गीत-महिमा, गुरु-स्तवन, प्रकृति-चित्रण, नायिकाओं की विविधता, देशभक्ति, विनय के पद, दर्शन एवं अध्यात्म, बोधपरक नीति-वचन अथवा उपदेश हैं।

भट्टजी की रचनाओं में उपलब्ध विषय – वैविध्य की चर्चा करते हुए प्रो० प्रेमलता शर्मा ने कहा है कि '....इस वैविध्य की तो जितनी चर्चा की जाय, उतनी कम है, क्योंकि आपकी रचनाओं में ऐसे-ऐसे अछूते विषय भी आए हैं जिन्हें लेकर बन्दिश बनाने की कल्पना सामान्य रूप से नहीं की जा सकती। कैलाश में भोर होने पर पार्वती शिव से जगत् के कल्याण के लिए प्रश्न करती हैं और शिव उत्तर देते हैं, काल स्वयं भगवान् राम को संकेत देते हैं कि अब धरा-धाम छोड़ने का अवसर आ गया है, सुदामा का आगमन सुनकर श्री कृष्ण वेग से गिरते-पड़ते दौड़ते हैं और जी भरकर रोते हैं, गीतोपदेश का सार भी रचना का विषय बना है, ऊँकार का स्वरूप, गणेश, सरस्वती, दुर्गा आदि देव-देवियों की स्तुति, श्री कृष्ण की गोकुल-वृन्दावन लीला के विविध प्रसङ्ग, नादतत्त्व- निरूपण, ऋतु वर्णन इत्यादि अनेकानेक विषय आपकी अनोखी सूझ-बूझ का साक्ष्य देते हुए उन-उन रचनाओं में उजागर हैं।

इतने अछूते विषयों का कल्पना में आना तभी होता है जब रचनाकार बहुश्रुत हो। 'भावरङ्ग' में यह गुण प्रचुर मात्रा में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विद्यमान है। ..... दार्शनिक चिन्तन का भी सार छन-छन कर और मधुर रूप से आपकी रचनाओं में यथास्थन समाविष्ट हुआ है। .....ओंकार तत्त्व के निरूपण में भी सिद्धान्त का सहज अनुकथन हुआ है। .... नीति, वैराग्य, लीला, निर्गुण आदि अनेकानेक चिन्तन-धाराओं या साधना धाराओं का समावेश 'भावरङ्ग' की रचनाओं में हुआ है। विविधता का ऐसा वैभव अन्यत्र दुर्लभ है।[५९]

पं० बलवन्तराय जी के मौलिक रचना-सङ्ग्रह 'भावरङ्ग-लहरी' में वर्ण्य-विषय की विविधता के बारे में उनके गुरुजी पं० ओम्कारनाथ ठाकुर ने लिखा है कि '.......... इस सङ्ग्रह में पदों के वर्ण्य विषय में जो विविधता आ गई है वह विशेषरूप से प्रशंसनीय है और अन्यत्र दुष्प्राप्य है।[६०]

पं० बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग' जी के रचनाकार स्वरूप की विलक्षणता एक लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार एवं मराठी भाषा के सशक्त नाटककार श्री. पु.ल. देशपाण्डे के उद्‌गारों में व्यक्त होती है – 'अविश्वसनीय! यह एक सङ्गीतकार की साहित्यिक दृष्टि है या साहित्यकार की साङ्गीतिक सृष्टि!! उस पर कमाल यह कि रचनाकार नेत्रहीन है !!!'[६१]

सन्दर्भ-सूची

१. आत्मदर्शन, पृ० ५
२. वही, पृ० ५
३. मिरज से उत्तर की ओर प्रस्थान, गायनाचार्य पं० विष्णु दिगम्बर, बी०आर० देवधर पृ० १०, ११।
४. क्रमिक पुस्तक मालिका भाग ६, वि० ना० भातखण्डे, पृ० ४३६।
५. बन्दिश के शब्द बापूजी से मौखिक चर्चा के समय प्राप्त।
६. सङ्गीताञ्जलि, भाग-६, ओम्कारनाथ ठाकुर, पृ० ६०।
७. औरंगजेब का सङ्गीत प्रेम, संगीत चिन्तामणि, बृहस्पति पृ० सं० २९२।
८. राग-विज्ञान, प्रथम भाग, वि०ना० पटवर्धन, पृ० सं० ३१, सङ्गीत गौरव ग्रन्थमाला १९६२।
९. औरंगजेब का सङ्गीत प्रेम, संगीत चिन्तामणि, बृहस्पति पृ० सं० २९२।
१०. वैष्णव मन्दिरों में भगवान (कृष्ण) को प्रातः काल जगाने से लेकर रात्रि में शयनपर्यन्त अर्थात् मङ्गलारती से शयनारती तक प्रत्येक अवसर पर सङ्गीत द्वारा सेवा की परम्परा रही है जो हवेली सङ्गीत में सुरक्षित है। इसमें प्रत्येक अवसर पर गाये जाने वाले पद अलग होते हैं।
११. सङ्गीत शिक्षण में सम्वेदना और स्वाध्याय, प्रेमलता शर्मा, प्रेम रसायन और सङ्गीत मीमांसा, सम्पा० उर्मिला शर्मा पृ० १२।
१२. बाल्यकाल एवं शिक्षा, गायनाचार्य पं० विष्णु दिगम्बर, बी०आर० देवधर, पृ० ४।
१३. बन्दिश के बोल मौखिक चर्चा के समय बापूजी से प्राप्त (इसी बन्दिश के बोल पं० वि० ना० पटवर्धन की पुस्तक राग-विज्ञान, भाग-१, पृ० १६६में काफी भिन्न है।)
१४. राग-विज्ञान, पञ्चम भाग, वि० ना० पटवर्धन, पृ० ४०।
१५. सङ्गीताञ्जलि, चतुर्थ भाग-प्रथम संस्करण, ओम्कारनाथ ठाकुर, पृ० सं० १२९।
१६. क्रमिक पुस्तक मालिका, भाग-४, वि०ना० भातखण्डे पृ० सं० ८२।
१७. बन्दिश के बोल बापूजी से मौखिक चर्चा के समय प्राप्त।
१८. बन्दिश के बोल बापूजी से मौखिक चर्चा के समय प्राप्त।
१९. बन्दिश के बोल बापूजी से मौखिक चर्चा के समय प्राप्त।
२०. राग-विज्ञान, भाग-३, वि०ना० पटवर्धन, पृ० सं० ९६।
२१. डी०वी० पलुस्कर HMV STC ०४८ ७३४०.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२२. क्रमिक पुस्तक मालिका भाग-६, वि०ना० भातखण्डे, पृ० सं० ८२।
२३. सङ्गीत रत्नाकर, प्रथम खण्ड, १/३/२५ व्याख्या और अनुवाद, सुभद्रा चौधरी, पृ०सं० ७२।
२४. भारतीय सङ्गीत में शोध की आवश्यकता और क्षेत्र, प्रेमलता शर्मा, प्रेम रसायन और सङ्गीत मीमांसा, सम्पा० उर्मिला शर्मा, पृ०सं० ५।
२५. भारतीय सङ्गीत में शोध की आवश्यकता और क्षेत्र, प्रेमलता शर्मा, प्रेम रसायन और सङ्गीत मीमांसा, सम्पा० उर्मिला शर्मा, पृ०सं० ५
२६. सङ्गीताञ्जलि, चतुर्थ भाग, प्रथम संस्करण, ओम्कारनाथ ठाकुर, पृ० सं० १२४।
२७. क्रमिक पुस्तक मालिका, चौथी पुस्तक वि० ना० भातखण्डे, पृ०सं० ४५५।
२८. बापूजी से मौखिक चर्चा से प्राप्त जानकारी।
२९. प्राक्कथन, ओम्कारनाथ ठाकुर, भावरङ्ग-लहरी-भाग-१, पृ० ५।
३०. सङ्गीत मानस हंस (परम पूज्य गुरुदेव पं० बलवन्तराय भट्ट "भावरङ्ग") चित्तरंजन ज्योतिषी, अमृत महोत्सव (स्मारिका) पृ० ७६।
३१. Nandikeshwara's Abhinaya Darpana, M. Ghosh, Third edition, sloka no 15, p. 78, 1981
३२. दशरूपकम्, प्रथम प्रकाश, तृतीय संशोधित संस्करण, सम्पा. श्रीनिवास शास्त्री, श्लोक सं० ९, पृ० १०
३३. Sangit Ratnakara of Sarangdeva, नर्तनाध्यायः, श्लोक सं. २४, पृ० १२ ed. S. Subrahmanya Shastri
३४. Nandikeshwara's Abhinaya Darpava, M. Ghosh, Third edition, Sloka no 16, P. 78, 1981
३५. दशरूपकम्, प्रथम प्रकाश, तृतीय संशोधित संस्करण, तृतीय संशोधित संस्करण, सम्पा. श्रीनिवास शास्त्री, श्लोक सं. ९, पृ० १०
३६. Sangit Ratnakara of Sarangdeva, सप्तमो नर्तनाध्याय, ed. S. Subrahmanya Shastri, श्लोक सं. २६, पृ० ११,
३७. भावरङ्गलहरी, भाग-दो, बलवन्तराय भट्ट, पृ० ३१६, १९७४
३८. वही, भाग-१, पृ० १८८, १९६४
३९. आत्मदर्शन, सम्पा. स्वरवन्दना शर्मा, पृ० ३२, २००५
४०. भावरङ्गलहरी, भाग-दो, बलवन्तराय भट्ट, पृ० १११, १९७४
४१. वही, पृ० १९९।
४२. वही, पृ० २००।
४३. वही, भाग-१, पृ० १०६, १९६४।
४४. वही, पृ. १४३।
४५. वही, भाग-३, पृ. १०२।
४६. वही, भाग-२, पृ. २८८।
४७. वही, भाग-१, पृ. ५३।
४८. वही, भाग-२, पृ. २३६।
४९. वही, पृ. २३०।
५०. वही, भाग-१, पृ. ६५।
५१. वही, भाग-३, पृ. ४८।
५२. वही, पृ.६०।
५३. वही, भाग-२, पृ. १७१।
५४. वही, भाग-३, पृ. २८७।
५५. वही, भाग-२, पृ. २६५।
५६. वही, भाग-१, पृ. ६।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५७. वही, पृ. १३८।

५८. वही, भाग-३, पृ. ८९।

५९. भारतीय सङ्गीत में 'वाग्गेयकार की भूमिका : तदनुसार 'भावरङ्ग' के कार्य का आकलन', प्रेमलता शर्मा, *अमृत महोत्सव (स्मारिका)*, पृ० ५८।

६०. प्राक्कथन पं० ओम्कारनाथ ठाकुर, भावरङ्ग-लहरी-भाग-१ पृष्ठ सं० ५।

६१. पुणे में आयोजित एक सङ्गीत प्रधान परिसम्वाद में प्रख्यात गायिका श्रीमती वीणा सहस्रबुद्धे द्वारा सोदाहरण व्याख्यान में प्रस्तुत भट्टजी की रचनाएँ 'गोपिका चली सुरन बन, "भावमूर्ति आनन्द श्यामघन, 'अनहद बाजे री सखि' तथा 'चन्द्र की चाँदनी' आदि सुनकर सत्राध्यक्ष के रूप में श्री पु.ल.देशपाण्डे के वक्तव्य का अंश।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पं. बलवन्तराय भट्ट के जीवन की झलकियाँ चित्रों के माध्यम से

- बलवन्तराय जी की वंश परम्परा
- उत्कर्ष के निमित्त
- विद्यालय की गतिविधियों में बलवन्तराय की भागीदारी
- 'सङ्गीताचार्य' श्री बलवन्तराय भट्ट
- विवाह-पूर्व : अनुजों तथा मित्रों के साथ
- विवाह
- विवाहोपरान्त
- परिवार, बच्चों के साथ
- अलग-अलग मुद्राओं में
- तानपूरे के साथ
- स्नेही-स्वजन, मित्र-परिवार एवं विद्यार्थियों के साथ
- कार्यक्रम
- अमरीका प्रवास
- सम्मान
- गुरुवर पं. ओम्कारनाथ ठाकुर के साथ
- विशिष्ट अवसर
- श्री कला सङ्गीत भारती (समूह फोटो)
- युवावस्था से ९० वर्ष की अवस्था तक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बलवन्तराय जी की वंश-परम्परा

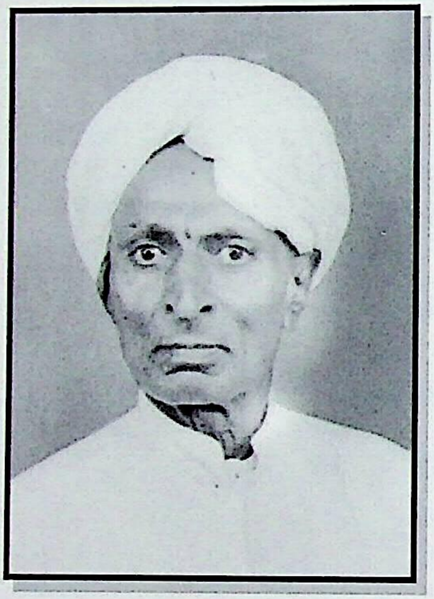

स्व० श्री पुरुषोत्तम भट्ट (पितामह)

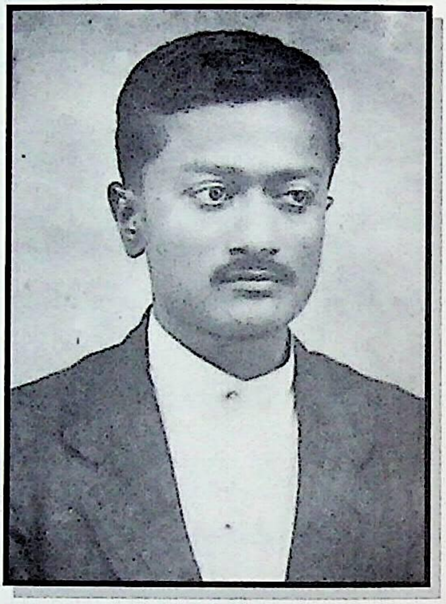

स्व० श्री गुलाबराय भट्ट (पिता)

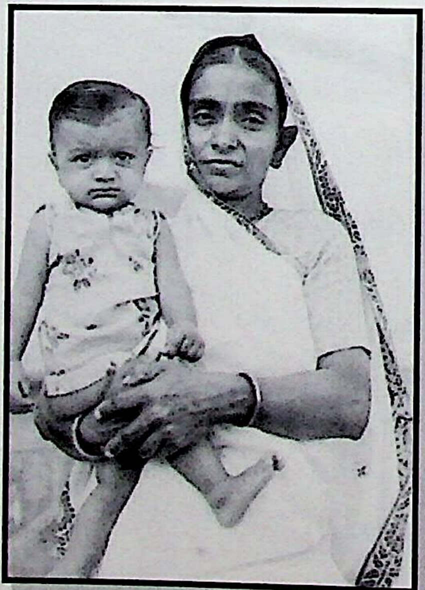

स्व० सौ० हरकुँवर भट्ट (माता)
गोद में बलवन्तराय जी के छोटे भाई ललित कुमार

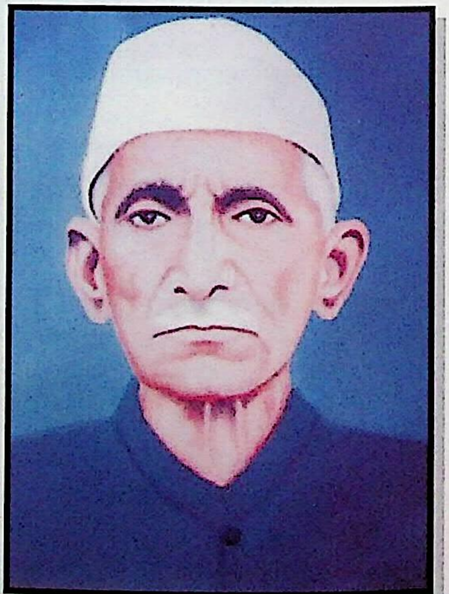

स्व० श्री देवशंङ्कर जेठालाल पण्ड्या (मामा)
जिन्होंने चेचक के प्रकोपवश नेत्रज्योति
से वञ्चित हुए अपने अबोध भान्जे की
औपचारिक शिक्षा हेतु Victoria
Memorial School for the Blind की जानकारी दी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्कर्ष के निमित्त

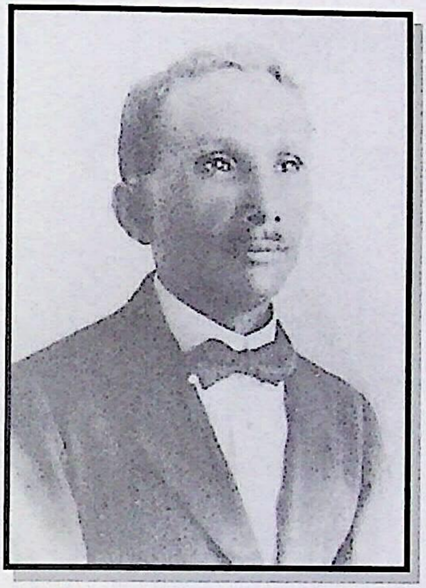

श्री रतनशा डी० भाभा

V.M. School for the Blind के मैनेजर,
जिनके सत् प्रयत्नों से ही बलवन्तराय जी,
पं० ओम्कारनाथ ठाकुर का शिष्यत्व प्राप्त कर सके।

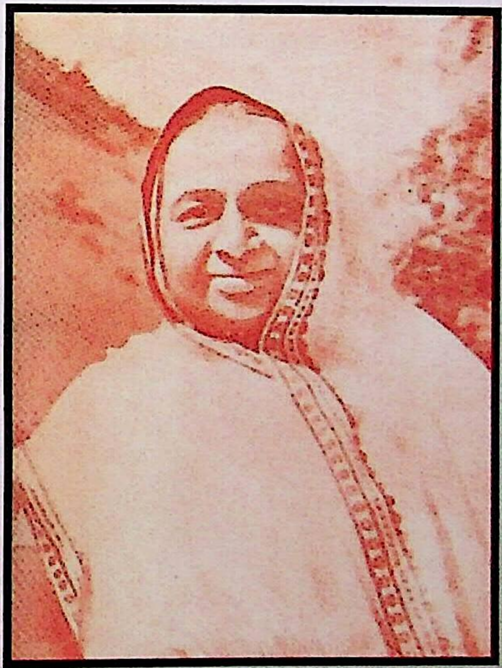

श्रीमती मञ्जुला बहन ना० दवे (दीदी माँ) गुरु जी की मानी हुई बहन, जिन्होंने 'सङ्गीत- निकेतन' में प्रवेश के दिन गुरुपूजा के उपरान्त नये विद्यार्थी बलवन्तराय के हाथ में प्रसाद देकर उसे अपने वात्सल्य की छाँव में ले लिया तथा आगे हमेशा ममतामयी माँ की तरह ध्यान रखा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विद्यालय की गतिविधियों में बलवन्तराय की भागीदारी

बलवन्तराय - तबला , वाडीलाल - दिलरुबा

बलवन्तराय - तबला, प्रभाकर कोलंबेकर - दिलरुबा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बलवन्त राय- तबला, फिरोज शा एवं एरच शा- वॉयलिन
वाडीलाल- दिलरुबा, नारायण दास कोठारी- हार्मोनियम

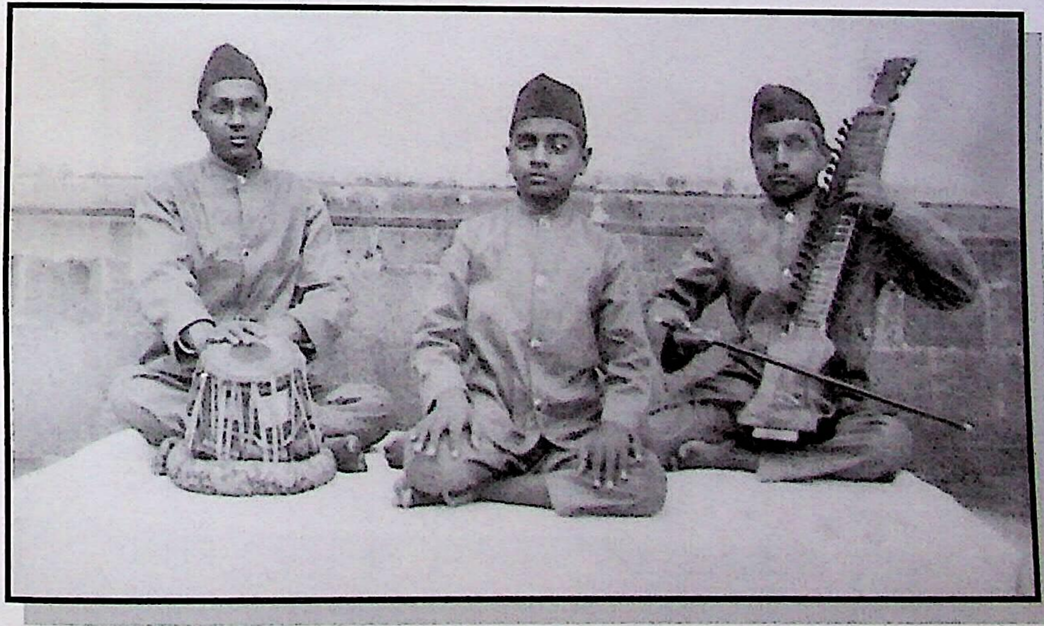

बलवन्त राय - गायन, मौजीराम - तबला, वाडीलाल- दिलरुबा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'सङ्गीताचार्य'

पण्डित जी के विद्यालय 'सङ्गीत-निकेतन' में १२ वर्षों के कठिन पाठ्यक्रम को पूरा करके बलवन्तराय ने भाभा साहब के विश्वास की रक्षा की। पण्डित जी ने भी पदवीदान समारोह में सभागार में मञ्च से स्वीकार किया कि आज भाभा साहब जीते,ओम्कारनाथ हारा है।

दिनाङ्क २८ मई १९५०, सूरत

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सङ्गीताचार्य का प्रमाण - पत्र

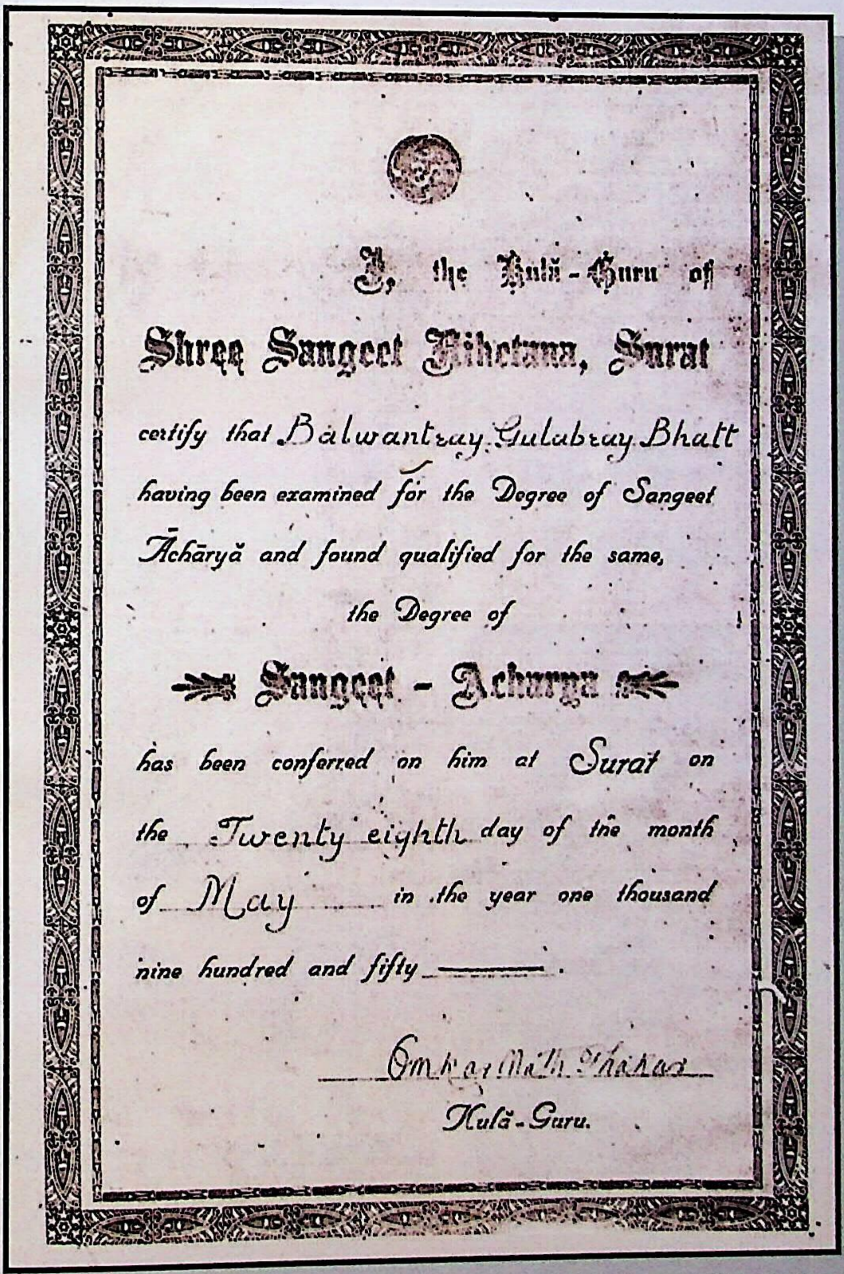

I, the Kulā-Guru of

Shree Sangeet Niketana, Surat

certify that Balwantray Gulabray Bhatt

having been examined for the Degree of Sangeet

Āchāryă and found qualified for the same,

the Degree of

Sangeet - Acharya

has been conferred on him at Surat on

the Twenty eighth day of the month

of May in the year one thousand

nine hundred and fifty ______.

Omkarnath Thakur

Kulā-Guru.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

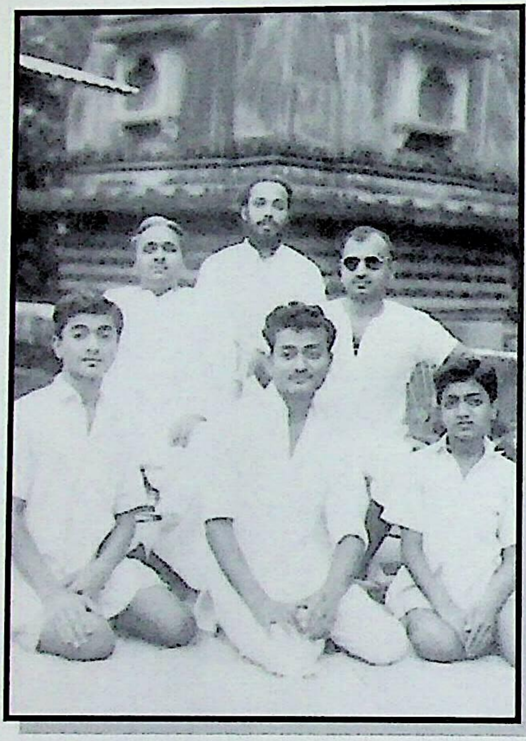

सूर्यकुण्ड, कुरुक्षेत्र में विवाह पूर्व छोटे भाईयों तथा मित्रों के साथ

नीचे बैठे बाँए से दाहिने – ललित कुमार, ऋषिकुमार तथा राजेन्द्र (छोटे भाई)
पीछे बैठे बाँए से दाहिने – कनक राय त्रिवेदी (बंबई की स्कूल के साथी) नागप्पा पै तथा बलवन्त राय

२८ जनवरी सन् १९५५ (वसन्त पञ्चमी)

कन्यादान करते हुए डॉ० एस०एस०जोशी (प्रिंसिपल, साईंस कॉलेज, वसुन्धरा जी के मौसाजी)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विद्यापुत्र बलवन्त के विवाहोपलक्ष्य में गुरुजी की ओर से दिए हुए प्रीतिभोज का निमन्त्रण-पत्र

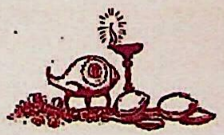

सूचना—भोजन व्यवस्था भारतीय होगी।

॥ॐ॥

परम कृपालु परमात्मा की असीम अनुकम्पा से मेरे विद्यापुत्र गायनाचार्य श्री बलवंतराय भट्ट (प्राध्यापक श्री कला संगीत भारती, काशी विश्वविद्यालय) का शुभविवाह श्री त्र्यंबक वामन तलवलकर (सिरेमिक्स इंजीनियर, जमशेदपुर) की सुपुत्री अखण्ड सौभाग्यवती वसुन्धरा बी० ए० के साथ बसंत पंचमी के मंगल दिन को संपन्न हुआ था। उसके उपलक्ष्य में मेरी ओर से रविवार दिनांक ६ फरवरी, १९५५ को दोपहर १ बजे मेरे निवासस्थान पर प्रीति-भोज का आयोजन किया गया है। आप की उपस्थिति प्रार्थनीय है।

कृपया स्वीकृति या अस्वीकृति निम्नोक्त पते पर भेजने की कृपा करें।

काशी विश्वविद्यालय,
बनारस—५

भवदीय,
ओम्कारनाथ ठाकुर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विद्यापुत्र के विवाह का उत्सव

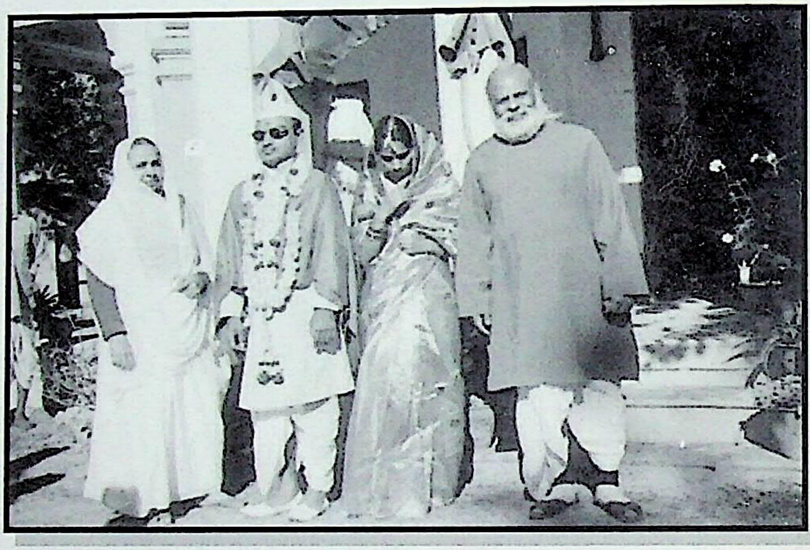

बाँए से दाहिने–पू.दीदी माँ, बलवन्तराय, सौ० वसुन्धरा एवं गुरुजी

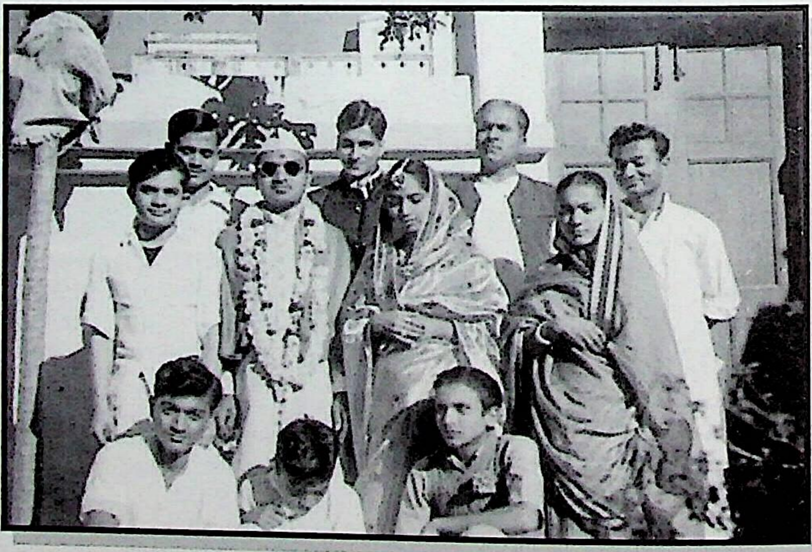

नीचे बैठे हुए बाँए से दाहिने – ललित कुमार तथा राजेन्द्र (छोटे भाई) चित्तरंजन ज्योतिषी (विद्यार्थी)
खड़े बाँए से दाहिने – प्रदीप कुमार दीक्षित (भाँजे तथा विद्यार्थी) श्री बलवन्त राय, सौ० वसुन्धरा तथा भानुमती (बलवन्तराय जी की सबसे छोटी बहन)
पीछे खड़े बाँए से दाहिने – सीतापति शुक्ल, गोपीकृष्ण नागर (विद्यार्थी)कनकराय त्रिवेदी (गुरुभाई) ऋषि कुमार (छोटे भाई)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री बलवन्तराय भट्ट एवं सौ० वसुन्धरा भट्ट

(१९५५)

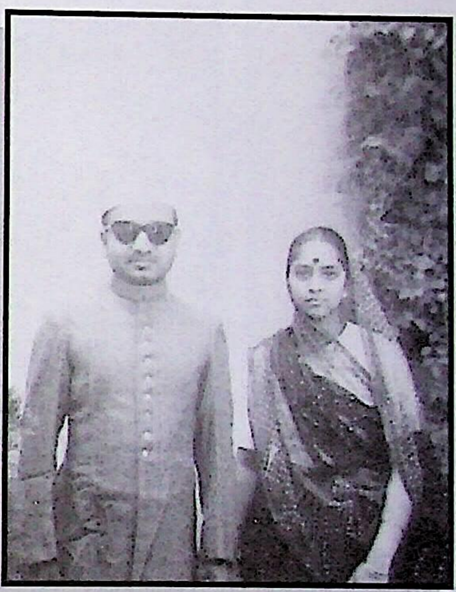

(१९५६)

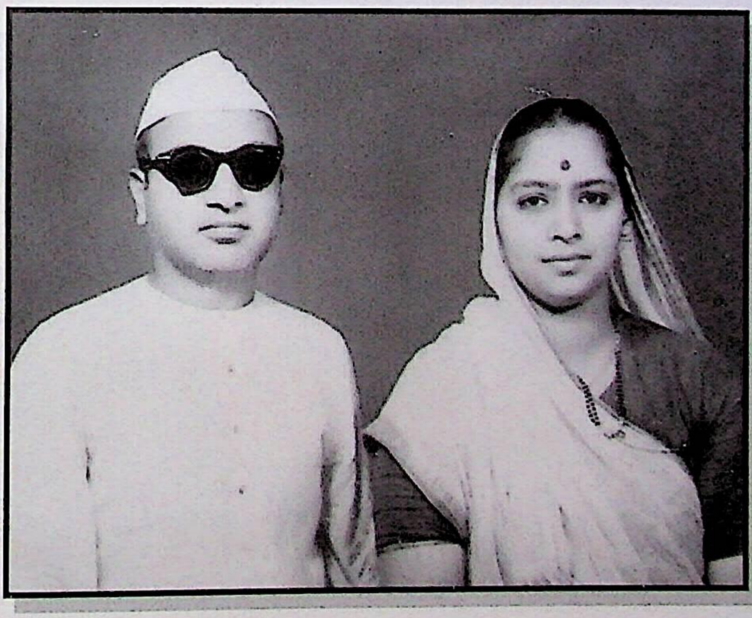

(१९६२)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

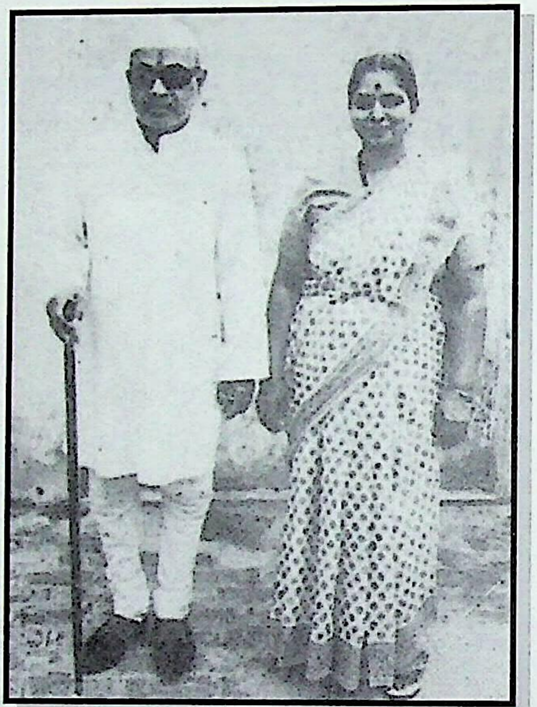

परिवार(बच्चों के साथ)
(का.हि.वि.वि. स्थित आवास न्यू जी /१९, अरविन्द कॉलोनी में)

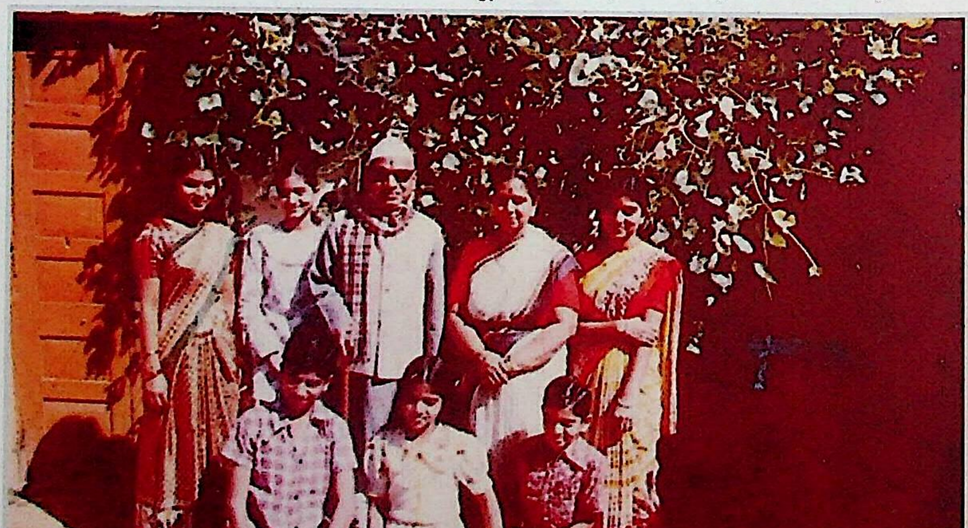

नीचे बैठे बाँए से दाहिने -राहुल, भैरवी, विभास
पीछे खड़े बाँए से दाहिने - गीतसुधा, लयलीना, बापूजी, माँ, स्वरवन्दना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राहुल एवं विभास के यज्ञोपवीत के अवसर पर (गाँधीनगर, गुजरात, १९७७)

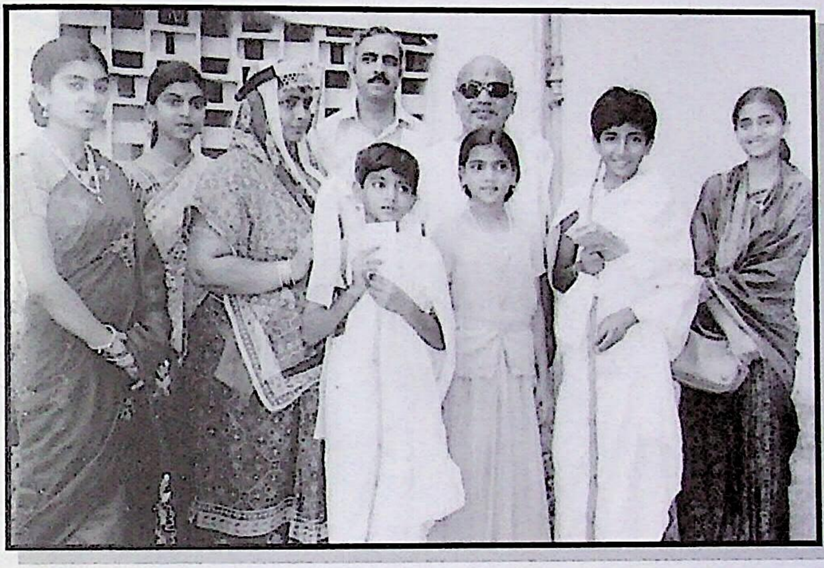

सामने बाँए से दाहिने- विभास (बटु) भैरवी, राहुल (बटु) लयलीना

पीछे बाँए से दाहिने - स्वरवन्दना, गीतसुधा, माँ, श्री उदय तळवलकर(मामा) तथा बापूजी

राहुल तथा विभास के यज्ञोपवीत के अवसर पर अपने सभी भाइयों के साथ

सामने खड़े बाँए से दाहिने- राजेन्द्र, ऋषिकुमार तथा ललित कुमार

पीछे खड़े- बड़े भाई नरहरि, बलवन्तराय तथा छोटे भाई भूपतराय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वसुन्धरा जी के माता-पिता की शादी की ५०वीं सालगिरह पर पूना में उनके पूरे परिवार के साथ (जून १९७९)

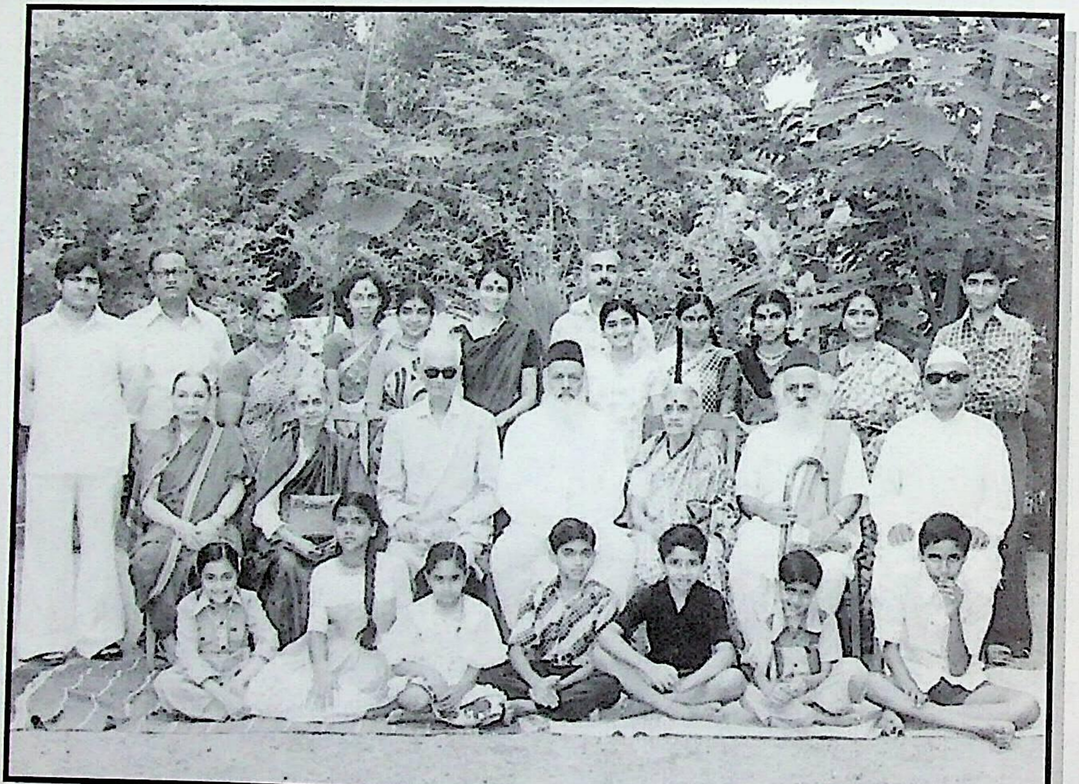

नीचे बैठे बाँए से दाहिने- उमा, भैरवी, सोनी, विभास, आशिष, राहुल, समीर
कुर्सी पर बाँए से दाहिने- श्रीमती लीला पटवर्धन (वसुन्धरा जी की बुआ) सौ० सोनतारा जोशी एवं डॉ. एस.एस.जोशी (वसुन्धरा जी की मौसी तथा मौसाजी) श्री त्र्यम्बक वामन तळवलकर तथा सौ. शान्ता तळवलकर (वसुन्धरा जी के पिता तथा माँ) श्री यशवन्त तळवलकर (वसुन्धरा जी के ताऊ) श्री बलवन्तराय जी
पीछे खड़े बाँए से दाहिने - शरद, श्री लक्ष्मण केशव गोरे तथा सौ० साधना गोरे (वसुन्धरा जी के बहनोई तथा बहन) सौ० मङ्गला परांजपे (वसुन्धरा जी की सबसे छोटी बहन) स्वरवन्दना सौ. अनुराधा तळवलकर तथा श्री उदय तळवलकर (वसुन्धरा जी की भाभी तथा भाई) लयलीना, कीर्ति, गीतसुधा, सौ. वसुन्धरा तथा राहुल भट्ट,
उमा तथा राहुल (उदय मामा के बच्चे)
शरद, कीर्ति तथा सोनी (साधना मौसी के बच्चे)
समीर तथा आशीष (मङ्गल मौसी के बच्चे)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

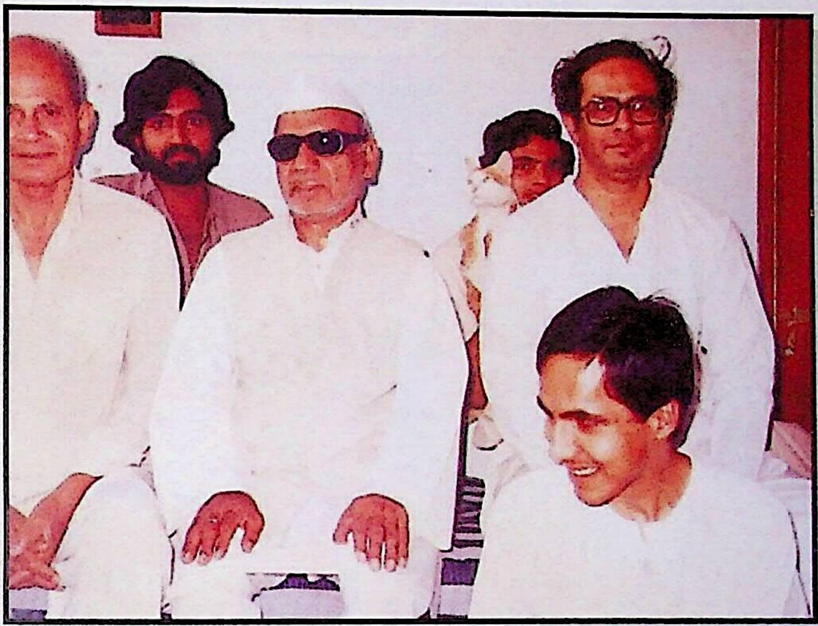

श्री दिगम्बर परांजपे, (मङ्गल मौसी के ससुर) राहुल भट्ट, श्री बलवन्तराय, आशीष, (पीछे)
श्री शिवाजी परांजपे (मङ्गल मौसी के पति) सामने बैठा समीर

ससुर तथा समधी के साथ

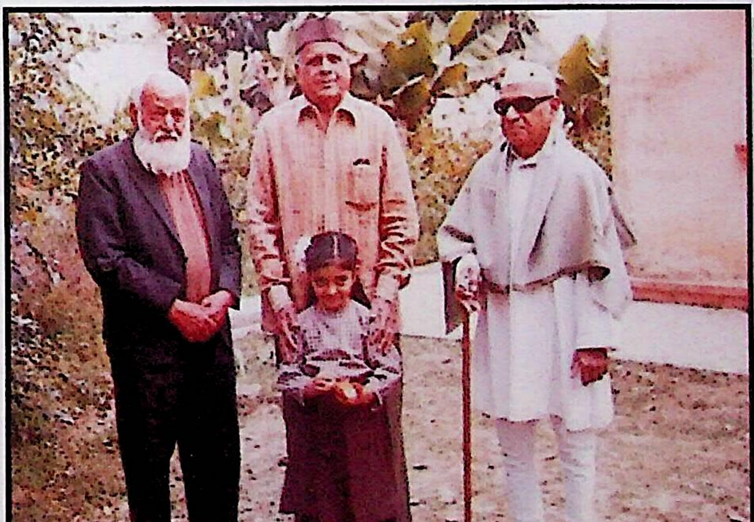

श्री त्र्यं.वा. तळवलकर, डॉ० यू०वी० भट (का.हि.वि.वि० के पूर्व परीक्षा नियन्ता तथा लेखिका के ससुर) पं. बलवन्तराय भट्ट तथा श्रुतिवन्दना (नतिनी)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रोहितनगर, नरिया स्थित वर्तमान आवास 'नादतनु' में

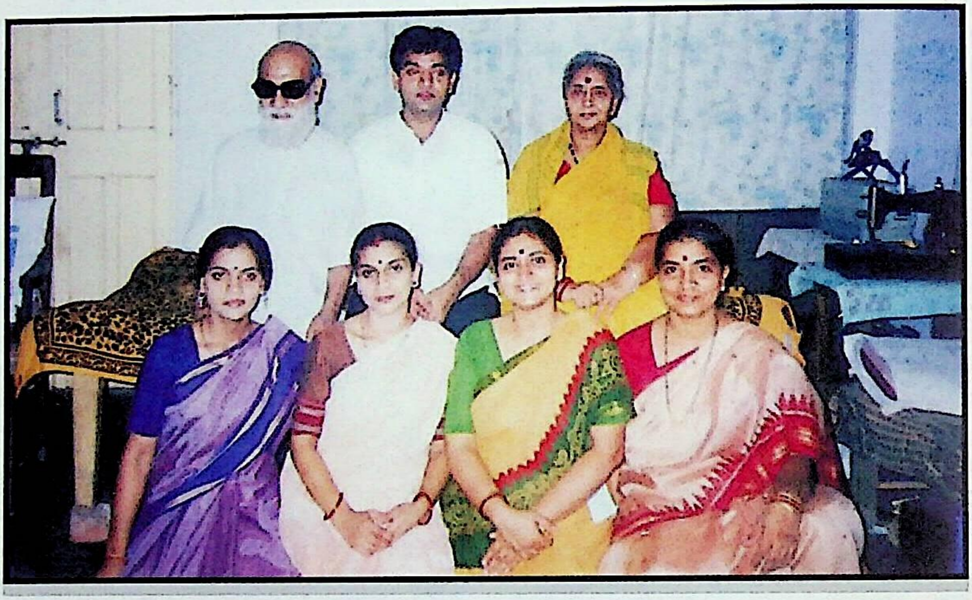

नीचे बैठे हुए बाँए से दाहिने- भैरवी, गीतसुधा, लयलीना, स्वरवन्दना,
पीछे बैठे हुए बाँए से दाहिने- बापूजी, विभास, सौ. माँ

पुत्र-पुत्रवधुओं एवं पौत्रियों के साथ

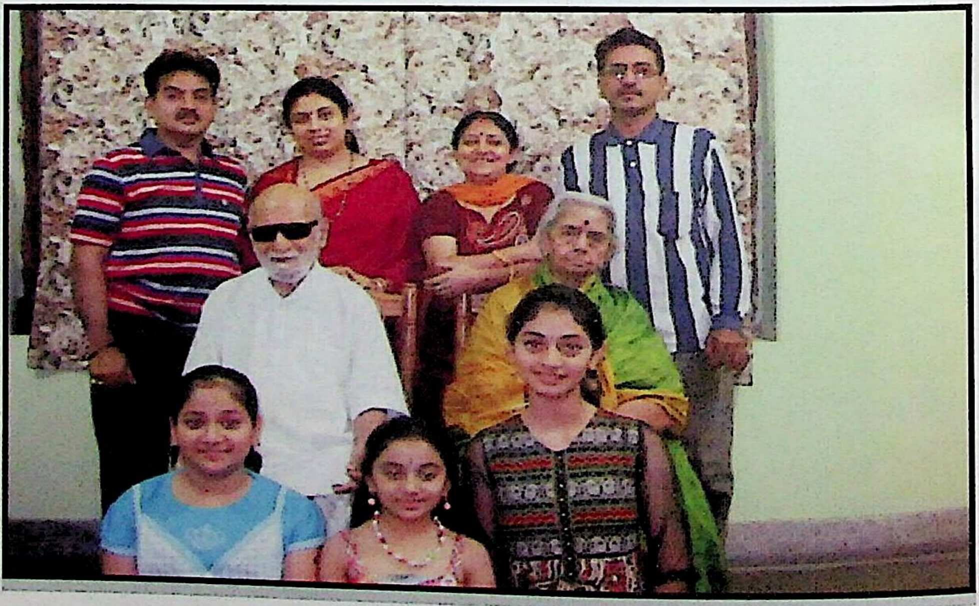

सामने बैठे हुए बाँए से दाहिने - अलङ्कृता, शताक्षी एवं चारुकेशी
कुर्सी पर बाँए से दाहिने- बापूजी तथा सौ. माँ
पीछे खड़े बाँए से दाहिने - विभास, सौ. श्वेता, सौ. इला तथा राहुल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ज्येष्ठ पुत्री स्वरवन्दना अपने परिवार के साथ

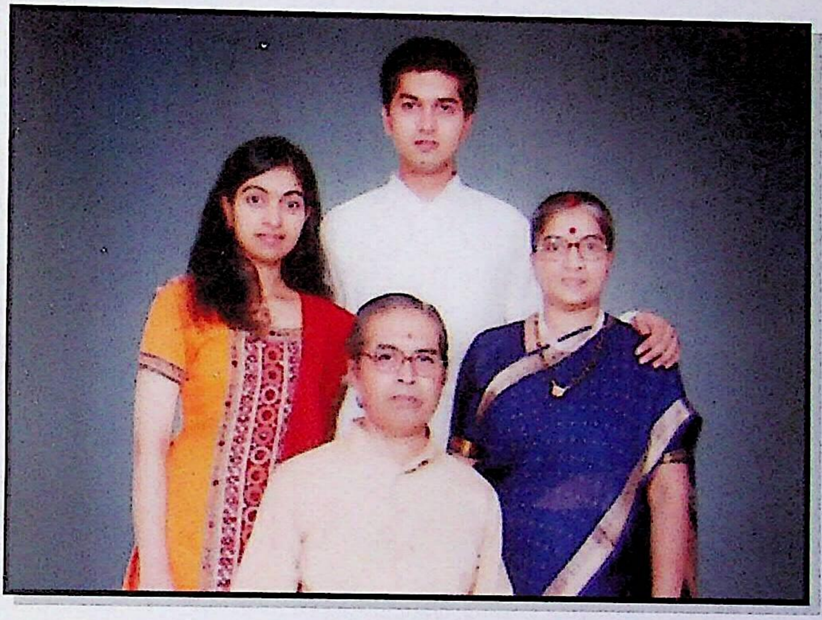

श्रुतिवन्दना, अभिनव, प्रो० कृष्णकान्त शर्मा, स्वरवन्दना

लयलीना (पुस्तक की लेखिका) अपने परिवार के साथ

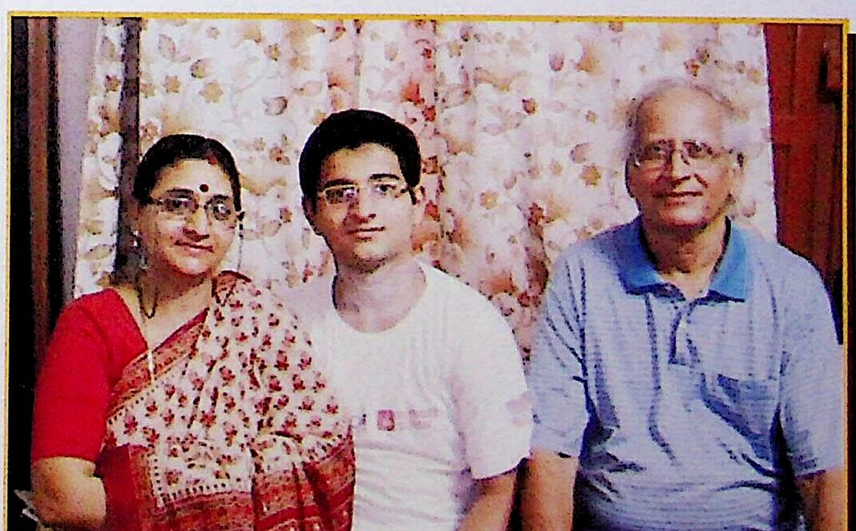

लयलीना, विनायक, प्रो० सुधाकर भट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गीतसुधा अपने परिवार के साथ

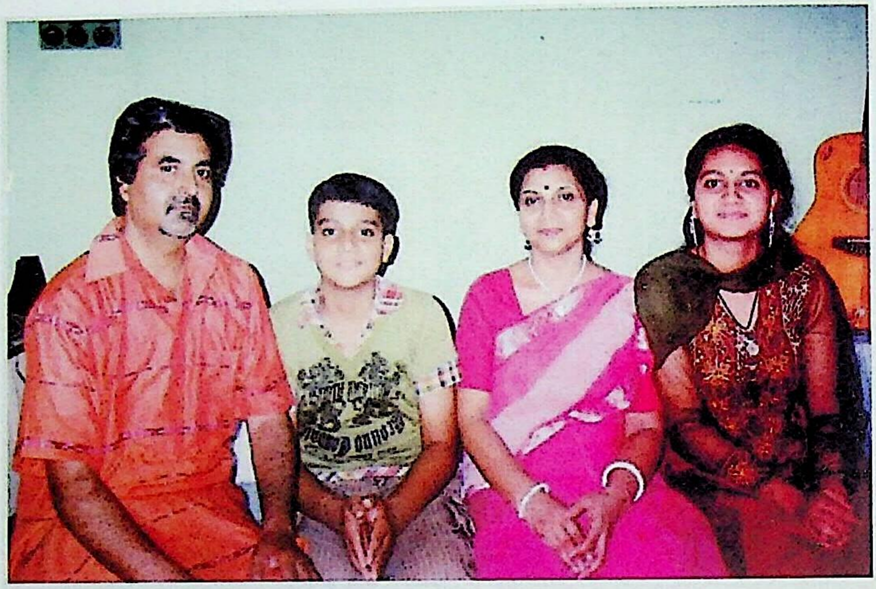

श्री सतीश पारीक, प्रथमेश, गीतसुधा, अक्षरा

सबसे छोटी बेटी भैरवी अपने परिवार के साथ

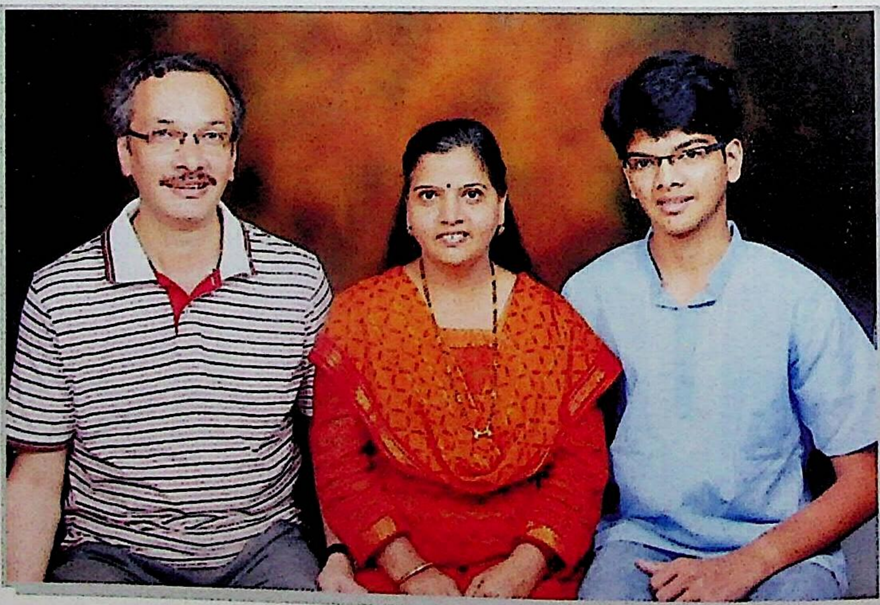

श्री अनिल चिपळूनकर, भैरवी तथा आलाप

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नानी बच्चों के साथ

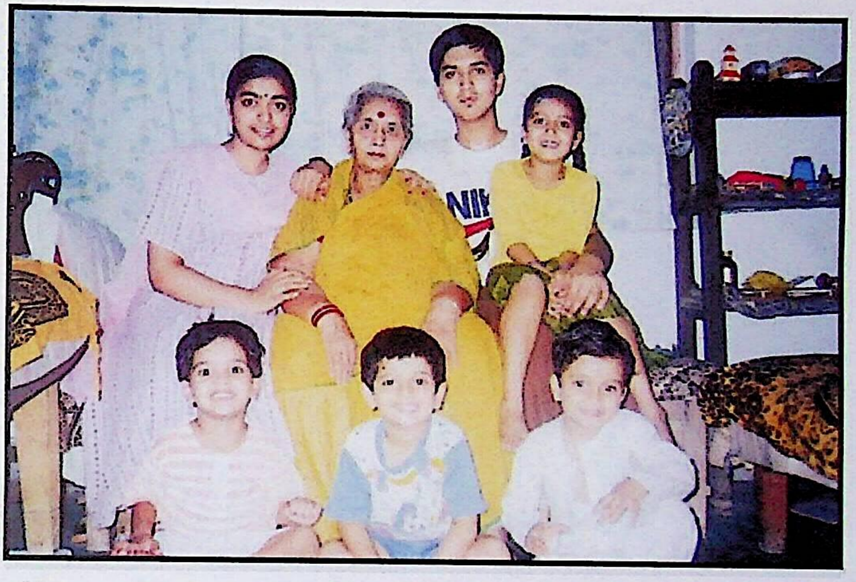

नीचे बैठे – आलाप, विनायक, प्रथमेश, पीछे बैठे – श्रुतिवन्दना, नानी, अभिनव, अक्षरा

नाना बच्चों को कसरत कराते हुए

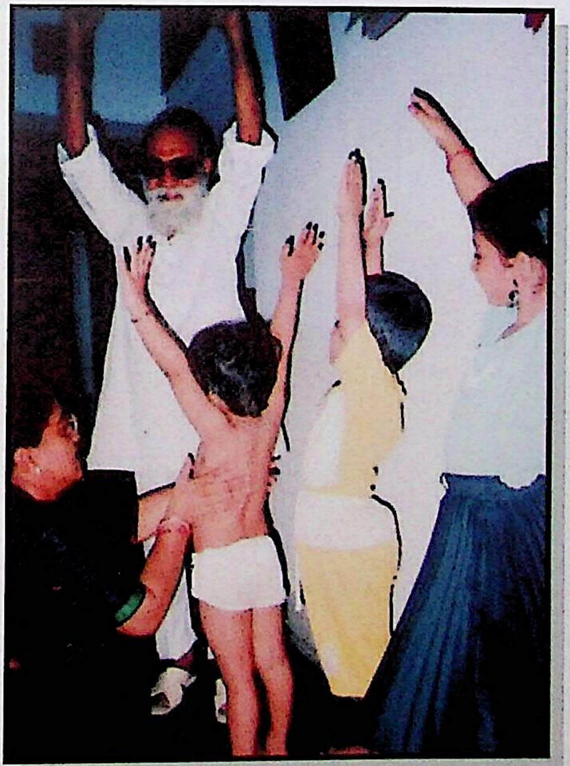

नाना, प्रथमेश, विनायक, अक्षरा,
साथ में स्वरवन्दना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सौ. श्रुतिवन्दना, नाना, अङ्कित, सौ. नानी, विनायक, श्री कृष्णकान्त शर्मा (ज्येष्ठ जामाता)
श्री सुधाकर भट (मध्यम जामाता) सौ० लयलीना एवं सौ० इला
पीछे-अलङ्कृता एवं चारुकेशी

नतिनी एवं नाती दामाद के साथ नाना-नानी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नाना की ९० वीं वर्षगाँठ पर उनके आवास 'नादतनु' में २३-९-२०११ उनकी उपस्थिति में उनकी रचनाओं पर नृत्य करती श्रुतिवन्दना

संयोग से नाना और नतिनी दोनों की जन्मतिथि एक है

हेरियट के साथ गुरुजी

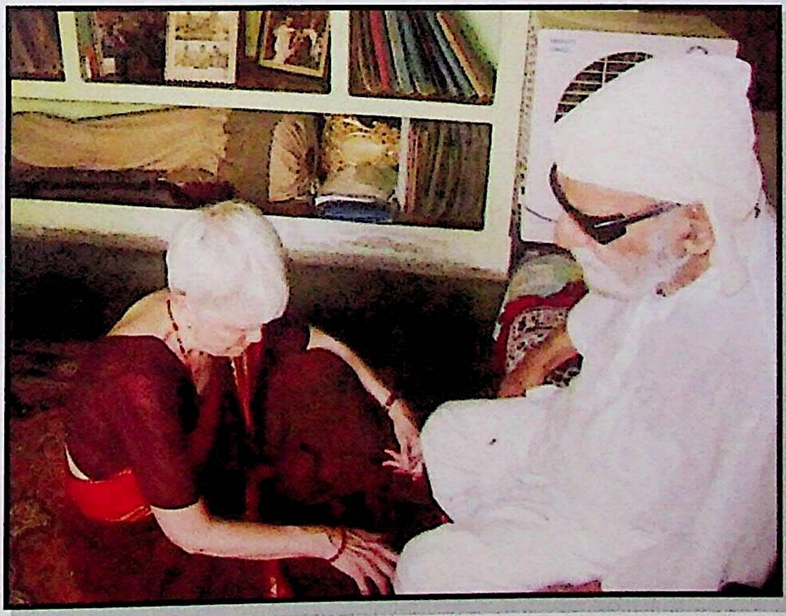

लगभग १३ वर्षों बाद हेरियट जी ३ जुलाई २०१२ को गुरुपूर्णिमा के अवसर पर 'गुरुजी' को मिलने बनारस पहुँच गईं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अलग - अलग मुद्राओं में

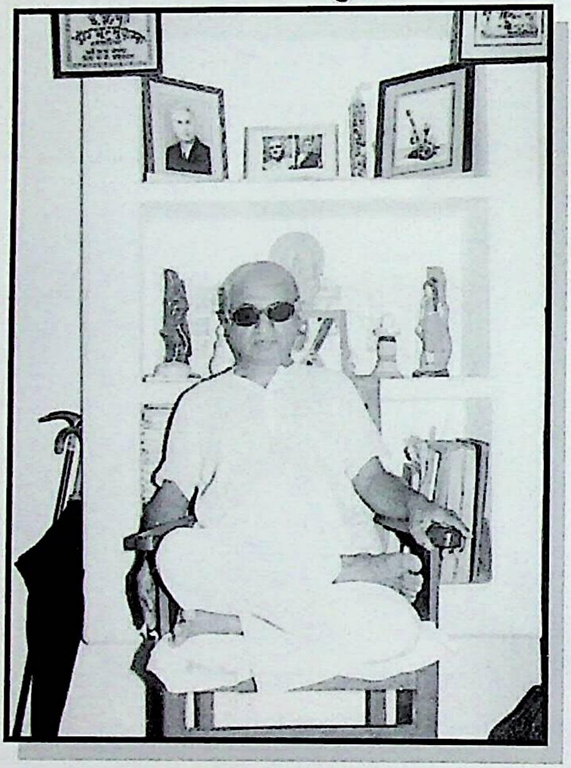

विचार मग्न

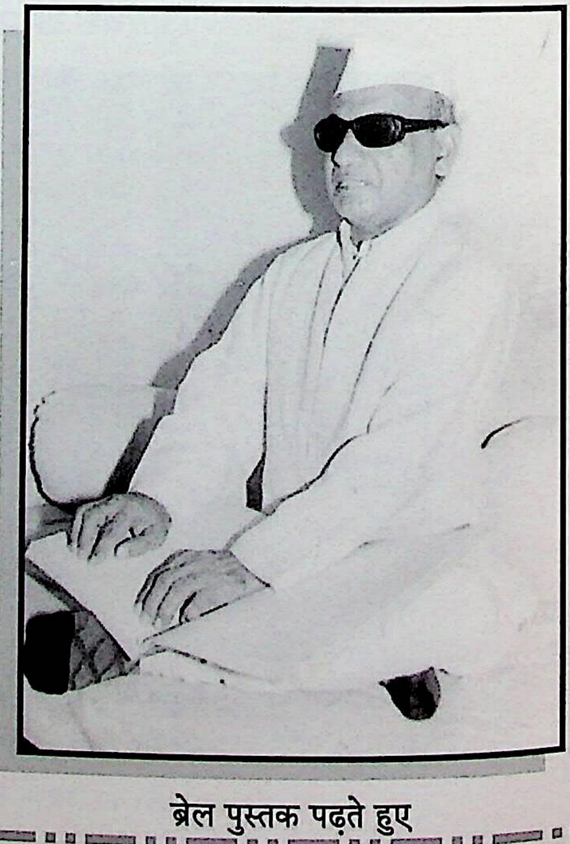

ब्रेल पुस्तक पढ़ते हुए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

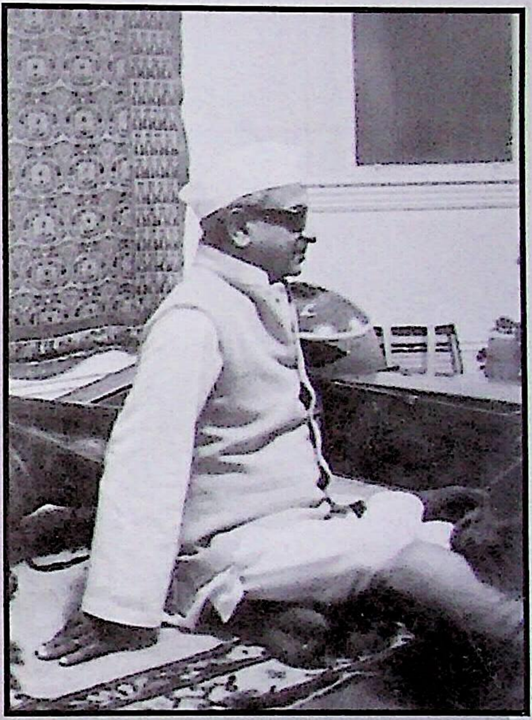

स्वाभाविक प्रसन्न मुद्रा में
(अमरीका प्रवास के दौरान)

कहीं जाने की तैयारी में
(गम्भीर मुद्रा)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

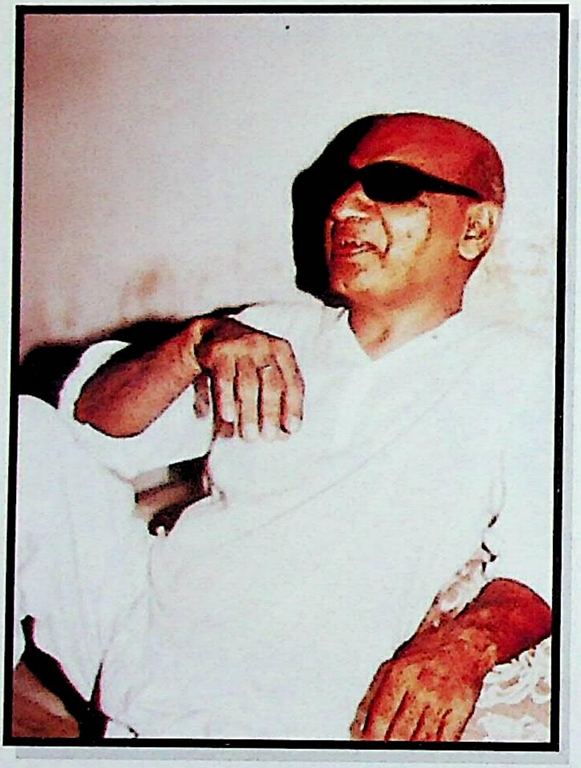

प्रसन्न मुद्रा में

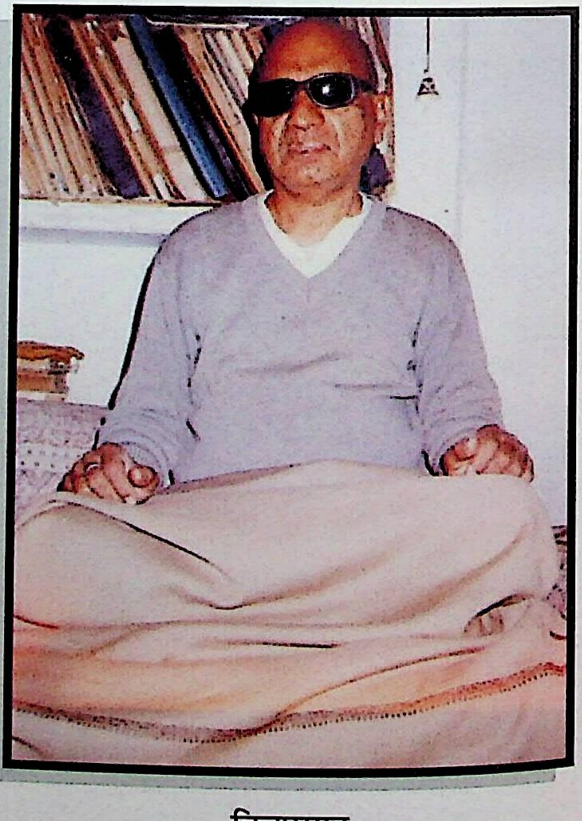

विचारमग्न

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

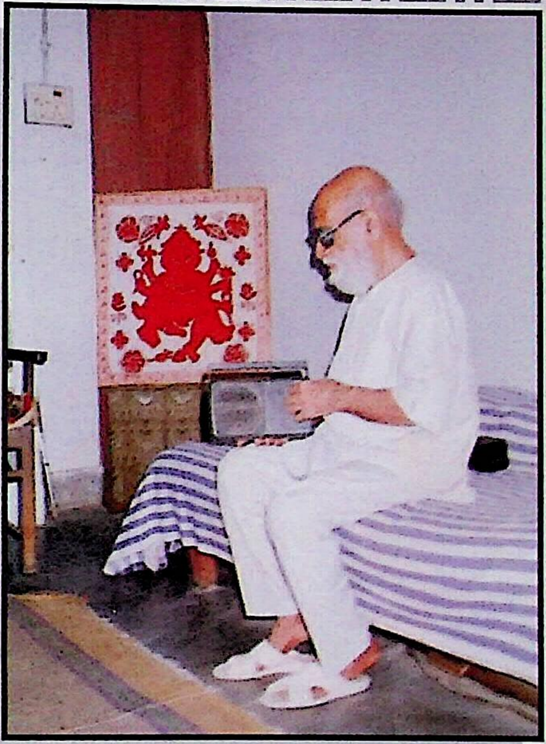

तानपूरे के साथ

ट्रांजिस्टर सुनते हुए

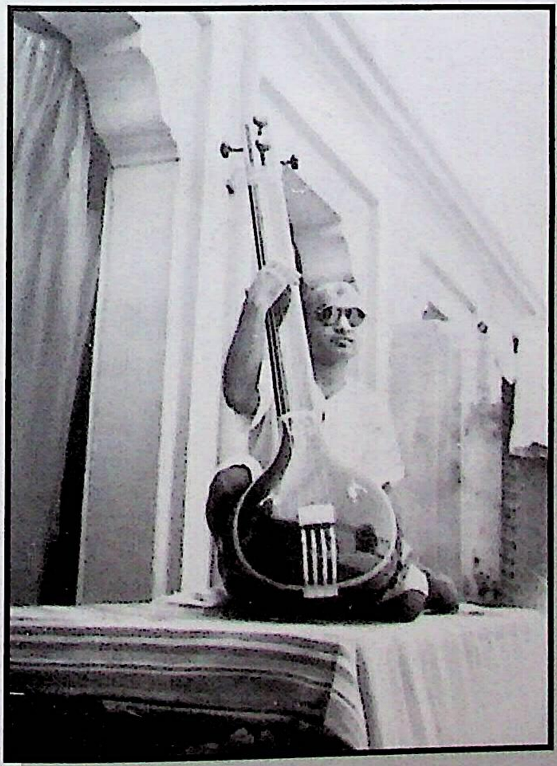

घर पर अभ्यास करते हुए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

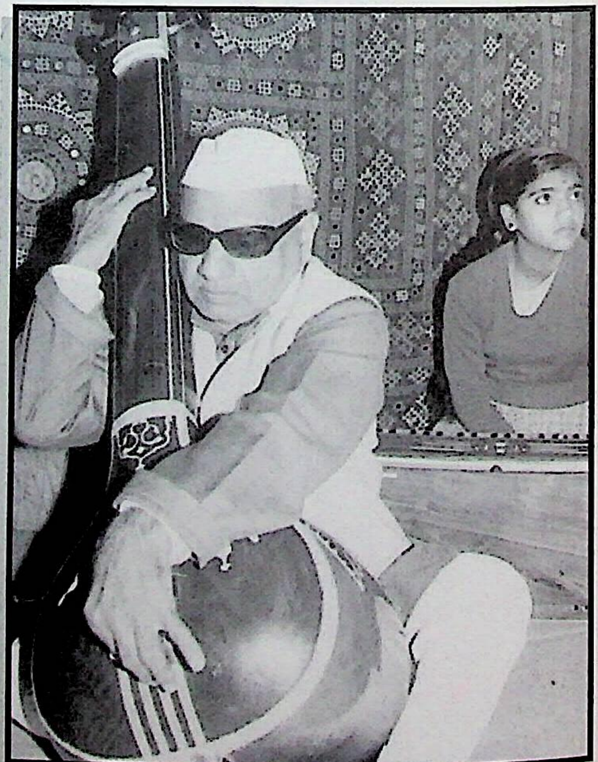

कार्यक्रम के पूर्व तानपूरा मिलाते हुए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अरविन्द कॉलोनी स्थित अपने आवास पर

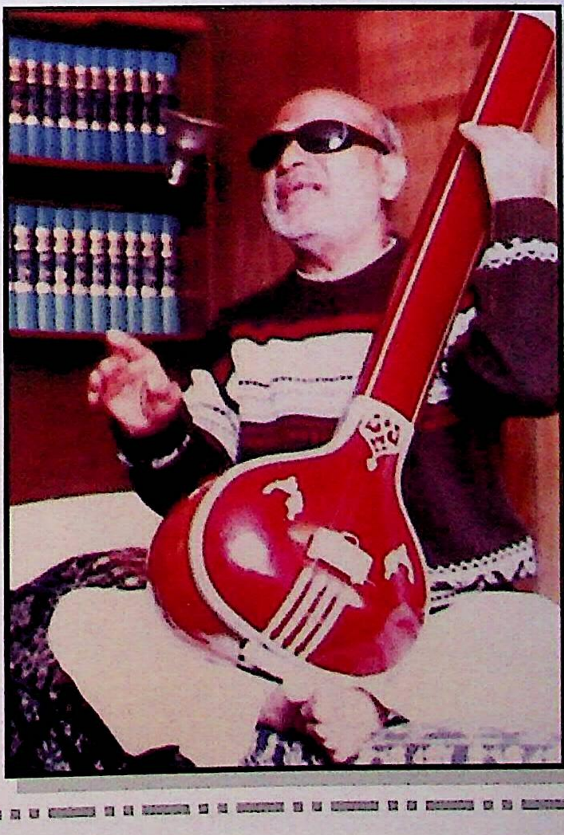

घर में अभ्यास (अमरीका)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्नेही, स्वजन, मित्र-परिवार एवं विद्यार्थियों के साथ

सूरत में ताप्ती नदी के तट पर अभ्यास (१९५० के पूर्व, सूरत)

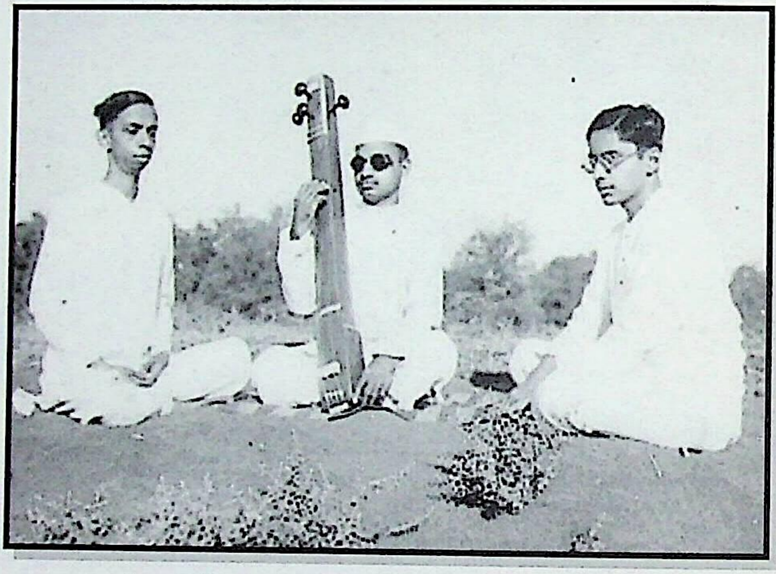

शशिकान्त पाठक एवं गजेन्द्र त्रिवेदी (दोनों विद्यार्थी) बीच में श्री बलवन्तराय (सुरसोटा के साथ)

हैदराबाद कॉलोनी के मकान में

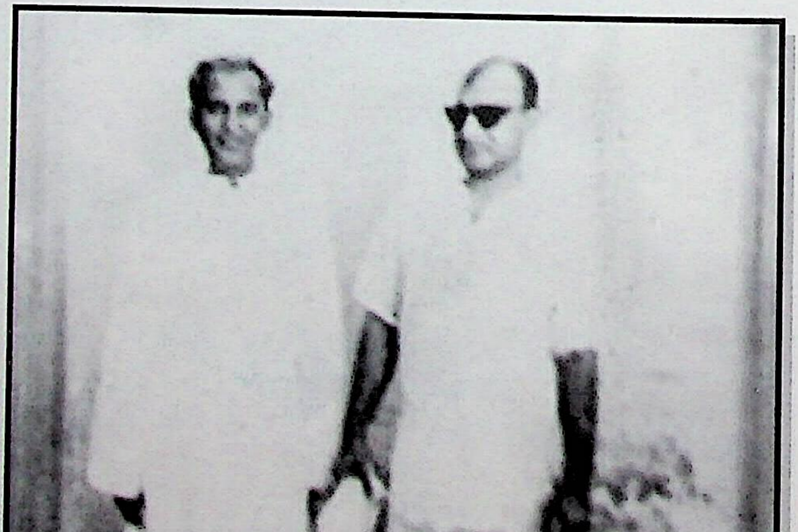

अनन्य मित्र पर्वतकर जी के साथ, जिनसे मिलने पर औपचारिक नमस्कार के स्थान पर 'तिऽट कऽत गऽदि गऽन धाऽऽ' बोलकर ही अभिवादन होता था

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ज्ञातिबंधु श्री जयकृष्ण हरिलाल भट्ट के यहाँ (बंबई, १९६०)

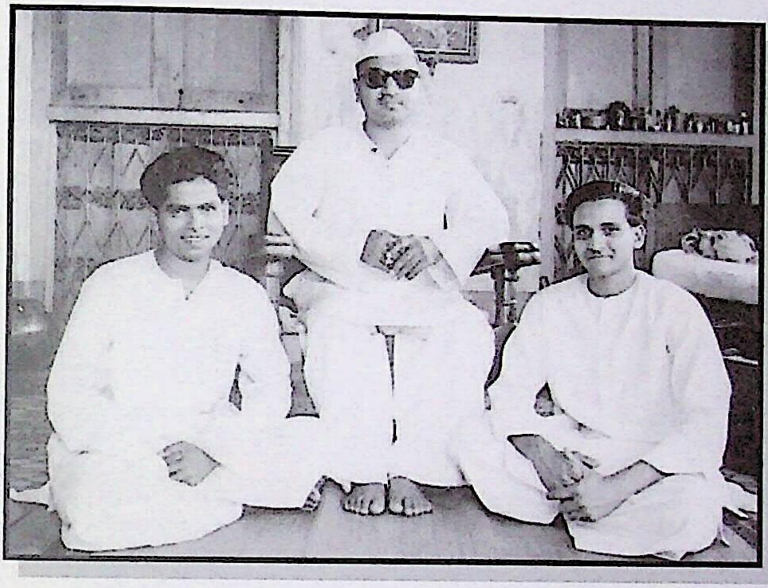

दामोदर होता एवं
चित्तरञ्जन ज्योतिषी
(दोनों विद्यार्थी)
बीच में 'गुरुजी'

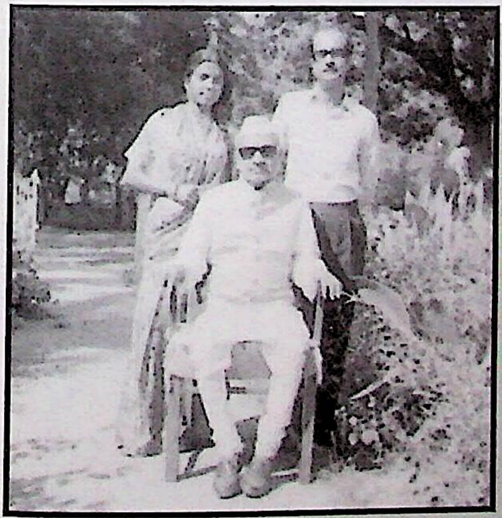

पुरानी विद्यार्थिनी श्रीमती प्रभा मुखर्जी एवं उनके पति श्री प्रियव्रत मुखर्जी के साथ 'गुरुजी'

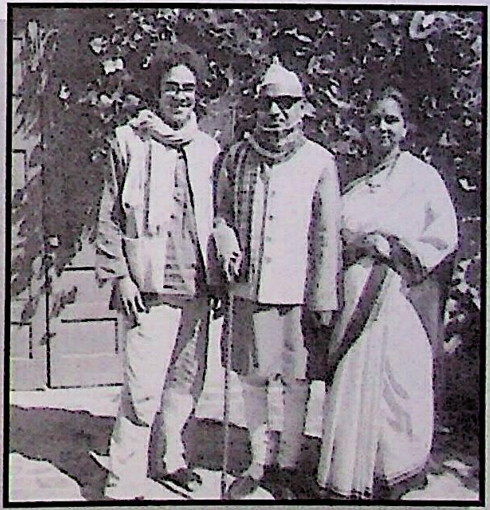

अमरीकन विद्यार्थी श्री डेनियल बिटकर (वंशीवादक) 'गुरुजी' एवं भाभी जी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वर्षों बाद बालसखा के साथ (१९७२)

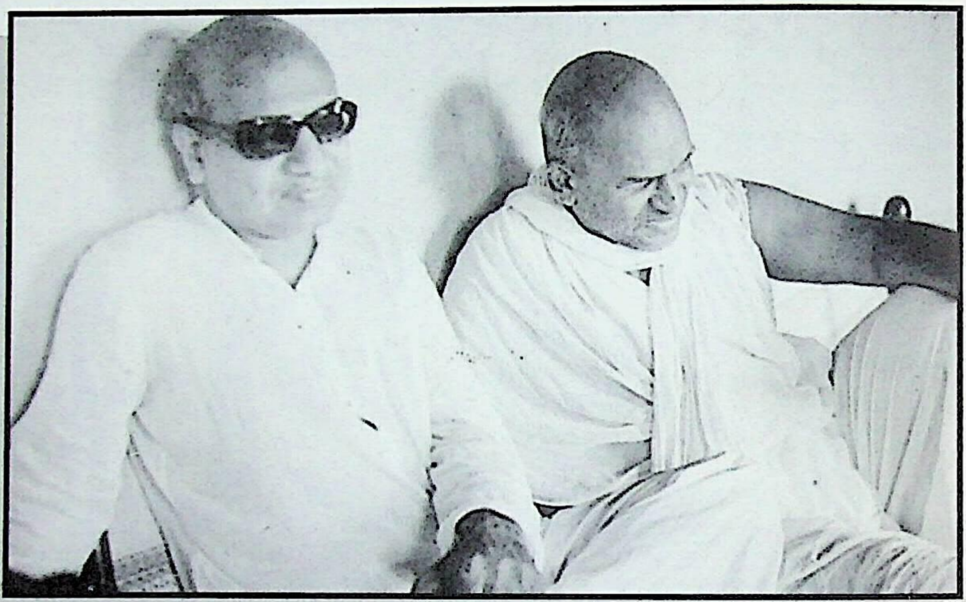

V.M. School for the Blind के अपने मित्र श्री शङ्कर भगत के साथ श्री बलवन्तराय

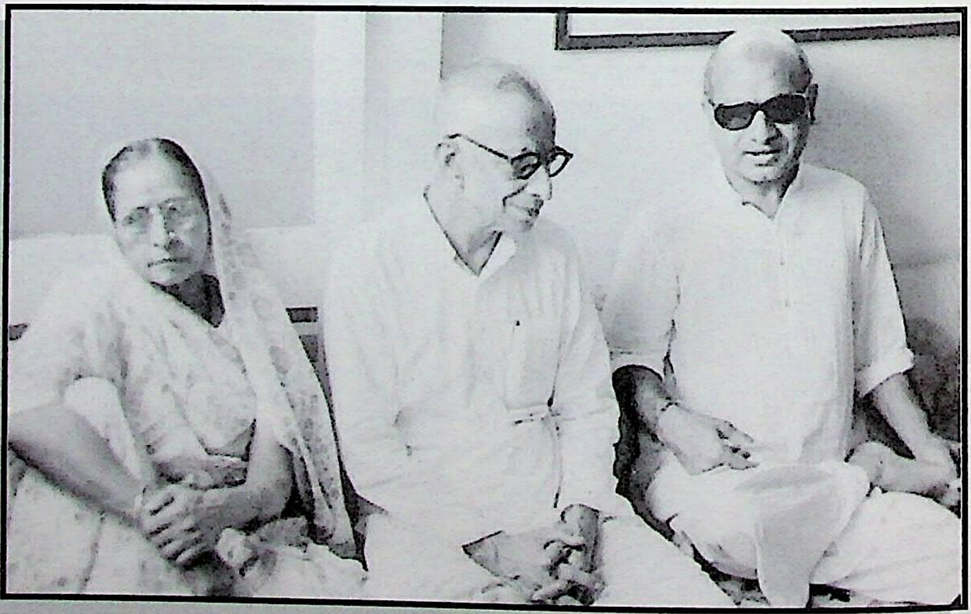

स्नेही ज्ञाति बंधु श्री जयकृष्ण हरिलाल भट्ट उर्फ नकु भाई तथा
स्नेहमयी मायाभाभी के साथ श्री बलवन्तराय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

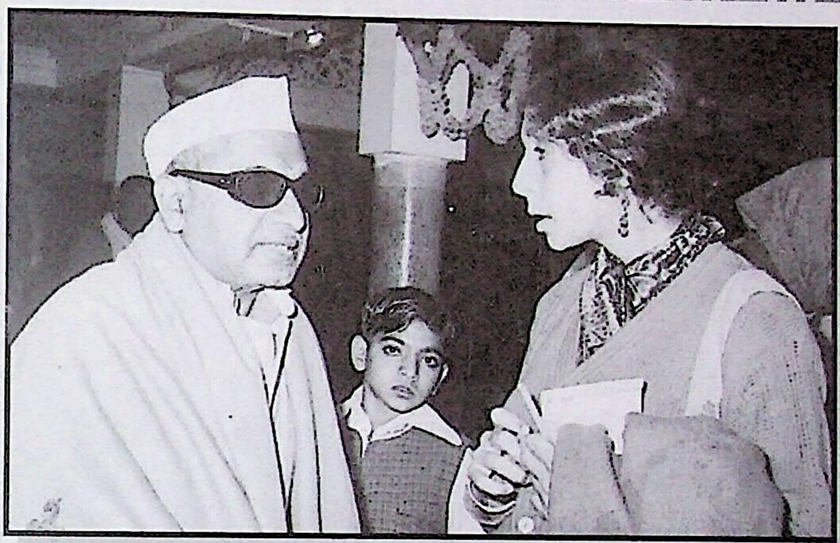

अमरीकन महिला सुश्री लिण्डा हेस के साथ गुरुजी बीच में विभास (लिण्डा, सन्त कबीर पर विशेष अध्ययन करने वाराणसी में थीं एवं कबीर के भजन सीखने 'गुरुजी' के पास आती थीं)।

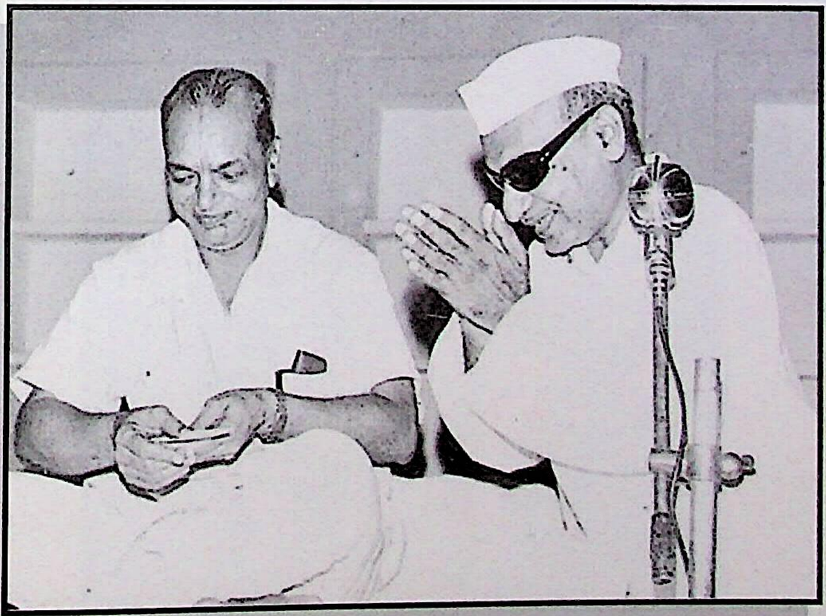

डी.एल.डब्लू के जन सम्पर्क अधिकारी श्री एन.पी.एस मूर्ति को नेत्रहीन सहायक संघ की ओर से आयोजित विदाई समारोह में अभिवादन करते हुए पं. बलवन्तराय भट्ट "भैयाजी"

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इन्दौर में श्रीमती विभा शर्मा के घर में गुरु-पूर्णिमा पर गुरु-पूजा करते हुए (१९७७)

सबसे पीछे बाँए से दाहिने- शील, संजय तथा राजीव (शील एवं राजीव विभाजी के बेटे)

बीच की पंक्ति बाँए से दाहिने- लयलीना, विभा बुआ, स्वरवन्दना, सौ. माँ।

पीछे से तीसरी पंक्ति, बाँए से दाहिने- गीतसुधा, बापूजी, राहुल

सबसे सामने- भैरवी तथा विभास

(विभाजी महामना की पौत्री थीं एवं 'श्रीकला संगीत भारती' की छात्रा भी थीं)

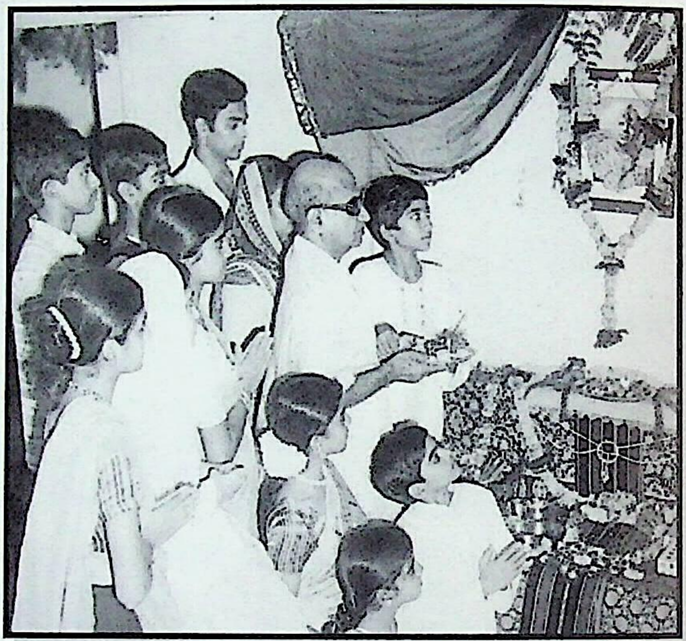

सामने खड़े बाँए से दाहिने - भैरवी की गोद में श्रुतिवन्दना, बापूजी, सौ. शान्ता काकी

पीछे बाँए से दाहिने-पं. शङ्कर श्रीपाद बोडस (बापू जी के काका गुरु) सौ. माँ तथा सौ. स्वरवन्दना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भुवनेश्वर में पुराने विद्यार्थी डॉ० दामोदर होता के घर

डॉ० दामोदर होता एवं उनके विद्यार्थियों के साथ सङ्गीत चर्चा में व्यस्त

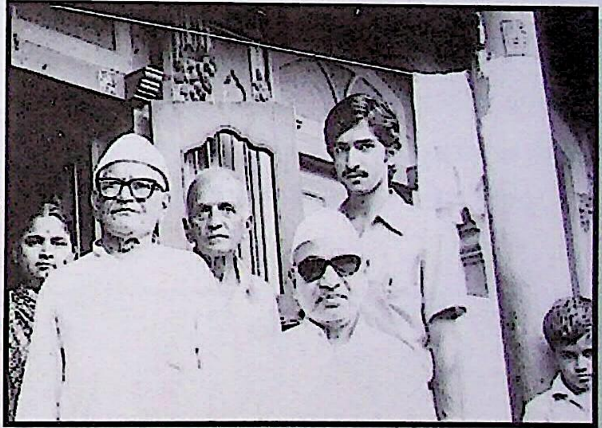

श्री झीणाभाई नाविक (प्रख्यात धावक) तथा परम स्नेही मित्र श्री कीकू भाई भगत के साथ 'बलवन्त भाई', साथ में राहुल

अरविंद कॉलोनी स्थित अपने आवास पर पुराने विद्यार्थी के साथ

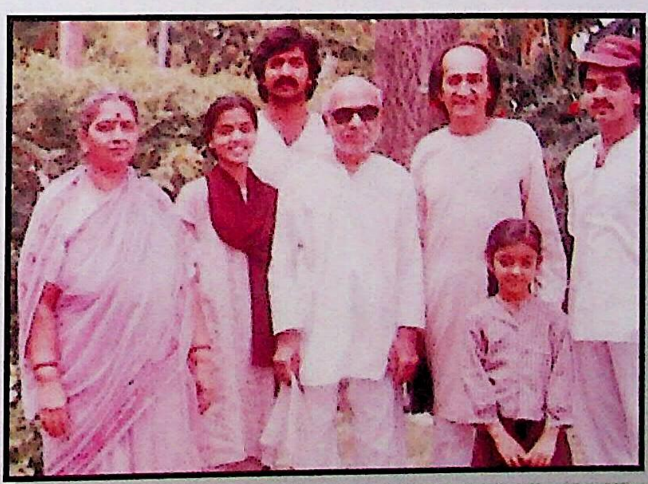

बाँए से दाहिने – सौ. माँ, भैरवी, राहुल, बापूजी, श्री अतुल देसाई तथा विभास, साथ में श्रुतिवन्दना

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गाँधीनगर, नरिया, वाराणसी (किराए के मकान में)

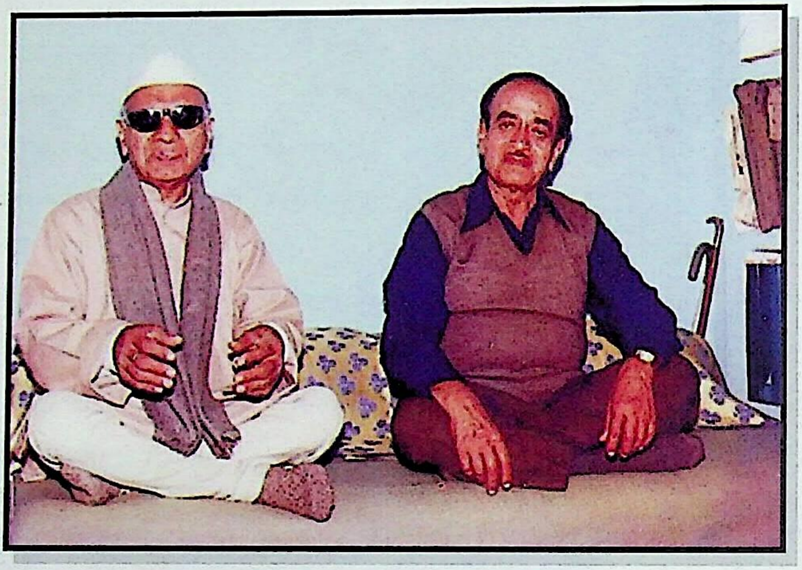

स्नेही कलाकार मित्र, अप्रतिम पखावज वादक, बिजना राज्य (झाँसी) के भूतपूर्व महाराजा छत्रपति सिंह जी के साथ

परमस्नेही माननीय ठाकुर धराचन्दजी एवं सौ. भाभीजी तथा उनके पूरे परिवार के साथ। साथ में छोटे भाई ऋषिकुमार (सबसे दाहिने)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitizagtion by eGangotri

पण्डितजी की परम्परा के वाहक

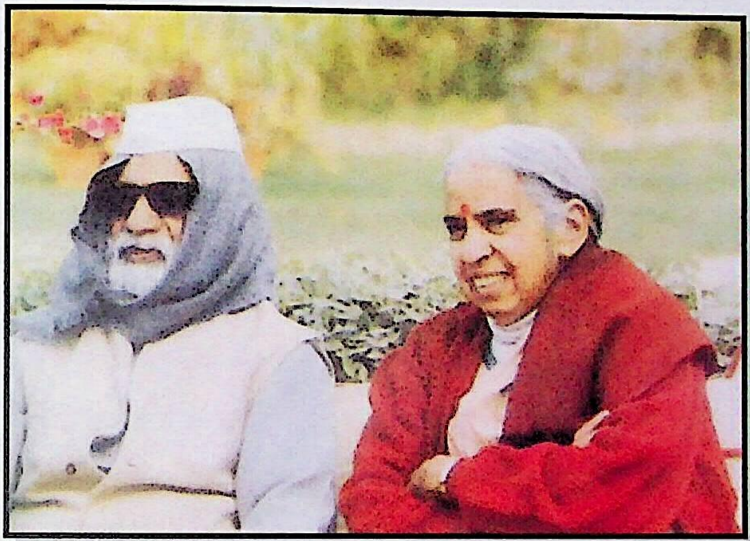

'भैयाजी' और 'प्रेमबहन'
(फोटो 'जीवन कवन सुमन' से साभार)

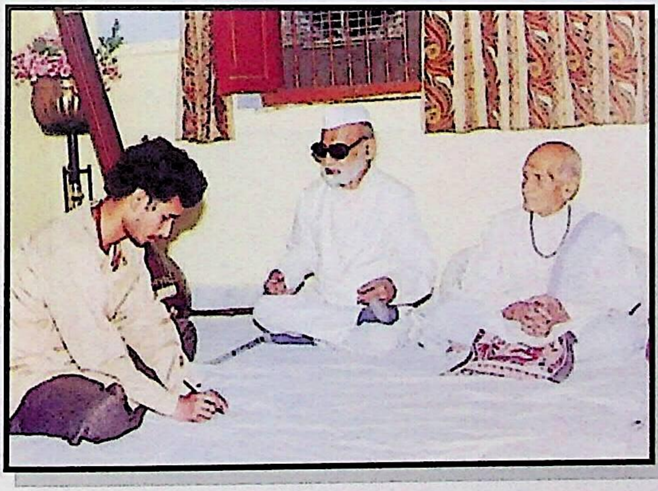

पं. राजेन्द्र नारायण शर्मा के साथ, साथ में चि. प्रीतेश आचार्य (डॉ० राजेश्वर आचार्य के सुपुत्र)

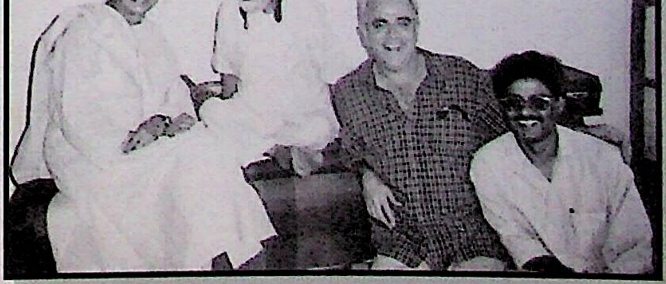

डॉ० वीणा सहस्रबुद्धे (प्रसिद्ध गायिका तथा पं.शंकर श्रीपाद बोडस की सुपुत्री), पं. बलवन्तराय भट्ट, डेनियल तथा उड़ीसा का विद्यार्थी सुभाष

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

डॉ० वीणा सहस्त्रबुद्धे 'भैयाजी' (भावरङ्ग) से बन्दिश सीखते हुए

गुरुपूर्णिमा के अवसर पर अपने गुरु तथा मामा ससुर के प्रति प्रणामाञ्जलि के साथ प्रो. अर्चना दीक्षित

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कार्यक्रम (कराची से वापसी)

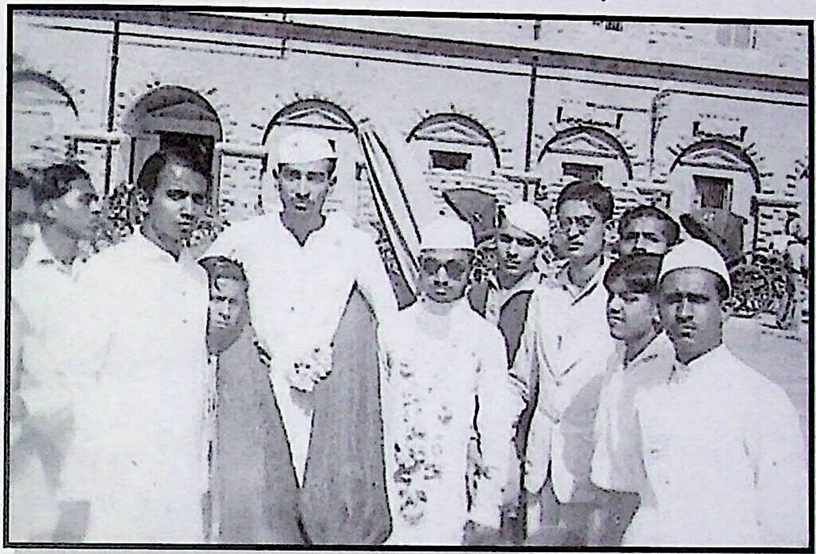

बम्बई के मित्र श्री चन्द्रकान्त पुरोहित (तानपूरों के साथ) तथा श्री बलवन्तराय

का.हि.वि.वि. स्थित गुरुजी के घर भजन प्रस्तुत करते हुए (१६.३.५६)

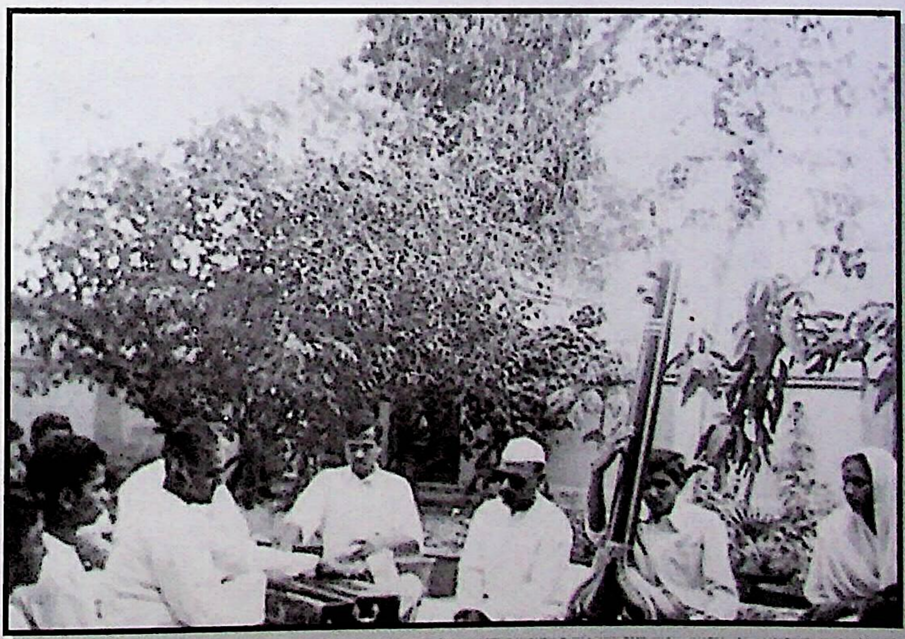

हार्मोनियम पर श्री कनकराय त्रिवेदी, सामने बाँए से दाहिने सीतापति शुक्ल, (तबले पर) श्री बलवन्तराय, तानपूरे पर चित्तरञ्जन ज्योतिषी तथा सौ. वसुन्धरा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri.

'Only one man in India' पर्वतकर जी के उद्गार

लयभास्कर श्री रामकृष्ण पर्वतकर के स्वतन्त्र तबला-वादन में हार्मोनियम पर लहरा देते हुए श्री बलवन्तराय भट्ट

पं. विष्णु दिगम्बर जयन्ती (१९६०)

स्थान-संस्कृत महाविद्यालय, का.हि.वि.वि

गायन- प्रस्तुत करते हुए श्री बलवन्तराय भट्ट, तबला- श्री नागेश्वर प्रसाद मिश्र तानपूरा- चित्तरञ्जन ज्योतिषी, गोपीकृष्ण नागर तथा प्रदीप कुमार दीक्षित, पीछे बैठे हुए ललित कुमार तथा नरेन्द्र नाथ शर्मा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गुरुजी पं. ओम्कारनाथ ठाकुर की हीरक जयन्ती, वाराणसी, १९५७

गायन–पं० बलवन्तराय भट्ट, सारङ्गी–पं. गोपाल मिश्र
तबला–पं.अनोखेलाल मिश्र, तानपूरा–श्री चित्तरञ्जन ज्योतिषी,

स्व. गुरुजी पं. ओम्कारनाथ ठाकुर की प्रथम पुण्यतिथि, सूरत (१९६८)

गायन – श्री बलवन्तराय भट्ट, सारङ्गी– श्री दत्ताराम पर्वतकर
तबला–श्री ईश्वरलाल मिश्र, तानपूरा – श्री चितरञ्जन ज्योतिषी तथा श्री प्रदीप कुमार दीक्षित,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उ० अलाउद्दीन खाँ सङ्गीत समारोह, मैहर, १९७०

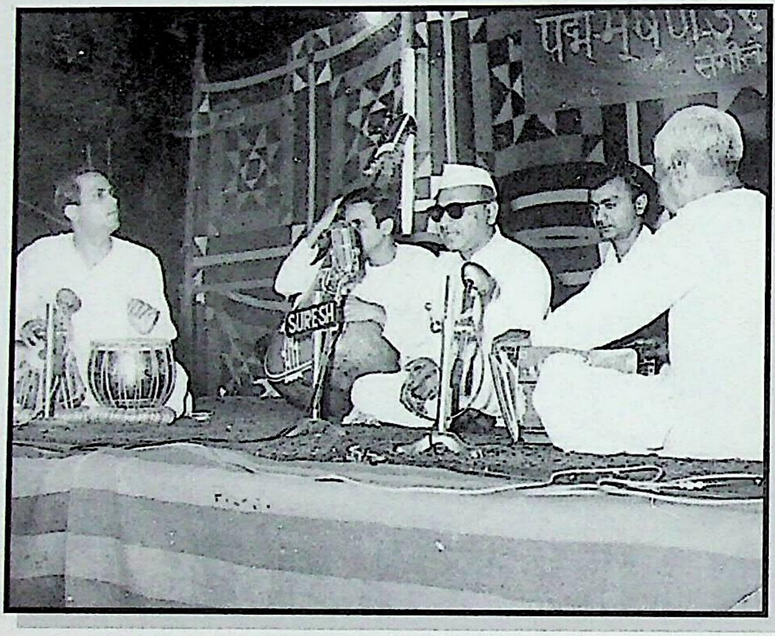

गायन - पं. बलवन्तराय भट्ट,
तबला - पं. शङ्कर घोष,
तानपूरा - श्री चित्तरञ्जन ज्योतिषी,
पीछे - श्री ललित कुमार(छोटे भाई),
हार्मोनियम -श्री लक्ष्मण प्रसाद

डी.एल.डब्ल्यू में श्री जी.एन. कपूर के निवास पर (१९७१)

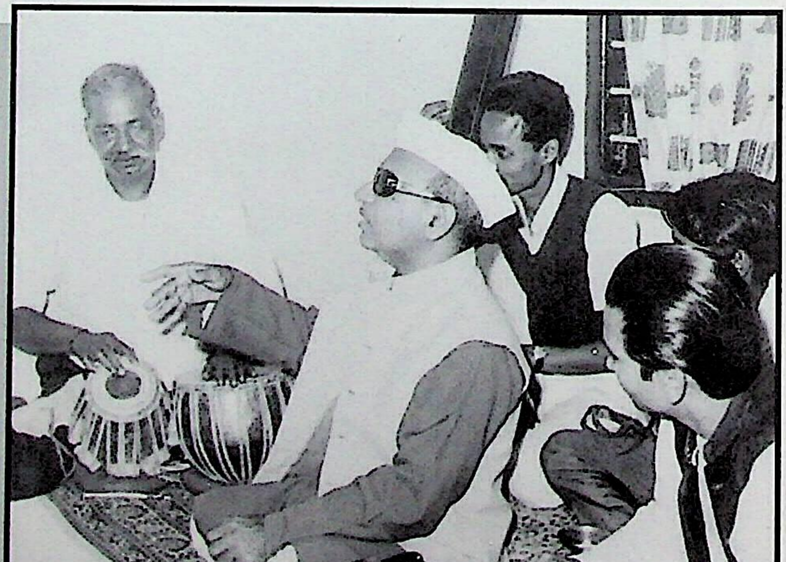

गायन- पं० बलवन्तराय भट्ट, हार्मोनियम- डॉ० चित्तरञ्जन ज्योतिषी
तबला- श्री नागेश्वर प्रसाद मिश्र, तानपूरा- श्री आदिनाथ उपाध्याय,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पं० कण्ठे महाराज प्रथम पुण्यतिथि समारोह
(पं० किशन महाराज के आवास पर गणेश कक्ष में)

गायन– पं० बलवन्त राय भट्ट
तबला– पं० किशन महाराज,
तानपूरा– डॉ० चित्तरञ्जन
ज्योतिषी एवं डॉ० राजेश्वर
आचार्य, पीछे श्री शङ्कर पाटिल
एवं श्री ओम प्रकाश चौरसिया
सारङ्गी – पं. नारायण मिश्र,

पं० शङ्कर श्रीपाद बोडस की ७५वीं वर्षगाँठ पर, कानपुर, १९७५

गायन– पं. बलवन्तराय भट्ट तबला–नाम अज्ञात, तानपूरा– डॉ० चित्तरञ्जन ज्योतिषी तथा डॉ० वीणापाणि शुक्ल (पुरानी विद्यार्थिनी) हार्मोनियम–नाम अज्ञात, पीछे पं. विनय चन्द्र मौद्गल्य तथा प्रो० ए.पी. शुक्ल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्तर प्रदेश सङ्गीत नाटक अकादमी में कार्यक्रम आरम्भ करने से पूर्व

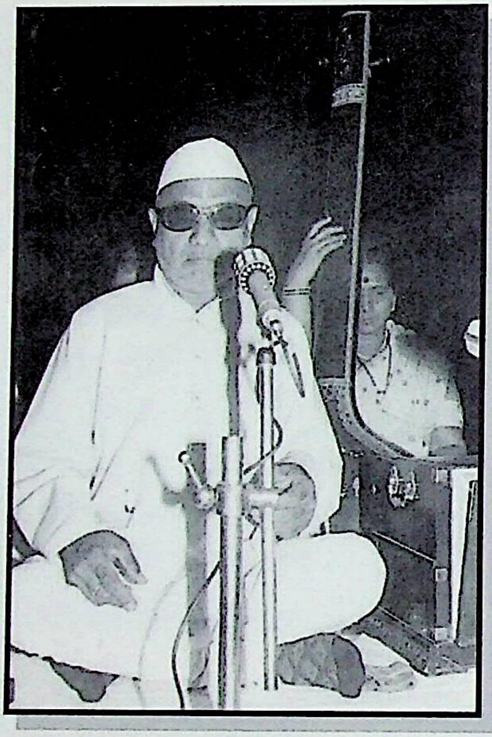

पं० बलवन्तराय भट्ट
तानपूरा-श्रीमती वसुन्धरा भट्ट

वृन्दावन में आयोजित ध्रुपद मेला के उद्घाटन समारोह में (१९७९)

नेतृत्व करते हुए पं. बलवन्तराय भट्ट, तानपूरे पर श्रीमती मङ्गला तिवारी तथा कु. स्वरवन्दना भट्ट साथ में श्री ऋत्विक् सान्याल तथा राहुल भट्ट। सारङ्गी- श्री नारायण मिश्र

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

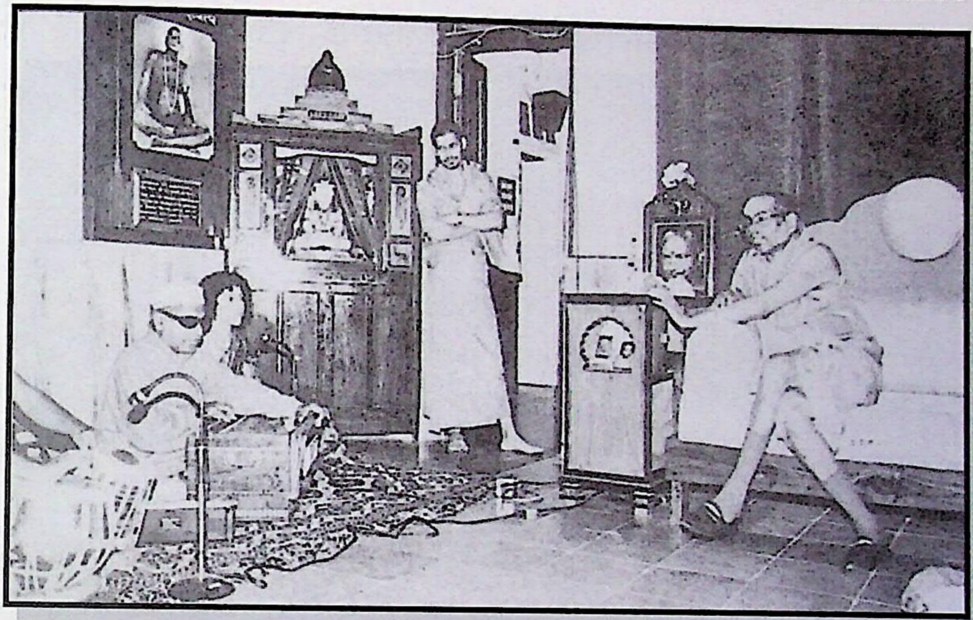

स्वामी मुक्तानन्द के आश्रम, (मुम्बई) में सङ्गीत प्रस्तुत करते हुए

भावनगर में

गायन- पं० बलवन्तराय भट्ट, हार्मोनियम श्री रसिकलाल अंधारिया,
तबला-श्री राहुल भट्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्व० पं० अनोखेलाल स्मृति समारोह, १९८०

गायन- पं० बलवन्त राय भट्ट, तबला- श्री ईश्वरलाल मिश्र, हार्मोनियम- डॉ० चित्तरञ्जन ज्योतिषी, पीछे-स्वरवन्दना, तानपूरा- श्री उमाशङ्कर झा, सारङ्गी- पं० बच्चालाल मिश्र

भारत भवन, भोपाल

गायन- पं० बलवन्तराय भट्ट, तबला- श्री राहुल भट्ट, तानपूरा- श्री विभास भट्ट एवं कु. प्रियम्वदा होता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वडोदरा, दरबार हॉल में आयोजित कार्यक्रम में

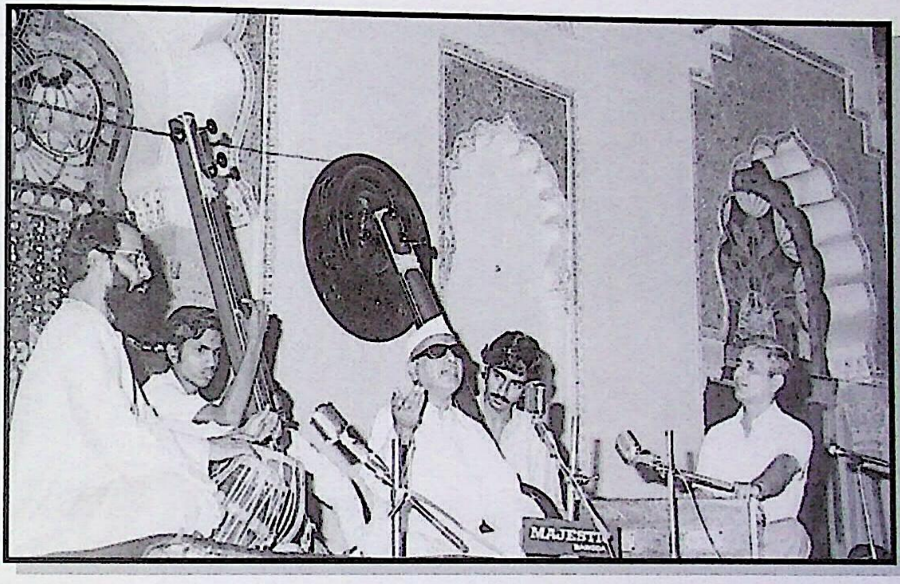

गायन- पं. बलवन्तराय भट्ट, तबला- पं. निखिल घोष, तानपूरा-नाम अज्ञात तथा श्री राहुल भट्ट, हार्मोनियम- श्री जयन्त भालोदकर

भाव मगन गायन-पं० बलवन्त राय भट्ट, तानपूरा- राहुल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महात्मा कबीर छठी शताब्दी समारोह, (सन् २०००) वाराणसी

गायन- पं० बलवन्तराय भट्ट, तबला- पं. ईश्वरलाल मिश्र, श्री विभास भट्ट, ,
हार्मोनियम- पं. मन्नूलाल मिश्र, सारङ्गी-श्री सन्तोष मिश्र

अमरीका प्रवास १९८०

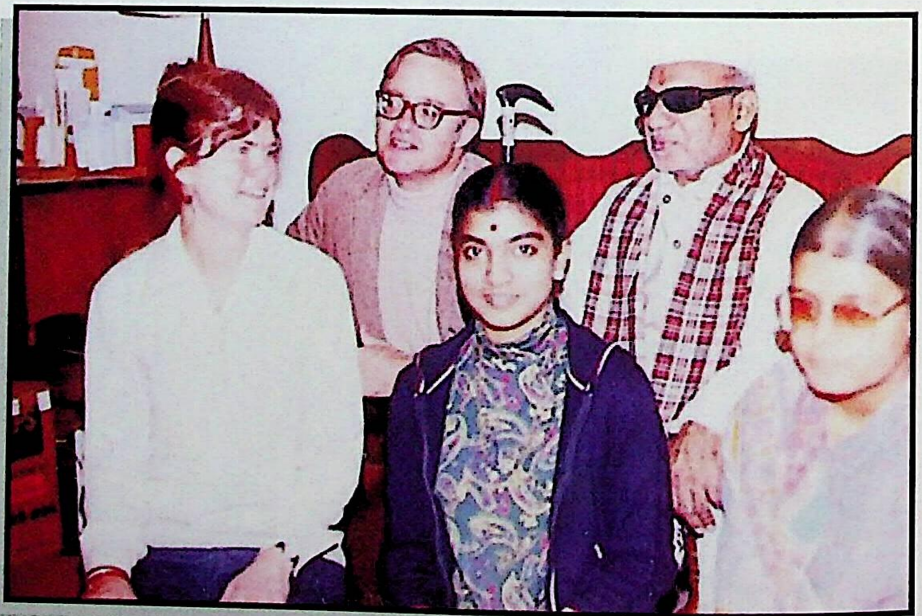

सामने बाँए से दाहिने - श्रीमती हैरियट, श्रीमती स्वरवंदना शर्मा, श्रीमती उषा सिंह (पुरानी विद्यार्थिनी)
पीछे बाँए से दाहिने - प्रो० हैराल्ड एस. पावर्स तथा पं. बलवन्तराय भट्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बोस्टन में

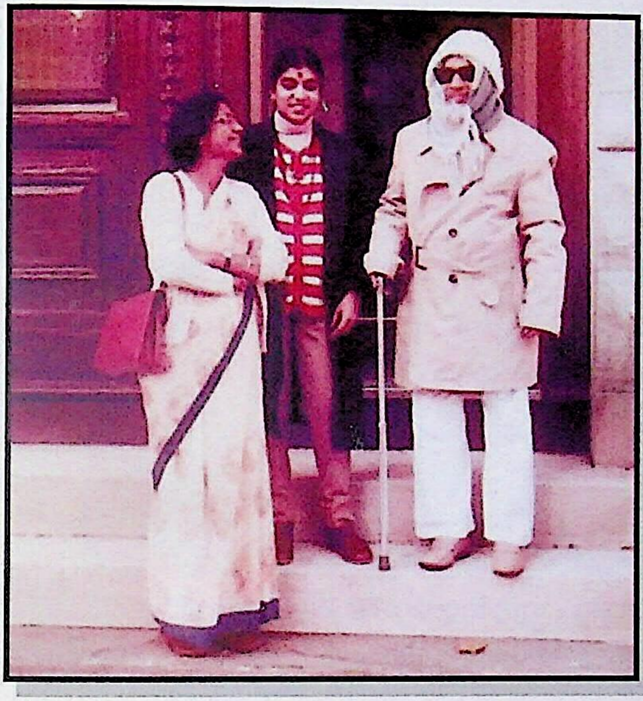

श्रीमती कल्पना रो मजूमदार,
(जिनके यहाँ बलवन्तराय जी
अमरीका प्रवास के दौरान रहे)
स्वरवन्दना तथा पं. बलवन्तराय भट्ट

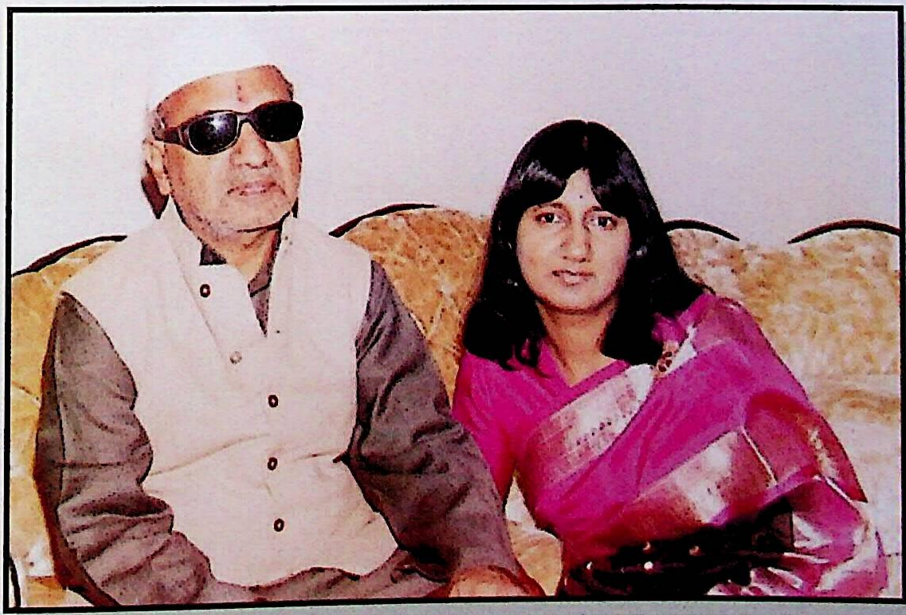

गुरुजी तथा डॉ० धर्मा चन्द्रा (पुरानी विद्यार्थिनी)
(का०हि०वि०वि० के डॉ० अक्षयवर लाल जी की सुपुत्री)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

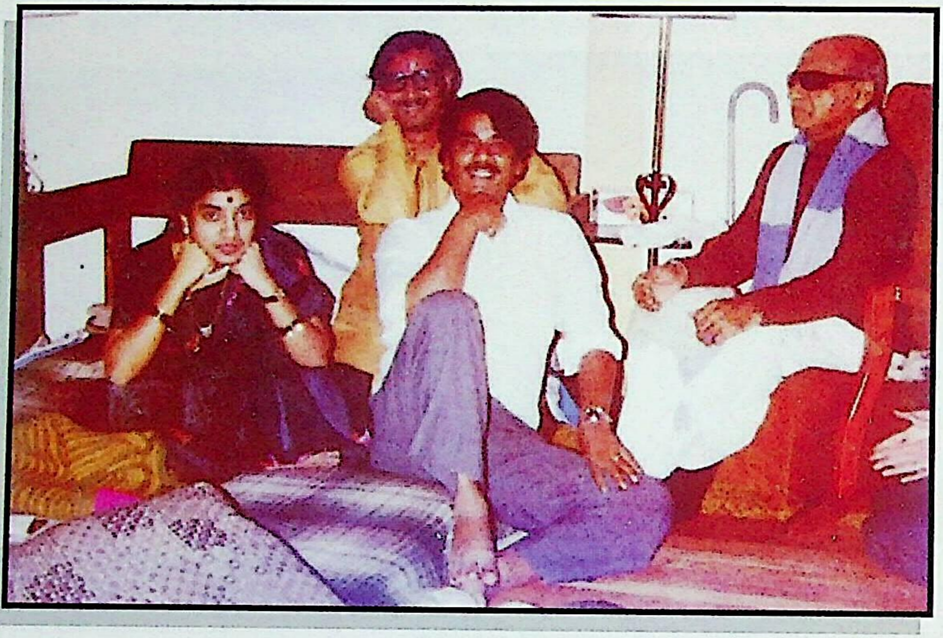

सामने – स्वरवन्दना, श्री लक्ष्मी गणेश तिवारी (पुराने विद्यार्थी)
पीछे – तबला वादक श्री छोटे लाल मिश्र तथा पं. बलवन्तराय भट्ट

बाँए से दाहिने – श्री छोटेलाल मिश्र, पं० बलवन्तराय भट्ट, हेरियट ह्यूरी, स्वरवन्दना तथा श्रीमती उषा सिंह (पुरानी विद्यार्थिनी)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गायन– पं० बलवन्तराय भट्ट

तबला– श्री छोटेलाल मिश्र, तानपूरा– स्वरवन्दना तथा हैरियट

अमरीका प्रवास से वापस आने पर घर पर तिलक लगाकर स्वागत

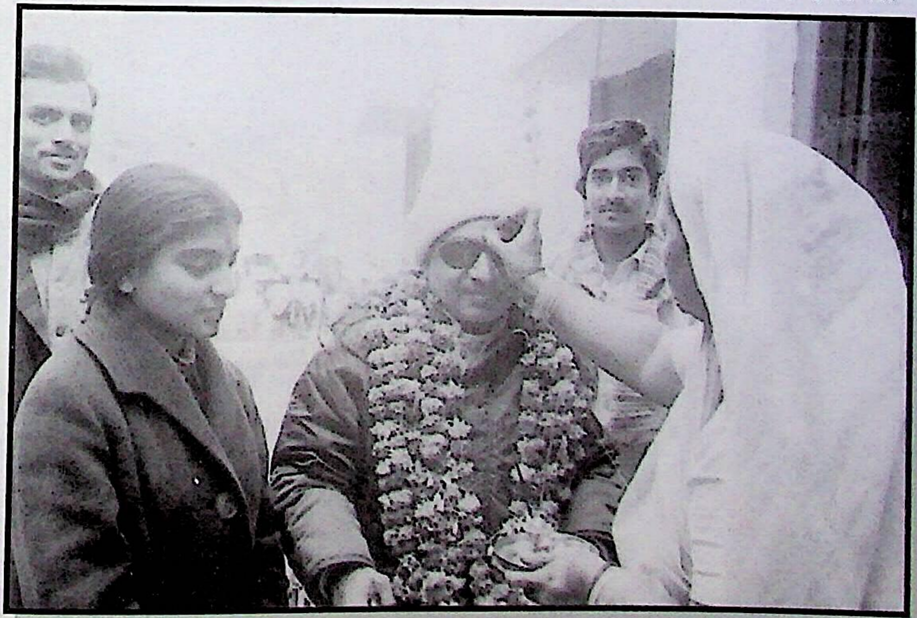

सौ० जीजी, बापूजी, राहुल और सौ. माँ। बाँये पीछे– श्री रामप्रभा ओझा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सम्मान : स्वर्ण जयन्ती

जीवन के स्वर्णिम ५० वर्ष पूरे करने पर सङ्गीतप्रेमियों, सङ्गीत संस्थाओं एवं नेत्रहीन सहायक संघ, वाराणसी द्वारा संयुक्त रूप से नागरिक अभिनन्दन

५० वर्ष की प्रतीक ५० मालाएँ, पुष्पहार के साथ पं० बलवन्तराय भट्ट,
पीछे पं० शङ्कर श्रीपाद बोडस, श्री प्रागजी डोसा, श्री चित्तरञ्जन ज्योतिषी एवं पं० वामन ठकार

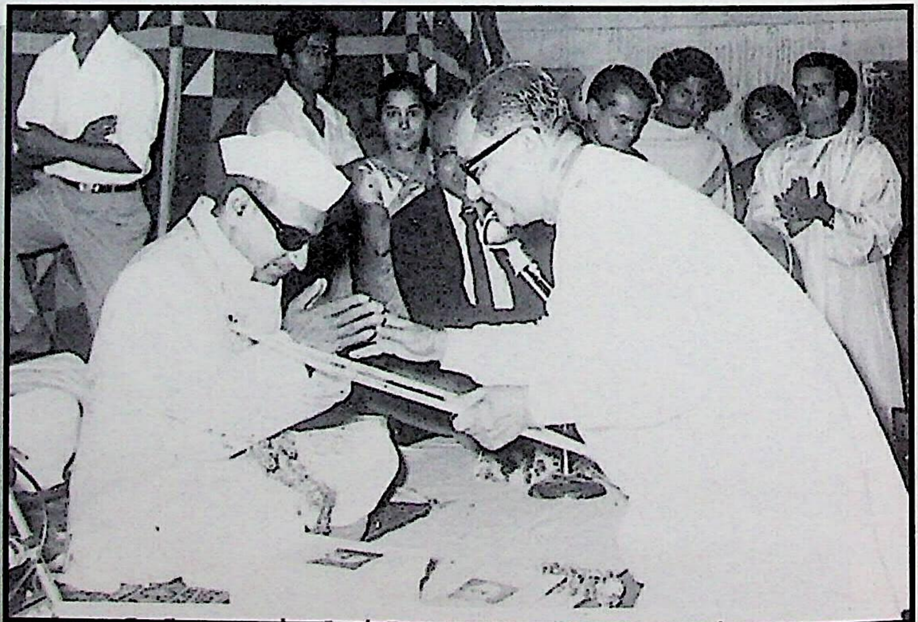

श्री रोहित मेहता से मानपत्र ग्रहण करते हुए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

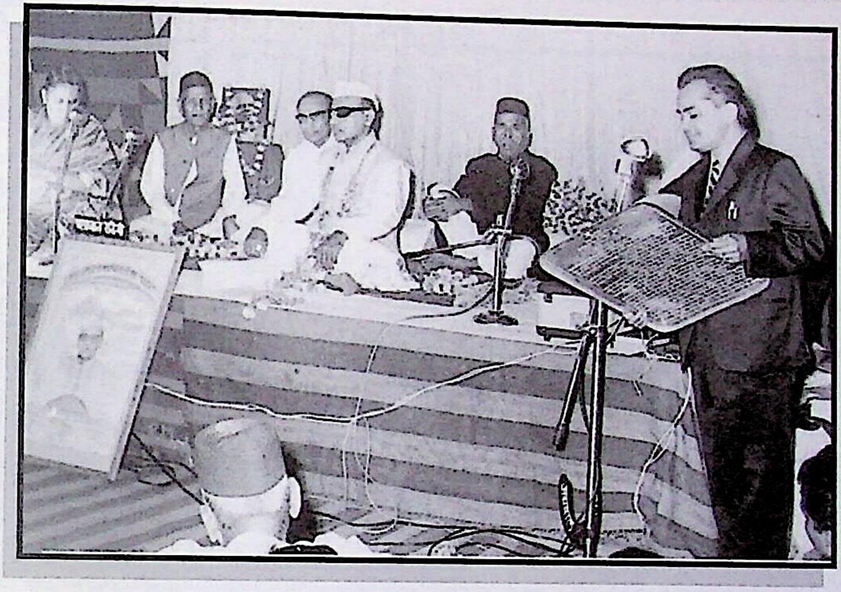

नेत्रहीन सहायक संघ की ओर से ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण मानपत्र वाचन करते हुए डॉ॰ प्रदीप कुमार दीक्षित। मञ्च पर बाँए से दाहिने- डॉ॰ प्रेमलता शर्मा, पं॰ शङ्कर श्रीपाद बोडस, श्री प्रागजी डोसा, पं॰ बलवन्तराय भट्ट तथा पं॰ वामन ठकार

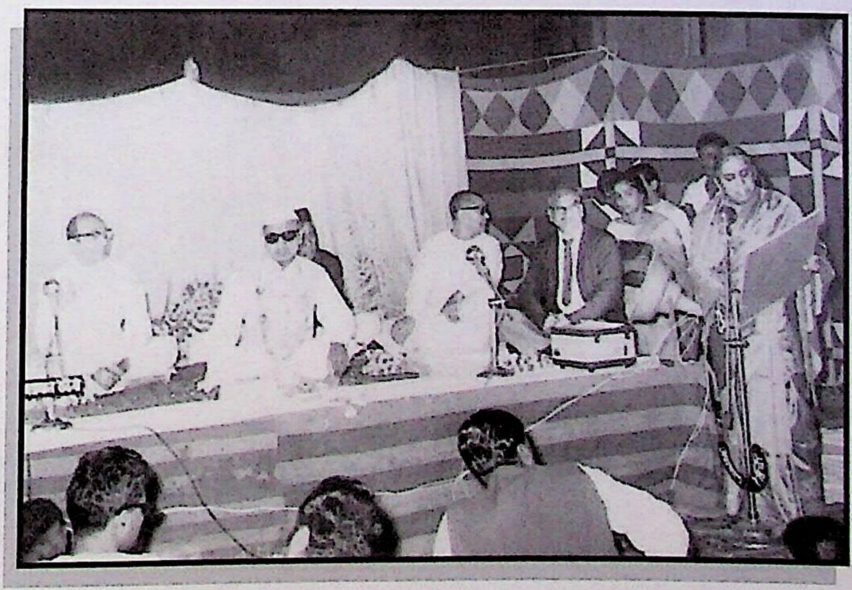

न मानपत्र पढ़ते हुए डॉ॰ प्रेमलता शर्मा, मञ्च पर बाँए से दाहिने- श्री प्रागजी डोसा, पं॰ बलवन्तराय भट्ट, श्री रोहित मेहता तथा श्री जनार्दन स्वरूप अग्रवाल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

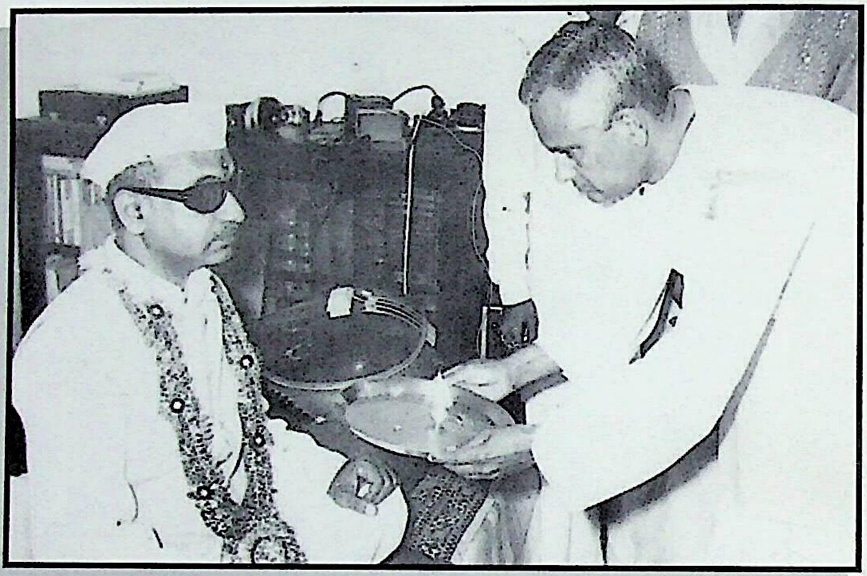

जीवन के स्वर्णिम ५० वर्ष पूरे करने पर श्री जी.एन कपूर 'भैयाजी' की अभ्यर्चना करते हुए

जीवन के स्वर्णिम ५०वर्ष पूरे करने पर श्रीमती विद्या कपूर 'भैय्याजी' को 'भावाभिसिञ्चित सम्मान पत्रम्' भेंट करते हुए। साथ में डॉ० राजेश्वर आचार्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

षष्टिपूर्ति के अवसर पर, भावनगर, १९८१

भावनगर विश्वविद्यालय के कुलपति श्री इन्दुकुमार ध्रुव 'बलवन्तभाई' को मानपत्र देते हुए, साथ में नृत्याचार्य श्री धरमशी भाई शाह एवं पुत्र राहुल।

अमृत महोत्सव (२२ सितम्बर १९९६)
'नादतनु' (आवास रोहित नगर) प्रातःकालीन रागों की बन्दिशों के गायन के उपरान्त बलवन्तराय जी का वृहत् परिवार

बाँए से दाहिने- (सामने) लयलीना, स्वरवन्दना, प्रदीप कुमार दीक्षित,

बाँए से दाहिने - (बीच में) प्रतिभा पर्वतकर, वनमाला पर्वतकर, अर्चना दीक्षित, सुभद्रा चौधरी, चित्तरञ्जन ज्योतिषी, दामोदर होता

बाँए से दाहिने - (सबसे पीछे) ऋत्विक सान्याल, 'प्रेमबहिन जी' 'गुरुजी' और 'भाभीजी'।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अभिनन्दन समारोह में बापूजी की बन्दिशें प्रस्तुत करते हुए

तबला- श्री किशोर मिश्र, लयलीना, स्वरवन्दना, राहुल तथा विभास। हार्मोनियम- श्री विजय कपूर

अभिनन्दन समारोह में मुख्य अतिथि पद से बोलते हुए डॉ० भानुशङ्कर मेहता

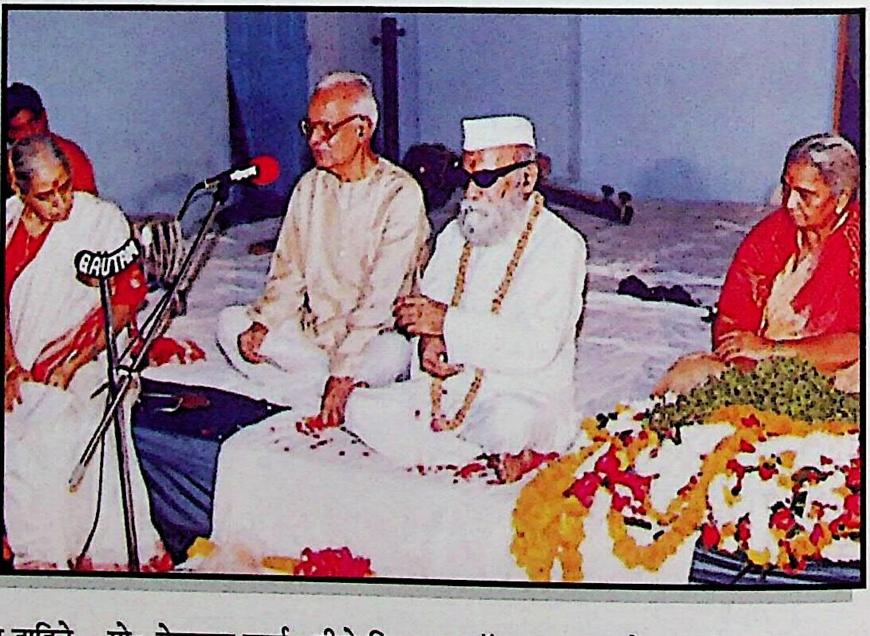

बाँए से दाहिने - प्रो० प्रेमलता शर्मा,, पीछे विभास, डॉ० भानुशङ्कर मेहता, पं० बलवन्तराय भट्ट, श्रीमती वसुन्धरा भट्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अभिनन्दन समारोह में कार्यक्रम का आनन्द लेते हुए

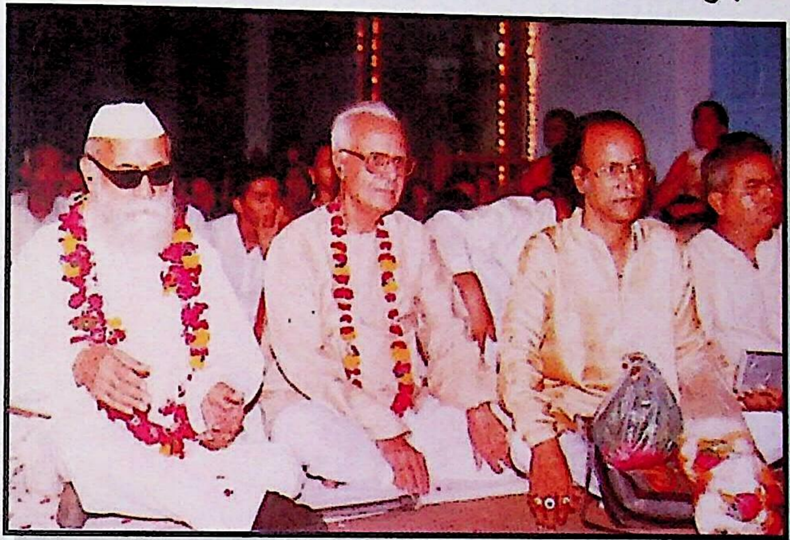

बाँए से दाहिने – पं० बलवन्तराय भट्ट, डॉ० भानुशङ्कर मेहता, डॉ० राजेश्वर आचार्य, डॉ० दामोदर होता

अमृत महोत्सव स्मारिका विमोचन २४ जून १९९७

पं० ओम्कारनाथ ठाकुर शताब्दी वर्ष में का०हि०वि०वि० स्थित 'भारत कला भवन' में उनका डाक टिकट जारी किया गया। उस अवसर पर बलवन्तरायजी के 'अमृत महोत्सव' की स्मारिका का विमोचन भी हुआ

स्मारिका विमोचन करते हुए डॉ० भानुशङ्कर मेहता
पं० बलवन्तराय भट्ट, स्वरवन्दना एवं राहुल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्मारिका विमोचन के अवसर पर बोलते हुए

बाँए से दाहिने- प्रो० आनन्दकृष्ण, प्रो० विद्यानिवास मिश्र, डाक विभाग के महानिदेशक, विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो० हरि गौतम, कुलाधिपति डॉ० विभूति नारायण सिंह, प्रो० प्रेमलता शर्मा, पं० बलवन्तराय भट्ट एवं राहुल भट्ट

'स्वर-रंग' दिल्ली

पं० बलवन्तराय भट्ट तथा सम्मान के प्रतीक चिह्न के साथ माननीय श्री वसन्त साठे, पीछे श्री राहुल भट्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'पद्मश्री' सम्मान ग्रहण करते हुए

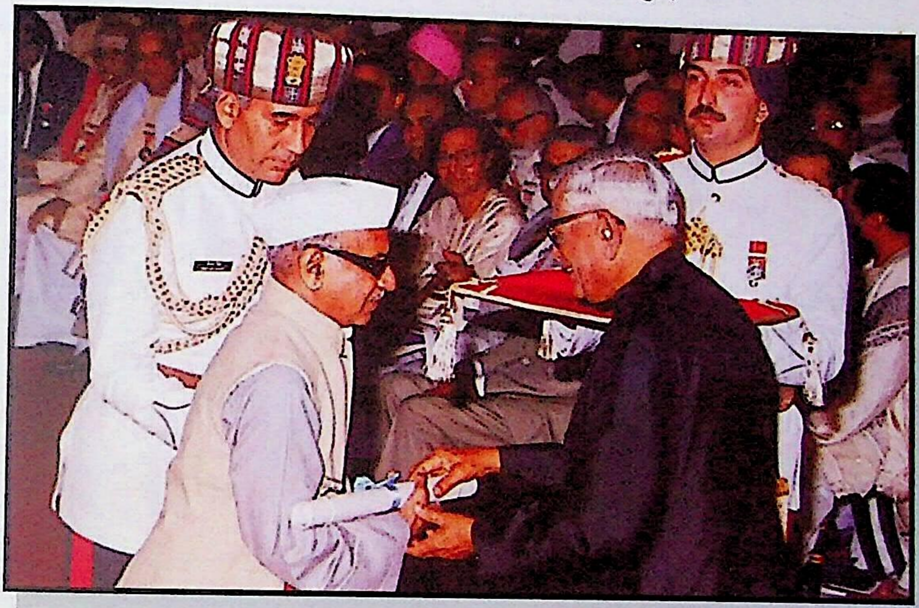

भारत के राष्ट्रपति महामहिम श्री आर० वेङ्कटरमण से सम्मान ग्रहण करते हुए

राष्ट्रपति आवास पर कार्यक्रम के पश्चात्

सामने बाँए से दाहिने- 'पद्मभूषण' सेम्मनगुड़ी श्रीनिवास अय्यर, पं० बलवन्तराय भट्ट, महामहिम श्री आर० वेंकटमण, श्रीमती जानकी वेंकटरमण, श्रीमती वसुन्धरा भट्ट, कु० रंजनी रामचन्द्रन (महामहिम की नतिनी) पीछे- श्रीमती विजया रामचन्द्रन (महामहिम की पुत्री) तथा श्री राहुल भट्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महामृत्युञ्जय महोत्सव में प्रशस्ति पत्र ग्रहण करते हुए

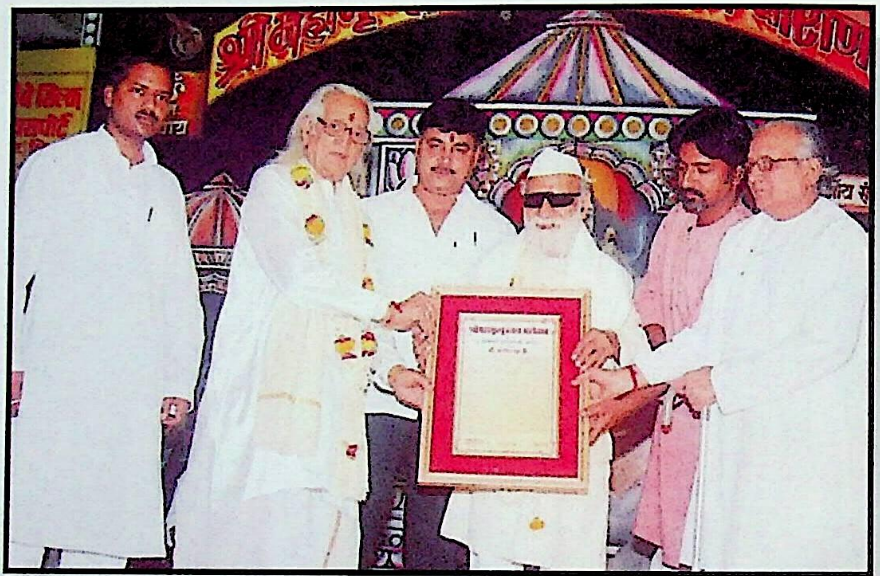

बाँए से दाहिने- पं० किशन महाराज, श्री लालजी राय (नगर आयुक्त)
पं० बलवन्तराय भट्ट, श्री राहुल भट्ट, डॉ० चित्तरञ्जन ज्योतिषी

पश्चिम क्षेत्र अन्तर्विश्वविद्यालय युवा महोत्सव, भावनगर द्वारा सम्मान

माँ हरकुँवर बा का सपना साकार हुआ।
'मेरा बलवन्त विद्वान होकर आएगा, तो अपने शहर में उसका सम्मान होगा।'

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री अरविन्द त्रिवेदी द्वारा मानपत्र ग्रहण करते हुए

पं० गोपाल मिश्र की स्मृति में स्थापित 'ग्रितमा' द्वारा 'काशी स्वर-गङ्गा' सम्मान ग्रहण करते हुए

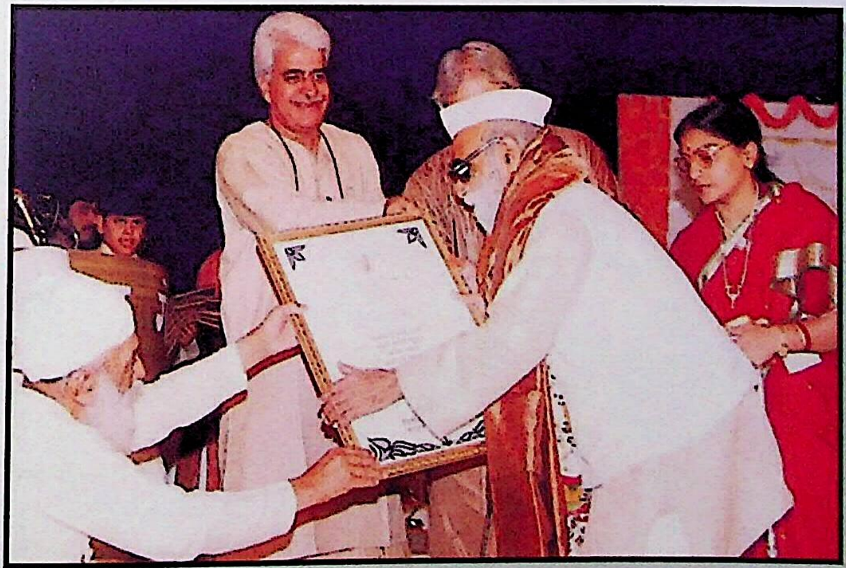

पं० बलवन्तराय भट्ट को मानपत्र देते हुए श्री निरङ्कारी सत् गुरुजी, श्री राजन एवं श्री साजन मिश्र, डॉ० स्वरवन्दना शर्मा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'ग्रितमा' सम्मान ग्रहण करने के उपरान्त पं. हनुमान मिश्र (सारङ्गीवादक) के साथ

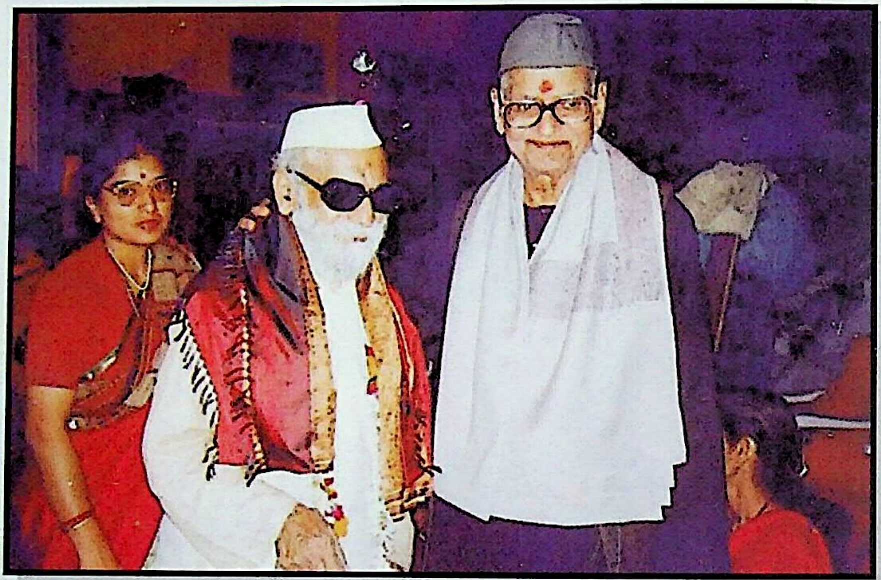

डॉ० स्वरवन्दना शर्मा, पं० बलवन्तराय भट्ट, पं. हनुमान मिश्र

केन्द्रीय सङ्गीत नाटक अकादमी सम्मान ग्रहण करते हुए

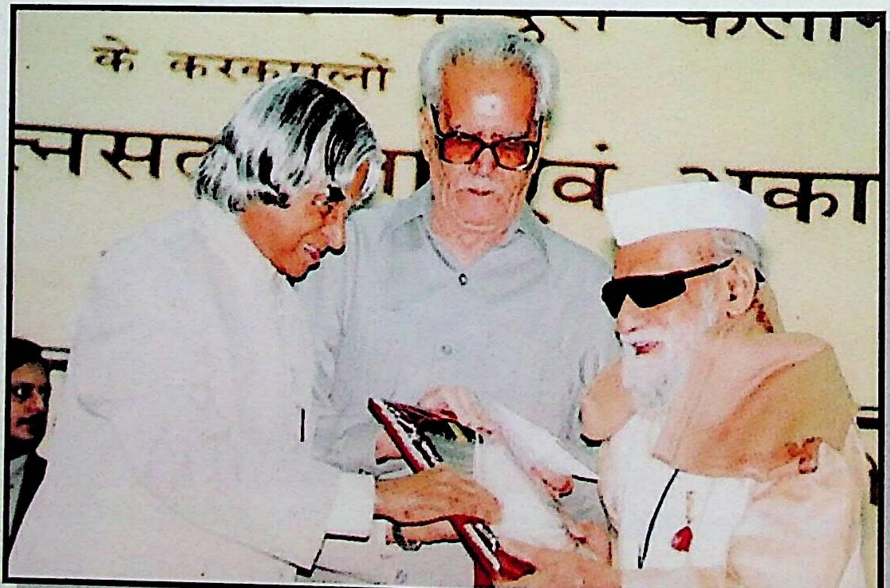

माननीय राष्ट्रपति डॉ० ए०पी०जे० अब्दुल कलाम,
अकादमी के अध्यक्ष श्री रामनिवास मिर्धा, पं. बलवन्त राय भट्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

डॉ० स्वरवन्दना शर्मा, पं० बलवन्तराय भट्ट, पं. किशन महाराज

काशी–सांस्कृतिक–सङ्कुल के शिलान्यास के अवसर पर

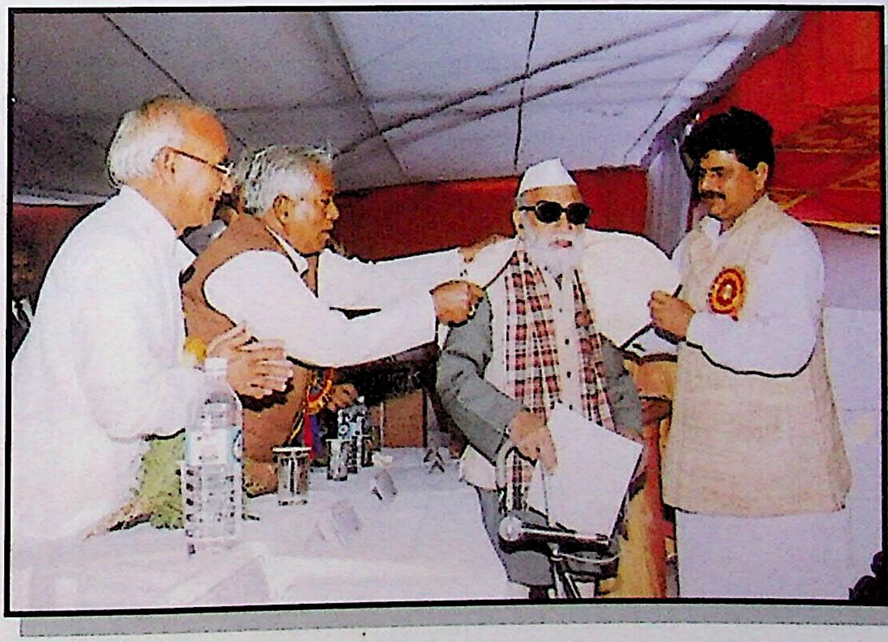

उत्तर–प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल श्री सूरजभान शाल उढ़ाते हुए

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गुरुवर पं० ओम्कारनाथ ठाकुर के साथ (कराची १९४१)

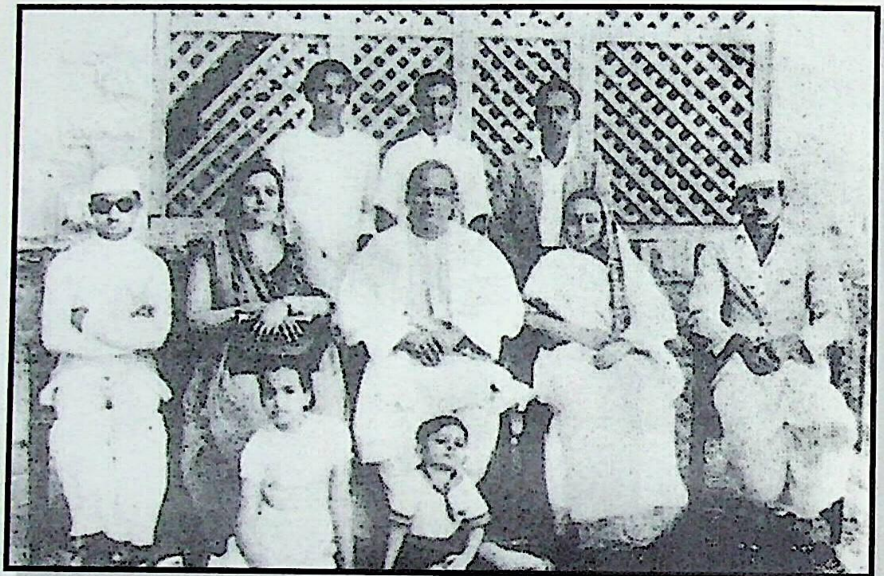

कुर्सी पर बाँए से दाएँ – श्री बलवन्तराय भट्ट, श्रीमती पिरोज बहन दस्तूर, पण्डित ओम्कारनाथ ठाकुर, श्रीमती मंजुला बहन दवे, श्री चन्द्रकान्त पुरोहित
पीछे खड़े – स्थानीय व्यक्ति, स्थानीय व्यक्ति, श्री चुनीलाल दमणिया सामने बैठे – मणिबहन तथा प्रदीप कुमार (फोटो : 'पं० ओमकारनाथ ठाकुर एवं उनकी शिष्य परम्परा' में प्रकाशित)

रुइया हॉस्टल की छत पर 'श्री कला सङ्गीत भारती' के वार्षिकोत्सव में १९५६

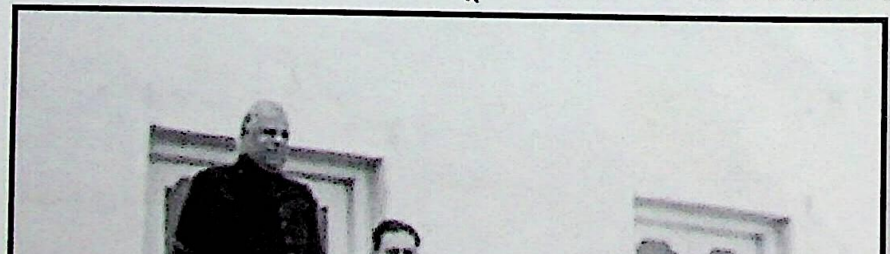

हार्मोनियम- श्री बलवन्तराय भट्ट, प्राचार्य पं. ओम्कारनाथ ठाकुर (बोलते हुए) तथा दो अतिथि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अफगानिस्तान के शाह के महल में स्थानीय कलाकारों के साथ (१९५२)

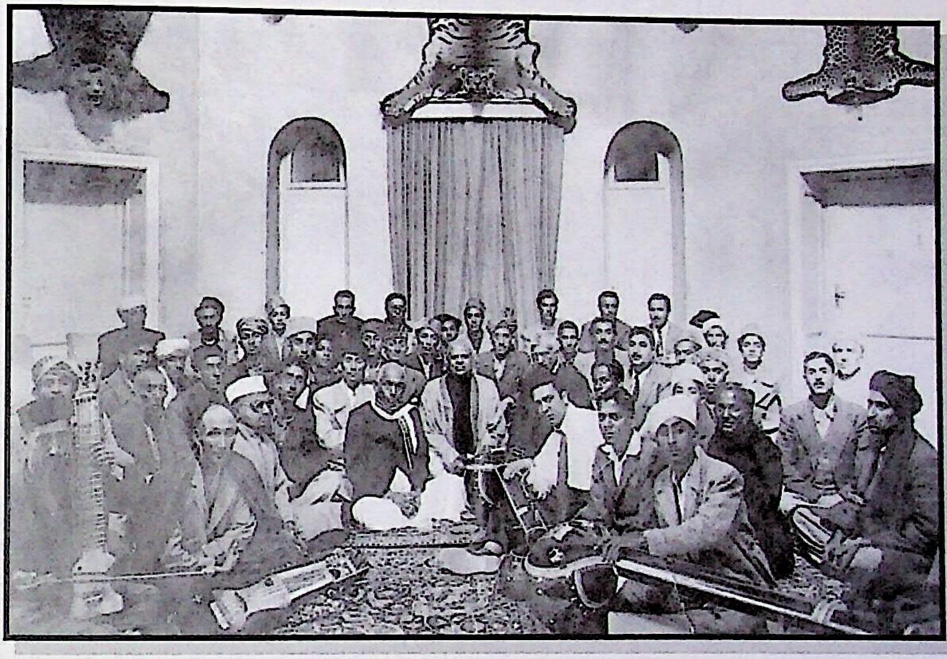

श्री बलवन्तराय भट्ट, श्री सुन्दरम् अय्यर (गले में सफेद अङ्गवस्त्र) गुरुजी, गुरुजी के बाद एक सज्जन को छोड़कर श्री एम०एस०गोपालकृष्णन्, दाहिनी ओर दूसरी पंक्ति में श्री रामकृष्ण पर्वतकर

रुइया हॉस्टल की छत पर

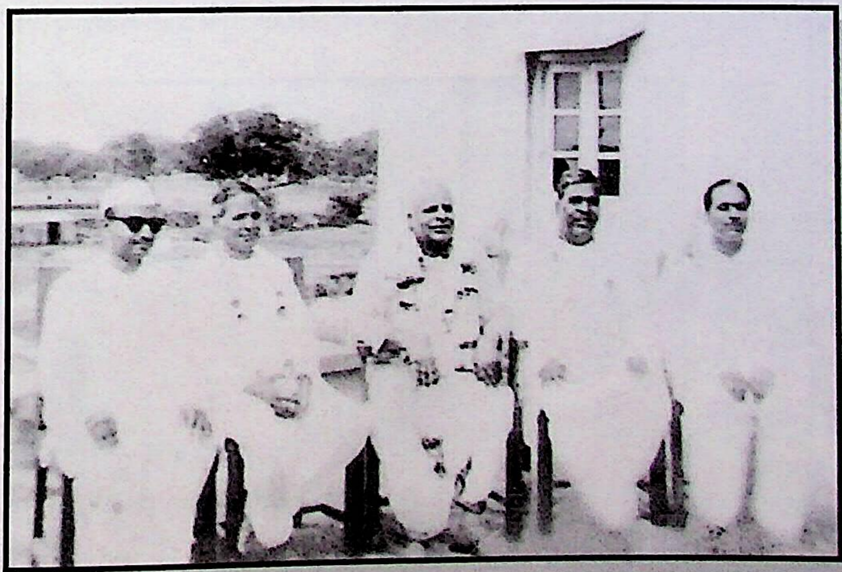

बाँए से दाहिने – श्री बलवन्तराय भट्ट, पं. शङ्कर श्रीपाद बोडस,
पं० ओम्कारनाथ ठाकुर, पं० वामन ठकार तथा श्री कनक राय त्रिवेदी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गुरुजी की हीरक जयन्ती के अवसर पर श्रीकलासङ्गीत भारती के छात्रों एवं अतिथियों के साथ लिया गया फोटो

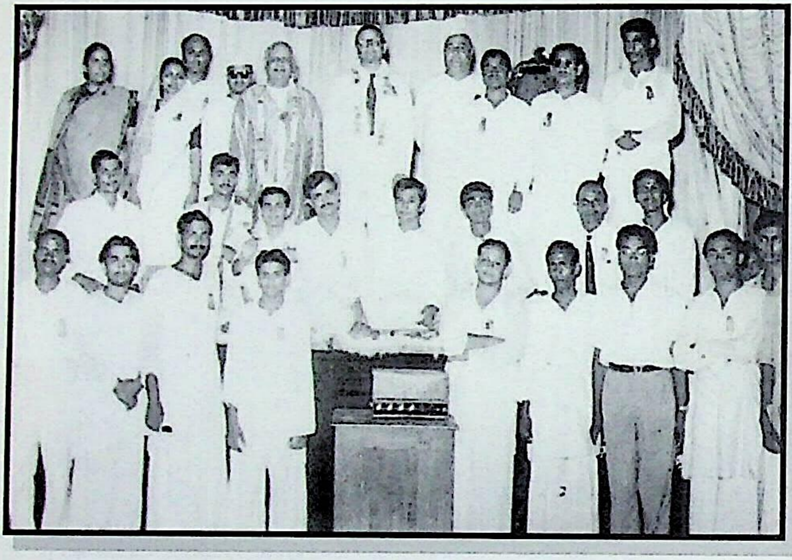

सबसे पीछे बाँए से दाहिने
सुश्री प्रेमलता शर्मा,
श्रीमती सुभद्रा कुलश्रेष्ठ,
श्री कनकराय त्रिवेदी,
श्री बलवन्तराय भट्ट,
पं० ओम्कारनाथ ठाकुर,
अतिथि, श्री त्रिलोचन पन्त,
श्री माधव वामन ठकार,
श्री राजभान सिंह,
श्री महेश्वर झा

पं० बलवन्तराय भट्ट जी की प्रकाशित सी०डी० का लोकार्पण समारोह मालवीय भवन, का०हि०वि०वि०, २००८ प्रार्थना प्रस्तुत करते हुए भट्ट जी के पुत्र-पुत्रियाँ, पुत्रवधू तथा पौत्रियाँ

सामने कुर्सी पर-
श्रीमती लयलीना भट
मञ्च पर बाँए से दाहिने
तबला- श्री किशोर मिश्र,
श्री विभास भट्ट,
श्री राहुल भट्ट, चारुकेशी,
अलङ्कृता, श्रीमती
स्वरवन्दना शर्मा,
श्रीमती श्वेता भट्ट तथा
शताक्षी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का०हि०वि०वि० के रेक्टर प्रो० बी०डी०सिंह द्वारा सी०डी० विमोचन

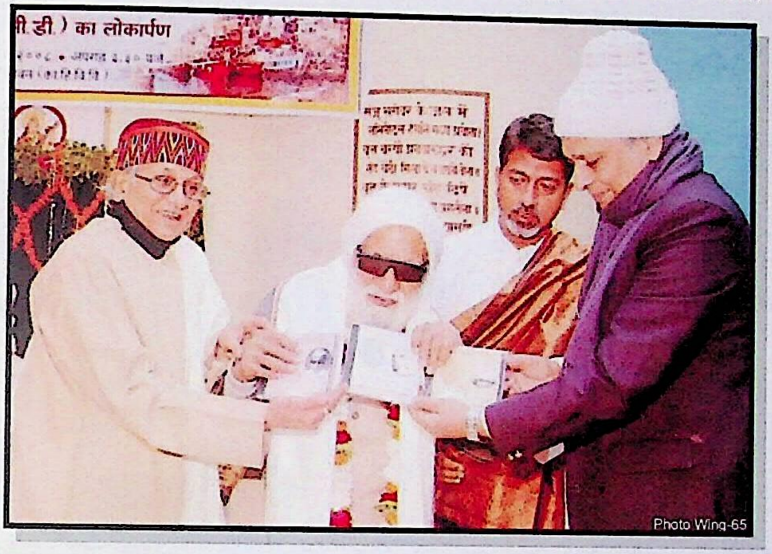

बाँए से दाहिने –
प्रो० चित्तरञ्जन ज्योतिषी,
पं० बलवन्तराय भट्ट,
श्री राहुल भट्ट तथा
प्रो० बी०डी० सिंह

विशिष्ट अवसर

का०हि०वि०वि० की हीरक जयन्ती के अवसर पर विश्वविद्यालय के स्थापना दिवस पर स्थापना स्थल पर कुलगीत का नेतृत्व करते हुए (वसन्त पञ्चमी १९७६)

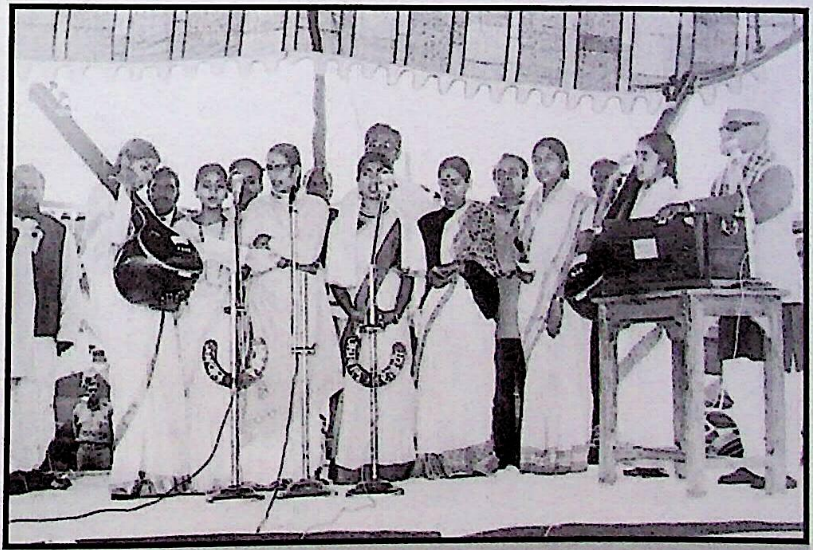

बाँए से दाहिने – डॉ० शिवप्रसाद सिंह, कु० रागिनी मिश्रा, कु० लयलीना भट्ट, डॉ० चित्तरञ्जन ज्योतिषी, श्रीमती वीणापाणि शुक्ल, कु० स्वरवन्दना भट्ट, श्री एन० रामनाथन, सुश्री ज्योत्स्नामयी मुखर्जी, डॉ० प्रदीप कुमार दीक्षित, कु० शारदा वेलणकर, कु० नीला व्यास, पं० बलवन्तराय भट्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'वन्दे मातरम्' शताब्दी समारोह (भारत माता मन्दिर) १९७६

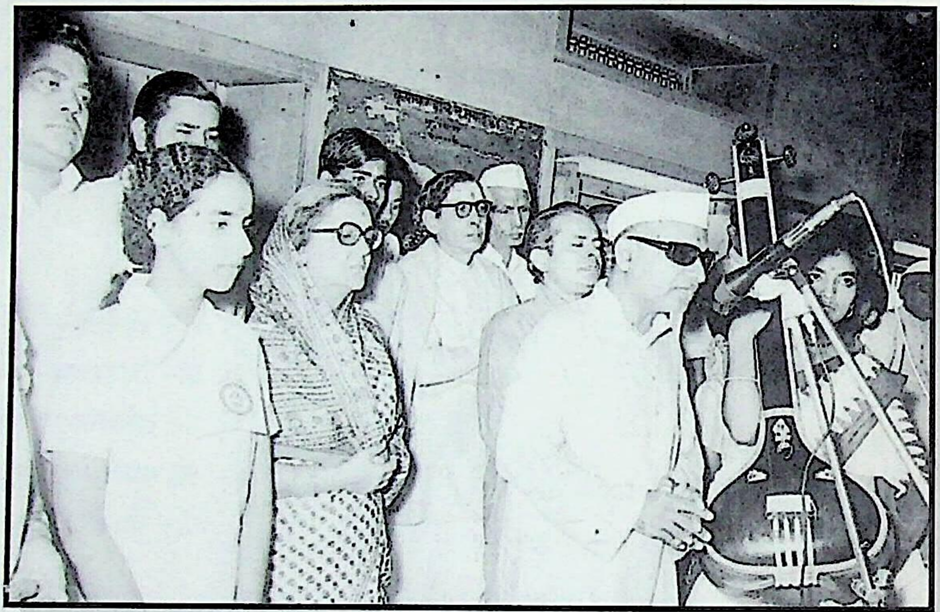

'वन्दे मातरम्' प्रस्तुत करते हुए पं० बलवन्तराय भट्ट

माननीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी बाजपेयी के वाराणसी आगमन पर वाराणसी के विशिष्ट नागरिक के रूप में भेंट करते हुए। डॉ० विद्यानिवास मिश्र (सबसे बाएँ) भी विशिष्ट नागरिक के रूप में उपस्थित थे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार समारोह, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी

संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् पं० बलदेव उपाध्याय से मिलते हुए, साथ में विभास (पुत्र)

महात्मा कबीर जयन्ती पर पं० विष्णुकान्त शास्त्री से अभिनन्दन स्वीकार करते हुए (सन् २०००)

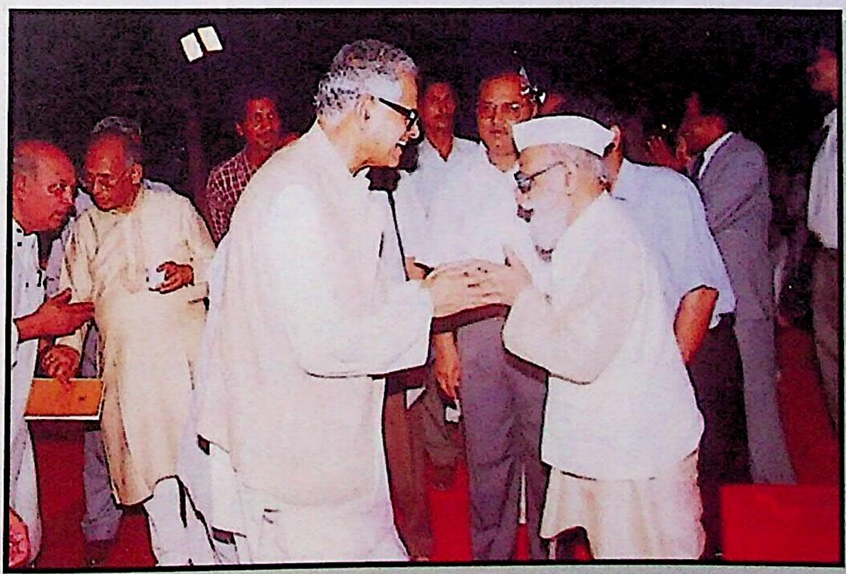

बाँए से दाहिने-श्री मुकुन्द द्विवेदी (आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के पुत्र)
श्री लक्ष्मीमल्ल सिंघवी, आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री, श्री रत्नेश वर्मा, पं० बलवन्तराय भट्ट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का०हि०वि०वि० स्थित भारत कला भवन में 'पं० ओम्कारनाथ ठाकुर वीथिका' के उद्घाटन अवसर पर (२००१)

उनकी स्वर्ण जयंती के अवसर पर
'सङ्गीत-मार्तण्ड' पं० ओमकारनाथ ठाकुर को अर्पित की गई चाँदी की कलात्मक वीणा
'वीथिका' में रखवाने के पूर्व डॉ० प्रदीप कुमार दीक्षित ने
बलवन्तराय जी से उसे स्पर्श करवाया

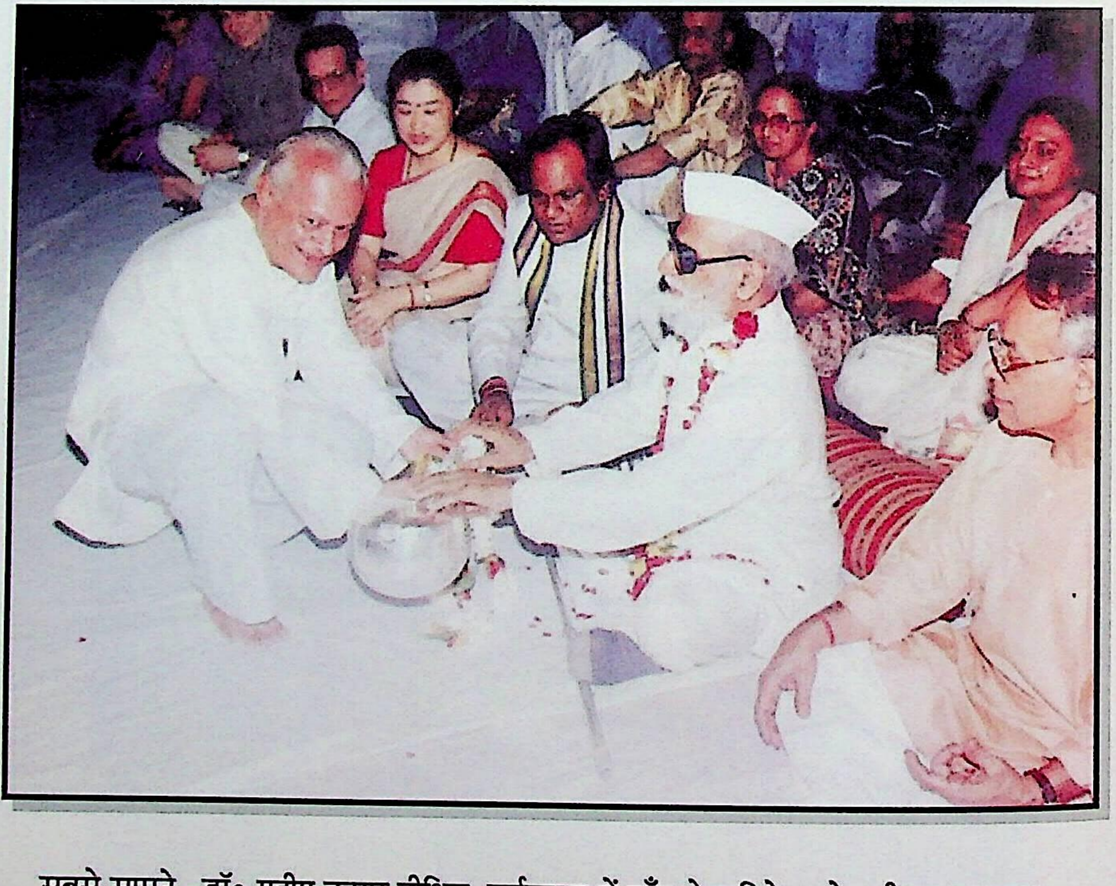

सबसे सामने -डॉ० प्रदीप कुमार दीक्षित, दर्शकगण में बाँए से दाहिने - प्रो० बी०एम०शुक्ला, श्रीमती सिम्हाद्रि (प्रथम महिला, का०हि०वि०वि०) प्रो. सिम्हाद्रि, (कुलपति, का०हि०वि०वि०) पं० बलवन्तराय भट्ट, प्रो० रामदास चक्रवर्ती
दूसरी पंक्ति में पीछे- डॉ० राजेश्वर आचार्य, प्रो० सुभद्रा चौधरी, प्रो० रञ्जना श्रीवास्तव

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'श्री कला सङ्गीत भारती' के अध्यापक अध्यापिकाओं तथा छात्र-छात्राओं के साथ १९५६-५७

कुर्सी पर बैठे बाँए से दाहिने – श्री के०एस० अवधानी, श्री राजभान सिंह, श्री रामकृष्ण पर्वतकर, श्री एम०सी० बिजावत (पी०वी०सी०) डॉ० वी०एस०झा (वी.सी०) श्रीमती वी०एस०झा, डॉ० सी०पी० रामस्वामी अय्यर (एक्स-वी०सी०) श्री ए०बेजेरियन (Charge de Affairs for Rumania, Guest of honour) पं० ओम्कारनाथ ठाकुर (Principal) पं० बलवन्त राय भट्ट, श्री डी०जी० पलुस्कर डॉ० प्रेमलता शर्मा, श्री कनकराय त्रिवेदी, श्री राजाभाऊ सोनटक्के तथा श्री राजनारायण प्रसाद

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सङ्गीत सङ्काय

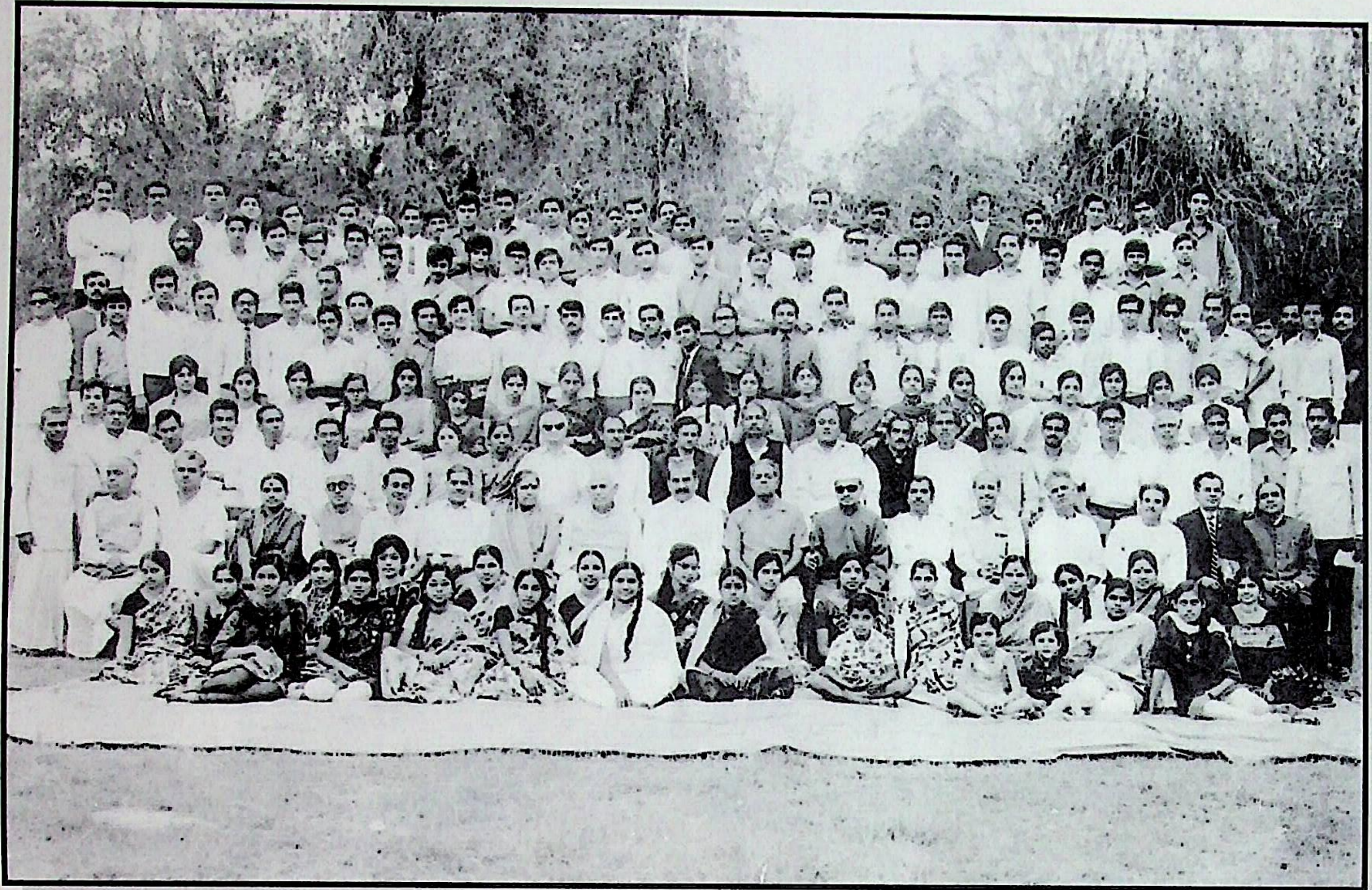

सङ्काय के अध्यापक-अध्यापिकाओं तथा छात्र-छात्राओं के साथ। छायाचित्र में तत्कालीन कुलपति डॉ० कालूलाल श्रीमाली तथा कुलाधिपति काशीनरेश डॉ० विभूति नारायण सिंह भी उपस्थित हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रणव-परिवार (१७-१२-७५)

सङ्काय की रजत-जयन्ती के अवसर पर लिया गया चित्र

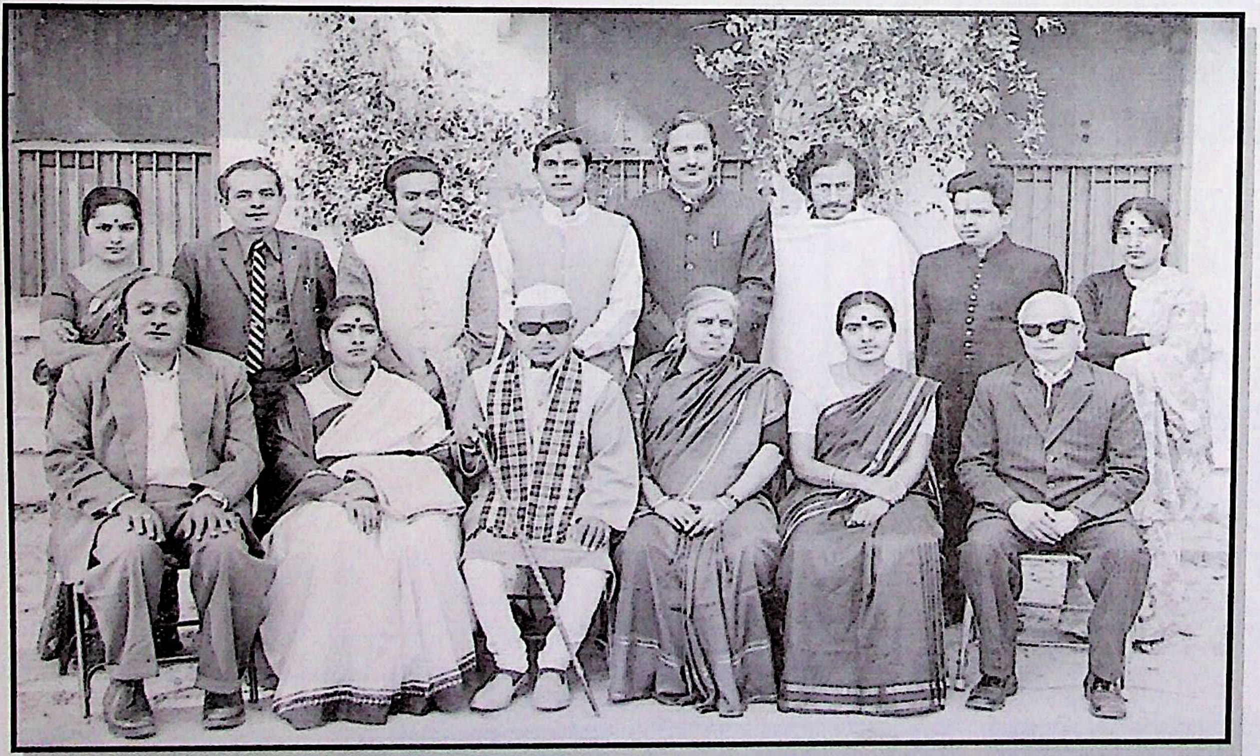

कुर्सी पर बैठे बाँए से दाहिने - पं० कनकराय त्रिवेदी, श्रीमती वसुन्धरा भट्ट, पं० बलवन्तराय भट्ट, डॉ० प्रेमलता शर्मा, डॉ० एन० राजम्, श्री राजाभाऊ सोनटक्के । पीछे खड़े बाँए से दाहिने- श्रीमती अर्चना दीक्षित, डॉ० प्रदीप कुमार दीक्षित, डॉ० चित्तरञ्जन ज्योतिषी, श्री रमाशङ्कर मिश्र, श्री योगेन्द्र मोहन मिश्र, डॉ० राजेश्वर आचार्य, डॉ० दामोदर होता तथा डॉ० वनमाला पर्वतकर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पं. बलवन्तराय भट्ट

युवावस्था से
क्रमशः
९० वर्ष की अवस्था तक

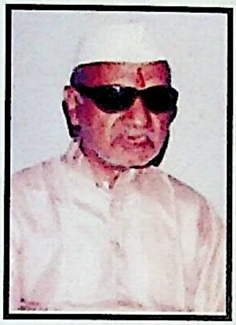

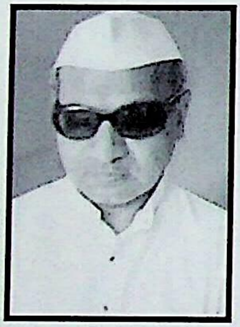

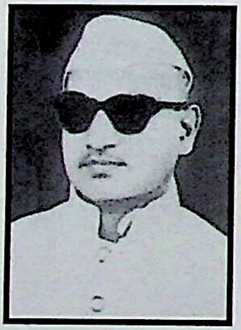

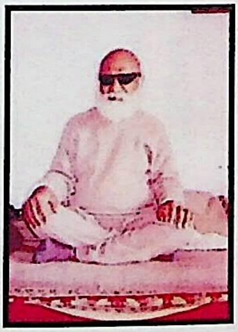

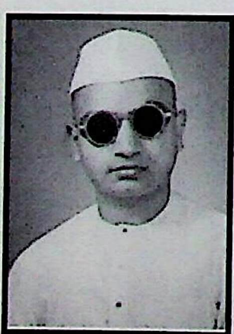

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिशिष्ट-१

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

षड्ज — बलवन्तराय जी के कार्यक्रमों की प्रस्तुतिगत विशेषता

रिषभ — गुरु एवं सङ्गीत के प्रति निष्ठा

गान्धार — विद्यापुत्र होने के दायित्व का निर्वहन

मध्यम — 'भावरङ्ग—लहरी' के बन्दिशों के प्रस्तोता : गायक, वादक, नर्तक

पञ्चम — 'दुर्तगीतविनिर्माणम्' के उदाहरण स्वरूप स्नेही कलाकारों एवं मित्र वर्ग की सूची जिनके लिए 'भैयाजी' या 'गुरुजी' ने उनकी अवश्यकता के अनुसार, उनकी फरमाइश से बन्दिशें बनायीं।

धैवत — 'भैयाजी' के हितैषी, स्नेही—मित्र एवं शिष्य— परिवार

निषाद — बलवन्तराय जी की विगत १२ पीढ़ियों के नाम।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिशिष्ट – १

षड्ज : बलवन्तराय जी के कार्यक्रमों की प्रस्तुतिगत विशेषता

पं. बलवन्तराय जी ने पं. ओम्कारनाथ ठाकुर जी का शिष्यत्व ग्रहण कर ग्वालियर घराने की गायकी आत्मसात् की। ग्वालियर घराने की गायकी 'अष्टाङ्गयुक्त' कहलाती है[1] जिसके अन्तर्गत आलाप, बोलालाप, तान, बोलतान लयकारी, मीण्ड, गमक तथा मुर्की का समावेश होता है। ग्वालियर की परम्परा में विलम्बित रचना की स्थायी तथा अन्तरा एकसाथ प्रस्तुत करते हैं तत्पश्चात् राग के विस्तार के क्रम में आलाप, बोलालाप तथा तानों का क्रम आरम्भ होता है। उसी प्रकार तार–षड्ज तक पहुँचने के बाद अन्तरे के मुखड़े के साथ तार सप्तक में राग का विस्तार करने का चलन है।

पण्डित जी का शिष्यत्व लेने के पूर्व Blind School में सीखते हुए भी बलवन्तराय जी अनेक कलाकारों की ध्वनिमुद्रिकाएँ सुन चुके थे। उ. फैयाज़ खाँ तथा उ. अब्दुल करीम खाँ साहब उनके प्रिय कलाकार रहे। बाद में जब गुरुजी के साथ सङ्गीत सम्मेलनों में जाने लगे तब भी अन्य घरानों के कलाकारों को सुनने का पर्याप्त अवसर मिला। उ. फैयाज़ खाँ साहब की गायकी विशेष प्रिय होने के कारण आगरा घराने की कुछ विशेषताएँ भट्टजी की गायकी में सहज रूप से समाहित हो गई और इस प्रकार बलवन्तराय जी की अपनी विशिष्ट शैली विकसित हुई जिसमें जयपुर घराने की बन्दिशों की विविधता तथा आगरा घराने की बोलबाँट का प्रयोग प्रखरता से परिलक्षित होता है। उ. फैयाज़ खाँ के 'अरे हाँ', 'हो' के प्रयोग से प्रभावित होकर बलवन्तराय जी भी बन्दिशों के बोल–बनाव या बहलावे में उचित स्थान पर उनका सटीक प्रयोग अत्यन्त सहजता से करते हैं। सुधी श्रोता यह अनुभव कर सकते हैं कि जब बन्दिश के भाव के साथ कलाकार तादात्म्य स्थापित करने में सक्षम होता है तभी वह उक्त प्रयोग के साथ बोल बनाव के रूप में नए–नए विधान कर सकता है। इसका परिणाम यह होता है कि गायक कलाकार के साथ ही सङ्गत कलाकार तथा श्रोतृवर्ग भी इस बहलावे के साथ झूमते हैं।

दूसरे घरानों की विशिष्टताओं को आत्मसात कर बलवन्तराय जी ने अपनी शैली को जिस रूप में समृद्ध किया उससे गुरुजी प्रसन्न हुए एवं अपने शिष्य की ग्रहणशील प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करते रहे।

● उनके प्रस्तुतीकरण सम्बन्धी विशिष्टताओं में सबसे प्रमुख बात है राग का प्रस्तुतीकरण। वे इस बात के प्रबल आग्रही रहे हैं कि गायन–वादन आरम्भ करने के साथ राग का स्वरूप स्पष्ट हो जाना चाहिए। समकालीन परिदृश्य में विभिन्न बन्धों (ख्याल, ध्रुपद, धमार, तराना आदि) के माध्यम से रागदारी प्रस्तुत करना ही ध्येय है अत: राग की सही समझ को वे सङ्गीत के विद्यार्थियों के साथ ही कलाकारों के लिए भी आवश्यक मानते हैं। राग कहाँ बोलता है उसपर पकड़ होनी चाहिए, जिसको वे राग–वाक्य कहते हैं।

• कक्षा में राग सिखाते समय जिन नियमों को वे छात्रों को बताते रहे हैं, मञ्च–प्रदर्शन में वे अक्षरश: उन नियमों का पालन करते रहे हैं। मञ्च पर भी उनके भीतर का 'शिक्षक' सदैव चैतन्य रहा है। वैचित्र्य के नाम पर राग के स्वरूप के साथ छेड़–छाड़ उनको कदापि मान्य नहीं है। अपने वास्तविक रूप में राग के सौन्दर्य को उद्घाटित करने की उनकी क्षमता अद्भुत है।

राग के स्वरूप पर बलवन्तराय जी की पकड़ की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हुए उनकी गुरु बहन प्रेमलता जी स्वीकार करती हैं कि एक ही राग की अलग–अलग बन्दिशों में उस राग की अलग–अलग छटा के दर्शन कराना भैयाजी जैसे विलक्षण सङ्गीतकार के लिए ही सम्भव है जो हमारी राग–पद्धति के रहस्यों का उद्घाटन करने में सक्षम हैं।[2]

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

● षड्ज की स्थापना करने के उपरान्त विलम्बित ख्याल आरम्भ करके आलापचारी में राग की क्रमवार बढ़त करते हैं। आकार के आलाप के साथ ही बन्दिश के बोलों का उपयोग करते हुए भी (बोलालाप के साथ) आलाप आगे बढ़ाते हैं। राग के विस्तार में वे हर बार नए–नए विधान करते हैं। विस्तार के नाम पर एक ही विधान की बारम्बार आवृति उन्हें बिल्कुल पसन्द नहीं। आलापचारी के अनन्तर थोड़ी लय बढ़ाकर बोल–बाँट तथा सरगम का प्रयोग उनकी प्रस्तुति में विशेष ध्यान आकर्षित करते हैं। बोल–बाँट में सहज रूप से आने वाली तिहाइयाँ एवं राग के अनुसार स्वरों के बल–अबल का ध्यान रखते हुए तिहाइयों के साथ आने वाली सरगम बहुत प्रभावशाली होती है। बोल–बाँट एवं सरगम दोनों प्रयोगों में ताल के तोल (ताल के ठेके का वज़न) का आनन्द सभी अनुभव करते हैं।

● आलाप की भाँति ही तानों के प्रयोग में भी राग का क्रमशः विकास दीखता है। सपाट तानों एवं गमक की तानों में वे सिद्धहस्त हैं जो ग्वालियर घराने की विशेषता है। आलङ्कारिक तानों का भी वे बखूबी प्रयोग करते हैं। खूब अभ्यास करने के कारण तानों के दाने अत्यन्त स्पष्ट एवं सहज हैं। घरानेदार गायकी सीखते समय भट्टजी ने भी अतिविलम्बित पारम्परिक रचनाएँ सीखी हैं एवं आरम्भिक दिनों में उसे प्रस्तुत भी किया है, लेकिन ऐसी अतिविलम्बित लय जिसके साथ श्रोतृवर्ग तादात्म्य स्थापित न कर सके वह उन्हें पसन्द नहीं।

● विलम्बित ख्याल के बाद छोटे ख्याल की बन्दिश प्रस्तुत करते समय भी बन्दिश गा लेने के बाद अनेकविध उसका मुखड़ा सजाते हैं। मुखड़ा सजाने से तात्पर्य है बन्दिश की पहली पङ्क्ति को नए–नए ढंग से प्रस्तुत करना। मुखड़े के नवीन विधानों में भी उनका विशेष झुकाव ताल के तोल के साथ प्रत्येक बार नए विधान करना है। मुखड़े के इस बहलावे में बन्दिश के भाव मूर्तिमान होते दीखते हैं।

● छोटे ख्याल की बन्दिश को वे जिस लय में उठाते हैं वह बहुत महत्त्वपूर्ण है। इस हिस्से में तबला–सङ्गतकार भी बहुत आनन्द उठाते हैं। छोटे ख्याल में भी तानों की बढ़त का स्वरूप ध्यान देने योग्य है। आरम्भ में बहुत छोटी–छोटी तानें (४ मात्रा, ६ मात्रा) प्रभावशाली ढंग से लेते हुए तत्पश्चात् लम्बी तानों पर आते हैं। भिन्न–भिन्न मात्राओं से तानें उठाना तथा बन्दिश में निबद्ध स्थान से भिन्न मात्रा से मुखड़े की आमद विशेष ध्यान आकर्षित करते हैं। यहाँ भी तिहाईयुक्त तेज तानें अपनी विविधता से श्रोताओं को मुग्ध करती हैं। कभी–कभी एक राग में ही छोटे ख्याल की दो–तीन बन्दिशें भी प्रस्तुत करते हैं।

● रागदारी का समापन अधिकांश तराने की प्रस्तुति से होता है। तराने के उठान में भी बन्दिश की रचना के अनुरूप सटीक लय पकड़ते हैं। अधिकांश देखा गया है कि कई कलाकार तराने भी मध्यलय में उठाकर बाद में द्रुतलय पकड़ते हैं। भट्टजी तब तक तराने को मध्यलय में नहीं उठाते जब तक उसकी रचना उस ढंग की न हो। अतः बन्दिश की रचना के अनुसार सटीक लय पकड़ना उनकी बड़ी विशेषता है। लय सही होने से बन्दिश का पूरा सौन्दर्य खिलकर सामने आता है जिसका अद्भुत प्रभाव पड़ता है।

● तराने गाते समय उच्चारण में द्रुत गति में 'दिर–दिर' की सफाई स्पष्ट दीखती है जो पर्याप्त अभ्यास से साधी गई है। यहाँ 'दिर–दिर' या 'दिर–दिर तननन' जैसे शुष्काक्षरों का नया–नया विधान (जो तराने में तान के स्थान पर लिए जाते हैं) तथा उसी में तबले के साथ सवाल–जवाब का क्रम चरम–उत्कर्ष पर चला जाता है।

● द्रुत–आड़ाचौताल को आपने साधा है। इसका उल्लेख यथास्थान हो चुका है कि द्रुत–आड़ाचौताल में स्वयं आपने कई रचनाएँ की हैं। छोटे ख्याल के रूप में प्रस्तुत की जाने वाली रचना के अतिरिक्त द्रुत–आड़ाचौताल में आपके अनेक तराने भी हैं। द्रुत–आड़ाचौताल वे इतने प्रभुत्व से प्रस्तुत करते हैं कि उनके तबला–सङ्गतकार एवं श्रोता भी अपेक्षा करते हैं कि उनके कार्यक्रम में आड़ाचौताल की बन्दिश जरूर हो।

● लयकारी के प्रति उनका प्रेम भी सबको विदित है। जब वे छोटे ख्याल के प्रस्तुतीकरण पर आते हैं तब अधिकांश एक रचना प्रस्तुत कर लेने के बाद उसी राग में अन्य तालों की रचना प्रस्तुत करते हैं जिसकी विशेषता यह रही है कि पहली रचना यदि तीनताल (१६ मात्रा) की है तब रचना गा लेने के बाद उसी तीनताल को तबले

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पर कायम रखते हुए दूसरी–तीसरी रचना किसी अन्य ताल यथा एकताल (१२ मात्रा), झपताल (१० मात्रा) या रूपक (७ मात्रा) में प्रस्तुत करते हैं। इसका क्रम परिवर्तित भी हो सकता है, यानि मूल रचना झपताल अथवा अन्य ताल और दूसरी–तीसरी रचनाएँ मूल रचना के ताल से भिन्न ताल की होंगी। इस क्रम में वे तबला–सङ्गतकार से पहली रचना का ठेका चालू रखने को कहकर स्वयं दूसरे ताल की बन्दिश (लयकारी के हिसाब से मात्रा–विभाजन करते हुए) प्रस्तुत करते हैं। यहाँ भी तिहाइयाँ उतनी ही सहजता से आती हैं। दूसरे ताल की बन्दिश गा लेने पर वापस पहली रचना का मुखड़ा उठा लेते हैं, फिर दूसरे किसी ताल की अन्य रचना उठा लेते हैं। यह प्रस्तुतीकरण उनकी एकाग्रचित्तता के चरमोत्कर्ष को बताता है। इस प्रयोग के लिए तबला–सङ्गतकार का भी लयदार होना नितान्त आवश्यक है। अपने कार्यक्रम में भट्टजी छोटे ख्याल एवं तरानों की प्रस्तुति में तबला–सङ्गतकारों को खुलकर बजाने का मौका देते हैं और बड़े उत्साह से सवाल–जवाब करते हैं किन्तु आलापचारी में वे ताल का सीधा ठेका बजवाना ही पसन्द करते हैं।

● राग प्रचलित हों या अप्रचलित, राग का चलन सरल हो या क्लिष्ट, सभी को वे समान दक्षता के साथ प्रस्तुत करते रहे हैं फिर भी राग की प्रकृति (गम्भीर, चञ्चल) के अनुरूप आलाप एवं तान लेने में उनकी आस्था है। अनेक अवसरों पर 'टप्पा' की भी प्रभावशाली प्रस्तुति दी है।

● आमतौर पर गायक वर्ग तबला–वादकों को स्पष्टतः ठेका मात्र बजाने का ही निर्देश देते हैं। भट्टजी भी रागालाप के दौरान मजबूत ठेका ही चाहते रहे। आगे के बहलावे एवं बोल–बाँट में **जितना मौका उन्होंने तबला–वादकों को दिया कोई गायक नहीं देता** बशर्ते वह बोल–बाँट के प्रवाह को बाधित न करे। छोटे ख्याल में तो **बोलकर भी कहते रहे हैं कि 'उठो' 'कस कर बजाओ' और अच्छी तिहाई आने पर शाबाशी भी खुलकर देते रहे हैं**। उनके साथ बजाने वाले तबला–वादक भी खुले दिल से इस बात को स्वीकार करते हैं और बार–बार बजाने के लिए तत्पर रहते हैं।

● रागदारी के उपरान्त कार्यक्रम का समापन अधिकांश भजन–गायन से करते रहे हैं। भजनों के प्रस्तुतीकरण में भी उनकी आध्यात्मिक रुचि की झलक स्पष्ट मिलती है (उनके द्वारा स्वरबद्ध किए गए कुछ–एक भजनों की सूची पिछले पृष्ठों पर उद्धृत है)। भजनों का चयन, शब्दों के सुस्पष्ट उच्चारण के साथ भावपूर्ण प्रस्तुतीकरण उनके भजन गायन की विशेषता रही है। भजन के अन्तिम अंश में लग्गी लड़ी के साथ द्रुतलय में ली हुई उनकी सपाट तानें अद्भुत वातावरण की सृष्टि करने में सफल रही हैं।

● बलवन्तराय जी के कार्यक्रमों की यह विशेषता रही है कि हमेशा उन्होंने अपने गायन का प्रारम्भ श्लोक–गायन द्वारा किया है। अगर रागदारी प्रस्तुत कर रहे हैं, तब आरम्भ में उसी राग में श्लोक अथवा 'राग–ध्यान' भी प्रस्तुत करते रहे हैं। यदि प्रार्थना का सञ्चालन करना हुआ तब भी आरम्भ में श्लोक अथवा दोहे उन्होंने अवश्य प्रस्तुत किए हैं। जो श्लोक अथवा दोहे–सोरठे उनको बहुत प्रिय रहे एवं जिन्हें उन्होंने अनेकानेक बार गाया उनकी सूची निम्नानुसार है –

वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकर रूपिणम्।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते।।

दयमान दीर्घ नयनां देशिकरूपेण दर्शिताभ्युदयाम्।
वामकुच निहित वीणां वरदां सङ्गीत मातृकां वन्दे।।

सरिगमपधनिरतान्तां वीणासंक्रान्तकान्तहस्तां ताम्।
शान्तां मृदुलस्वान्तां कुचभरतान्तां नमामि शिवकान्ताम्।।

ओङ्कारपञ्जरशुकीमुपनिषदुद्यानकेलिकलकण्ठीम्।
आगमविपिनमयूरीमार्यामन्तर्विभावयेगौरीम्।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ब्रह्मग्रन्थिजमारुतानुगतिना चित्तेन हृत्पङ्कजे
सूरीणामनुरञ्जकश्रुतिपदं योऽयं स्वयं राजते।
यस्माद्ग्रामविभागवर्णरचनाऽलङ्कारजातिक्रमो
वन्दे नादतनुं तमुद्धुरजगद्गीतं मुदे शङ्करम्।।

यं ब्रह्मावरुणेन्द्ररुद्रमरुत: स्तुन्वन्ति दिव्यै: स्तवै:
वेदै: साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगा:।
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदु: सुरासुरगणा देवाय तस्मै नम:।।

आरूढ़ा श्वेतहंसे भ्रमति च गगने दक्षिणे चाक्षसूत्रम्।
वामे हस्ते च दिव्याम्बरकनकमयं पुस्तकं ज्ञानगम्या।।
सा वीणां वादयन्ति स्वकरकरजपै: शास्त्रविज्ञानशब्दै:।
क्रीडन्ती दिव्यरूपा करकमलधरा भारती सुप्रसन्ना।।

धीं धीं धीं धारणाख्ये धृतिमतिनतिभिर्नामभि: कीर्तनीये।
नित्येऽनित्ये निमित्ते मुनिगणनमिते नूतने वै पुराणे।।
पुण्ये पुण्यप्रवाहे हरिहरनमिते नित्यशुद्धे सुवर्णे।
मातर्मात्रार्धतत्त्वे मतिमति मतिदे माधवप्रीतिमोदे।।

शुक्लां ब्रह्मविचारसारपरमाम् आद्यांजगद्व्यापिनीं।
वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहाम्।।
हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थितां।
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम्।।

राग भैरवी का ध्यान–श्लोक :

स्फटिकरचितपीठे रम्यकैलासशृङ्गे विकचकमलपत्रैरर्चयन्ती महेशम्।
करधृतघनवाद्या पीतवर्णायताक्षी सुकविभिरियमुक्ता भैरवी भैरवस्त्री।।

वैसे बलवन्तराय जी ने *'भावरङ्ग–लहरी'* में अधिकांश रागों के विवरण के आरम्भ में राग–बोधक कविता दी है किन्तु राग भैरवी की राग–बोधक कविता विशेष है जिसको उन्होंने मञ्च पर भैरवी के ध्यान–श्लोक के उपरान्त प्रस्तुत भी किया है जो निम्नवत् है–

हिमगिरि शिखर कैलास पर, कैलासपत आराधती।
दिनमुख प्रकट सप्तस्वरा, रि ग ध नि कोमल साधती।।
स्वरमेल हनुमत् नाम की, कर्णाटकी तोड़ी कही।
रागाधिपतभैरव–प्रिया, यह भावपूरित भैरवी।।[३]

कुन्द इन्दु सम देह, उमारमण करुणा अयन।
जाहि दीन पर नेह, करहु कृपा मर्दन मयन।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नील सरोरुह स्याम तरुण अरुण वारिज नयन।
करहु सो मम उर धाम सदा क्षीरसागर शयन।।

बन्दौं गुरुपद कञ्ज कृपासिन्धु नररूप हरि।
महामोह तम पुञ्ज जासु बचन रविकर निकर।।

वह सोभा समाज सुख कहत न बनै खगेस।
बरनैं सारद सेष श्रुति सो रस जान महेस।।

नभ दुन्दुभी बाजहिं बिपुल गन्धर्व किन्नर गावहीं।
नाचहिं अपछरा बृन्द परमानन्द सुर मुनि पावहीं।
भरतादि अनुज विभीषनाङ्गद हनुमदादि समेत ते।
गहे छत्र चामर ब्यजन धनु असि चर्म सक्ति विराजते।

रिषभ : गुरु एवं सङ्गीत के प्रति निष्ठा

बलवन्तराय जी का सारा जीवन गुरु के प्रति निष्ठा से युक्त रहा। उनके अनुशासन में रह कर अहर्निश सेवा–भाव से रहते हुए विद्यादान लिया किन्तु प्रत्यक्ष गुरु की उपस्थिति न होने पर भी जिस 'विद्यार्थी' के दर्शन उनमें होते हैं वह दुर्लभ ही है।

आज ९० वर्ष की आयु में भी चाहे आकाशवाणी का प्रसारण हो अथवा ध्वनि–मुद्रिका के रूप में कोई सङ्गीत सुन रहे हों वे सदैव सीधे बैठ क़र ही सङ्गीत सुनते हैं। विशेष रूप से यदि गुरुजी पं. ओम्कारनाथ जी का गायन प्रसारित हो रहा हो तब वे सीखने की एकाग्रता के साथ ही उसे सुनते हैं। यदि उन्हें किसी प्रकार की शिथिलता अनुभव हो रही हो अथवा नींद आ रही हो तब तत्काल रेडियो बन्द कर देते हैं, क्योंकि आलस्य की मुद्रा में सीखना नहीं होता। चूँकि सङ्गीत उनके लिए साधना का विषय रहा है अत: अगल–बगल लोग बातचीत में व्यस्त हों और मनोरञ्जन के रूप में गाना–बजाना चले यह उन्हें कभी मान्य नहीं है।

गान्धार : विद्यापुत्र होने के दायित्व का निर्वहन :

पं. ओम्कारनाथ जी की अपनी सन्तान जीवित नहीं रही। प्रसव के समय उनकी पत्नी श्रीमती इन्दिरा देवी की मृत्यु हो गई थी। अपने शिष्य की योग्यता तथा भक्ति से प्रभावित होकर वे अनेक अवसरों पर उन्हें अपना 'विद्यापुत्र' बता चुके थे। पण्डित जी कठोर अनुशासन के आग्रही थे, जिस कारण शिथिलता दिखाने वालों को अधिकांश उनके कोप का भाजन होना पड़ता था, किन्तु यह बलवन्तराय जी का सौभाग्य था कि उन्हें अपने गुरु से पितृतुल्य प्रेम भी मिला था, जिसको वे अपनी बड़ी निधि मानते हैं।

गुरुजी की महायात्रा में अनवरत 'रामधुन', अद्भुत ऋणानुबन्ध — वर्षों पूर्व एकबार गुरुजी ने बात की बात में बलवन्तराय से कहा था कि शनि की महादशा में ओम्कारनाथ को जाना है, तब तुम रोना नहीं, राम राम करना। गुरु के इस आदेश का उन्होंने अक्षरश: पालन किया।

जीवन के अन्तिम दिनों में गुरुजी पक्षाघात से पीड़ित थे और बम्बई के अस्पताल में थे। उनके स्वास्थ्य में कुछ सुधार की सूचना मिलने पर बलवन्तराय जी अपने शिष्य रमाशङ्कर मिश्र को साथ लेकर उनके दर्शनार्थ गए और बच्चे अपनी माँ के साथ नाना–नानी (श्री त्र्यम्बक वामन तळवलकर तथा सौ. शान्ता तळवलकर) के यहाँ पूना चले गए।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दूसरे दिन प्रात: जब वे गुरुजी को मिलने जाने के लिए तैयार हो रहे थे तभी पिछली रात को गुरुजी के दु:खद निधन का समाचार मिला। उस समय उन्होंने सुबह की कॉफी भी नहीं ली थी, बस उसी तरह वे गुरुजी के दर्शन के लिए गए। दाह संस्कार हेतु गुरुजी की देह को भड़ौंच ले जाया गया। भड़ौंच में उनके घर से श्मशान घाट जाने तक पूरे रास्ते वे अपने शिष्य के साथ गुरुजी की इच्छानुसार 'रामधुन' (रघुपति राघव राजा राम) गाते हुए गए। कहीं पानी पीने नहीं रुके, फिर विश्राम का तो प्रश्न ही नहीं उठता था। अन्त में उन्होंने गुरुजी के पार्थिव शरीर के पास कहा कि गुरुजी मैंने अपनी पूरी हाजिरी आप के पास लगाई है।

कैसा संयोग! कि बनारस से बम्बई गुरुजी के आदेश का पालन करने पहुँच गए। यह कैसा ऋणानुबन्ध था!सब चकित थे, क्योंकि यात्रा तो गुरुजी को प्रत्यक्ष मिलने के लिए की थी। उस समय यह कल्पना नहीं थी कि उनके अन्तिम दर्शन होंगे। अस्तु।

वाराणसी आते समय वे अपने साथ गुरुजी का अस्थिकलश पावन गङ्गा में विसर्जित करने के हेतु लाए। इस अवसर पर उन्होंने गुरुजी के प्राचार्य–पद के गौरव के अनुरूप तत्कालीन सङ्काय–प्रमुख डॉ. लालमणि मिश्र के हाथों उनकी भस्म प्रवाहित करवाई। इतना ही नहीं, 'विद्यापुत्र' कहलाने के अपने दायित्व–बोध से ही उन्होंने गुरुजी की पहली बरसी पर यानि सन् १९६८ के दिसम्बर माह में अपने यहाँ श्राद्ध का भोज किया जिसमें गुरुजी के प्रशंसकों और प्रेमी जनों के अतिरिक्त सङ्गीत–सङ्काय के सभी शिक्षक, सङ्गतकार तथा अन्य गैर–शिक्षण कर्मचारी आए थे।

'विद्यापुत्र' के रूप में जो सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य भट्टजी ने किया है वह है गुरुजी के मरणोपरान्त उनकी पुस्तक '*सङ्गीताञ्जलि*' के चार भागों का पुनर्प्रकाशन

'*सङ्गीताञ्जलि*' के प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ भागों के परिवर्धित संस्करणों का सम्पादन

सङ्गीत–शिक्षण के क्षेत्र में पं. ओमकारनाथ जी ठाकुर ने एक लिखित पाठ्यक्रम बनाकर तथा उसके अनुरूप पाठ्य–सामग्री (क्रियात्मक तथा शास्त्र–सम्बन्धी) तैयार करने में अपने गुरु पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर का अनुसरण किया। अपने गुरु द्वारा सङ्गीत–शिक्षण के क्षेत्र में रखी हुई मजबूत नींव के आधार पर जिस बृहत् भवन की परिकल्पना करते हुए उसे मूर्त रूप देने में पण्डित जी प्रवृत्त हुए थे, उस कार्य को, अर्थात् शिक्षण के क्षेत्र में उनकी विरासत को उन्हीं की पद्धति से आगे ले जाने में बलवन्तराय जी ने अथक परिश्रम किया।

पं. ओमकारनाथ जी ठाकुर ने अपने जीवन काल में '*सङ्गीताञ्जलि*' (छ: भागों में) तथा 'प्रणव–भारती' (प्रथम भाग) का प्रणयन किया था जो सङ्गीत के प्रयोग तथा शास्त्र पक्ष के उनके गूढ़ ज्ञान का सार–सङ्कलन है।

'सङ्गीताञ्जलि' में गुरुजी ने स्वरचित बन्दिशों के साथ पारम्परिक बन्दिशों का समावेश भी किया था जिसमें राग–विवरण तथा मुक्त आलाप–तान के साथ ही आरम्भिक विद्यार्थियों के लिए बन्दिशों के साथ तालबद्ध आलाप तथा तानें भी दी थीं। इतना ही नहीं भाग एक से छ: तक सबमें शास्त्र–पक्ष के कई बिन्दुओं पर प्रकाश डाला था।

गुरुजी के देहावसान के बाद जब '*सङ्गीताञ्जलि*' की प्रतियाँ खत्म होने लगीं तब उसकी अनुपलब्धता से छात्र–छात्राओं को होने वाली कठिनाइयों को लक्ष्य करते हुए उनकी अनुपस्थिति में स्वयं के 'विद्यापुत्र' कहलाने के दायित्व–बोध से ही बलवन्तराय जी '*सङ्गीताञ्जलि*' के पुनर्प्रकाशन हेतु सन्नद्ध हो गए। इस प्रकार आवश्यकतानुसार सन् १९७५ में '*सङ्गीताञ्जलि*' के द्वितीय भाग के द्वितीय संस्करण का, सन् १९७७ में प्रथम भाग के तृतीय संस्करण सन् १९७९ में तृतीय भाग के द्वितीय संस्करण का तथा १९९७ में चतुर्थ भाग के द्वितीय संस्करण का सम्पादन किया।

चूँकि गुरुजी के साथ के अपने लम्बे सहवास के कारण उन्होंने उनकी शिक्षण पद्धति को भली भाँति आत्मसात् किया था अत: ओमकारनाथ जी की ही पद्धति का अनुसरण करते हुए समय की आवश्यकता के अनुसार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भट्टजी ने छात्र–छात्राओं के लाभ की दृष्टि से किञ्चित परिवर्द्धन के साथ ही उसे प्रस्तुत किया जो गुरुजी के प्रति सच्ची श्रद्धाञ्जलि सिद्ध हुई। इस प्रकार उन्होंने गुरु द्वारा सङ्गीत–जगत् को दी हुई अमूल्य थाती के संरक्षण का श्लाघनीय कार्य किया।

मध्यम : 'भावरङ्ग लहरी' की बन्दिशों के प्रस्तोता : गायक, वादक, नर्तक

दीर्घ काल तक शिक्षण से जुड़े होने के कारण पं. बलवन्तराय जी का शिष्य परिवार बहुत बड़ा है। अनेक देशी–विदेशी शिष्यों तथा प्रशिष्यों के अतिरिक्त अन्य अनेक कलाकार इनकी रचनाओं को गायन–वादन तथा नर्तन के माध्यम से सफलता पूर्वक प्रस्तुत करते रहे हैं तथा वर्तमान में भी कर रहे हैं जिनका नामोल्लेख करना अपना कर्तव्य समझती हूँ। इनके शिष्य देश के विभिन्न भागों में शिक्षण कार्य में प्रवृत्त होते हुए कलाकार के रूप में भी सम्मानित हैं।

'भावरङ्ग' जी की रचनाओं को प्रस्तुत करने वाले कलाकारों में उनकी गुरुबहन विख्यात वॉयलिन वादिका 'पद्मभूषण' डॉ. श्रीमती एन. राजम्, गुरुभाई श्री कनक राय त्रिवेदी तथा शिष्य परिवार में डॉ. दामोदर होता, प्रो. चित्तरञ्जन ज्योतिषी, प्रो. प्रदीपकुमार दीक्षित, डॉ. राजेश्वर आचार्य, श्रीमती प्रभा मुकर्जी, स्व. श्री रमाशङ्कर मिश्र, स्व. अजित भट्टाचार्य, डॉ. वनमाला पर्वतकर, डॉ. श्रीमती अर्चना दीक्षित, डॉ. श्रीमती स्वरवन्दना शर्मा (पुत्री), डॉ. श्रीमती प्रतिमा कुमार प्रमुख हैं। विदेशी शिष्यों में प्रो. हेराल्ड एस पॉवर्स, श्रीमती हेरियट, श्री डैनियल बिटकर (वंशी वादक), सुश्री ऐबी रॉबिनोविट्ज़ (वंशी) तथा श्रीमती सन्द्रा प्रमुख हैं। जिन कलाकारों ने भट्टजी से सीधे शिक्षा नहीं प्राप्त की किन्तु इनकी रचनाओं को प्रभुत्व के साथ प्रस्तुत करते हैं उनमें स्व. श्री रसिकलाल अन्धारिया तथा उनकी शिष्या श्रीमती प्रदीप्ता गाङ्गुली, स्व. काशीनाथ बोडस, डॉ. श्रीमती वीणा सहस्रबुद्धे तथा उनकी शिष्याएँ, सुश्री मालिनी राजुरकर तथा उनकी शिष्या कल्पना झोकरकर, स्व. श्रीकान्त बाकरे, डॉ. श्रीमती विद्या कातगडे, डॉ. मोनिका शाह, सुश्री गोपा चैटर्जी, श्रीमती मिताली बैनर्जी भौमिक, डॉ. श्रीमती सोमा घोष, डॉ. श्रीमती सङ्गीता शङ्कर (वॉयलिन), सुश्री कला रामनाथ (वॉयलिन) तथा श्री रोनू मजुमदार (वंशी) प्रमुख हैं।

यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि 'भावरङ्ग' जी की रचनाओं पर नृत्य–प्रस्तुति भी सफलतापूर्वक हुई है जिसका विवरण निम्नवत् है –

- भावनगर निवासी वरिष्ठ नृत्याचार्य श्री धरमशी मूलजी भाई शाह ने भट्टजी की षष्टिपूर्ति के अवसर पर भावनगर में आयोजित सम्मान समारोह में अपनी संस्था 'कलाक्षेत्र' की विद्यार्थिनियों से निम्नोल्लिखित प्रस्तुति करवाई–

श्री धरमशी भाई द्वारा नृत्यबद्ध की गई रचनाएँ –

रचना की प्रथम पङ्क्ति	राग	ताल	बन्धप्रकार
१. विहरति ब्रह्मनन्दिनी	हंसध्वनि	आड़ाचौताल	छोटाख्याल
२. ए री कोयलिया बन की मुरलिया	देश	धुमाली	ठुमरी
३. दल बादल दामिनि दमकी	श्याम–देश	तीनताल	छोटाख्याल
४. वारी वारी पुनि वारी जाऊँ	नँद	तीनताल	छोटाख्याल
५. अब खेलन लागे कन्हाई	कलावर्धिनी	तीनताल	छोटाख्याल
६. बाजत ताल मृदङ्ग	सिन्धूरा	रूपक	मध्यलयख्याल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

• भरतनाट्यम् की प्रसिद्ध नृत्याङ्गना पुणे निवासिनी श्रीमती सुचेता चाफेकर लगभग तीन दशकों से 'नृत्यगङ्गा' नामक प्रस्तुति में उत्तर–भारतीय शास्त्रीय–सङ्गीत के बन्धों को भरतनाट्यम्–शैली में प्रस्तुत कर रही हैं जिसमें उन्होंने भट्टजी के अडाणा राग के प्रसिद्ध चतुरङ्ग 'होरी होरी होरी खेलत नन्दलाल' का समावेश किया है।

श्रीमती सुचेता चाफेकर द्वारा नृत्यबद्ध की गई रचना :

	रचना की प्रथम पङ्क्ति	राग	ताल	बन्धप्रकार
१.	होरी होरी होरी खेलत नन्दलाल	अडाणा	तीनताल	चतुरङ्ग

इस चतुरङ्ग को श्रीमती सुचेता चाफेकर ने निम्नलिखित अवसरों पर प्रस्तुत किया है–

❖ सवाई गन्धर्व महोत्सव, पुणे।

❖ केसरबाई केरकर महोत्सव, पणजी (गोवा)।

❖ एलोरा नृत्य महोत्सव, औरङ्गाबाद।

❖ गङ्गा महोत्सव, वाराणसी।

• पुणे निवासिनी श्रीमती मनीषा साठे कथक नृत्याङ्गना हैं। इन्होंने भी अडाणा का चतुरङ्ग नृत्यबद्ध किया है। इसके अतिरिक्त द्रुत आड़ाचौताल में निबद्ध राग–बिहाग तथा तीन ताल में निबद्ध अहीर–भैरव का तराना भी प्रस्तुत किया है। राग–बिहाग का तराना मनीषा जी ने श्रीमती योगिनी गाँधी के साथ युगल रूप में किया है।

इन रचनाओं को श्रीमती साठे ने विभिन्न अवसरों पर पुणे में प्रस्तुत किया है।

❖ 'अद्वैत', तिलक स्मारक मन्दिर, पुणे

❖ दीनानाथ मङ्गेशकर नाट्यगृह, मुम्बई

❖ मनीषा नृत्यालय वार्षिक महोत्सव, तिलक स्मारक मन्दिर, पुणे

श्रीमती मनीषा साठे द्वारा नृत्यबद्ध की गई रचनाएँ

	रचना की प्रथम पङ्क्ति	राग	ताल	बन्धप्रकार
१.	तन तदारे दानि तदानी दीम	बिहाग	द्रुतआड़ाचौताल	तराना
२.	तोम तोम तदरे तोम तननननननन	अहीरभैरव	तीनताल	तराना
३.	होरी होरी होरी खेलत नन्दलाल	अडाणा	तीनताल	चतुरङ्ग

• जयपुर सङ्गीत संस्थान में कथक की प्रवक्ता श्रीमती कविता सक्सेना ने भी अडाणा के चतुरङ्ग को नृत्यबद्ध कर सन् २००२ में संस्थान के वार्षिकोत्सव पर कथक शैली में छात्राओं द्वारा सामूहिक प्रस्तुति करवाई।

• संस्थान की ही कथक की अन्य प्रवक्ता सुश्री ज्योति भारती गोस्वामी ने भी उक्त चतुरङ्ग 'होरी होरी होरी खेलत नन्दलाल' को स्वयं जयपुर के जवाहर कला केन्द्र में प्रस्तुत किया।

• कथक केन्द्र, जयपुर की प्राचार्या सुश्री रेखा ठाकर ने भी एकाधिक अवसरों पर जयपुर में अडाणा के चतुरङ्ग की सामूहिक प्रस्तुति करवाई

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

❖ कथक केन्द्र, दिल्ली तथा सङ्गीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में जयपुर में आयोजित 'फागोत्सव' में कथक केन्द्र, जयपुर की सामूहिक प्रस्तुति के रूप में।

❖ राजस्थान पर्यटन मन्त्रालय द्वारा जयपुर में आयोजित 'वसन्तोत्सव' में भी 'होरी होरी होरी खेलत नन्दलाल' की प्रस्तुति करवाई गई।

● डॉ. लयलीना भट (पुत्री तथा इस पुस्तक की लेखिका) ने स्वयं भी विभिन्न अवसरों पर बलवन्तराय जी की बन्दिशों का उपयोग एकल, युगल तथा सामूहिक नृत्य–प्रस्तुति हेतु किया है।

१. वसन्त नृत्य एवं तराना	–	राग बहार तथा बसन्त
२. चतुरङ्ग	–	राग–चन्द्रकौंस
३. चतुरङ्ग	–	राग–मालकौंस
४. गणपति–स्तुति	–	राग–भूपाली

● पं. बलवन्तराय भट्ट की नतिनी डॉ. श्रुतिवन्दना शर्मा (शोध वैज्ञानिक, याहू रिसर्च लैब, बैंगलोर) ने अपने नाना के ९०वें वर्ष में उनकी बन्दिशों की नृत्यमय प्रस्तुति 'त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये' की भावना से की जिसका नृत्य संयोजन भरतनाट्यम् शैली की कलाकार बंगलूर निवासिनी श्रीमती चित्रा दाशरथि (चन्द्रशेखर) ने किया।

श्रुतिवन्दना की प्रस्तुति का विवरण –

१. तदरे दीं तान दीं	तराना	राग–भूपाली, तीन ताल
२. वक्रतुण्ड महाराज गणपति	छोटा ख्याल	राग–भूपाली, तीन ताल
३. माधव बेनु में मधु गात	,,	तिलङ्ग, रूपक
४. सजन को सन्देस न आयो	,,	देसी, तीन ताल
५. मधुबन में मुरली बज रही	,,	कौशिक कान्हड़ा, तीन ताल
६. राधिका रास खेलन चली आज	,,	जैजैवन्ती, तीन ताल
७. नाचति वृषभानु–नन्दिनी	श्रीराधास्तुति	भैरवी, दादरा
८. सो भावरङ्ग रङ्गाया	छोटा ख्याल	अहीर ललित, तीन ताल

इस नृत्य संयोजन में विशेषरूप से उल्लेखनीय बात यह है कि समसामयिक परिदृश्य में उत्तर–भारतीय सङ्गीत पद्धति में 'तराना' अथवा दक्षिण–भारतीय सङ्गीत पद्धति में 'तिल्लाना' कार्यक्रम के समापन–अंश के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, उसे श्रीमती चित्रा ने 'पुष्पाञ्जलि' के रूप में नृत्यबद्ध किया। इसी प्रकार दक्षिण–भारतीय सङ्गीत की बैठकें अथवा नृत्य–कार्यक्रम का समापन 'मङ्गलम्' से होता है जो शान्त रस का वाहक एवं सभी के लिए मङ्गलकामना से युक्त होता है। उसके समकक्ष श्रीमती चित्रा दाशरथि ने समापन अंश के रूप में भट्टजी की रचना 'सो भावरङ्ग रङ्गाया जो आतम अनुभव पाया' को चुना तथा उसकी नृत्य–संरचना की। यह रचना आध्यात्मिक भाव से सम्पृक्त उनकी अनेक रचनाओं में से एक है।

'मङ्गलम्' की भावना के समकक्ष इस रचना की प्रस्तुति अत्यन्त उपयुक्त सिद्ध हुई।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पञ्चम :

'द्रुतगीतविनिर्माणम्' के उदाहरण स्वरूप स्नेही कलाकारों एवं शिष्यवर्ग की सूची जिनके लिए 'भैयाजी' या 'गुरुजी' ने उनकी आवश्यकता के अनुसार, उनकी फरमाइश से बन्दिशें बनाई

कलाकार का परिचय	सम्बन्ध	रचना परिचय	रचना तिथि
प्रो. गजेन्द्र त्रिवेदी	विद्यार्थी, सूरत	अनहद बाजे री सखि (राग—पटदीप, तीन ताल)	१९४९
डॉ. दामोदर होता	विद्यार्थी, वाराणसी	❋ सोचत माई ठाढ़ी अकेली (राग—चन्द्रकौंस, वि. झूमरा)	१०.११.१९५८
		चन्द्र की चाँदनी मदभरी (राग—चन्द्रकौंस,तीनताल)	
सुश्री नलिनी गजेन्द्रगडकर	विद्यार्थी, वाराणसी	☼ धिट तिट बजे ताल धमार (राग—जलधर केदार, धमार)	०९.१२.१९५८
पं. काशीनाथ बोडस	पं. ओमकारनाथ ठाकुर के गुरुभाई पं. शङ्कर श्रीपाद बोडस के सुपुत्र, कानपुर	हमें ना सिखाओ यह ज्ञान (राग—बिलासखानी तोड़ी, तीनताल)	०९.०१.१९५९
पं. शङ्कर श्रीपाद बोडस	⌘ पं. विष्णु दिगम्बर जी के शिष्य तथा पं. ओम्कारनाथ ठाकुर के गुरुभाई	सखिन मिल गावो (राग—गोरख कल्याण, तीनताल)	१३.०५.१९५९
श्री गोपीकृष्ण नागर	विद्यार्थी, वाराणसी	कल ना परे श्याम बिन मोहे (राग—बागेश्री, तीनताल)	१०.१२.१९६१

❋ उक्त दोनों रचनाएँ इलाहाबाद में आयोजित All India Music Conference में गाने के लिए बनाई गई थीं।

☼ उक्त रचना प्रयाग सङ्गीत समिति की परीक्षा में गाने के लिए नलिनी जी ने बनवाई थी और ट्रेन से इलाहाबाद जाते समय रास्ते में एक और परीक्षार्थी को भी उन्होंनें सिखाई।

⌘ पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी ने कानपुर—वासियों के आग्रह पर बोडस जी को सङ्गीत के सम्यक् प्रचार—प्रसार के लिए वहाँ छोड़ा था, वे आजीवन वहाँ रहे तथा अनेकों को विद्यादान दिया। यह कहना अनुचित नहीं होगा कि कानपुर में वे सङ्गीत—शिक्षा के पर्याय हो गए। बलवन्तराय जी के प्रति आपका पुत्रवत् स्नेह रहा। इनकी इच्छा के अनुसार बलवन्तराय जी ने गोरखकल्याण की उक्त रचना बनाई।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कलाकार का परिचय	सम्बन्ध	रचना परिचय	रचना तिथि
श्रीमती भूपेन्द्र सीतल	सहकर्मी (रीडर, कण्ठ–सङ्गीत, महिला महाविद्यालय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय)	✠ आयो सखि सावन (राग–कोमल आसावरी, द्रुत एकताल)	२४. ६. १९७६
		सखि सब देस सूनो भयो (राग–मारवा, वि. एकताल)	२३. ६. १९७६
डॉ. चित्तरञ्जन ज्योतिषी	विद्यार्थी, वाराणसी	राजत श्री ब्रजराज (राग–कौशिक कानड़ा, वि.एकताल)	१६. ९. १९७६
कु. उषा मालवीय	विद्यार्थिनी, वाराणसी	आज रङ्ग राग छाए (राग–जोग, द्रुत एकताल)	१६. ९. १९७६
डॉ. एन. राजम	गुरुबहन, वाराणसी	❊ तराना (राग–मारुबिहाग, द्रुत आड़ाचौताल)	२८. १०. १९७६
		रावरे बलमा (राग–नीलाम्बरी, वि. एकताल)	४.१२.१९७६
		रसिया प्यारे घर आवो जी (राग–नीलाम्बरी, तीनताल)	०९.१२.१९७६
		(राग–आभोगी, द्रुत आड़ाचौताल)	२१.४.१९७७
		राम नाम जप रे मन (राग–दुर्गा, द्रुत एकताल)	१९.३.१९७८
डॉ. सुभद्रा चौधरी	विद्यार्थिनी एवं गुरुबहन	तराना (राग–बिहाग, द्रुत आड़ाचौताल)	२९.१०.१९७६
		श्री तेजोमयी बालार्कयुत (राग–देशकार, द्रुत आड़ाचौताल)	२८.४.१९७८
		✹ शिवगौरी ध्यान धार (राग–भैरवी, वि. एकताल)	२९.०७.१९८६
श्री अमुभाई दोषी	स्नेही, कलाकार	राधेवर की छवि (राग–बागेश्री, मध्यलय एकताल)	मार्च, १९७७
डॉ. अर्चना दीक्षित	विद्यार्थिनी, वाराणसी	मातेश्वरी राग–वाचस्पति. वि.एकताल	२५.०८.१९७७
		मङ्गमयी श्रीमहादेवि (राग–वाचस्पति, द्रुत तीनताल)	दिसम्बर, १९७७
सुश्री प्रभा बैनर्जी	विद्यार्थिनी, वाराणसी	श्री रासेश्वर की छबि बनी (राग–मालकौंस, वि. एकताल)	१७.५.१९७७
डॉ. राजेश्वर आचार्य	विद्यार्थी, वाराणसी	✶ दिर दिर दिर दिर दिर ता नों (राग–शुद्ध सारङ्ग, तीनताल)	२५.१०.१९६४
श्रीमती हेरियट ह्यूरी	विद्यार्थिनी, वाराणसी	साँवल अब घर आए (राग–भीमपलासी, तीनताल)	१७.४.१९७८
		जोगी जिन जाओ (राग–जोग, वि. एकताल)	३१.७.१९७८

✠ श्रीमती सीतल ने दोनों रचनाएँ दिल्ली के रेडियो प्रोग्राम (दिनाङ्क ८.७.१९७६) में प्रस्तुत करने के लिए अनुरोध से बनवाई थीं।

❊ राजम जी ने उक्त रचना, रेडियो सम्मेलन, कलकत्ता (१३.११.१९७६) में बजाने हेतु अनुरोध से बनवाई थी।

✹ सुभद्रा जी ने भैरवी राग का बड़ा ख्याल अपनी एक विद्यार्थिनी के कहने से बनवाया था।

✶ उक्त रचना राजेश्वर जी ने अन्तर्विश्वविद्यालयीय युवा महोत्सव में प्रस्तुत की थी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कलाकार का परिचय	सम्बन्ध	रचना परिचय	रचना तिथि
श्री रसिकलाल अन्धारिया ◎	स्नेही कलाकार, भावनगर	चेरो आपनो जानि (राग—रागेश्रीकौंस,वि.झूमरा)	१०.९.१९७८
		रागन को रङ्ग दे (राग—रागेश्रीकौंस, तीनताल)	२१.१०.१९७८
		अजपा जाप जप नर ज्ञानी (राग—मधुशिव, रूपक)	मार्च ८३
		जय जयति अम्बे (राग—मधुशिव, तीनताल)	१८.७.१९८३
डॉ. प्रेमलता शर्मा	गुरुबहन, वाराणसी	❁ रास रमणी राधिका (राग—रागेश्री, चौताल)	२८.९.१९७९
श्री लक्ष्मीगणेश तिवारी	विद्यार्थी, वाराणसी (सम्प्रति अमरीका में)	खेलन चली सुन्दरी (राग—गोरखकल्याण, तीनताल)	१९८०
श्रीमती स्वरवन्दना शर्मा	पुत्री, विद्यार्थिनी, वाराणसी	ब्रजजन मधुर मङ्गल गावे (राग—पूरियाधनाश्री, रूपक)	२५.१२.१९८०
		तननि देरे तों तननि तों (राग—पूरियाधनाश्री, द्रुतआड़ाचौताल)	२५.१२.१९८०
		(राग—सावनी कल्याण, झपताल)	अक्टूबर १९८२
		सब निसि जागे रघुनाथ (राग—मालकौंस, धमार)	४.१०.१९८२
कु. भैरवी भट्ट	पुत्री, वाराणसी	का कहिए मात जसोदा (राग—विहाग, वि. एकताल)	५.१२.१९८१
श्री जॉन मन्से	विद्यार्थी, हालैण्ड निवासी	ॐ नमः शिवाय गौरीश्वराय (राग—भैरव, वि. एकताल)	८.९.१९८२
पं. विनयचन्द्र मौद्गल्य (भाईजी)✦	मित्र, नई दिल्ली	बृन्दावन मुरली बाजे सखि (राग—जौनपुरी, तीनताल)	२९.४.१९८३

◎पुराने परिचित। बलवन्तराय जी के पिता जी भावनगर में रसिकलाल जी के पिता जी के किराएदार थे। रसिकलाल के बड़े भाई श्री बाबूलाल अन्धारिया बलवन्तराय जी के परम स्नेही थे। ये स्वयं भी गायक थे, इनके परिवार की अपनी शैली थी, किन्तु रसिकलाल जी ने उ. अमीर खाँ की शैली आत्मसात् की थी, यद्यपि उन्होंने उनसे तालीम नहीं ली थी। रसिकलाल भी 'बलवन्तभाई' के प्रति अपार आदरभाव रखते थे। एक बार जब वे भावनगर उनके घर मिलने गए तब बलवन्तराय जी को झूले पर बैठाया और स्वयं हाथ में तानपूरा लेकर खड़े–खड़े ही हंसध्वनि की आड़ाचौताल की रचना 'विहरति ब्रह्मनन्दिनी गगन महँ' प्रस्तुत की और कहा कि आप का स्वागत मैं आप की ही रचना से कर रहा हूँ।

❁ सङ्गीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली द्वारा बृन्दावन में आयोजित ध्रुपद मेला समारोह (१२–१६ अक्टूबर १९७९) के उद्घाटन हेतु 'प्रेमबहन' के अनुरोध पर 'भैयाजी' ने ध्रुपद के चारों अङ्गों (स्थायी, अन्तरा, सञ्चारी, आभोग) सहित उक्त रचना बनाई थी। बृन्दावन धाम में आयोजन था अत: श्रीराधा जी की स्तुति में पद बनाया तथा स्वयं अन्य विद्यार्थियों — श्री ऋत्विक सान्याल, कु. स्वरवन्दना भट्ट (पुत्री) श्रीमती मङ्गला तिवारी तथा श्री राहुल भट्ट (पुत्र) के साथ सामूहिक रूप से प्रस्तुत किया था।

✦ विनयचन्द्र जी गान्धर्व महाविद्यालय मण्डल दिल्ली के प्रिंसिपल थे। पं. विनायक राव पटवर्धन के शिष्य होने के नाते पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी की शिष्य परम्परा में आते हैं। ग्वालियर घराने में जौनपुरी का प्रचलन नहीं होने के कारण परम्परा से उस राग की बन्दिश नहीं मिलती अत: उन्होंने भट्टजी से आग्रह किया कि एक बन्दिश जौनपुरी में भी बनाइए।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

डॉ. वीणा सहस्रबुद्धे	पं. शङ्कर श्रीपाद बोडस की पुत्री, कानपुर	सरसरित शिशिर समीर (राग–बहार, द्रुत एकताल)	२०.११.१९८९
		हेमन्त हिमवन्त समान (राग–हेमन्त, द्रुत आड़ाचौताल)	२१.११.१९८९
		खेलत बसन्त ऋतु आई री (राग–बसन्त, तीनताल)	११.३.१९९०
		राघव राजा राम (राग–भैरव, वि. एकताल)	२७.२.१९७५
		लागि समाध (राग–मनोहरध्वनि, वि.एकताल)	....
		राग रङ्ग अत छाये (राग–मनोहरध्वनि, द्रुत तीनताल)	....
श्रीमती लयलीना भट,	पुत्री तथा इस पुस्तक की लेखिका	चतुरङ्ग, (राग–मालकौंस,द्रुत तीनताल)	२९.७.१९८६
		चतुरङ्ग, (राग–चन्द्रकौंस,द्रुत तीनताल)	१९९०
		तराना–(राग–बसन्त, द्रुत तीनताल)	दिसम्बर, १९९५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धैवत : भैयाजी के हितैषी, स्नेही–मित्र एवं शिष्य परिवार

बलवन्तराय जी को विद्यार्थीजीवन में जिस किसी रूप में जिसका भी सहयोग मिला उन सभी के प्रति उनके हृदय में अपार श्रद्धा एवं कृतज्ञता का भाव रहा है। आवश्यकता के समय जिससे सहयोग मिला उसकी वे बहुत कीमत करते हैं। जीवन–वृत्तान्त के अन्तर्गत कुछेक घटनाओं के उल्लेख में अनेक स्नेही स्वजनों का सन्दर्भ आया है। अपनी निष्ठा, सरल स्वभाव, परिश्रमशीलता एवं अनुशासित आचरण के कारए ही बलवन्तराय जी सहज ही अनेक शुभचिन्तकों का प्रेम प्राप्त करने में सफल हुए। जो कोई भी उनके सम्पर्क में आया उनके व्यक्तित्व की सादगी से प्रभावित हुए बिना नहीं रहा। प्रथम परिचय के बाद शनैः शनैः आत्मीयता इतनी घनिष्ठ होती चली गई कि वे परिवार के सदस्य जितने प्रिय होते चले गए। स्नेह–सम्बन्ध और परस्पर विश्वास के धरातल पर बना बलवन्तराय जी का मित्र–परिवार बहुत विस्तृत है।

प्रस्तुत अंश में ऐसे ही कुछ हितैषी परिवारजनों, शुभचिन्तकों एवं मित्रमण्डल के साथ की कुछ विशिष्ट स्मृतियों को शब्दबद्ध करने का प्रयास किया है।

बालवय में नेत्र–ज्योति खो चुके 'बटुक' को लेकर चिन्तित माँ–बाप को उचित सलाह देकर मामा श्री देवशङ्कर जेठालाल पण्ड्या ने अपने भाञ्जे के जीवन को सही दिशा दिखाई। उनके प्रयत्नों से ही बम्बई में नेत्रहीन विद्यार्थियों के लिए चालू (शुरू) हुए Victoria Memorial School for the Blind की जानकारी प्राप्त हुई थी। इसके पश्चात् विद्यालय में प्रवेश, वहाँ की गतिविधियों में भाग लेते हुए पण्डित ओम्कारनाथ जी का शिष्यत्व प्राप्त करने सम्बन्धी सभी प्रसङ्गों का उल्लेख 'व्यक्तित्व' सम्बन्धी विवरण में क्रमवार तथा विस्तारपूर्वक हुआ है। अतः बलवन्तराय के लिए औपचारिक शिक्षा की राह दिखाने एवं आगे व्यक्तित्व निर्माण की पक्की नींव रखने में मामा की भूमिका महत्त्वपूर्ण रही है। उनकी दूरदर्शिता का परिणाम सबके सामने है। उन मामा की समयोचित सलाह के प्रति कृतज्ञता।

नाते–रिश्तेदारों के उपरान्त हितैषियों की सूची में सर्वप्रथम नाम है Victoria Memorial School for the Blind के मैनेजर श्री रतनशा डी. भाभा का जिन्होंने अपने समय के सर्वश्रेष्ठ सङ्गीतकार पं. ओम्कारनाथ ठाकुर का शिष्यत्व प्राप्त करने में बलवन्तराय को हर सम्भव सहायता की, जिससे उनके जीवन की दिशा ही बदल गई। बलवन्तराय के प्रति भाभा साहब की आत्मीयता एवं सद्भावयुक्त प्रयत्नों का विवरण पिछले पन्नों में यथास्थान दिया गया है। सदाशयता की उस मूर्ति को शत्–शत् नमन।

पण्डित जी के विद्यालय 'सङ्गीत–निकेतन' में प्रवेश के दिन किशोर बलवन्तराय को अपने वात्सल्य की छाँव में लेने वाली श्रीमती मञ्जुला बहन नानूभाई दवे (जिन्हें गुरुजी अपनी दीदी मानते थे तथा अन्य सभी आदर से दीदी माँ कहते थे) के प्रति भी सश्रद्ध नमन। उन्होंने हमेशा बलवन्तराय का पुत्रवत् ध्यान रखा। वे उनके अनुशासित जीवन, मर्यादित आचरण, परिश्रमशीलता एवं गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा की साक्षी रही हैं। बलवन्तराय जी भी गृह–कार्यों में उनकी दक्षता तथा उद्यमी एवं शान्त स्वभाव की प्रशंसा करते नहीं थकते तथा अत्यन्त आदर–भाव रखते हैं।

अन्य हितैषी स्वजनों में जिन्होंने बम्बई एवं सूरत में रहने के दरम्यान स्नेह–सम्बन्ध बनाए रखा तथा अनेकविध सहायता की उनमें श्री जयकृष्ण हरिलाल भट्ट उर्फ नकुभाई (जो ज्ञातिबन्धु थे) तथा उनकी पत्नी मेवाभाभी, श्री चन्द्रकान्त पुरोहित, श्री हरकान्त शुक्ल, श्री कीकूभाई भगत, श्री बलवन्त चेरी एवं श्री नवीन चेरी के नाम प्रमुख हैं। स्नेही जनों में पण्डित जी के मित्र श्री वालजी भाई पोरेचा तथा उनके पुत्र श्री विजय पोरेचा, गुरुभाई श्री प्रागजी डोसा (गुजरात के प्रसिद्ध नाटककार) तथा श्री चुनीलाल दमणिया, गुरुबहन श्रीमती बिजनबाला घोष दस्तीदार आदि

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनेक नाम हैं। इन सभी स्नेहियों के परिवार के सदस्यों से भी 'बलवन्तभाई' का अत्यन्त आत्मीय सम्बन्ध रहा। वाराणसी में स्थाई होने के बाद जब कभी बम्बई जाना हुआ नकुभाई के यहाँ ही ठहरते और वहाँ से चन्द्रकान्तभाई और कीकू भाई के यहाँ जाना भी निश्चित ही रहता। बम्बई में पुराने मिलने वालों की संख्या इतनी अधिक हो जाती थी कि अक्सर उन्हें उलाहना भी मिलती कि इतने कम समय के लिए क्यों आए? सभी उन्हें अपने घर ले जाना चाहते थे। व्यस्ताओं के बीच उस सीमित समय में भी वे प्रत्येक मिलने वाले से परिवार के प्रत्येक सदस्य की कुशल–क्षेम लेते थे। यात्रा के पहले अपने आने की सूचना, कहाँ ठहरेंगे, कितने समय ठहरेंगे, कहाँ से मिलने आने वालों को आने–जाने का साधन और साथ मिलेगा आदि बातों का विचार करके प्रत्येक को पत्र लिखवाते। फिर यदि प्रोग्राम बदला तो फिर सबको पूरी सूचना देते। प्रत्येक की सुविधा देखने की उनकी प्रवृत्ति और आत्मीयता के भाव से सभी प्रसन्न रहते थे।

पण्डित जी के स्नेहीजनों में श्री धराचन्द जी से सगे बड़े भाई के समान स्नेह मिला। इनके पिता श्री महाचन्द जी ने किसी राजा की जान बचाई थी जिसपर प्रसन्न होकर उन्होंने काफी जमीन उन्हें दे दी थी। उनके नाम पर एक मुहल्ले के रास्ते का नाम महाचन्द लेन रखा गया था।

धराचन्द जी के निजी जीवन में बहुत सादगी थी, सङ्गीत के बहुत प्रेमी थे, स्वयं भी सितार बजाते थे। पं. रविशङ्कर, श्रीमती लक्ष्मीशङ्कर, तथा श्रीमती निर्मला अरुण जैसी सङ्गीत विभूतियाँ अमृतसर जातीं तो उन्हीं के यहाँ सबका ठहरना होता। अपने सभी परिचितों को वे कहते कि बनारस जाना तो भैयाजी को जरूर मिलना। उन्हीं की बात मानकर वर्षों पूर्व श्रीमती लक्ष्मीशङ्कर बलवन्तराय जी के काशी हिन्दू विश्वविद्यालय परिसर स्थित अरविन्द कालोनी के आवास पर मिलने आईं। उसी प्रकार भट्टजी एक बार कानपुर में स्वामी श्री अतुलकृष्ण गोस्वामी का व्याख्यान सुनने के बाद उनसे मिलने गए तब तत्काल उन्होंने कहा कि अच्छा हुआ आपसे भेंट हुई, धराचन्द जी ने आपका जिक्र किया था।

बलवन्तराय जी कार्यक्रम के सिलसिले में अनेक बार अमृतसर गए। एक बार ऐसे ही आराम के क्षणों में धराचन्द जी ने बलवन्तराय जी को साइकिल रिक्शा पर बैठाया और विनोदवश अपने घर के अहाते में स्वयं ही रिक्शा चलाया। वय में बड़े हाने के नाते बलवन्तराय जी उन्हें आदर से 'ठाकुर साहब' कहकर सम्बोधित करते थे। धराचन्द जी के इस प्रेमपूर्ण व्यवहार का प्रत्युत्तर बलवन्तराय जी ने भी एक प्रसिद्ध भजन 'सबसे ऊँची प्रेम सगाई' की पङ्क्तियों से दिया, बोले– **प्रेम के बस अर्जुन रथ हाँक्यो, भूल गए ठकुराई।** एक बार स्टेशन छोड़ने रिक्शा पर साथ जा रहे थे तब बोले कि भैयाजी आज हमारे पास भगवान का दिया सब कुछ है लेकिन अगर ऐसा मौका हो कि मेरे पास सिर्फ एक ही रोटी हो तब भी आधी खाने आप जरूर आइएगा। निश्छल प्रेम का ऐसा उदाहरण तो भगवान् कृष्ण और सुदामा की जोड़ी का ही प्रसिद्ध है। वे दोनों तो फिर भी गुरुकुल में साथ अध्ययन करते थे, अत: बालपन के मित्र थे। धराचन्द जी स्वयं सङ्गीतप्रेमी थे ही किन्तु स्वयं कलाकार भी उनके प्रति कितना अपनत्व रखते थे वह निम्नोल्लिखित घटना से स्पष्ट हो जाएगा। एक बार धराचन्द जी बलवन्तराय जी के यहाँ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय स्थित आवास में ठहरे थे। कहीं बाहर निकले थे वहाँ सितारवादक श्री मणिलाल नाग मिल गए। नाग साहब ने तुरन्त उनसे पूछा 'आप कहाँ ठहरे हैं? मैं मिलने आऊँगा।' उन्होंने भट्टजी का पता लिया और हाथ में सितार लेकर अत्यन्त सादगी से घर पहुँच गए। वहीं घरेलू आयोजन में उन्होंने प्रेमपूर्वक सितार बजाया।

पण्डित जी के गुरु बन्धुओं में पं. शङ्कर श्रीपाद बोडस और सौ. शान्ता काकी (कानपुर) का उनपर विशेष स्नेह रहा है। उनके यहाँ कानपुर जाना हो या उन्हें वाराणसी आना हो इतनी सहजता से सारा व्यवहार होता था जो रक्त सम्बन्धियों में भी शायद देखने को न मिले। पण्डित जी के ही अन्य गुरुबन्धु पं. वामन ठकार (इलाहाबाद) सेवानिवृत्ति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के बाद अपने पुत्र श्री माधव ठकार (जो विश्वविद्यालय के सङ्गीत सङ्काय में ही गायन के प्राध्यापक थे) के यहाँ विश्वविद्यालय परिसर के उनके आवास पर रहने आए थे। अक्सर प्रातःकालीन सैर करते हुए बलवन्तराय जी के यहाँ आते और मसालेवाली गरम चाय पीकर प्रसन्न होते। सङ्काय में होने वाले जयन्ती कार्यक्रमों में वे कई बार उपस्थित रहे एवं कार्यक्रम के पश्चात् बड़ी प्रसन्नता से बलवन्तराय जी की पीठ पर हाथ फिराते हुए कहते, 'भाई, शुरू से अन्त तक जमाए रखा'। ठकार जी के बड़े पुत्र श्री वसन्त ठकार दिल्ली स्थित गान्धर्व महाविद्यालय मण्डल में सङ्गीत सिखाते थे। बनारस आने पर भैयाजी के पास अवश्य आते और रागदारी की चर्चा में लग जाते।

पण्डित जी के ही अन्य प्रेमी मित्रों में श्री रतनचन्द कालिया (कानपुर) भी भैयाजी के प्रति अपार स्नेह रखते थे जो म्योर मिल्स के मालिक थे। उनके पुत्र श्री अरविन्द तथा भतीजे श्री सतपाल इलाहाबाद में रहते थे। आरम्भ में आकाशवाणी के कार्यक्रम के लिए इलाहाबाद जाना होता था तब अधिकांश उनके यहाँ ही निवास रहता था। उनके पुत्र श्री अरविन्द कालिया और पुत्रवधू जया भी अत्यन्त आदर भाव से रखते थे। कालिया साहब के यहाँ ही आचार्य विष्णुकान्त शस्त्री जी से मुलाकात हुई थी जो सम्बन्ध में जया जी के ताऊ होते थे।

इसके अतिरिक्त बनारस में डी.एल.डब्ल्यू. के श्री माथुर साहब (महाप्रबन्धक), श्री एन. पी. एस. मूर्ति (जनसम्पर्क अधिकारी), श्री गोपाल नारायण कपूर तथा श्रीमती विद्या कपूर से अत्यन्त आत्मीय सम्बन्ध रहे। मूर्ति साहब तथा माथुर साहब ने डी.एल.डब्ल्यू. परिसर में कई कार्यक्रम आयोजित करवाकर Blind Association के लिए चन्दा इकट्ठा करने के काम में भैयाजी को काफी सहयोग किया था तथा वहाँ प्रदर्शनी आयोजित करने में भी मदद की जिसमें नेत्रहीन व्यक्तियों को विभिन्न प्रकार के काम करते हुए लोग देख सकें। कपूर साहब सङ्गीत प्रेमी होने के साथ स्वयं वॉयलिन भी बजाते थे। बलवन्तराय जी की ५०वीं सालगिरह पर उन्होंने अपने डी.एल.डब्ल्यू. स्थित आवास पर दो दिवसीय सङ्गीत गोष्ठी आयोजित की तथा साथ में समस्त कलाकारों को भोजन भी कराया। बम्बई तथा सूरत के सभी मित्रों, धराचन्द जी, बोडस साहब, कालिया जी, मूर्ति साहब तथा कपूर जी आदि के साथ पत्र–व्यवहार बना रहा। जीवन के सुख–दुख की सूचनाएँ तथा सान्त्वना देने के क्रम में आत्मीयता–भाव प्रगाढ़ होता गया।

सन् १९७२ में बलवन्तराय जी को टिटनेस के इंजेक्शन का रिएक्शन हुआ और तबीयत काफी बिगड़ गई थी। लम्बी बीमारी से काफी दुर्बलता हो गई थी अतः श्री त्र्यम्बक वामन तळवलकर (वसुन्धरा जी के पिता तथा माँ श्रीमती शान्ता तळवलकर) ने स्वास्थ्यलाभ के लिए अपने पास बुलाया। पुणे से कुछ दूरी पर सिंहगढ़ नाम की पहाड़ी है जहाँ की जलवायु स्वास्थ–लाभ के लिए उत्तम मानी जाती है, वहाँ श्री बालगङ्गाधर तिलक का बँगला एक माह के लिए किराए पर लिया था। ट्रक में भरकर जरूरत के सारे सामान (बिस्तर के लिए गद्दे, तकिए, चादरें, दरियाँ, रसोई के सामान में अनाज, मसाले, खाने व पकाने के बर्तन, पानी भरने की बाल्टियाँ, पढ़ने के लिए पत्र–पत्रिकाएँ यानी पूरी गृहस्थी) ऊपर लाए गए। दस व्यक्तियों के लिए सारी व्यवस्था आजी (नानी) ने सूझ–बूझ एवं दक्षतापूर्वक की। दूध और सब्जियाँ वहीं की एक काम करनेवाली दाई पहुँचा जाती थी। प्रातःकाल और सायंकाल दोनों समय 'आप्पा साहेब' (वसुन्धरा जी के पिताजी के लिए सम्बोधन) उन्हें सैर के लिए ले जाते थे , सभी बच्चे भी साथ होते ही थे। सिंहगढ़ में ही थोड़ी शक्ति आने पर बलवन्तराय जी ने अपनी पुस्तक 'भावरङ्ग–लहरी' के द्वितीय भाग की प्रेसी भी अपनी ज्येष्ठ पुत्री स्वरवन्दना से तैयार करवाई।

वसुन्धरा जी के ताऊजी श्री यशवन्त वामन तळवलकर, जिन्हें सब सोनू मामा कहते थे, होम्योपैथी के अच्छे जानकार थे। सिंहगढ़ से वापस पूना आने पर उन्होंने बलवन्तराय जी को एक ही खुराक दी और कहा 'एक महीने में ही आप गाने लगेंगे।' सिंहगढ़ की शुद्ध जलवायु और सोनू मामा की दवा का चमत्कारिक प्रभाव हुआ और वापस बनारस आने के बाद उन्होंने आकाशवाणी का कार्यक्रम भी दिया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस प्रकार लम्बी बीमारी एवं तज्जन्य अशक्तिवश बापूजी का जो गाना छूट गया था उसे यथावत् गति प्रदान करने में पू. आजी–आजोबा (नानी – नाना) तथा पू. सोनू मामा के प्रयासों के प्रति प्रणामाञ्जलि।

सन् १९५० में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में नियुक्त होने के पश्चात् बलवन्तराय जी सर्वप्रथम विश्वविद्यालय परिसर के पास लङ्का स्थित विष्णु–भवन में अपने छोटे भाई ललितकुमार के साथ रहते थे। यहाँ उनके साथ श्री कनक राय त्रिवेदी (जो Victoria Memorial School for the Blind में बलवन्तराय जी के जूनियर थे) तथा उनके छोटे भाई के अलावा बलवन्तराय जी के फुफेरे भाई श्री हेमन्त पाठक (ये विश्वविद्यालय में आयुर्वेद के विद्यार्थी थे) भी रहते थे। कुछ समय पश्चात् अस्सी तथा दुर्गाकुण्ड के बीच सूरजकुण्ड के पास कुरुक्षेत्र वाले मकान में आए। इस समय ललितकुतार से बड़े ऋषिकुमार तथा उनसे छोटे भाई राजेन्द्र भी आ गए थे, कनकराय जी और हेमन्त जी रहते ही थे।

इसके पश्चात् १९५५ की जनवरी में विवाहबद्ध होने पर कुछ समय तक अस्सी घाट की ओर श्री तिवारी के मकान में रहे फिर कुछ समय मुमुक्षु भवन तथा सोनारपुरा में भी किराए का मकान लेकर रहे। एक न एक परेशानी के कारण लगातार मकान बदलने पड़े अत: विश्वविद्यालय परिसर में क्वार्टर के लिए आवेदन किया था किन्तु तत्काल किसी क्वार्टर के खाली होने की सूचना नहीं थी अत: प्रतिदिन दूर से विश्वविद्यालय आने में परेशानी का सामना करना पड़ता था। इसी बीच वसुन्धरा जी के मौसा जी डॉ. एस. एस. जोशी ने, जो उस समय साइंस कालेज के प्रिंसिपल थे, सूचना दी कि हैदराबाद कालोनी में उनके एक विद्यार्थी डॉ. देशमुख का मकान खाली है। वे विदेश गए थे और मकान की चाबी उनके पास थी।

इस सूचना पर पं. ओम्कारनाथ जी बलवन्तराय जी को लेकर तत्कालीन कुलपति सर सी. पी. रामस्वामी अय्यर के पास गए। बलवन्तराय जी को प्रतीक्षा कक्ष में बैठाकर स्वयं ऊपर कुलपति से बात करने गए, उन्हें वस्तुस्थिति से अवगत कराया और पूछा कि वे (बलवन्तराय) नीचे बैठे हैं उन्हें बुलाएँ क्या? अय्यर साहब ने कहा कि बुलाने की आवश्यकता नहीं है काम हो जाएगा। इस प्रकार भट्टजी सर्वप्रथम विश्वविद्यालय–परिसर स्थित हैदराबाद कॉलोनी के क्वार्टर जी–११ में दिनाङ्क ११ सितम्बर १९५५में रहने आए। हैदराबाद कॉलोनी भी काफी दूर पड़ता था और महाविद्यालय आना–जाना अधिकांश पैदल ही होता था। आज की तरह वाहन (रिक्शा) भी उपलब्ध नहीं था और यह एरिया सुनसान था। शाम ६ बजे के बाद रिक्शेवाले भी आने को तैयार नहीं होते थे क्योंकि परिसर में सियारों की बहुतायत थी। उस समय सङ्गीत महाविद्यालय की कक्षाएँ अपराह्न ३ बजे से सायं ८ बजे तक चलती थीं। अत: महाविद्यालय के पास के मकान की खोज में थे। हैदराबाद कॉलोनी के क्वार्टर में दो विद्यार्थी श्री दामोदर होता एवं सुश्री प्रभा बैनर्जी भी साथ रहते थे। कुछ समय के बाद वीमेंस कॉलेज के पास वाली लेडीज़ कॉलोनी (जो आजकल मीरा कॉलोनी के नाम से जानी जाती है) में रहने चले आए। चूँकि वहाँ अधिकांश अकेली महिलाएँ रहती थीं अत: पुरुषों के रहने पर आपत्ति हुई। बलवन्तराय जी के अतिरिक्त और भी परिवार (दन्तचिकित्सक डॉ. माथुर, ललित कला विभाग के श्री रामचन्द्र शुक्ल, परचेज़ आफिसर श्री पी. सी. मेनन एवं रसायन विभाग के डॉ. बी. एम. शुक्ल) भी लेडीज कॉलोनी में रहते थे। अत: सभी के लिए दूसरी व्यवस्था की गई। अन्तत: लेडीज़ कॉलोनी का मकान छोड़कर उसके बाहर पास की कॉलोनी के क्वार्टर नं. न्यू जी–१९ में आ गए और लगभग २६ वर्षों तक वहाँ रहे। इस समय यह कॉलोनी अरविन्द कॉलोनी कहलाती है।

इस प्रकार जोशी साहब (वसुन्धरा जी के मौसा जी, जिन्हें घर में 'दाजू' बुलाते थे) की प्रत्युत्पन्नमति एवं गुरुजी की तत्परता से बलवन्तराय जी और वसुन्धरा जी को परिसर स्थित आवास की सुविधा उपलब्ध हुई जिससे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रतिदिन का महाविद्यालय आना–जाना काफी सरल हो गया। मौसी श्रीमती सोनतारा एवं मौसा डॉ. एस. एस. जोशी का निवास विश्वविद्यालय में ही होने से वसुन्धरा जी के लिए वह मायका ही था। जोधपुर कॉलोनी स्थित उनके आवास पर ही इनकी पहली सन्तान स्वरवन्दना का जन्म जुलाई सन् १९५७ में हुआ। स्नेह करने वाली मौसी 'सोनू ताई' तथा मौसाजी 'दाजू' के प्रति कृतज्ञतापूर्वक नमन।

बलवन्तरायजी की गुरु-परम्परा के परिवार में एक परम आत्मीय नाम है 'प्रेमबहन' का। प्रेमलताजी जब आरम्भ में बनारस आईं तब बलवन्तराय जी की कक्षा में बैठती थीं और उनसे सङ्गीत की शिक्षा प्राप्त करती थीं। विद्यार्थी काल में वे महिला छात्रावास में रहती थीं फिर शिक्षा के उपरान्त जब उनकी नियुक्ति 'श्रीकला सङ्गीत भारती' में हुई तब वे रहने के लिए लेडीज़ कॉलोनी के मकान में आईं। इस समय उनके पिता श्री लालचन्द्र शर्मा, जो रेलवे के अधिकारी थे तथा माता श्रीमती माया देवी भी साथ आईं। लेडीज़ कॉलोनी में रहते हुए तथा महाविद्यालय की गतिविधियों में सक्रिय रहते हुए परस्पर विचार-विमर्श होता रहता था जिससे पारस्परिक सौहार्द्र में वृद्धि हुई। आपसी चर्चा के दौरान बलवन्तराय जी ने प्रेम बहन के लेखन सम्बन्धी गुण को शीघ्र पहचान लिया। वे सतत् उन्हें शास्त्र सम्बन्धी लेखन के लिए प्रेरित करते रहे, प्रोत्साहित करते रहे एवं पू.पण्डितजी के आगामी लेखनों में सहयोग हेतु अनुरोध किया एवं पू. पण्डितजी को प्रेमबहन के भाषा-ज्ञान तथा लेखन-क्षमता से अवगत कराते हुए, संस्तुत किया।

बहनजी के पिता जी अरबी-फारसी भाषाओं के जानकार थे। अतः जिन किन्ही पारम्परिक बन्दिशों में अरबी, फारसी या उर्दू के शब्द होते थे उनका अर्थ समझने में उनसे सहायता मिल जाती थी। 'प्रेम बहन' की सङ्गीत की प्रायोगिक परीक्षा की तैयारी करवाने के साथ-साथ 'भैयाजी' स्वयं उनके साथ तबला सङ्गति भी करते थे। एम.म्यूज की परीक्षा में ध्रुपद की प्रस्तुति में $4\frac{1}{4}$, गुन और , गुन आदि लयकारियों की तैयारी भी 'भैयाजी' ने कराई थी।

आरम्भिक दिनों में संस्कृत महाविद्यालय और 'श्रीकला सङ्गीत भारती' के अध्यापकों को Fixed salary ही मिलती थी। बाद में जब प्रेमलता जी की नियुक्ति हुई और उनके पिता ने जानना चाहा कि Scale और वेतनमान क्या है ? तब लोगों को विश्वविद्यालय के अन्दर विभिन्न महाविद्यालयों के बीच वेतनमान की विसङ्गति समझ में आई और उसके बाद ही उक्त दिनों महाविद्यालयों के अध्यापकों का वेतनमान विश्वविद्यालय के अन्य महाविद्यालयों के समकक्ष किया गया। इस दृष्टि से प्रेमलता जी के पिताजी की जिज्ञासा उपर्युक्त दोनों महाविद्यालयों के अध्यापकवृन्द के लिए समाधानकारी सिद्ध हुई।

रक्त सम्बन्ध न होते हुए भी गुरु-परम्परा से प्राप्त बड़े भाई और बहन का यह सम्बन्ध मात्र उन दोनों तक ही सीमित नहीं रहा वरन् अत्यन्त सहजता से दोनों के परिवारों के साथ भी उस सम्बन्ध का निर्वाह होता गया। विवाहोपरान्त बलवन्तराय जी की पत्नी वसुन्धरा जी, जो महिला छात्रावास में रहने के कारण प्रेमबहिन जी की पूर्वपरिचिता थीं एवं सहेली भी, वे उनकी 'भाभी' हो गईं। सभी बच्चों ने उन्हें 'बुआजी' कहकर ही सम्बोधित किया।

चूँकि बापूजी, 'दादाजी' (पं० ओमकारनाथ) के साथ काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में नियुक्त होकर आ गऐ थे अतः तीनों छोटे काकाओं (ऋषि काका, ललित काका और राजू काका) के अतिरिक्त जिनको वे पढ़ने के लिए बनारस लाए थे शेष परिवार गुजरात में ही था। अतः हम बच्चों का परिचय अपनी सगी बुआओं से नहीं हुआ था। उनके नाम जरूर सुने थे, रक्षाबन्धन पर उनके पत्र भी आते थे किन्तु सामने से नहीं देखा था। सन् १९७६ में जब पूरे परिवार को लेकर बापूजी ने गुजरात यात्रा का कार्यक्रम बनाया तभी हम लोगों ने अपनी सगी बुआओं को देखा। तब तक प्रेम बुआजी ही बड़ी बुआजी, डॉ. एन.राजम् "राजमबुआ" और डॉ. सुभद्रा चौधरी "सुभद्रा बुआ" थीं। अभी भी यह सम्बोधन सम्बन्ध की उर्मि के साथ विद्यमान है। यद्यपि प्रेमबुआजी और सुभद्रा बुआ अब सशरीर उपस्थित नहीं हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन् ' ७२ में जब बापूजी को टिटनेस के टीके का रिएक्शन हुआ और अत्यधिक दुर्बलता आ गई थी तब डॉक्टर ने नियमित सन्देश खाने को कहा। प्रेमबुआजी को जब पता चला तब वे घर की गाय के दूध का छेना फाड़कर प्रतिदिन स्वयं सन्देश बनातीं और किसी के हाथ बापूजी के लिए भेजवातीं। भैयाजी को शुद्ध आहार मिलना चाहिए इसी भावना से सारी व्यस्तताओं के उपरान्त भी उन्होंने लगभग एक महीने तक सन्देश भिजवाया अन्यथा बाजार में उपलब्ध सन्देश इसका विकल्प हो ही सकता था।

इस अन्तरङ्ग प्रेम और चिन्ता का एक विशेष कारण था। पू. पण्डित जी ने विवाह के लिए अपने विद्यापुत्र बलवन्तराय के लिए शेरवानी बनवाई थी और वधू के लिए साड़ी खरीदी थी । उसे गुरुजी की ओर से लेकर 'प्रेमबहन' ही 'भैयाजी' को देने आई थीं। अतः भाई-बहन का यह सम्बन्ध और व्यवहार नितान्त स्वाभाविक था औपचारिक नहीं।

हम बच्चे घर में नियमित रूप से 'रामरक्षास्तोत्र', विश्वनाथाष्टक या अन्य स्तोत्र बोला करते थे जिन्हें बापूजी ने छन्दों के अनुसार 'सस्वर पाठ' के ढङ्ग से बोलना सिखाया था। जब कभी प्रेमबुआजी के घर जाना होता तब उन्हें हम सभी बच्चे स्तोत्र सुनाते, शाबाशी भी मिलती और एक बार प्रोत्साहन हेतु गीताप्रेस गोरखपुर की छपी सचित्र पुस्तकें भी मिलीं। उन्होंने नया स्पूल रिकार्डर खरीदा था, उस पर रिकार्डिंग भी की।

उनकी मौसेरी बहन डॉ० उर्मिला शर्मा जिन्हें घर में 'भोली' बुलाते थे जो बनारस में उनके साथ ही रहती थीं, हम लोगों की 'भोली दीदी' हो गईं। जब प्रेमबुआजी के यहाँ जाना होता और उनके माँ-पिताजी से मिलना हो जाता तब भोली दीदी सब बच्चों को ऊपर अपने कमरे में ले जातीं अच्छी कहानियाँ सुनातीं। वे श्रीकृष्णजन्माष्टमी के अवसर पर बड़ी सुन्दर झाँकी सजाती थीं, झाँकी के सारे प्रसङ्ग समझाती भी थीं।

उर्मिला जी संस्कृत व्याकरण की ज्ञाता हैं तथा विभिन्न छन्दों के लक्षण उन्हें कण्ठस्थ हैं। 'भावरङ्ग लहरी के द्वितीय भाग में बापूजी ने राग-विवरण के साथ लगभग प्रत्येक राग के लक्षण विभिन्न छन्दों में दिए हैं। किसी भी छन्द के बारे में कोई दुविधा हो तुरन्त उनके (डॉ० उर्मिला शर्मा) द्वारा समाधान हो जाता। प्रेमबुआ जी के सामन ही वे भी विद्याव्यसनी रहीं एवं अभी भी हैं। 'विद्या विनयेन शोभते' की उक्ति बुआजी के समान ही उनके व्यवहार में भी चरितार्थ होती है।

बापूजी ने जब अपने जीवन के ७५ वर्ष पूरे किए तब हम बच्चों ने सोचा कि उनकी वर्षगाँठ पर उनकी रचनाओं के गायन का कार्यक्रम हो। तीन दिन के कार्यक्रम का विचार किया जिसमें आरम्भिक दो दिन बापूजी के रोहित-नगर स्थित आवास 'नाद-तनु' में घरेलू बैठक तथा अन्तिम दिन दुर्गाकुण्ड स्थित श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार अन्धविद्यालय में सार्वजनिक सम्मान की रूपरेखा बनाई। इसी कार्यक्रम में प्रेमबुआजी को अध्यक्ष के रूप में बुलाने के लिए जब उनसे बात की तब आयोजन की रूप-रेखा सुनकर बहुत प्रसन्न हुईं लेकिन कहा कि मैं अलग थोड़े ही हूँ, एक बैठक मेरे घर में भी हो अतः पहली सन्ध्या उनके घर हुई। बैठक के बाद सभी आमन्त्रितों के नाश्ते का भी प्रबन्ध किया जिसमें भोली दीदी ने स्वयं समोसे की भरावन के लिए मसाला तैयार करके दिया था जो बहुत ही स्वादिष्ट था।

प्रेमबुआजी बापूजी को सगे भाई की तरह आदर देती थीं। उन्हें जब कार्यवश कहीं जाना हो तो उसके पूर्व घर आकर वे अवश्य भैयाजी को बतातीं कि अमुक कार्य के लिए जा रही हूँ, उसी प्रकार वापस आने पर भी घर आकर यात्रा का पूरा वृत्तान्त विस्तार से बतातीं। जब 'प्रेमबहन' का अवसान हो गया और अन्त्येष्टि के लिए उनकी देह करौन्दी स्थित उनके निवास 'आम्नाय' से ले जायी जा रही थी, तब आत्मीयता के भाववश बलवन्तराय जी ने उनकी देह के पास खड़े होकर कहा कि बहन! इतनी लम्बी यात्रा पर मुझे बिना बताए कैसे चली गईं?

प्रेमबुआजी के न रहने पर भी स्नेह की डोर भोलीदीदी के साथ जुड़ी हुई है। जब भी वे कोई फलाहारी मिष्ठान बनातीं है तब कोशिश करती हैं कि किसी तरह भैयाजी को पहुँच जाए।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बलवन्तराय जी के प्रति उनके सभी विद्यार्थी असीम श्रद्धाभाव रखते हैं तथा अवसर आने पर सेवा के लिए भी तत्पर रहते हैं। अधिकांश विद्यार्थी परीक्षा उत्तीर्ण कर नौकरी पाकर देश के विभिन्न शहरों में स्थिर हो गए तथापि पत्र–व्यवहार से सभी ने सम्पंर्क रखा और बनारस आने पर 'गुरुजी' का दर्शन करने वे अवश्य आते रहे एवं अभी भी आते हैं।

डॉ. चित्तरञ्जन ज्योतिषी तथा डॉ. प्रदीप कुमार दीक्षित की नियुक्ति काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के सङ्गीत–सङ्काय में ही होने के कारण इन दोनों को ही बलवन्तराय जी का सान्निध्य अन्य विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक मिला। बलवन्तराय जी जब बम्बई में गुरुजी के पास सीखते थे उस समय प्रदीप जी की वय डेढ़ साल की थी। प्रदीप जी की नानी मञ्जुला बहन दवे यानी दीदी माँ (जिनका उल्लेख पहले आ चुका है) बलवन्तराय जी को पुत्रवत् स्नेह करती थीं, उसी सम्बन्ध से प्रदीप जी बलवन्तराय जी को 'मामा' सम्बोधित करते रहे। इस सम्बोधन के साथ जुड़ा सम्बन्ध प्रगाढ़ ही होता गया जिसका अनुभव दोनों ओर के परिवार के शुभ कार्यों में स्पष्ट देखने को मिलता रहा। सङ्काय में कक्षा होने के उपरान्त उपस्थिति पञ्जिका पर छात्र–छात्राओं की उपस्थिति अङ्कित करने प्रदीप जी आ जाते थे। उसी प्रकार चित्तरञ्जन जी घर से कालेज जाते समय तथा वापस घर आते समय गुरुजी को साथ ले आते थे। (कभी चित्तरञ्जन जी की अनुपस्थिति में वसुन्धरा जी भी भट्टजी को कालेज पहुँचाने जाती थीं। जब बच्चे बड़े हो गए तो वे बापूजी को कालेज पहुँचाने जाने लगे)। अनेक कार्यक्रमों में भी चित्तरञ्जन जी (विशेष रूप से आकाशवाणी इलाहाबाद) साथ जाते रहे और आवश्यकतानुसार तानपूरे पर अथवा हार्मोनियम पर साथ दिया। कालान्तर में पदोन्नत होते हुए जब वे सङ्काय–प्रमुख के पद पर आसीन हुए तब भी प्रशासनिक व्यस्तताओं के बीच गुरूजी (बलवन्तराय जी) से मिलने का समय जरूर निकालते थे।

इतना ही नहीं, का.हि.वि.वि. से सेवानिवृत्त होकर ज्योतिषी जी ग्वालियर के राजा मानसिंह तोमर सङ्गीत विश्वविद्यालय में कुलपति के पद पर आसीन हुए। इस महत्त्वपूर्ण पद पर आसीन होकर भी अपने गुरुजी की ध्वनिमुद्रिका के लोकार्पण समारोह के लिए समय निकालकर बनारस आए।

डॉ. दामोदर होता भुवनेश्वर में स्थिर हो गए थे। बाद के वर्षो में जो कोई विद्यार्थी वहाँ से काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के सङ्गीत–सङ्काय में सीखने आते सभी को होता जी की ताकीद थी कि जब भी मौका मिले गुरुजी की सेवा करना। होताजी ने सर्वप्रथम अपने गुरुजी की वर्षगांठ पर भुवनेश्वर में समारोह आयोजित कर उनकी रचनाएँ प्रस्तुत करने का श्रीगणेश किया। कार्यक्रम का आरम्भ सदैव राग–भूपाली के ध्रुपद 'नाद देव तोरी शरण'[४] की सामूहिक प्रस्तुति के रूप में करते रहे। यह आयोजन वे अंग्रेज़ी तारीख के अनुसार २३ सितम्बर को नहीं वरन् तिथि के अनुसार यानि 'गजषष्ठी' के दिन करते रहे। आरम्भिक कुछ वर्षों तक बलवन्तराय जी उक्त समरोह में जाते रहे, किन्तु बाद में स्वास्थ्य कारणों से या अन्य कारणों से वहाँ जाने का क्रम छूट गया। ऐसी स्थिति में होताजी स्वयं समय निकाल कर बनारस आकर गुरुजी का दर्शन करते रहे हैं। इस वर्ष भी गजषष्ठी के दिन यानि ६अक्टूबर २०१२ को वे सपत्नीक ८–१० विद्यार्थियों के साथ भुवनेश्वर से बनारस आए और गुरुजी की चौकी के सामने जमीन पर बैठकर ही सबने कुछ रचनाएँ गायीं। उसी प्रकार डॉ. राजेश्वर आचार्य जी के दोनों पुत्र चि. पीयूष और चि. प्रीतेश दादाजी की यथा सम्भव सेवा करते हैं। अनन्य मित्र पर्वतकर जी के परिवार में सभी के साथ सम्पर्क एवं व्यवहार बना हुआ है। उनकी दूसरी पुत्री वनमाला जी ने आपसे गायन की शिक्षा भी ग्रहण की है।

इस श्रद्धा–भाव के पीछे गुरुजी (बलवन्तराय जी) की शिष्यवत्सलता है। एक शिक्षक के रूप में विद्यार्थियों को कक्षा में सङ्गीत का निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा कराने तक ही उनका सम्बन्ध सीमित नहीं था। जीवन के विभिन्न उतार–चढ़ावों में उन्होंने अपने विद्यार्थियों को व्यावहारिक दिशा–निर्देश दिए। उन विद्यार्थियों ने उन्हें अपने गुरु पं. ओमकारनाथ ठाकुर की सेवा तथा संस्था के प्रति पूर्ण समर्पण के साथ काम करते हुए देखा। स्वयं की आर्थिक

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थिति बहुत मजबूत न होते हुए भी आवश्यकता पड़ने पर जितनी तत्परता से उन्होंने दूसरों की मदद की इसकी कीमत वही जान सकता है जिसने वह सहायता प्राप्त की। गुरु और शिष्यों के बीच स्नेह और आदर की ऐसी सशक्त डोर है, ऐसा लगता है जैसे पिछले जन्म का ऋणानुबन्ध हो। उनके शिष्यों द्वारा व्यक्त भाव जो बलवन्तराय जी के अमृत–महोत्सव की स्मारिका में छपे हैं, ऐसी अनेक घटनाओं का उल्लेख करते हैं जो उनके व्यक्तित्व की गुरुता, निश्छलता और सहज विनोदी स्वभाव के परिचायक हैं।

अनेक स्मृतियाँ हैं। अन्त में यही कह सकते हैं कि बापूजी के अपने साधु स्वभाव एवं सभी की सहायता को तत्पर रहने की उनकी प्रवृत्ति के कारण ही तो उनको इतने लोगों से आदर प्राप्त हुआ। जिस किसी भी माध्यम से उन्हें कोई जानकारी मिली हो, उसको मुक्त कण्ठ से उन्होंने श्रेय दिया है। अभी अनेक परिवारों का, अनेक आत्मीयजनों का स्मरण हो रहा है। अन्य विद्यार्थियों में श्रीमती प्रभा मुखर्जी (कलकत्ता) स्व. श्री गोपीकृष्ण नागर (बदायूँ), श्री पी. रामचन्दन, श्री सूरज प्रकाश शर्मा श्री सीतापति शुक्ल, श्री लक्ष्मीपति शुक्ल,श्री अतुल देसाई, स्व. श्री बद्रिका प्रसाद चौधरी (बरेली), स्व. डॉ. सुधारानी शर्मा (बरेली), स्व.श्री रमा शङ्कर मिश्र (ज्ञानपुर), स्व. श्री योगेन्द्र मिश्र (अलवर), श्री नरेन्द्रनाथ शर्मा, डॉ. सुशीला पन्त, डॉ. ज्योत्स्नामयी मुकर्जी, श्रीमती वीणापाणि शुक्ल (कानपुर) तथा डॉ. चाँदनी माथुर। सभी के साथ की विशेष स्मृतियाँ हैं, लेकिन स्थान की मर्यादा का पालन करते हुए अतीत की स्मृतियों को आलोड़न को यहीं विराम देती हूँ। जिनके नाम का उल्लेख इस अंश में पृष्ठों पर नहीं हो सका है उन सभी को विश्वास दिलाती हूँ कि उनका भी हम लोग अत्यन्त प्रेम से स्मरण करते हैं। उनका स्थान बापूजी और माँ के साथ हम सबके हृदय में है क्योंकि वहाँ न समय की सीमा रोकती है न स्थान की।

निषाद- बलवन्तराय जी की विगत १२ पीढ़ियों के नाम :-

सामान्य रूप से लोगों को अपनी विगत ३ या अधिकतम ४ पीढ़ियों के नाम ही मालूम होते हैं। यह सन्तोष का विषय है कि बलवन्तराय जी की विगत १२ पीढ़ियों के नाम उपलब्ध हैं जिसका विवरण इस प्रकार है।

बलवन्तराय जी के पिता श्री गुलाबराय भट्ट
श्री पुरुषोत्तम भट्ट
श्री माधव भट्ट (वैद्य)
श्री करसनजी भट्ट (सन्यास ग्रहण कर लिया था।)
श्री पीताम्बर भट्ट
श्री कालीदास भट्ट
श्री देव शङ्कर भट्ट
श्री जद्दू राम भट्ट
श्री केशव भाई भट्ट
श्री कीका भाई भट्ट
श्री पीताम्बर भट्ट

ये उत्तर प्रदेश से गुजरात गए थे और बलवन्तराय जी गुजरात से बनारस (उत्तर प्रदेश) आ गये जो उनकी कर्मभूमि रही।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बलवन्तराय जी के ननिहाल में —

बलवन्तराय जी की माँ	सौ. हरकुँवर भट्ट
बलवन्तराय जी के नाना	श्री जेठालाल पण्ड्या
बलवन्तराय जी की नानी	सौ. नर्मदा पण्ड्या
नाना के पिता	श्री रेवाशकर पण्ड्या
नाना की माता	सौ. केसर पण्ड्या
नाना के दादा	श्री दौलतराम पण्ड्या

बलवन्तराय जी ने अपनी नानी नर्मदा और केसर माँ दोनों को आँख से देखा है।

सन्दर्भ :-

१. ग्वालियर के ख्याल-गायन की परम्परा, भूदेव शर्मा दीक्षित, पत्रिका, प्रयाग सङ्गीत समिति, १९६५, पृ.सं. १०-१४.
२. अध्यक्षीय उद्बोधन, प्रेमलता शर्मा, स्मारिका अमृत-महोत्सव, सम्पा. स्वरवन्दना शर्मा, पृ.सं. १९.
३. भावरङ्ग-लहरी, भाग-२, बलवन्तराय भट्ट, पृ. सं. ३२५.
४. भावरङ्ग-लहरी, भाग-१, बलवन्तराय भट्ट, पृ. सं. १.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिशिष्ट-२

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

षड्ज

पं० बलवन्त राय भट्ट ने विभिन्न

अवसरों पर विभिन्न पत्रिकाओं के लिए लेख दिए थे

जिनमें से कुछ लेखों को यहाँ पुनः प्रस्तुत किया गया है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिशिष्ट - २

- शून्य से सौ
- एक तुलनात्मक अध्ययन
- ख्याल का प्रस्तुतीकरण
- रसानुभूति में काकुभेद का स्थान
- मेरे श्रवण-लोचन द्वारा किया गया पू.गुरुवर्य पं. ओम्कारनाथ जी ठाकुर का श्रवण-दर्शन
- १५ अगस्त १९४७ और 'वन्दे मातरम्'
- सो कासी सेइय कस न

(पं. ओमकारनाथ ठाकुर प्रथम पुण्यतिथि पत्रिका से) १९६८

शून्य से सौ

बलवन्त राय भट्ट

सन् ५० की जुलाई का अंतिम सप्ताह था। तारीख ठीक से याद नहीं है। पंडितजी के तत्कालीन निजी सचिव श्री कीकु भाई भगत (वर्तमान प्राध्यापक एम० वी० कॉलेज, बम्बई) के साथ मैं बनारस स्टेशन पर उतरा। पूज्य पंडितजी स्वयं हमें लेने पधारे थे। हमने प्रणाम किया—पंडितजी ने आशीर्वाद दिया। किन्तु कुछ खिन्न स्वर में बोले—"भाई! न आते तो अच्छा होता। यहाँ तो अभी कोई ठिकाना नहीं है।" मैंने उत्तर दिया—"कोई हर्ज नहीं। काशी की यात्रा कभी भी निष्फल नहीं होगी।"

लक्ष्मणदास गेस्ट हाउस में हम पंडितजी के साथ ही ठहरे थे। कभी किसी मीटिंग से लौट कर कहते—"समझ में नहीं आता कि यहाँ आकर मैंने ग़लती की है या सही। बड़ी-बड़ी आशाओं के साथ मैं यहाँ आया हूँ, लेकिन सफलता के आसार कहीं नज़र नहीं आते।" आशा-निराशा के बीच

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उलझा हुआ पंडितजी का मानस कुछ विक्षिप्त-सा रहता था। वे भूल गये कि हमें अपने आने की सूचना सेन्ट्रल ऑफ़िस में देनी चाहिए थी, जिससे नियुक्ति की तारीख निश्चित होती। बाद में युनिवर्सिटी के एक अधिकारी श्री महेशानंद घिलड़ियालजी ने हमें कुछ उपयुक्त जानकारी दी।

कुछ दिन बाद पंडितजी ने अपने निकटतम स्नेही तथा संगीत के परम रसिक श्री ठाकुर धराचंदजी को अपने पास बुला लिया। निराशा के समय श्री धराचंदजी पंडितजी को काफी उत्साह देते। एक बार एक नोटिस आया, जिसे पढ़कर पंडितजी गरज उठे—"ओंकारनाथ बंधन में नहीं रहेगा।"। धराचंदजी वहीं बैठे थे, पंडितजी से लिपट गए। हँसकर बोले—"पंडितजी! आप जिनका रातदिन भजन करते हैं, वे स्वयं भगवान् भी भक्तों के कारण अवतार लेकर संसार के बंधन में बंधते हैं।" इस वाक्य का पंडितजी पर गहरा असर पड़ा। वे शान्त हुए और उसी दिन से उन सभी बातों को—जो उन्हें असह्य-सी लगती थीं—निगलते चले। अंततोगत्वा १९ अगस्त सन् १९५०, शनिवार का दिन 'श्री कला संगीत भारती' उर्फ 'कॉलेज ऑफ म्यूजिक एण्ड फाइन आर्टस्' के उद्घाटन के लिये निश्चित हुआ। उस दिन संध्या समय रुइया छात्रावास के ऊपर के बड़े कक्ष में सभा हुई। कुलगीत, ईश-वंदना के पश्चात् पंडितजी का धीर-गंभीर व्याख्यान और रसमय गायन हुआ, जिसमें उन्होंने राग जैजैवंती तथा कबीर साहब का भजन 'रे दिन कैसे कटि हैं' गाया। अखिल भारतीय संगीत सम्मेलन के अध्यक्ष माननीय श्री दामोदरदास खन्ना उर्फ लालाबाबूजी का प्रासंगिक वक्तव्य हुआ। तत्कालीन कुलपति महोदय माननीय श्री गोविंद मालवीयजी के द्वारा सभा से नवनियुक्त अध्यापकों का परिचय कराया गया। २१ अगस्त सन् ५० के अपराह्न तीन बजे से 'श्री कला संगीत भारती' में अध्यापन कार्य आरंभ हुआ।

विद्यालय के अस्तित्व एवं उत्कर्ष के लिए पंडितजी ने जो अथक परिश्रम व दृढ़ता पूर्वक संघर्ष किया, उसका मैं साक्षी रहा हूँ। शैशव काल में 'हाँ' 'ना' के हिंडोले पर झूलती हुई यह संस्था १८ वर्ष की होकर युवावस्था को प्राप्त हुई है।

अब उसका निजी भवन है। पहले से कहीं अधिक संख्या में अध्यापक तथा कर्मचारिगण कार्य कर रहे हैं। अनेक विभाग बन गए हैं। इस प्रकार उसे एक सुनिश्चित आकार एवं गति मिल गयी है। किन्तु शून्य से सौ का निर्माण करने वाले वे संगीत-सम्राट् आज हमारे बीच नहीं हैं। उन्हें स्वरूपस्थ हुए आज पूरा एक वर्ष बीत गया। मुझे विश्वास है, पं० ओंकारनाथजी ठाकुर की अमर कृति रूप यह संस्था शिक्षा एवं शोधकार्य के क्षेत्र में संगीत जगत् का निरंतर पथप्रदर्शन करती रहेगी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Homage to Pt. Omkarnath Thakur (3rd anniversary)

एक तुलनात्मक अध्ययन

लेखक : श्री. वलवन्तराय भट्ट, संगीताचार्य.

मेरे विचार में अब समय आ गया है जब कि हम उत्तर तथा दक्षिण भारत के संगीतकार मिल-बैठकर एक दूसरे को अपनी-अपनी पद्धतियों के विषय में अधिक से अधिक जानकारी उपलब्ध करावें। संगीत-मार्तंड पं. ओम्कारनाथजी इस बात को अत्यंत उपयोगी एवं आवश्यक मानते थे। अपने अनुभव से मैंने भी ऐसी चर्चाओं से लाभ ही उठाया हैं।

आरम्भ में गायन-वादन शैली को एक तरफ रखे तब भी रागों तथा तालों के संबंध में तो कुछ विचार कर ही सकते हैं। अधिकतर 'भूपाली' जैसा राग भारत में सर्वत्र प्राथमिक कक्षाओं के लिये उपयुक्त माना गया है। उसीको लें तो कर्नाटक पद्धति में उसे 'मोहनम्' कहते हैं। 'मोहनम्' याने 'भूपाली' के अवरोह में यदि 'कल्याण' के स्वर-सो नि ध प म ग रे सा (तीव्र मध्यम युक्त) लिया जाता है, तो उसे कर्नाटकी विद्वान 'मोहन कल्याण' कहते हैं। इस 'मोहनकल्याण' को ही पं. ओम्कारनाथजी ने, 'भूपाली' तथा 'कल्याण' का मिश्रण देखकर 'भूपकल्याण' कहा और अपनी पुस्तक 'संगीतांजली' के द्वितीय भाग में उसे प्रथम स्थान दिया।

काशी हिंदू विश्व विद्यालय स्थित संगीत महाविद्यालय के हमारे सहयोगी एवं कर्नाटकी गायनाचार्य श्री. एस. आर. कृष्णन से मैंने अनेक बार चर्चाएं की। उस से मुझे दोनों पद्धतियों के अधिकाधिक निकट आने की संभावना स्पष्ट दीखने लगी है। पंडित ओम्कारनाथजी की 'संगीतांजली' के प्रथम भाग को ही हम लें-उसमें सर्व प्रथम 'भूपाली' के बाद 'हंसध्वनि' आता है। यह कर्नाटक पद्धति से ही उत्तर हिंदुस्तानी पद्धति में आया है। पंडितजीने उसे अपनी पुस्तक के शुरू में ही स्थान देकर उसे प्रचलित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। तदनंतर प्रा. शिवकुमार शुक्ल, उ. अमीर खाँ तथा पं. वासवराज जैसे प्रसिद्ध गायकों ने भी अपने-अपने गायन-कौशल से 'हंसध्वनी' को लोकप्रिय बनाया है। पंडितजी के पदचिन्हों पर चलते हुए मैंने भी अपनी पुस्तक 'भावरंग-लहरी' भाग १ में 'हंसध्वनि' में एक सरस्वति-स्तुति द्रुत आडाचौताल में निबद्ध कर प्रकाशित की है, जिसे सुनाने के लिये आज के उदीयमान कलाकार भाई रसिकलाल अंधारिया से लोग बार-बार फरमाइश करते सुने गये हैं। इसके अलावा पं. रविशंकर आदि प्रसिद्ध सितार वादकों ने 'किरवाणी', 'वसंतमुखारी' आदि कर्नाटकी रागों को करीब-करीब उत्तर भारतीय रागों जैसा बना दिया है। अतः हमें उपर्युक्त 'हंसध्वनि', 'किरवाणी', 'वसंतमुखारी' जैसे रागों को कर्नाटक की मूल्यवान भेंट के रूपमें सहर्ष स्वीकार करना चाहिये।

पंडितजी की पुस्तक में 'हंसध्वनि' के बाद 'दुर्गा' राग दिया है। उसे कर्नाटकी विद्वान 'शुद्ध सावेरी' कहते हैं। मैं छोटा था-बम्बई में पढ़ता था-तब रेडियो पर अनेक बार 'दुर्गा' सुनता था। अब इस बात को बरसों बीते हैं, फिर भी आज तक उत्तर प्रदेश में दुर्गा का प्रचार बम्बई के मुकाबले नहींवत् है। पंडितजीने मुझे एक बार कहा था कि-'यह दुर्गा कुछ ही वर्षों से हमारे यहाँ गाया जाने लगा है। हो सकता है कि वह भी 'हंसध्वनी' की तरह आयात किया गया हो। अब लगता है कि इस प्रकार रागों को आयात करने की प्रवृत्ति बढ़ चली है, और मैं तो इसे अच्छा ही नहीं आवश्यक भी समझता हूँ।

श्री. कृष्णन् के अनुसार हमारे 'तिलंग' तथा 'बागेश्री' को कुछ कर्नाटकी विद्वान उसी नाम से उसी रूप में गाने लगे है, हालाँ कि उनके पास 'तिलंग' के निकटवर्त्ती 'नाट', 'गंभीर नाट' जैसे दो तीन रूप हैं। हमारा 'बागेश्री' जैसा उनको 'श्रीरंजनी' भी है। हमारे 'हिंडोल' को वे 'सुनाद विनोदिनी' कहते हैं और उनकी 'हंसानंदी' से तो हमारे तीन राग-'पूरिया', 'मारवा', तथा 'सोहिनी' अपने अपने नियमों को निभाकर बन सकते हैं।

एक बार की चर्चा में मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। जैसे हमलोगों में 'ललित' कोमल धैवत तथा तीव्र धैवत-दोनों तरह से माना जाता है, ठीक उसी प्रकार कर्नाटकी लोग भी मानते हैं। हमारे और उनमें बड़ा अन्तर यही कि हम 'ललित' में दोनों मध्यम अनिवार्य मानते हैं और वे अपनी 'ललिता' में केवल शुद्ध मध्यम ही लेते हैं।

'वसंत' का भी यही हाल है। कर्नाटक पद्धति में पंचम वर्ज्य, रिषभ कोमल तथा बाकी सभीस्वर शुद्ध रखकर 'सा ग म ध नि सां सां नि ध म ग रे सा. इसे वसंत कहते हैं। अमेरिका का पेनसिल्वेनिया युनिवर्सिटी के डॉ. हेरल्ड एस. पावर्स मुझसे उत्तर भारतीय रागों की शिक्षा ले रहे थे। एक दिन 'वसंत' राग पर चर्चा चली। मैंने यहाँ का पंचम युक्त, रिषभ धैवत कोमल तथा दो मध्यमवाला उत्तर भारतीय 'वसंत' सिखाते हुए यह भी बताया कि 'वाराणसी' के गुणीजन पंचम वर्ज्य, रिषभ धैवत शुद्ध तथा उभय मध्यम युक्त 'वसंत' गाते हैं और मेरे बताये हुए पंचम युक्त वसंत को स्थानिय गुणीजन 'वसंत पंचम' कहते हैं। यह सुनते ही वे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बाक पड और बरा पहले कर्नाटकी पद्धति में सीखे हुए 'वसंत' का याद करते हुए कहने लगे कि–यह प्रश्न खासा विचारणीय मालूम होता है। ' मैंने डॉ. पावर्स को उनके आश्चर्य का कारण पूछते हुए 'बसंत' के बारे में अपने विचार स्पष्ट करने को कहा। वे बोले-" कई मामलों में मुझे ऐसा लगता है कि अनेक रागरूपों का परिवर्तन अधिकतर उनके कोमल तथा तीव्र स्वरभेद से ही हुआ होगा। उदाहरणार्थ : कर्नाटकी 'श्री' जो मैने सीखा है, तथा आपने मुझे उत्तर भारत का जो 'श्री' बताया है, उन दोनों के स्वररूप देखते हुए मुझे उनमें कोमल, तीव्र के भेदके सिवा और कुछ नहीं दीखता। आपका 'श्री' राग है-रिषभ धैवत कोमल, मध्यम तीव्र बाकी स्वर शुद्ध, बड़ी बार देखें तो आरोह गंधार धैवत वर्जित होकर ओड़व बनता है। ठीक वैसा ही गंधार धैवत वर्जित ओड़व आरोह कर्नाटकी 'श्री' का भी है। किंतु बड़ा भेद स्वरों के कोमल तीव्र स्वरूप का है। जहाँ आपके रिषभ धैवत कोमल हैं वहाँ कर्नाटकी रिषभ धैवत शुद्ध हैं। जहाँ आपका मध्यम तीव्र है वहाँ कर्नाटकी मध्यम शुद्ध है। आपके गांधार निषाद तीव्र हैं तो उनके गांधार निषाद कोमल हैं अब उत्तर भारतीय 'श्री' आपके अनुसार सारे़म़पनिसा रे़ निध़प म़पम़ग रे़गरे़सा होता है, अधिकांश उसी तरह कर्नाटकीय 'श्री' का भी सारेपमनि़सा नि़पम रेगरेसा होता है। धैवत का प्रयोग अल्प तथा वक्र होता है यथा पधनिधप। अब मजे की बात यह कि जैसे आप अपने 'श्री' के अवरोह में रेगरेसा स्वरावली को आवश्यक समझते हैं वैसे ही कर्नाटकी विद्वान भी अपने 'श्री' में 'रेगरेसा' को महत्त्वपूर्ण मानते हैं; साथ ही आरोह के ओडवत्व को भी पूरी तरह निभाते हैं। अब दोनों पद्धतियों में राग का नाम एक सा, स्वर व्यवस्था करीब-करीब एक सी, किंतु स्वरों के कोमल तीव्र रूप को बदलकर बोलनेवाला यह प्रबल परिवर्तन कब, कैसे, किसने और किसलिये किया, यह खोज का विषय है और मेरे विचार में अत्यन्त रुचिकर भी"। मैंने कहा आपका कथन अत्यंत उपयोगी है"।

बसंत के बारे में हमारी बातचीत छूट गई। उसे अवश्य देख लें। डॉ. पावर्स बोले–आप कर्नाटक का बसंत जानते ही हैं। जैसे–सा ग म ध नि सां, शुद्ध तथा सां नि ध म ग रे सा–(रे कोमल)। अब उत्तर भारत में भी शुद्ध धैवत का बसंत है ही, बात रही मध्यम की। आप उत्तर भारतीय 'बसंत' में उभय मध्यम की बात करते हैं, किंतु आपकी बंदिशों में प्राय: एक तीव्र मध्यम की ही प्रधानता रहती है। दूसरा शुद्ध म क्वचित ही देखने में आता है। सो बहुत संभव है कि वह शुद्ध मध्यम बाद में प्रवेश पाया हो, और जहाँ तक स्वरों की कोमल तीव्र अवस्था का प्रश्न है, उसमें हेरफेर तो वैसे भी संभव मालूम पड़ता है। इस लिये ऐसा अंदाज लगाने में बहुत कठिनाई नहीं मालूम पड़ती कि या तो कर्नाटकी 'बसंत' के शुद्ध मध्यम के बदले आपने तीव्र मध्यम रखलिया हो या उत्तरी 'बसंत' के तीव्र मध्यम के बदले कर्नाटक ने शुद्ध मध्यम कर लिया हो। और यदि बहुत समय से 'बसंत' में पंचम नहीं ही है, वर्जित ही है-तो उस पंचम को प्रयोग में लाकर 'बसंत पंचम' जैसा नया राग और उसका नया नाम प्रचलित करने का उत्साह किसी भी बुद्धिमान और सर्जक कलाकार को सहज हो सकता है। और एक ही राग में कोई शुद्ध धैवतका प्रयोग करते हैं तो कोई कोमल धैवत का प्रयोग करके उसे उस राग का दूसरा प्रकार कहकर नवीनता स्थापित करने का प्रयास कर ही सकते हैं। आपने मुझे जो कोमल धैवत तथा शुद्ध धैवत युक्त दोनों 'बसन्त' के प्रकार बताये हैं, तथा मैंने कर्नाटक पद्धति से जो 'बसंत' सीखा है, उसके आधार पर 'राग बसंत' पर मैं एक लेख लिखना चाहता हूं।'

(डॉ. पावर्स ने उपर्युक्त कथनानुसार 'राग बसंत' पर लिखा हुआ अपना लेख सन ६८ की गर्मियोंमें, दिल्ली में प्रो. पडगोपनजी द्वारा पं. ओमकारनाथजी की स्मृति में आयोजित एक सेमिनार में पढ़ा था।)

हमारे तथा कर्नाटकी पद्धति के रागों में समानता की दृष्टि से मुझे सबसे सुंदर चीज यह देखने को मिली कि राग 'कानडा' के मूल नाम, उसके स्वर तथा उन स्वरों की व्यवस्था हमारी और उनकी बिल्कुल एक-सी है। जैसे हम 'कानडा' अंग निश्चित करते समय गंधार निषाद कोमल, बाकी सब शुद्ध रखकर नि़पग़मरेसा अनिवार्य रूप से करते हैं, वैसे कर्नाटकी विद्वान भी। कर्नाटकी 'कानडा' का आरोह गंधार निषाद कोमल, बाकी स्वर शुद्ध, यों सारेग़मधनि़सां जाता है, जो हमारी 'बागेश्री' के समीप है। कुछ उसी तरह जब हमलोग भी 'कानडा' के अनेकानेक प्रकार दिखाते समय विविध आरोही रूपों का आश्रय लेते हैं, तब हमारे भी कुछ रूपों में तीव्र धैवत का प्रयोग खुलकर किया जाता है। जैसे:-'बागेश्री' कानडा 'हुसैनी' कानडा' 'शहाना कानडा' 'रायसा कानडा' 'दरबारी' तथा 'अडाना' जैसे हमारे प्रसिद्ध कानडा प्रकारोंमें हमलोग निश्चित रूपसे कोमल धैवत ही लेते है। वैसे कर्नाटक पद्धति में भी कुछ गुणीजन 'कानडे' में कोमल धैवत का प्रयोग कर ही लेते हैं–भले ही यह बहुजन मान्य न हो। जैसे हमारे यहाँ अब कोमल धैवत युक्त 'कौशिक कानडा' प्रचार पा चुका है, किंतु कुछ बंदिशें तीव्र 'ध' युक्त कौशिक कानडे की भी सुननेको मिलती है। किसी भी क्षेत्र में प्रचार के बल को प्राथमिकता मिलना स्वाभाविक बन जाता है।

रागों के बारे में अभी काफी कुछ लिखा जा सकता है, किन्तु विस्तार भय से वह विषय छोडकर अब तालों के बारे में कुछ समझ लें। हमारी तथा कर्नाटकी ताल पद्धति में साफ दिखाई दे ऐसा अंतर अवश्य है, किन्तु ताल विधा के मूल हेतु में कभी कोई अन्तर नहीं हो सकता। ताल का मूल लक्ष्य व्यवस्था बनाये रखना है। व्यवस्था में बल रहता है और बलशाली प्रदर्शन ही प्रभावशाली होता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ताल की तात्विक चर्चा को छोडकर उसके क्रियापक्षको कुछ मोटे तौरपर ही समझ लिया जाय। हमारे तालों में प्रयुक्त मात्रासंख्या के बराबर एक वर्णावलि तबला तथा मृदंग में बजाने के लिये निश्चित होती है। जिसे हम 'ठेका' कहते है; जो सम और ताली-खाली के नियमों के साथ बार-बार बजता रहता है। कर्नाटकी तालों में ऐसे ठेके निश्चित नही होते। वहाँ भी कुछ वर्णावली सिखाई जाती है अवश्य, किन्तु गायन वादन के समय ताल की मात्रासंख्या के अनुसार मृदंग पर एक निश्चित ठेका बजना ही चाहिये ऐसा नही है।

जिसे हम 'मात्रा' कहते है उसे वे 'अक्षर' कहते हैं। हमारे यहाँ अनेकानेक ताल है। कर्नाटक में सातही ताल मुख्य है जो पांच जातियो के भेद से कुल पैंतीस बनते हैं। हालाँ की उनके यहाँ भी एक बार एकसौ आठ तालोंका प्रचलन था। वैसे तो हमारे यहाँ भी प्रचार में ३० तालोंसे अधिक नहीं चलते। हमारे यहाँ 'चौताल' तथा 'एकताल' की मात्रा संख्या तथा ताली-खाली सब समान हैं, किंतु नामभेद तथा प्रयोग भेद से दोनों भिन्न माने गये हैं। चार ताली लिये हुए 'चौताल' तो अपना नाम सार्थक करता है, किंतुँ उतनी ही ताली रखते हुए 'एकताल' कैसे एकताल कहलाया, यह प्रश्न ज्यों का त्यों बना हुआ है। इसके विपरीत कर्नाटकी 'एकताल' सही माने में अपने को 'एकताल' सिद्ध करता है। कुल चार अक्षरों का यह 'एकताल' एक ताली तथा गिनती के तीन अक्षर लिए हुए चलता है। (१ ताली+३ अक्षर=१ लघु) यह चतस्र जाति का प्रकार हुआ। जाति भेदसे यदि अक्षर संख्या घट-बढ़ गई तब भी ताली एक ही रहेगी।

कर्नाटक का 'अट्टताल' (जाति चतस्र) ठीक हमारे चौताल और एकताल के सदृश बनता है। खंडजाति में वही अट्टताल थोडा फरक रखते हुए हमारे 'धमार' की तरह हो जाता है। कर्नाटक का 'तिस्र त्रिपुट' हमारा 'तेवरा' ही है। हम अपने 'रूपक' में सम पर ताली नहीं देते, कर्नाटक का 'मिश्रचापु' प्रयोग वैसा ही है। किन्तु कर्नाटकी विद्वान किसी भी हालत में सम पर ताली न देने को ठीक नहीं समझते। 'मिश्रचापु' को उन सात तालों से अलग माना गया है।

जाति भेद से निर्मित कर्नाटकी ३५ ताल ५ प्रकार के गतिभेद से कुल १७५ हो सकते हैं, किंतु उतना सूक्ष्म भेद आज प्रचार में नहीं है।

हमलोग गायन-वादन के समय अपनी बंदिशों के मुखड़े क्वचित किंचित बदल कर भी समपर आया करते हैं; किन्तु कर्नाटकी पद्धति में मुखड़ा उठानेके नियम का कठोरता से पालन किया जाता है। इसके स्थान को कभी भी, किंचित भी बदल नहीं सकते।

साधारणतया देखा गया है कि कर्नाटकी पद्धति में विद्यार्थियों को प्राथमिक कक्षाओं से ही तालबद्ध अलंकारों की व्यवस्थित शिक्षा देने का दृढ़ नियम है। हमारे यहाँ भी परंपरा-विशेष के गुणीजन इस नियम का पालन करते-कराते रहे, किन्तु अधुना उस क्षेत्र में कुछ शैथिल्य आ गया है। कर्नाटक पद्धति का आरंभ से ही तालबद्ध अलंकारो की शिक्षा देने का क्रम मैं अनुकरणीय तथा लाभदायी समझता हूँ।

मैं चाहता हूँ कि कर्नाटकी राग-तालों के विषय में कुछ विस्तृत जानकारी अपने भावी प्रकाशन 'भावरंग-लहरी' भाग २ में प्रकाशित करूं। मुझे विश्वास है कि इससे हमारे संगीत के विद्यार्थी अवश्य ही लाभ उठायेंगे। मुझे लगता है कि इस प्रकार जानकारी के आदान-प्रदान से हमलोग सर्वथा लाभान्वित ही होंगे।

इति शिवम्।

संगीताचार्य पं. बलवंतराय भट्ट 'भावरंग'
लेक्चरर संगीत महाविद्यालय
का हिं. वि. वि.
वाराणसी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ख्याल का प्रस्तुतीकरण

यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि रायपुर स्थित श्री कमलादेवी संगीत महाविद्यालय के रजतजयन्ती समारोह के तत्त्वावधान में 'ख्याल का प्रस्तुतीकरण' विषय पर परिसंवाद का आयोजन हो रहा है। परिसंवाद के आयोजकों को मैं हार्दिक धन्यवाद देता हूँ क्योंकि उक्त विषय की चर्चा के लिए आज के परम उपयुक्त अवसर को उन्होंने भलीभाँति परखा है।

ख्याल गायन के प्रस्तुतीकरण के लिए आधुनिक काल को हम 'संक्रमण काल' कह सकते हैं। बहुत संभव है कि सदियों से चली आ रही अनेकविध ख्याल-गायन-शैलियों को अपने गले में उतारने वाले गायकों को भी इस क्रांति काल में कुछ न कुछ परिवर्तन के लिए तत्पर होना पड़े। ख्याल-गायन के प्रत्येक प्रस्तुतकर्ता के अपने विचार हो सकते हैं। मैं भी अपने कुछ विचार यहाँ प्रस्तुत करता हूँ।

'ख्याल' मूलतः एक संगीत-प्रकार है। 'संगीत' शब्द में 'गीत' अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। संगीत-रत्नाकर के प्रबंधाध्याय में गीत शब्द की व्याख्या करते हुए शार्ङ्गदेव ने कहा है—'रञ्जकः स्वरसंदर्भो गीतमित्यभिधीयते'। इसके अतिरिक्त भरत मुनि ने भी अपने नाट्यशास्त्र में 'गान्धर्व' शब्द का विशेष अर्थ बताते हुए उसे 'स्वर-ताल-पदात्मक' कहा है। 'गीत' शब्द के सामान्य अर्थ 'रंजक स्वरसंदर्भ' को ध्यान में रखते हुए हमें गान्धर्व के प्रतिनिधि गीत के विशेष अर्थ 'स्वर-ताल-पदात्मक' पर विचार करना क्रमप्राप्त है। ख्याल-गायक गाते समय अपने 'राग' पर अवश्य ध्यान देगा ही, जो कि एक स्वर-सन्निवेश होता है। अपने निर्धारित स्वर-सन्निवेशरूप राग पर ध्यान केन्द्रित करते हुए ख्याल गायक के लिए कुछ और भी करणीय रह जाता है। यथा ताल, अर्थात ताल के तोल एवं गति से संबंधित रहना, तथा पद याने शब्दरचना – जिसे 'राग' से रंग कर श्रोताओं के सम्मुख प्रस्तुत करना होता है।

राग का ध्यान करते हुए गायक को राग का गठन, उसका चलन, साथ ही सप्तकान्तर में राग की अपनी संभवित गति से निर्मित राग-प्रकृति को अवश्य देखना होगा। मुख्यतः गंभीर तथा चंचल – ऐसी दो प्रकार की राग-प्रकृतियाँ देखी गई हैं। संभवतः मानवमात्र में और मानव की रचना में भी मुख्यतः प्रकृति के उपर्युक्त दो भेद ही देखने को मिलते हैं। कोई भी कलाकार अपनी किसी भी कला के प्रदर्शन में अपनी प्रकृति से विमुख नहीं हो सकता। संगीतकार अथवा ख्याल-गायक भी इसका अपवाद नहीं है। गंभीर प्रकृति का कलाकार दरबारी जैसे गंभीर प्रकृति के राग में यदि गंभीर अर्थयुक्त शब्द-रचना को स्वरबद्ध कर विलंबित लय में उसे प्रस्तुत करे तो वह सामञ्जस्यपूर्ण प्रस्तुतीकरण सर्वतोभद्र होगा। ठीक इसके विपरीत प्रस्तुतीकरण की सामग्री के सामञ्जस्य में जहाँ जितनी कमी रहेगी उतनी ही उसके प्रभाव में भी कमी आना स्वाभाविक है। इस विषय पर विस्तृत चर्चा विस्तार-भय से नहीं की गई है।

उपरिलिखित राग, ताल एवं पद के समन्वय को दूसरे शब्दों में कहें तो बंदिश सब प्रकार से संतुलित हो, अर्थात उसमें प्रयुक्त भाषावाक्य, रागवाक्य तथा ताल के तोल एवं गति में परस्पर मेल हो और वे एक दूसरे के पूरक हों। रञ्जक हों, भञ्जक न हों। उदाहरणार्थ राग जैतकल्याण का विलम्बित ख्याल उद्धृत है, जिसमें भाषावाक्य, रागवाक्य तथा ताल के तोल में समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया गया है।

टिप्पणी—अगस्त, '७६ में' मध्यप्रदेश संगीत सभा के १३ वें वार्षिक अधिवेशन के अंतर्गत 'कमलादेवी संगीत महाविद्यालय' रायपुर की रजत जयन्ती के उपलक्ष्य में आयोजित संगीत सेमिनार तथा सम्मेलन के समय प्रस्तुत निबन्ध।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(२)

राग – जैतकल्याण   ताल – विलम्बित झूमरा❀

स्थाई—राजा अवध के अचल अविनाशी श्रीरामचंद्र सुखराशि।

अंतरा—जय जगस्वामी अनंतनामी भावरंग रस-रूप सकल घटवासी ॥

एक दृष्टि और – जो विशेषकर शब्द–रचना से संबंध रखती है। वह यह कि विलंबित तथा द्रुत ख्याल की बंदिशों में वर्ण्यविषय का भी परस्पर सामंजस्य हो। यथा–विलंबित ख्याल में यशोदा मैया मंध्या हो जाने पर श्री कुँवर कन्हाई के न आने पर व्याकुल हो उठती है, और वही, द्रुत ख्याल में कन्हैया को नाचते–गाते आता हुआ देखकर उल्लास से भर जाती है। मेरी पुस्तक 'भावरङ्ग–लहरी' के प्रथम भाग में राग पूरियाधनाश्री के दोनों ख्यालों में इस प्रकार की रचनाएँ द्रष्टव्य हैं। ऐसी ही कुछ अन्य रचनाएँ 'भावरंग–लहरी' के दूसरे भाग में दी हैं। यथा—राग कलावर्धिनी के विलंबित ख्याल में श्रीकृष्ण के नामकरण उत्सव का वर्णन है—"आज वजावत बाजा ब्रजजन। बरही के अति उछाह भरे नन्दराजा।" और द्रुत ख्याल में बड़े होकर खेलते कृष्ण का वर्णन है—"अब खेलन लागे कन्हाई।" इसी प्रकार❀ मारुबिहाग के विलंबित ख्याल में विरहिणी नायिका पथिक को कहती है—

स्थाई—लेता जा, ले जा संदेसवा पिया के देस।

अंतरा—पथिकवा वीर, जाय कहो उन्हीं सो मोरे जिया को कलेस।❀

और द्रुत ख्याल में संदेश का विषय है – 'बेगि तुम आवो सुंदरवा'।❀

इस प्रकार विलंबित तथा द्रुत ख्याल की बंदिशों के वर्ण्य-विषय के सामंजस्य को भी श्रोताओं ने अत्यधिक पसंद किया।

अंततोगत्वा कलामात्र के या संगीत के किसी प्रकार के प्रस्तुतीकरण का परम लक्ष्य–विशेषकर भारतीय दर्शन के अनुसार कहें तो आनंदानुभूति (रसानुभूति) होती है। जैसे राग-ताल-पद के सामंजस्य को देखा, वैसे ही जब तक गायक तथा श्रोता में भी एक विशेष प्रकार का संबंध स्थापित न हो जिसे शास्त्रीय भाषा में साधारणीकरण कहते हैं, तब तक गायक के प्रस्तुतीकरण का प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता। उसकी सिद्धि के लिए बहुत गहरी चर्चा में न जाकर स्थूल मान से जो हमारे गुणिजनों ने अपनी पवित्र रचनाओं में कहा है उसे संक्षेप में देखें। पं. चिंतामणिजी ने अपने धनाश्री राग के ध्रुवपद के आभोग में कहा है—

चिंतामनि गुरुन ध्यान आन मान श्रुति प्रमान,
उलट पुलट सुरन के नेम प्रेम दृढ़ करे, तब गुनिजन मध जावे, मान पावे।"

चिंतामणिजी की यह पंक्ति 'सुरन के नेम प्रेम दृढ़ करे' सचमुच ही चिंतामणि की तरह चिंतित फल देने वाली है। स्वरों के नियम तथा उनके प्रति अपना प्रेम दृढ़ करे, तब 'गुनिजन मध जावे' के बदले में यह कह सकता हूँ कि 'तब जन-जन मध जावे, मान पावे।'

गुणी तानसेन ने भी लिखा है–'प्रथम नाद सुर साधे, आराधे, सोई गुनिजन में गावे,⋯⋯तानसेन के प्रभु प्रसाद दीजे, ताते गायनविद्या कंठ करावे।"

गायकों अर्थात् प्रस्तुतकर्ता के गुण अर्थात् उनकी योग्यता के विषय में भी कई निर्देश ग्रंथों तथा बंदिशों में मिलते हैं।

❀इस चिह्न से चिह्नित रचनाएँ 'भावरंग–लहरी' भाग–२ में प्रकाशित हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(३)

यथा ग्रंथ में—

... .। हृद्यशब्दः सुशारीरो ग्रहमोक्षविचक्षणः ॥ १३ ॥
रागरागाङ्गभाषाङ्गक्रियाङ्गोपाङ्गकोविदः । प्रबन्धगाननिष्णातो विविधालप्तितत्त्ववित् ॥ १४ ॥
सर्वस्थानोत्थगमकेष्वनायासलसद्गतिः । आयत्तकण्ठस्तालज्ञः सावधानो जितश्रमः ॥ १५ ॥
शुद्धच्छायालगाभिज्ञः सर्वकाकुविशेषवित् । अनेकस्थायसंचारः सर्वदोषविवर्जितः ॥ १६ ॥
क्रियापरो युक्तलयः सुघटो धारणान्वितः । स्फूर्जन्निर्जवनो हारिरहःकृद्भजनोद्धुरः ॥ १७ ॥
सुसम्प्रदायो गीतज्ञैर्गीयते गायनाग्रणी । ... . ॥ १८ ॥

('संगीतरत्नाकर' तृतीय अध्याय)

बंदिश में—

१—राग – लच्छासाख के झपताल में

स्थाई—प्रथम ताल सुर साधें, सोई गुनिजन सुध मुद्रा बानी सुध गावे ।

२—राग – भूपाली के ताल तीनताल में

अंतरा—द्रुत मध्य विलम्बित अरु ताल काल सम विषम को
कण्ठवरण कर दिखावे, सुध मत तत्र बड़ो गायक कहावे ।

('कंठवरण' अर्थात् काकुप्रयोग, याने आवश्यकतानुसार कंठ के प्रयोग में प्रावीण्य)

उपरिलिखित ग्रंथोक्ति तथा बंदिशों की पंक्तियों से हमें निश्चित मार्गदर्शन मिलता है कि गायकों को अपने विवेकपूर्ण अभ्यास द्वारा इन सभी गुणों से युक्त होना चाहिए । यथा–मन को भाने वाला कण्ठ, राग, ताल तथा बंदिश के बरताव में कुशलता, मुद्रादोष से रहित होना, उच्चारण की स्पष्टता, काकु-प्रयोग अर्थात् आवश्यकतानुसार कण्ठ के प्रयोग में प्रावीण्य, सुसम्प्रदायी (सुशिक्षित) होना इत्यादि । साथ ही कलाकार को अपनी कला के प्रस्तुतीकरण के लिए देश तथा काल का ज्ञान रखना भी लाभदायी होगा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रसानुभूति में काकुभेद का स्थान

परमहर्ष का विषय है कि 'प्रयाग संगीत समिति' की स्वर्ण जयन्ती के स्वर्णिम अवसर पर आयोजित इस परिसंवाद का मुख्य विषय है 'संगीत में रसतत्त्व'। उक्त विषय के अंतर्गत मेरे निबध का शीर्षक है—रसानुभूति में काकुभेद का स्थान।

परिसंवाद समिति के प्रबुद्ध संयोजक डॉ. सुरेशव्रत राय ने अत्यंत विचार-पूर्वक मुझे अपना प्रिय विषय प्रस्तुत करने का अवसर दिया है। अस्तु।

वस्तुतः रसानुभूति शब्द रस और अनुभूति इन दो शब्दों की संधि से बना है। रसानुभूति शब्द का पूर्वार्द्ध 'रस' शब्द ही एक तत्त्व के रूप में हमारे विचार का केन्द्रबिन्दु बना हुआ है। सर्वप्रथम रस शब्द का प्रयोग हमारे यहाँ 'रसो वै सः' इस श्रुतिवाक्य के रूप में हुआ है। किंतु यह हुआ वैदिक वाङ्मय का विषय। लोक में सर्वप्रथम रस शब्द को आलोकित किया महर्षि भरत ने, अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'नाट्यशास्त्र' में। यह सर्वविदित है कि भरत नाट्यशास्त्र का प्रमुख विषय है नाट्य। और भरत मुनि ने अपने उक्त ग्रंथ में रसतत्त्व की जो चर्चा की है वह नाट्य के संदर्भ में ही। वहाँ संगीत के सिद्धान्तों की भी चर्चा अवश्य है, किन्तु नाट्य से स्वतंत्र संगीत और उस स्वतंत्र संगीत का अपना रसतत्त्व, ऐसे विचार को नाट्यशास्त्र में स्थान नहीं है। ऐसी अपेक्षा करना भी उचित नहीं है। अस्तु। मेरे निबंध में, काकुभेद तथा उसका रसानुभूति में स्थान इस विषय पर मैं यथाशक्ति चर्चा करूँगा।

रस की तरह काकु शब्द भी हमें नाट्यशास्त्र से मिलता है। जिसप्रकार नाट्यशास्त्र में वर्णित रसनिष्पत्ति के विषय में लोल्लट, शंकुक, भट्टनायक आदि आचार्यों के अपने-अपने विचार प्रकट करने के बाद भी रस-सिद्धान्त विवाद का प्रश्न बना रहा और अंततोगत्वा महान विचारक, 'अभिनवभारती' के प्रणेता अभिनवगुप्त द्वारा रस सिद्धान्त का स्पष्टीकरण हुआ और अब हम संगीत-सेवियों के सामने नाट्य से स्वतन्त्र संगीत और उस संगीत में रसतत्त्व यह एक अहोरात्र का विचारणीय प्रश्न बन गया है। उसी प्रकार उपर्युक्त काकु शब्द भी, अथवा यों कहिए कि काकु-प्रयोग—वह नाट्य के अभिनय के चार प्रकारों में से वाचिक अभिनय में बताया गया है।

वाचिक याने वाणी का, अभिनय याने सामने या प्रति ले जाना। नाट्य में जो कुछ बोला जाता है उसे पाठ्य कहते हैं और उसी पाठ्य के अन्तर्गत काकुप्रयोग का विधान भरतमुनि ने किया है। इस काकु-प्रयोग अर्थात वाचिक अभिनय द्वारा नाट्य के नट अपने वचनों (शब्दों) के अर्थ तथा भाव सुहृद प्रेक्षकों के हृदय एवं मस्तिष्क तक पहुँचाने में सफल होते हैं। सर्वप्रथम यह समझ लेना चाहिए कि 'काकु' प्रयोगगत वैशिष्ट्य है, वस्तुगत नहीं। और मोटे तौर पर कहें तो काकु स्वर-लयाश्रित होती है। गहराई से देखने पर भी काकु-प्रयोग की सफलता स्वर और लय के प्रसंगानुकूल उचित प्रयोग पर ही निर्भर है। इन्हीं बातों से आकृष्ट हो कर मेरे पूज्य गुरुवर्य पं० ओम्कारनाथजी ठाकुर ने अपनी गान कला के प्रदर्शन में भी विचारपूर्वक काकु-प्रयोग को महत्त्वपूर्ण माना। उन्होंने देखा कि भरत मुनि ने नाट्य के पाठ्य को प्रभावशाली बनाने के लिये, दूसरे शब्दों में कहें तो उसे रस-निष्पत्ति की ओर ले जाने के लिये काकु-प्रयोग को आवश्यक माना और 'काकुस्वरव्यञ्जनम्' शीर्षक से पूरा एक अध्याय लिख दिया। जहाँ पाठ्य के जिन ६ गुणों के अन्तर्गत काकु को एक गुण के रूप में कहा है, वहीं उन सभी गुणों को व्यापक रूप से भरत मुनि ने

टिप्पणी—नवंबर, ७६ में 'प्रयाग संगीत समिति', इलाहाबाद की स्वर्ण जयंती पर आयोजित 'संगीत में रसतत्त्व' विषयक परिसंवाद में प्रस्तुत निबंध।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(५)

काकु-विधान भी कह दिया है। उपर्युक्त पाठ्य के ६ गुणों में वर्णित षडलंकार तथा षडंग संगीतकारों के लिये विशेष ध्यान देने योग्य हैं। उक्त ६ अलंकार तथा अंगों में मुख्यतः स्वरों के उच्च-नीच स्थान, द्रुत-विलंबित लय, विराम, अविराम, पूर्ण विराम, भराव, संकोच तथा चढ़ाव, उतार आदि को काकु-प्रयोग के विस्तृत अर्थ में लिया गया है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि उपरिलिखित काकु से संबंधित सभी प्रयोगों का संगीत में सर्वदा सर्वथा प्राचुर्य होता है। यह सही है कि पाठ्य में वर्णित 'काकु' के स्वरों को रक्ति किंवा अनुरणन की आवश्यकता नहीं और संगीत में प्रयुक्त होने वाली 'काकु' के स्वरों में रक्ति तथा अनुरणन अनिवार्य हो जाएँगे।

अब रस शब्द पर विचार करें तो नाट्य में विभाव, अनुभाव तथा संचारी के संयोग से रस-निष्पत्ति कही गई है। रस-निष्पत्ति की नाट्य में वर्णित उन सारी प्रक्रियाओं को हम नाट्य से उठा कर संगीत में ज्यों का त्यों रख देने का प्रयास करेंगे तो वह एक बलात्नयन ही होगा। विभाव, अनुभाव अथवा आलंबन, उद्दीपन आदि को नाट्य की तरह ही संगीत में बिठाना सम्भव नहीं है। ऐसा करना उचित भी नहीं है और ऐसा करना आवश्यक भी नहीं है। तो संगीत में रस लावें कहाँ से ? रस आखिर कौन सा और कैसा पदार्थ है कि उसकी प्राप्ति के लिये इतना सारा परिश्रम करना पड़ रहा है।

लोक व्यवहार में हम रस शब्द से किसी तरल पदार्थ को समझते हैं और वह आस्वाद्य भी हो, जिसके आस्वादन से आनन्दानुभूति हो, संसारजनित दुःखों की अनुभूति से विमुक्ति हो। सुपाच्य एवं पौष्टिक पेय रसों से जैसे शरीर स्वस्थ एवं पुष्ट होता है वैसे ही हमारे चित्त की शुद्धि, स्वस्थता एवं पुष्टि के लिये भी कुछ रसों की आवश्यकता पड़ती है। शरीर को स्थूल रसों की, चित को सूक्ष्म रसों की आवश्यकता पड़ेगी। चित्त को मिलने वाली वस्तु चित्त ही दे सकता है। स्थायी, संचारी आदि भाव, यह सब चित्तवृत्तियों का ही तो खेल है। हमारे पूर्वाचार्यों ने इन बातों का गहरा अध्ययन किया और मानव-प्रकृति का विश्लेषण कर बड़ी खूबी के साथ हमारी शिक्षा और हमारे उद्धार के लिये अपने अनुभवों को ग्रंथस्थ कर एक अनमोल विरासत के रूप में हमें दिया। हम संगीत में रस-तत्त्व की चर्चा कर रहे हैं और रसानुभूति में काकुभेद का स्थान खोज रहे हैं।

अब हम काकु-प्रयोग को एक प्रयोग के रूप में ही देखें। काकु की शक्ति कहाँ छिपी है, उसे ढूँढें। एक व्यक्ति ने दूसरे से पूछा—'काम हो गया ?' दूसरे ने उत्तर दिया—'काम हो गया।' कोई भी समझ सकता है कि प्रश्नकर्ता और उत्तरदाता अपने उन-उन समान शब्दों को किस प्रकार बोले होंगे। प्रश्नकर्ता को अपने वाक्य के अन्त में प्रश्नचिह्न लगाने के लिये अपनी आवाज ऊँची करनी ही पड़ेगी और उत्तरदाता अपने वाक्य के अंत में ऐसा नहीं करेगा। प्रश्नकर्ता तथा उत्तरदाता के वाक्य एक से ही हैं तथापि उन वाक्यों को प्रश्न और उत्तर का रूप किसने दिया ? स्वर ने दिया। इसी को कहते हैं—'काकु-प्रयोग।' 'काकु' का दूसरा उदाहरण देखें—जिसमें स्वर के साथ विराम की शक्ति भी देखी जा सकती है। एक ने पूछा—'नहीं है ?' दूसरे ने उत्तर दिया—'नहीं, है।' प्रश्नकर्ता के 'नहीं है' के अंत में स्वर ऊँचा हुआ इसलिये वह प्रश्न ही है, निश्चित हो गया। तो इस तरफ उत्तरदाता ने अपने 'नहीं' और 'है' इन दोनों के बीच कुछ विराम रख दिया, तो उसके उन दो शब्दों से यह ज्ञात हुआ कि पूछने वाले की कोई पदार्थ न होने की धारणा ठीक नहीं है, वास्तव में पदार्थ है। इतना दो वाक्यों का सारा अर्थ 'नहीं' और 'है' इन दो शब्दों के बीच केवल थोड़ा सा विराम रखने से ही ज्ञात हो गया। तीसरा उदाहरण जिसमें स्वर, विराम, अविराम और शास्त्रीय शब्दों में कहें तो उच्च-नीच स्थान, विच्छेद तथा अनुबन्ध की शक्ति का उत्तम उदाहरण देख सकते हैं। हमने किसी दूरस्थ व्यक्ति को चलने की तैयारी करते देख पूछा—'तुम **कहाँ** जा रहे हो ?' दूरस्थ व्यक्ति ने कुछ संकेत किया। फिर हमने पूछा—'**तुम ? कहाँ ?**' फिर हमने कुछ संकेत पाया और पूछा—'**जा रहे हो ?**'

टिप्पणी—बड़े टाइप वाले शब्द पर जोर देते हुए।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(६)

उपर्युक्त तीनों शब्द 'तुम', 'कहाँ', 'जा रहे हो' के साथ हमने आवश्यक स्वरस्थान तथा आवश्यक विराम दे कर तीनों शब्दों को स्वतन्त्र रूप से आश्चर्यकारक प्रश्न का रूप दे दिया। इसकी विस्तृत व्याख्या भी हो सकती है। किसी बालक को जाते हुए देख हम उसको प्यार से पकड़ कर कह सकते हैं— 'तुम कहाँ जा रहे हो, तुम कहाँ जा रहे हो।' इसमें अनुबन्ध याने अविराम सहित द्रुत गति का उपयोग हुआ। बालक पास ही है इसलिये स्वर मध्य स्थान में ही रहेगा। एक ही वाक्य ने स्वर, लय, विराम तथा अविराम की सहायता से कितने और किस-किस प्रकार के अर्थ तथा भाव बताए। इस काकु-प्रयोग को हम इसी प्रकार संगीत में ले लें, सो बात नहीं है। किन्तु उसके तत्व को जानें, उसके रहस्य को समझें और उसकी शक्ति को पहचानें। क्योंकि उसकी गहराई में भी स्वर-लय का ही बोलबाला है। यह हर्ष का विषय है कि संगीत के प्रसिद्ध ग्रंथ 'संगीत–रत्नाकर' में भी 'काकु' का उल्लेख हुआ है। यथा —

छाया काकुः षट्प्रकारा स्वररागान्यरागजा।
स्याद्देशक्षेत्रयन्त्राणां तल्लक्षणमथोच्यते॥
श्रुतिन्यूनाधिकत्वेन या स्वरान्तरसंश्रया।
स्वरान्तरस्य रागे स्यात् स्वरकाकुरसौ मता॥
या रागस्य निजच्छाया रागकाकुं तु तां विदुः।
सा त्वन्यरागकाकुर्या रागे रागान्तराश्रया॥
सा देशकाकुर्या रागे भवेद्देशस्वभावतः।
शरीरं क्षेत्रमित्युक्तं प्रतिक्षेत्रं निसर्गतः॥
रागो नानाविधः काकुः क्षेत्रकाकुरिति स्मृता।
वीणावंशादियन्त्रोत्था यन्त्रकाकुः सतां मता॥

महान् संगीतज्ञ शार्ङ्गदेव ने संगीत में संभवित काकु–प्रयोग को बताते हुए स्वरकाकु, रागकाकु, अन्यराग-काकु, देशकाकु, क्षेत्रकाकु तथा यन्त्रकाकु का वर्णन किया है। यहाँ फिर हमें इस बात का ध्यान रखना है कि काकु वस्तुगत नहीं प्रयोगगत वैशिष्ट्य है। संगीत में हमारे प्रस्तुतीकरण का मुख्य विषय होना है–राग। इसलिये सांगीतिक काकु को ऊपर कहे अनुसार हमें राग के रूपगत नहीं किन्तु प्रयोगगत वैशिष्ट्य के अन्तर्गत देखना होगा।

(१) हमारे स्वरकाकु से किसी राग में उसके ऐसे विशिष्ट स्वर का विशेष उच्चार करना अभीष्ट है, जिससे राग–रूप प्रकट होने में सहायता मिले। यथा भैरव के तथा जोगी के कोमल ऋषभ के उच्चार।

(२) रागकाकु कोई एक विशेष स्वरावलि है, जिससे राग–रूप स्पष्ट एवं स्थिर होता हो। यथा दरबारी

ध॒ सां ग

का – 'रे सा ध॒ – नि॒ प॒'। हमीर का 'म् प ग म ध'। जयजयवन्ती का 'नि॒ सा ध॒ नि॒ रे', इत्यादि।

(३) अन्यरागकाकु—एक राग में दूसरे राग की छाया जिस स्वरावलि से दिखाई दे उसे कहेंगे। यथा–मिश्रित राग भैरव–बहार, बसन्त–बहार, बागेश्री–कानड़ा। तथा ऐसे भी राग हैं जो मिश्रित न होने पर भी कहीं-कहीं किसी अन्य राग का अंश अपने में संजोये रखते हैं। यथा बहार में कानड़ा तथा कानड़ों में सारंग का अंग। गोरख-कल्याण में किंचित् क्वचित् बागेश्री का अंश इत्यादि।

(४) देशकाकु देश विशेष से संबंध रखती है। अपने संगीत में इस समय उसे प्रदेश विशेष की परंपराओं से समझ सकते हैं। यथा–ग्वालियर, आगरा, जयपुर, पतियाला के गायक एक ही राग को अपनी-अपनी भिन्न शैलियों से प्रस्तुत करेंगे और वे सभी अपने-अपने ढंग से आनंददायी ही होंगे।

(५) क्षेत्रकाकु प्रत्येक व्यक्ति के, चाहे पुरुष या स्त्री के अपने कंठ के गुण-धर्म से संबंधित है। क्षेत्र शरीर को कहा है। कंठ शरीर का ही अवयव है। भिन्न–भिन्न कंठों से निःसृत ध्वनि अर्थात् स्वरों के प्रभाव में भी भिन्नता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(७)

अवश्य रहती है। इतना ही नहीं एक ही तबला तथा एक से बोल भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के हाथों से बजने पर उन हाथों की अलग-अलग पहचान स्पष्ट हो जाती है। इसे सीधे क्षेत्रकाकु न कह कर उसका विशेष प्रकार कह सकते हैं। क्योंकि काकु शब्द मूलतः वाणी से ही संबंधित है। ध्वनि के विशेष गुण को वताने के लिए शार्ङ्गदेव ने हमें क्षेत्र-काकु एक उत्तम शब्द दिया है।

(६) यन्त्रकाकु यन्त्र अर्थात् वाद्यों की ध्वनि से संबंधित है। यह सर्वविदित है कि दरबारी जैसा वीणा में बजेगा वैसा जलतरंग में नहीं। हंसध्वनि जलतरंग के लिए बहुत अच्छा रहेगा। उसे वीणा में बजा कर वीणा की क्षमता सीमित करना उचित नहीं। वाद्य-विशेष के लिये उचित रागों का चुनाव श्रोताओं के लिये अधिक प्रभावशाली रहेगा। उसी प्रकार कंठ विशेष के लिये भी उसके अनुकूल राग का गायन सहज रंजक, सहज प्रभावोत्पादक तथा रसानुभूति के लिये भी सक्षम हो जाता है। भिन्न-भिन्न वाद्यों की अपनी-अपनी ध्वनि के विशेष गुण से भी उसके प्रभाव में अंतर आ जाता है। रसानुभूति के लिये जिस प्रकार हमारे गायन तथा वादन में विवेकपूर्वक अर्थात् औचित्यविचार रखते हुए काकु-प्रयोग आवश्यक है; उसी प्रकार उसके सुनने वाले श्रोताओं का सुहृद होना भी उतना ही आवश्यक है। ट्रांसमीशन तगड़ा हो और साथ में रिसीविंग सेट भी अच्छा हो। अस्तु।

अब हम भरतमुनि के पाठ्य की काकु को शार्ङ्गदेव द्वारा संगीत में भी ले आए, किंतु भरतमुनि के नाट्य-शास्त्र की रसनिष्पत्ति को ज्यों की त्यों संगीत में ले आना संभव नहीं हो पा रहा है। संगीत में गायक और श्रोता उभय पक्ष की तीन श्रेणियां मानी गयी हैं। रंजक, भावुक तथा रसिक (सं. र. ३. १९-२२)। ये बड़े ही सूचक शब्द हैं। संगीत के स्वर का सर्वप्रथम कार्य रंजन करना ही है, या यों कहिए कि रंजन यह संगीत के स्वर का सहज गुण ही है। यही तो उसकी पाठ्य के स्वर से सवसे बड़ी भिन्नता भी है। रंजकता के वाद ही भावुकता का स्तर आता है और भावुकता ही अपनी चरम स्थिति पर द्रवित होकर रसिकता बनती है। संगीत के रंजक स्वरों को भावुक बनाने में काकु-प्रयोग एक सबल सहायक बनता है। और वे ही भावपूर्ण स्वर पूरे राग तथा राग के गायन को भावपूर्ण बनाकर रसानुभूति की ओर आगे बढ़ते हैं। इससे सांगीतिक काकु-प्रयोग का सांगीतिक रसानुभूति में महत्त्वपूर्ण योगदान माना जाएगा।

सांगीतिक रसानुभूति के विषय में एक दृष्टि और। हमारे संगीतशास्त्र विभाग की अध्यक्षा डॉ० प्रेमलताजी ने संगीत द्वारा रसानुभूति के विषय में अपना चिन्तन प्रस्तुत करते हुए कहा है कि रस शब्द के व्यापक अर्थ को स्वीकार कर लें तब भी शास्त्रीय दृष्टि से संगीत में रसानुभूति के बदले रस की भी आत्मारूप* तीन गुण माधुर्य, ओजस् तथा प्रसाद को हम संगीत के अपने रसतत्त्व के रूप में स्वीकार करें तो वह क्रियापक्ष और शास्त्रपक्ष दोनों ही ओर से सुसंगत हो जाता है, सिद्ध हो जाता है।

हमारे राग-रागिनियों का गायन-वादन हम प्रधानतः दो ही प्रकारों से करेंगे। या माधुर्यपूर्ण या ओजस्-पूर्ण। भीमपलासी, वागेश्री, जयजयवन्ती, जोगी, तिलंग, खमाज, काफी, भैरवी, पीलू आदि में गाढ़ी गमकयुक्त तानें शोभा नहीं देंगी। यदि कोई तानें लेता है तो उसे कोई रोक नहीं सकता। अच्छी तानों की सराहना भी होगी, किन्तु जोगी में तो कोई गाढ़ी तान शायद ही पसंद करे। इसके विपरीत दरबारी, मल्हार, अड़ाना, बहार, सूहा, सुघराई, देसकार, सोहिनी आदि में यथास्थान गाढ़ी तथा तेज तानें अवश्य ही ओजस् का दर्शन कराएंगी। उपर्युक्त उदाहरणों में मुख्यतः दो प्रकार की चित्तवृत्ति क्रमशः 'द्रुति' तथा 'दीप्ति' के दर्शन होते हैं जिसको माधुर्य तथा ओजस् गुण का नाम दिया गया है। चित्तवृत्ति की तीसरी और व्यापक अवस्था 'व्याप्ति' को प्रसाद गुण माना गया है। जो उक्त माधुर्य

---

* ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः ।। काव्यप्रकाश ८.१ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(८)

तथा ओजस् इन दो गुणों में उसकी चरम स्थिति में प्रकट हो जाएगा। वास्तव में 'दृति' किंवा 'दीप्ति' ही अपने पूर्ण एवं व्यापक प्रभाव से पूर्ण प्रसन्नता एवं 'व्याप्ति' की अवस्था को प्राप्त होकर प्रसाद गुण की संज्ञा पाती है।

शुष्केन्धनाग्निवत् स्वच्छजलवत्सहसैव यः।
व्याप्नोत्यन्यत् प्रसादोऽसौ सर्वत्र विहित स्थितिः॥ काव्यप्रकाश ८.६।

सूखे ईन्धन में अग्नि के समान, अथवा स्वच्छ वस्त्र में जल के समान जो चित्त में सहसा व्याप्त हो जाता है, वह सर्वत्र (सब रसों में) रहने वाला प्रसाद (गुण) कहलाता है।

परिणामतः प्रसाद गुण ही चित्त की परम प्रसन्नता, रसानुभूति किंवा आनंदानुभूति के रूप में प्रतिष्ठित हो जाता है। इन्हीं कारणों से ऊपर लिखे अनुसार शास्त्रों में वर्णित भाव, रस आदि शब्दों की उपेक्षा किये बिना ही हम माधुर्य, ओजस् तथा प्रसाद इन तीन गुणों को संगीत में रसतत्त्व या रसानुभूति किंवा आनंदानुभूति की चर्चा में स्थान दे सकते हैं।

'रसानुभूति में काकु-भेद का स्थान' इस विषय पर और भी विशद चर्चा की जा सकती है। किन्तु विस्तार-भय से संक्षेप में जो संभव हुआ मैंने यहाँ लिख दिया। मेरा नम्र निवेदन है कि हमारे संगीतकार मित्र इसपर अवश्य विचार करें। अपनी ही विवेक बुद्धि से इसमें से ग्राह्य तत्त्व का ग्रहण करें और त्याज्य का त्याग करें।

संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि वारि विकार।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मेरे श्रवण-लोचन द्वारा किया गया पू. गुरुवर्य पं. ओम्कारनाथ जी ठाकुर का श्रवण-दर्शन

इस वर्ष दिनाङ्क २४ जून को पू. पं. ओम्कारनाथ जी ठाकुर की ८० वीं वर्षगांठ पड़ रही है। इस स्मरणीय अवसर पर एवं वाराणसी की 'नाद वन्दना' के वार्षिक संगीतोत्सव के निमित्त प्रकाशित होने वाली स्मारिका में पूज्य पंडितजी के बारे में मैं कुछ लिखूं, ऐसा 'नाद-वन्दना' की चेयरमैन तथा मेरी गुणालंकृता गुरुबहन डॉ श्रीमती एन. राजम् ने सप्रेम आग्रह किया।

वैसे, पंडितजी के जीवन तथा कार्य के विषय में 'हीरक जयन्ती अभिनन्दन पत्रिका' नामक पुस्तिका में मेरी विदुषी गुरुबहन डॉ. कु. प्रेमलता शर्मा जी (अध्यक्षा, संगीतशास्त्र विभाग, का० हि० वि० वि०) ने तथा 'वाग्गेयकार पू. पं. ओम्कारनाथ जी ठाकुर' नामक पुस्तक में मेरे प्रिय भागिनेय चि. डॉ. प्रदीपकुमार दीक्षित (प्राध्यापक, गायन विभाग, का० हि० वि० वि०) ने विस्तार से लिखा है। अतः राजम् बहन चाहती हैं कि मैं पंडितजी के साथ के अपने कुछ विशेष संस्मरणों का आलेखन करूँ।

बचपन में ही नेत्र-ज्योति चले जाने के कारण मैं अपने गुरुजी को कभी चर्म-चक्षुओं से नहीं देख पाया। मेरे पास ज्ञान-प्राप्ति के लिए 'श्रवण' तथा 'स्पर्श', ये दो ही साधन शेष थे। गुरुदेव के दर्शन में मुझे इन्हीं साधनों से सफलता मिली। गुजरात के परम ज्ञानी भक्त कवि अखाभगत के वचनों में मुझे पूरी आस्था थी और आज भी है—

ज्यों विद्या मरण-संजीवनी, शब्द से करे प्रवेश।
त्यों वचन रूप से गुरु बसें, तहँ न द्वैत लवलेश ॥ (हिंदी भावानुवाद)

सर्वप्रथम एक संगीतकार के रूप में पं. ओम्कारनाथ जी का नाम मुझे मेरे बंबई के 'विक्टोरिया मेमोरियल स्कूल फॉर द ब्लाइंड' के एक बालसाथी प्रभाकर कोलंबेकर ने बताया था। उन दिनों मैं स्कूल के रेडियो पर आगरा घराने के गुणिजनों को सुन चुका था और उनसे प्रभावित भी था, विशेषकर उस्ताद फैयाज़ खाँ तथा उस्ताद अब्दुल करीम खाँ जैसे प्रसिद्ध गायकों को भी सुन चुका था, उनपर मुग्ध था। गुजरात के गोधरानगर के निवासी उस प्रभाकर ने कहा—"क्या खाँ साहब, खाँ साहब करते हो। हमारे गोधरा में पं. विष्णुदिगंबर जी के साथ ओम्कारनाथ महाराज आए थे। उनको सुनो, तब कहना!" दैवयोग से मधुरकंठी प्रभाकर आज इस संसार में नहीं है, लेकिन उसके उन आह्वानकारी शब्दों ने मेरे जीवन में क्या कुछ कर दिया, यह देखने को आज वह रहता तो फूला न समाता। प्रभाकर का कण्ठ श्रीमती हीराबाई बड़ोदेकर की तरह मधुर था। अस्तु।

करीब सन् '३३ में अपनी प्रथम यूरोपयात्रा से लौटे हुए पंडितजी के अखबारों में प्रकाशित अनेक व्याख्यानों ने मुझे उनकी ओर खींचा। "संगीत की शिक्षा एक साधना है, तपश्चर्या है" पंडितजी के ऐसे शब्द मेरे हृदय में जम गए। पंडितजी को गुरु-रूप में पाने की उत्कट इच्छा ने आगे चलकर रात-दिन की बेचैनी का रूप धारण कर लिया। सन् '३५ या '३६ में भावनगर निवासी मेरे मित्र श्री देवेन्द्र व्यास उर्फ बाबूभाई ने पहली बार पंडितजी का राग देशकार तथा चम्पक ग्रामोफोन रेकॉर्ड पर सुनाए। आवाज में भरावदार मस्ती और माधुर्य का सुभग सम्मिश्रण, तानों में शक्ति और सफ़ाई की चमक और सर्वाधिक राग-रूप के स्पष्ट, पुष्ट एवं सुष्ठु दर्शन ने मुझे पण्डितजी का शिष्य बनने के लिए बाध्य किया।

टिप्पणी —'नाद-वन्दना म्यूज़िक सर्कल', वाराणसी की स्मारिका (वर्ष १९७७) में प्रकाशित लेख।

ख

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(१०)

सन् '३७ में बम्बई के मेरे स्कूल के उदारमना मैनेजर श्री रतनशा भाभा अवसर पाकर मुझे पण्डित जी के पास ले गए। उस समय वहाँ मेरे ही शहर–भावनगर के श्री यशवंतराय पुरोहित रियाज़ कर रहे थे, जिन्होंने बाद में किराना परम्परा के श्री बालकृष्ण बुआ कपिलेश्वरी से भी शिक्षा ली। उन्होंने हमलोगों को बिठाया। थोड़ी देर में पण्डितजी पधारे। एक मुस्लिम किशोर सीखने आया था। पंडितजी उसे भूपाली का पद 'जब से तुम सन लागली' सिखाने लगे! किशोर की आवाज काली–४ या सफेद–५ की होगी। उसी स्वर से बार-बार पंडितजी पहली पंक्ति गा रहे थे, गवा रहे थे। मानों कोई सुरीला और साथ ही भावपूर्ण ऑरगन बज रहा हो। मुझे यह कहने में कोई अत्युक्ति नहीं लगती कि उस दिन पंडितजी के सिद्ध कंठ से भूपाली के उस पद की जो एक पंक्ति मैंने सुनी और उससे मुझे भूपाली की प्रकृति, भाव आदि की जो शिक्षा मिली, वह मुझे आज भी काम दे रही है। और साथ ही पंडितजी की गंभीर भावपूर्ण प्रतिमा की भी कल्पना मन में बैठ गई।

और एक मौके पर पंडितजी मेरे बड़े गुरुभाई श्री ठाकोरप्रसाद उपाध्याय को शंकरा सिखा रहे थे। तानपूरा चौथी सफेद में था। शंकरा की तेज तानों को ज्यों का त्यों उठाने में ठाकोर भाई जहाँ भी शिथिल होते, पंडितजी गरज उठते। उस दिन मैंने उनकी स्फूर्ति और तीव्रता का भी दर्शन किया। अर्थात् भूपाली के मन्द्र-मध्य के गंभीर मधुर गुंजन में तथा शंकरा की मध्य-तार-प्रधान तीव्रगामी तानों में पंडितजी के जैसे रूप की कल्पना मैंने की थी बाद में लोगों से करीब-करीब वैसे ही पंडितजी की मूर्ति का वर्णन मैंने सुना।

यहाँ मुझे मेरे हितैषी स्वजन आचार्य श्री जयंत (प्रिंसिपल, वीराणी हाई स्कूल, राजकोट) का पंडितजी विषयक एक काव्य स्मरण हुए बिना नहीं रहता, जो उन्होंने सन् '४५ में करांची में हुए पंडितजी के गायन को सुनकर तुरंत लिखा था।

गुजराती—न्हाळो रे एने श्रवण लोचनिए न्हाळो।
स्वर ना आकाशो नो ए तो छे सर्जनहारो,
लास्य ने तांडव स्वर नां, नवलां नचवणहारो,
प्रणव दर्शनहारो ॥

स्थानाभाव से पूरा पद देना संभव नहीं है, किन्तु भावार्थ यही है—

निहारो रे उसको श्रवण-लोचन से निहारो।
स्वर के आकाशों का वह तो है सर्जनहारा।
लास्य औ तांडव स्वर का नवल नचावनहारा
प्रणव दिखावनहारा ॥

खासकर मेरे लिए, मेरे इन महान गुरुवर्य की इससे बढ़ कर स्तुति नहीं हो सकती। अस्तु।

कुछ लोगों ने यह भी आलोचना की कि पंडितजी गायन से अधिक अपने अभिनय से श्रोताओं को प्रभावित करते हैं। उन लोगों की दृष्टि में यह आलोचना सही भी हो, किन्तु मेरे लिए पंडितजी की ऐसी आलोचना का कोई प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि नेत्र-ज्योति के अभाव में पंडितजी का अभिनय मुझे देखना ही कहाँ था? मैंने अनेक बड़े गायकों को चाव से सुना है, उनसे प्रभावित भी हुआ हूँ; फिर भी पंडितजी के गायन ने तो मुझे मंत्रमुग्ध किया और आगे चलकर उनका शिष्य ही बनने को बाध्य कर दिया। उसका कारण क्या हो सकता है, दर्शन या श्रवण ?

तबले के प्रसिद्ध आचार्य, काशी-निवासी स्व० पं० कण्ठेमहाराज ने पंडितजी के गायन को जो उपमा दी थी वह मुझे शतप्रतिशत सही लगी। कण्ठे महाराज के शब्द थे—"सभी बड़े-बड़े गुणिजन बहुत अच्छा गाते-बजाते हैं। उन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(११)

सबकी बड़ी तारीफ है; लेकिन हमारे पंडित ओंकारनाथजी जो गाते हैं वो ध्यान गाते हैं। लगता है बड़े-बड़े राजा-महाराजाओं की बारात चली है, हाथी-घोड़ा, लाव-लश्कर सब साथ में चल रहा है। लगता है जैसे हृदय से एक तार निकला जो ऊँचे आकाश में जाकर मिल गया।" एक समर्थ कवि को शोभा दे ऐसी यह उक्ति है। धन्य है वादनाचार्य कण्ठे महाराज को जिन्होंने पंडितजी के गायन की ऐसी भव्य कल्पना मेरे सामने रखी।

कभी किसी ने कहा कि पंडितजी की केवल आवाज ही आवाज थी, कल्पना नहीं थी। किसी ने कहा—आवाज में भी उ० अब्दुल करीम खाँ की नकल ही तो की थी। इन बातों का सटीक उत्तर मैं अपने अनुभव के आधार पर ही दे सकता हूँ।

यदि कल्पना का अभाव हो तो रागदारी संगीत में, खासकर एक गायक के लिए, केवल आवाज ही आवाज कहाँ तक काम दे सकती है? श्रोतागण थोड़ी देर के लिए अवश्य ही रंजित होंगे किन्तु 'उघरहिं अन्त न होइं निबाहू' की तरह आखिर कल्पना का अभाव खटके बिना नहीं रहेगा। सन् '४१ के मई महीने में पंडितजी के साथ पहली बार कराँची गया था। शाम के वक्त एक तानपूरा पंडितजी के पास तथा दूसरा मेरे पास था। भीमपलासी का आलाप शुरू हुआ। मंद्र के अधिक से अधिक प, म तथा मध्य के प या क्वचित् नि, ध, प तक गए होंगे, उतने ही में दो घंटे बीत गए। यह मेरे सामने की घटना रही। यह कल्पना का विस्तार नहीं तो क्या था? दरभंगा के एक संगीत सम्मेलन में पंडितजी दरबारी गा रहे थे, साथ में प्रसिद्ध तबलावादक श्री शमसुद्दीन खाँ तबले पर थे—जो कि बंबई से श्रीमती हीराबाई बड़ोदेकर के साथ आए थे। रात दस बजे गायन शुरू हुआ था, दरबारी समाप्त होने पर घड़ी में देखा गया—सवा बारह बजे थे। शमसुद्दीन खाँ ने कहा—"क्या बात है। सवा दो घंटे कहाँ बीत गए, पता नहीं चला।" इसमें न तो जुगलबंदी थी न चार-पाँच चीजों का जमघट था। केवल विलंबित और द्रुत ख्याल थे। यह सब कल्पना विस्तार के बिना कैसे संभव हो सकता है।

अब रही आवाज के लिए खाँसाहब की नकल की बात। लंबी चर्चा न करते हुए एक ही सबल उदाहरण मेरे विचार में पर्याप्त होगा। खाँसाहब और पंडितजी दोनोंने ही तिलंग राग ग्रामोफोन रेकॉर्ड में गाया है। एक ने 'सजन तुम काहे न नेहा लगाए' और दूसरे ने 'ननदिया कैसे नीर भरूँ'। आवाज की जात, आवाज का बर्ताव, सुर का लगाव तथा बोलबनाव, इन सभी बातों को सुनकर श्रोतागण शुद्ध तुलनात्मक अध्ययन कर सकते हैं और 'पंडितजी ने अपनी आवाज में केवल अब्दुल करीम खाँसाहब की नकल उतारी है' इस तथाकथित आरोप के संबंध में अपनी राय तौल सकते हैं।

रागदारी संगीत की महफिल में एक गायक के लिए श्रोताओं को भी अनायास अपने साथ गवा लेने की अद्भुत घटना पंडितजी के ही गायन में घटित होते मैंने देखी थी। सन् ४० की बात है, बंबई के ब्लेवेट्स्की-लॉज हॉल में स्वयं उन्हीं के द्वारा आयोजित पं० विष्णुदिगंबर जयंती महोत्सव के अंतिम कार्यक्रम के रूप में पंडितजी शुद्धनट गा रहे थे। उनका अत्यंत प्रिय विलंबित ख्याल 'करत हो मोसो' चल रहा था। प्रसिद्ध तबलावादक श्री नारायणराव इंदौरकर तबला-संगत कर रहे थे। लय अत्यंत विलंबित थी। ग्वालियरी परंपरा के अनुसार आरंभ में ही ख्याल का पूरा-पूरा स्थायी-अंतरा गाने के पश्चात् पंडितजी ने आलापचारी शुरू की। थोड़ी ही देर में ऐसा समाँ बँध गया कि आलाप के हर एक 'सम' पर पंडितजी के साथ-साथ श्रोतागण भी 'करत हो' गाने लगे। शास्त्रीय भाषा में कहें तो 'साधारणीकरण' का ऐसा ज्वलन्त उदाहरण, वह भी शास्त्रीय गायन की महफिल में, अन्यत्र शायद ही किसी ने देखा हो।

ऐसा कौन भारतीय होगा जो पंडितजी के 'वन्दे मातरम्' गान से प्रभावित न हुआ हो। कोई कह सकता है कि 'वन्दे मातरम्' किसी ख्याल या ध्रुवपद जैसी शास्त्रीय विधा में नहीं आता। मैं भी मानता हूँ कि 'वन्दे मातरम्' ख्याल, ध्रुवपद, ठुमरी, टप्पा कुछ भी नहीं है। वह तो राष्ट्रीय एकता की भावना से परिपूरित महान् राष्ट्रीय मंत्र है और उस

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(१२)

मन्त्र–गान की अलौकिक सिद्धि, जो पंडितजी को प्राप्त थी, वह आज तक कहीं नहीं देखी गई। किसी भी प्रकार के संगीत के प्रस्तुतीकरण को सफल बनाने के लिए औचित्य विचार उसकी एक महत्त्वपूर्ण कुंजी मानी गई है। ऐसे औचित्य विचार के आग्रही पंडितजी को ईश्वरकृपा से समृद्ध कण्ठ भी मिला था और उन्होंने उसके लिए साधना भी की थी। साथ ही अत्यंत सवेदनशील हृदय, शब्दों के अर्थ तथा भाव के अनुरूप स्वरों को तत्काल चुनने की विचक्षण बुद्धि, ऐसी दिव्य सामग्री से पंडितजी ने अपने 'वन्दे मातरम्' गान को सजाया था, शोभायमान किया था। मेरे विचार में तो विशेषकर 'वन्दे मातरम्' गान में पं० ओम्कारनाथजी के सबसे निराले 'ओम्कारनाथत्व' का देदीप्यमान दर्शन होता था। उस गान को सुनकर श्रोतागण ऐसे प्रसन्न होते थे मानों उन्होंने सांगीतिक तीर्थराज की स्वर, शब्द तथा भाव रूपी त्रिवेणी में स्नान कर परम पुण्य लाभ किया हो। २५ वर्ष की आयु में पंडितजी ने कलकत्ता की एक विराट् सभा में अपने जीवन में पहली बार 'वन्दे मातरम्' गाया था, तब वहाँ के अखबारों ने लिखा था कि यदि बंकिम बाबू 'वन्दे मातरम्' का यह गान सुनते तो 'वन्दे मातरम्' के इस अद्भुत युवा गायक को अपने कंधों पर लेकर नाच उठते।

पंडितजी के कण्ठ-वैभव का एक और अविस्मरणीय प्रसंग इस प्रकार है—कलकत्ता के ही एक संगीत सम्मेलन में पंडितजी दरबारी गा रहे थे। आलाप की विलम्बित बढ़त के बाद 'तार षड्ज' पर आते ही उन्होंने भरे-पूरी बुलंद आवाज से तार सा भरा। उसके तुरंत बाद ही अत्यंत बारीक आवाज से तार षड्ज में लीन हो गए। केवल एक ही स्वर पर आवाज की ऐसी असाधारण सिद्धि पर सभाभवन तालियों को तुमुल ध्वनि से गूँज उठा। तालियों से अपनी हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त करने वालों में प्रमुख थे उस्ताद बड़े गुलाम अली खाँ तथा पं० रविशंकर। गुलाम अली खाँ साहब तो गायन के बाद पंडितजी से लिपट गए। बोले—'आवाज भर लगा कर क्या कमाल कर दिया।' तबला-नवाज़ खाँ साहब अहमदजान थिरकुवा–जो उसी कार्यक्रम में पंडितजी के साथ तबला बजा रहे थे, बोले–'भाई! खुदा ने आपको बहुत बड़ी चीज दी है। यह हर किसी को नसीब नहीं होती'। बीसवीं सदी के संगीतकारों में अनोखे पं० ओम्-कारनाथजी ठाकुर के आकर्षक व्यक्तित्व के अन्यान्य पहलुओं पर चर्चा करना यहाँ संभव नहीं। संक्षेप में कुछ स्मरणीय प्रसंगों का उल्लेख भर मैंने किया है। एक प्रबुद्ध व्याख्याता तथा लेखक के रूप में भी पंडितजी को कौन नहीं जानता? कम से कम चार दशक तक भारतीय संगीत के आकाश को आलोकित करते हुए अपने जीवन और कार्यों से पंडितजी अपने समकालीन और भावी पीढ़ी के कलाकारों के लिए प्रेरणा का अखण्ड स्रोत बने रहे।

मैं अपने को धन्य मानता हूँ कि ऐसे अद्भुत कलाकार और महान् संगीतकार का मैं विद्यार्थी बन सका।

धुनि सुनि के मनवा मगन हुआ।
लागि समाध रही गुरुचरना, अंदर का दुख दूर हुआ।
धुनि सुनि के मनवा मगन हुआ॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१५ अगस्त १९४७ और 'वन्दे मातरम्'

पद्मश्री पं. बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट 'भावरंग'
(वाराणसी)

वर्ष १९४७ के अगस्त महीने में मेरे पूज्य गुरुदेव संगीतमार्तण्ड पं. ओम्कारनाथजी ठाकुर दक्षिण भारत की अपनी यात्रा के सिलसिले में पांडिचेरी स्थित श्री अरविन्द आश्रम में ठहरे हुए थे। हमेशा की तरह उस प्रवास में भी मैं पंडितजी के साथ ही था। उन दिनों अंग्रेजों के शासन से भारत की स्वतंत्रता और स्वतंत्र भारत में भारतीयों की सरकार का स्वरूप निश्चित हो रहा था। तदनुसार गृहमन्त्री और प्रसारणमन्त्री सरदार वल्लभभाई पटेल का सन्देश पंडितजी को मिला कि स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रभात में उन्हें १५ अगस्त १९४७ को आकाशवाणी दिल्ली से 'वन्दे मातरम्' गाना है। पंडितजी 'वन्दे मातरम्' का पूरा पद गाने के आग्रही थे। (सन् १९३८ में हरिपुरा कॉंग्रेस में 'वन्दे मातरम्' गाने के लिये स्वयं श्री सुभाष चन्द्र बोस का पत्र पंडितजी को आया था, और भी अनेक अवसरों पर उन्हें बुलाया गया, पर पूरा 'वन्दे मातरम्' गाने की शर्त पर सहमति नहीं हो पाती थी।) इसबार भी उन्होंने सम्पूर्ण 'वन्दे मातरम्' गाने की अपनी इच्छा व्यक्त की। प्रसारण मन्त्री की ओर से इसकी अनुमति मद्रास रेडियो के डाइरेक्टर ने आकर मद्रास स्थित वुडलैंड होटल में दी, जहाँ पांडिचेरी के बाद पंडितजी ठहरे थे।

१४ अगस्त को पंडितजी दिल्ली पहुँचे, उनके साथ मैं और एक कन्नड विद्यार्थी श्री लक्ष्मणाचार्य पुराणिक भी गये थे। १५ अगस्त की सुबह ५-३० पर पंडितजी के साथ हमलोग आकाशवाणी केन्द्र गये। ठीक साढ़े छह बजे श्री देवकीनन्दन पांडेजी ने उद्घोषणा की – "स्वाधीनता के प्रथम प्रभात में मातृवन्दना के रूप में पं. ओम्कारनाथ ठाकुर 'वन्दे मातरम्' प्रस्तुत कर रहे हैं।" पंडितजी के साथ तानपूरे ले कर मैं और श्री लक्ष्मणाचार्य पुराणिक क्रमशः दाहिने और बायें हाथ पर खड़े थे। सारंगीवादक का नाम मुझे अब याद नहीं रहा। अनुशासन और मर्यादापालन के आग्रही पंडितजी ने स्टूडियो के भीतर भी खड़े हो कर ही सम्पूर्ण वन्दे मातरम् का भव्य गायन किया। मानों स्वतंत्रता के स्वागत में सोना बिखेर दिया। इसके बाद पंडितजी के गायन के विशेष कार्यक्रम भी १५ और १६ अगस्त की रात को रेडियो पर हुए थे।

भारत सरकार की ओर से तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इंदिरा गान्धी ने आजादी की रजत जयन्ती के समय जो कालपात्र गड़वाया था,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

- २ -

उसमें अन्य संरक्षणीय वस्तुओं के साथ पंडितजी द्वारा १५ अगस्त '४७ को गाये गये ऐतिहासिक 'वन्दे मातरम्' का रिकॉर्ड भी था। बाद में वह 'कालपात्र' निकाल लिया गया था।

सन् १९८७ में तत्कालीन प्रधानमंत्री स्व. श्री राजीव गाँधी ने जब स्वतन्त्रता की ४०वीं वर्षगांठ बड़े पैमाने पर मनाने की योजना बनाई तब मैंने आकाशवाणी दिल्ली को १५ अगस्त के दिन पंडितजी का वह ऐतिहासिक 'वन्दे मातरम्' प्रसारित करने की विनती की। वहाँ से किन्हीं महिला अधिकारी ने याद दिलाने के लिये धन्यवाद देते हुए सूचित किया कि उस रिकार्ड की हालत अब ठीक नहीं है। तब मैंने यह सुझाव दिया कि पंडितजी के 'वन्दे मातरम्' की डिस्क रिकार्ड (जो आज भी अच्छी हालत में है) को बजवाया जाये। पर इसका कोई सन्तोषजनक उत्तर न मिलने के कारण मेरा मन बहुत दुखी हुआ। कुछ वर्ष बाद राष्ट्रकवि स्व. श्री मैथिली शरण गुप्तजी से संबंधित एक रेडियो रूपक में पंडितजी का वही १५ अगस्त '४७ वाला 'वन्दे मातरम्' बजा था, मैंने वह कार्यक्रम सुना था, ध्यान से सुना था। उसका जो भी अंश बजा, सही में उसकी हालत ठीक न थी, फिर भी क्यों बजा? यह चिन्ता का विषय है।

इस वर्ष भारतीय स्वतंत्रता की स्वर्णजयन्ती के अवसर पर आकाशवाणी दिल्ली से विनती की गई है कि १५ अगस्त १९९७ को पंडित ओम्कारनाथजी ठाकुर का डिस्कवाला 'वन्दे मातरम्' प्रसारित किया जाय। उसमें पंडितजी ने आधा 'वन्देमातरम्' ही गाया है, उतना ही जितना आजकल रेडियो पर बजता है। फिर भी उसमें उनकी पूरी प्रतिभा उजागर होती है। हर्ष का विषय है कि आकाशवाणी दिल्ली ने यह सूचना स्वीकार की है।

भारत की आज़ादी के ५० वर्ष पूरे होने के साथ-साथ इसी वर्ष २४ जून को संगीतमार्तण्ड पं. ओम्कारनाथ ठाकुर के १०० वर्ष पूरे हुए हैं और संगीतोद्धारक संगीतावतार स्व. पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी के १२५ वर्ष रक्षाबन्धन अर्थात् श्रावणी पूर्णिमा (दिनांक के अनुसार १८ अगस्त को) के दिन पूरे हो रहे हैं। यह बड़ा सुखद और अद्भुत सुयोग ही है।

प्रथम स्वातन्त्र्य दिवस पर पंडितजी द्वारा गाये गये वन्दे मातरम् के रिकॉर्ड की बिगड़ी हालत सुन कर सखेद यह विचार मन में उठता है कि ऐसे ऐतिहासिक महत्त्व के कार्यक्रमों को सुरक्षित रखने की पूरी जानकारी हम अपने पूर्ववर्ती अंग्रेज अधिकारियों से प्राप्त न कर सके। हमारे पास साधनों का अभाव हो तो इस कमी की पूर्त्ति अवश्य की जानी चाहिये।

पता - बी-३१, रोहित नगर कालोनी,
नरिया, पो. बी. एच. यू.,
वाराणसी - २२१००५ (उत्तर प्रदेश)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दैनिक जागरण
वीथिका
10 जून, 2012

सो कासी सेइय कस न

रत्नगर्भा काशी की महिमा का क्या बखान करूं। नटराज की नगरी में जीवन व्यतीत होना किसी पुण्य लाभ से कम नहीं। एक से एक दिव्य विभूतियों की नगरी है। तुलसी कबीर प्रसाद प्रेमचंद भारतेंदु जहां साहित्य अध्यात्म को परवान चढा गए। महामना मालवीय शिवप्रसाद गुप्त देशभक्ति व नवनिर्माण की अलख जगा गए। वहीं काशी की प्राणवायु संगीत के श्रवण मनन शिक्षण का लाभ मैंने इस नगरी में पाया वह अद्वितीय है।

पं.बड़े रामदास, पं.रामसहाय जैसे सिद्ध कलाकारों द्वारा स्थापित परंपरा जिसमें विभिन्न कलाकारों ने अपने अपने ढंग से भाव व रंग भरे, सब अतुलनीय है। पं.कंठे महाराज ने तबले में भाव पैदा किया। पं.अनोखे लाल ने तैयारी और रियाज की नई परिभाषा लिखी जो आज भी कायम है। पं.गोपाल मिश्र जिनके लिए हर घराना हर अंग एक समान था। बिस्मिल्लाह खां की जादू भरी फूंक, किशन महाराज की हाजिर जवाबी, कल्पना और संतुलन यह सारी बातें भगवान विश्वनाथ के आशीर्वाद से इसी नगरी में संभव हुई। परंपरागत संगीत पद्धति के बीच विश्वविद्यालय स्तर की मान्यताप्राप्त संगीत शिक्षण की शुरूआत भी सर्वप्रथम इसी नगरी से हुई। जब ओंकार नाथ ठाकुर द्वारा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में श्री कला संगीत भारती नाम से संगीत महाविद्यालय की स्थापना हुई। मंदिरों देवालयों में शृंगार सेवा के लिए संगीत समारोहों का आयोजन इस शहर की सबसे अलग पहचान है। इसी शहर में रहते हुए संगीत के क्षेत्र में यत्किंचित सेवा कर पाया इसका परम संतोष है। गायन वादन व नृत्य अर्थात संपूर्ण संगीत, और सभी में पीढी दर पीढी चलती आ रही यहां की परम्परा विलक्षण है। ध्रुपद, धमार, ख्याल, ठुमरी, दादरा, सितार, सारंगी, तबला, शहनाई, मृदंग, नृत्य, साहित्य, अध्यात्म और बच क्या गया?

पद्मश्री पं.बलवंत राय भट्ट भावरंग
(लेखक प्रख्यात शास्त्रीय गायक हैं)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रिषभ

जीवन के ५० वर्ष पूर्ण करने पर मित्र-मण्डल एवं शिष्य-समुदाय ने स्वर्ण-जयन्ती समारोह का आयोजन कर पं. बलवन्तराय भट्ट का नागरिक अभिनन्दन किया था। इस अंश में विभिन्न संस्थाओं और सङ्गीत प्रेमियों की ओर से दिए गए मान-पत्रों को पुनः प्रस्तुत किया है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मानपत्र

स्वर्ण जयंती के अवसर पर

संगीताचार्य पं० बलवंतराय भट्ट 'भावरंग'

को

संगीत परिवार द्वारा समर्पित

सरस्वत्याः प्रसादेन लालितः सुष्ठु पालितः।
भावरंगा शतं जीव्याद् वसुन्धरा-सुसेवितः॥

हे प्रज्ञाशील !

प्रज्ञाचक्षु के उन्मीलन ने आप के चर्मचक्षु के निमीलन को सर्वथा पराभूत रखा है, यह कौन नहीं जानता ? अद्भुत स्वावलम्बन, प्रखर अवधान, विलक्षण मेधा और शालीनता, प्राञ्जलता, नम्रता, ऋजुता, सौम्यता—इन सबके मधुर योग से आप के सुभग व्यक्तित्व का निर्माण हुआ है।

हे संगीत-साधक !

घोर विषम परिस्थितियों में अदम्य उत्साह और अथक परिश्रम से आपने दीर्घकाल तक जिस अध्य-वसाय से संगीत-साधना की है, वह अनुपम है। संगीत मार्तण्ड स्व० पं० ओंकारनाथ ठाकुर के 'विद्यापुत्र' होने का गौरव आपने अपने पुरुषार्थ से अर्जित किया है। प्रतिभा, शिक्षण और अभ्यास तीनों के उचित संयोग से आपने 'संगीताचार्य' पद साधिकार प्राप्त किया है।

हे गायक-प्रवर !

स्वर सौष्ठव, भाव समृद्धि और लय वैचित्र्य के विलक्षण विनियोग से आप ने अपनी विशिष्ट गायन शैली का निर्माण किया है, जिसमें रंग, भाव और रस का अपूर्व समन्वय है, माधुर्य ओज और प्रसाद का मनोहर संगम है, जो गरिष्ठ होते हुए भी सहज आस्वाद्य है और गंभीर होते हुए भी सहृदय-मात्र-संवेद्य है।

हे रचना कुशल ! हे कवि-हृदय !

'भावरंग' उपनाम से आप ने पाँच सौ से अधिक जिन गीतों का सर्जन किया है, वे आप की प्रतिभा के सुमन हैं। उनका सौरभ और सौन्दर्य भारतीय संगीत की श्रीवृद्धि चिरकाल तक करेगा। 'वाक्' और 'गेय' का निर्माण अर्थात् 'पद' रचना और स्वर-राग-लय-ताल योजना दोनों में आप का समान कौशल सामाजिकों का मोहक है।

हे शिक्षक-शिरोमणि !

आप अभिजात संगीत-शिक्षक हैं, यह सत्य स्वयं प्रकाश है। शिक्षण देने में आपकी सूझबूझ, धैर्य, परिश्रमशीलता, नवीन उद्भावनाओं द्वारा 'लीक' छोड़ने की शक्ति और सर्वोपरि, विद्यार्थियों के प्रति प्रेम—इन सबका दुर्लभ योग आप में मूर्तिमान है।

हे ज्ञान पिपासु !

विविध विषयों में आप की सहज ज्ञान तृषा स्पृहणीय है। अध्यात्म और संगीतशास्त्र में आपकी गंभीर रुचि, भारतीय संस्कृति के प्रति श्रद्धा और संस्कृत भाषा के प्रति अनुराग ये सब आप के व्यक्तित्व के अभिन्न अंग हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(६)

हे सौम्य !

आप विद्यार्थियों के श्रद्धा-पात्र, सहकर्मियों के विश्रब्ध सुहृत्, गुरुजनों के स्नेह भाजन हैं और साधु-सन्तों का अहैतुक आशीर्वाद आप पर रहता है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के विशाल परिवार में आप 'भैयाजी' के रूप में सुपरिचित हैं।

आप की धर्मपत्नी सौ० वसुन्धरा भट्ट के त्याग, सेवा और निष्ठा के सादर स्मरण के बिना यह मानपत्र अधूरा रहेगा। विचारशील पति और परम स्नेही पिता इन दो रूपों में आप का दर्शन आप के सभी मित्रों को सुखद है।

हे भजनानन्दी !

भक्त कवियों, सन्तों के पदों को जिस भावपूर्ण और समर्पक रीति से आप अपने कण्ठ द्वारा उद्घोषित करते हैं वह निरूपम है। पदों का हार्द आप के स्वरों में साकार होता है। 'वर्ण' के साथ 'नाद' का सुवर्ण में सुगन्ध जैसा मनोहर योग होता है और शब्द से शब्दातीत की ओर मर्मज्ञ श्रोता की सहज गति होती है।

हे सुजन !

आप में गुरुभक्ति तो है, किन्तु विचारहीन अनुकरण नहीं, गंभीरता तो है, किन्तु रूक्षता नहीं, मृदुता तो है, किन्तु बालिशता नहीं, कर्तव्य निष्ठा तो है, किन्तु कठोरता नहीं, अनुशासन तो है, किन्तु दमन-पीड़न नहीं, परिमार्जन तो है, किन्तु कृत्रिमता नहीं, आत्मविश्वास तो है, किन्तु दर्प नहीं, विनोद-शीलता तो है, किन्तु व्यंगात्मक तीक्ष्णता नहीं, प्रत्युत्पन्नमतित्व तो है, किन्तु धृष्टता नहीं, साहस तो है किन्तु आक्रामकता नहीं, आचार शुद्धि तो है, किन्तु अभिमान नहीं, संवेदनशीलता तो है, किन्तु विह्वलता नहीं। आप का यह सुन्दर शील हमें अत्यन्त प्रिय है।

आप के सुदीर्घ जीवन एवं अक्षय स्वास्थ्य के लिए हम प्रभु से हार्दिक प्रार्थना करते हैं। हमारा दृढ़ विश्वास है कि शारीरिक अस्वस्थता के ये अकाल मेघ शीघ्र ही छँट जायेंगे और आप का जीवनरूपी मध्यान्ह सूर्य चिर देदीप्यमान रहेगा।

'स्वरवन्दना' तुम्हारी अद्भुत, 'लय लीना' शुचि वृत्ति तुम्हारी।
'गीतसुधा' सरसाइ तुमने, 'मंगलमूर्ति' सदा हितकारी॥
हे 'विभास' प्रज्ञा के उज्ज्वल, 'बल' शाली हो, अभय रहे मन।
'भैरवी' सहित मृत्युजय के, आशीर्वाद मिलें शुभ पावन॥
मानस हस प्रफुल्लित हो नित, अभय मन्त्र 'वसुधा' में सरसे।
कैसी चिन्ता, कैसी बाधा, सुधा नाद-नभ चिरदिन बरसे॥
'भावरग लहरी' के स्रष्टा, फूलो फलो सुकीर्ति धवल में।
वाक-प्राण-मन में उमंग ले, विहसे 'वसु' के हृदय-कमल में॥
'प्रणव'-विहग की आकांक्षा के, नीड बनो तुम, सबल धुरन्धर।
तुमसे उसे बहुत कुछ आशा, 'जियो, जियो' तुम 'जियो' निरंतर॥

अशेष शुभकामनाओं सहित,

हम हैं,

आपके सुहृत, गुरुजन, विद्यार्थी, श्रोता
के
विशाल समुदाय के सदस्य

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गायन-वादनाचार्य

पं० बलवन्तराय भट्ट नी स्वर्ण-जयन्ती प्रसंगे

(काशी हिन्दू विश्वविद्यालयनां 'गुजराती मंडल' तरफथी अर्पित सम्मान पत्र)

आपे जीवननी प्रत्येक क्षणमां सतत संगीतोपासना करी अने नादब्रह्ममां लीन रही शब्द ब्रह्मने रस अने भाव द्वारा मूर्तरूप आपी श्रोताओने मन्त्रमुग्ध कर्या छे. स्व० परम श्रद्धेय 'संगीत मार्तण्ड' पंडित ओम्कारनाथजीना चरणोमां रही वरसो सुधी कठिन तपश्चर्या करी, संगीतना सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावोनुं अनुशीलन करी, गुरुदेवनी प्रीति सम्पादन करी विद्यापुत्रनुं सम्मान पामी, एमना पट्टशिष्यनुं बिरूद प्राप्त कर्युं, ए एक महान गुरू परम्परानुं गौरव छे। पाँच वर्षनी कुसुम वये नेत्रज्योति लुप्त थतां, निराश न थतां, आपे जे महान पुरुषार्थ कर्यो, कष्टो सहन करी विद्यानी आराधना करी, जे सिद्धि प्राप्त करी छे, प्रज्ञाज्योति प्रगटावी छे एथी अमे सहु गौरव अनुभवीए छीए। अभिजात संस्कार, अध्ययनशीलता, प्रखर मेधाशक्ति, आध्यात्मिक वृत्ति, सौम्यता, बहुश्रुतता, मित्रो अने शिष्यो प्रत्ये अत्यन्त प्रेमाल स्वभाव तथा लय अने स्वरना भावमय सर्जनथी अमे सौ आपनी तरफ आकर्षाया छीए।

आपना पूज्य मातापिता द्वारा संगीत अने साहित्यना गर्भगत् संस्कार वीणा-वादिनी सरस्वतीनी कृपा थी स्वर, लय, ताल, शब्द भाव तथा रस थी समृद्ध अनेक स्वरचित पदोथी विभूषित थया छे, जे 'भावरंग लहरी' मां ग्रंथस्थ छे। आपे सूर, कबीर, तुलसी अने गुजरातनां भक्त कविओनी आध्यात्मिकताने प्रसारी-प्रचारी छे।

आपनी सिद्धि लय-स्वरना भावमय सहज प्रयोगो छे। विषम लयने सहज अने सरल बनावीने प्रस्तुत करवानी आपनी खूबी अनन्य छे। गुरुदेवनी भावशैलीनुं आपे मौलिक रीते, आगवुं प्रदर्शन कर्युं छे जेथी आपनुं 'भावरंग' उपनाम सिद्ध थयुं छे. अनेक रागोनुं गहन अध्ययन करी, घणा नवीन रागोनुं नवनिर्माण आपे कर्युं छे। गुरुदेवना बुलन्द अवाज अने रुआबना आप एकमात्र वारसदार छो।

सद्भाग्ये आपनी संगीतोपासनानी गूढ़ता ने समजी श्रीमती वसुन्धराबहेने आपना जीवनमां सौरभ भरी छे, अने एक आदर्श गृहिणी अने भारतीय नारीत्वनुं उदाहरण पूरूं पाडयुं छे; ए एक गौरवनी वात छे। एमनां त्याग अने तपथी आपने सदा बल मलतुं रहो।

आ सुअवसरे अमे सहु स्नेहीओ अने मित्रो सदैव प्रार्थीए छीए के दिन प्रतिदिन आप भारतीय संगीत क्षेत्रे आपनी प्रज्ञा ज्योतिने तेजस्वी करो, विशेष योगदान करो अने आपना महान् गुरूनी परम्परा ने आगल वधारो, दीपावो। आ जवाबदारी पूरी करवा प्रभु आपने दीर्घायुष्य, सुआरोग्य, बल अने शक्ति प्रदान करो।

लि० आपना

'गुजराती मंडल' ना मित्रो, का० हि० वि० वि०, वाराणसी-५

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पूज्य आचार्यप्रवर पं० बलवंतराय

स्वर्ण जयन्ती समारोह वर्ष के

शिवा -

पूजामयी तपस्विनी
सौ० वसुन्धरा बलवन्तराय भट्ट
के
करकमलों में सादर समर्पित

हे ममतामयी भावात्मिका,

जिस प्रकार अपनी तपस्या से आद्याशक्ति पार्वती; "नादतनु" शंकर का वरण कर स्वयं परम भागवती चेतना का स्वरूप हो गई उसी प्रकार आप भी इस युग की शाश्वत कर्त्तव्यमयी चेतना का प्रतीक हैं। श्री गुरुदेव के सिद्ध प्रणवनाद स्वरित का मुखरित मन्त्रमय पुनीत गीत हैं। आपका :

ओम् आनन्दमयी चैतन्यमयी

सत्यमयी परमे स्वरूप, "कुपुत्रो जायेत" शिष्यों के लिए भी "क्वचिदपिकुमाता न भवति" को चरितार्थ करते हुए स्वयं उपनिषद बन यही कहता है : "उत्तिष्ठ जाग्रत प्राप्य वरान्निवोधत"। नादयज्ञाग्नि में तपा हुआ आपका व्यक्तित्व और कृतित्व ही इस "स्वर्ण-जयन्ती" की स्वर्णिमा है जिसकी हम वन्दना करते हुए परब्रह्म परमात्मा से आपके अखण्ड चिरसौभाग्य की याचना करते हैं।

श्री
मातृ
चरण-
कमलेभ्यो
नमः

हे सहज सिद्धिमय भावरंग
ब न्धन विमुक्त स्वरलय प्रबुद्ध
स्वयमोद्भूत साहित्य प्रखर
ल लितेश शुद्ध सच्चिदानंद
व रदानयुक्त अतिसरसहृद्य
न्त यायी अनुरागीस्थितिप्रज्ञ
त व कृपाकोर से हो विभोर
सृष्टि जागी सब हुए विज्ञ
रा वण गुणग्राहक, रामभक्त
य श क्षेनिस्पृह मृदु निरासक्त
जी वन रस के शुचिकाव्य रूप
भट्टा र्क परम स्वरताल भूप
भा वेश विशेष स्वरूप सन्त
व ल्लभ स्वरलय के शुभ अनन्त
रं जन दुःखभंजन धैर्यवान
ग रिमामय साधन पुण्यध्यान
आ नंद अखण्ड स्वभाव रूप
प रिचित सा जग कण-कण स्वरूप
चि रपावन जगमंगल प्रतीक
रा मायण सा आध्यात्म गीत
यु ग का तुमसे ही नवोद्धार
हो रहा प्रगट यह जयोद्गार
त्वदीयं वस्तु गोविन्द
तुभ्यमेव समर्पयेत

श्री चरणोंमें :
राजेश्वर आचार्य

भाव प्रभा पद्म संस्थान

[राज्य सरकार द्वारा निबंधित—निबंधन सं० ६७५]

प्रियगोपाल भट्टाचार्य—अध्यक्ष
विजय त्रिवेद—उपाध्यक्ष
राजेश्वर आचार्य—व्यवस्थापक
विमलाचरण पाण्डे—मन्त्री
श्यामकुमार मिश्र—उपमंत्री
रामदयाल त्रिपाठी—सहमन्त्री
तापेशंकर पाण्डे—प्रचार मंत्री

—: "वंदे महापुरुष ते

हम हैं आप की मंगल दीर्घायु
"भावरंग" स्वर्ण जयन्ती
के
← नियोजक आयोजक
सदस्य
↓
चित्तरंजन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जी भट्ट "भावरंग"

शिव संकल्प दिवस पर

शिवार्चन

हे संगीतसिद्ध नादयोगी,

नाद ही जगत का कारण और निर्धारण है, साध्य है सिद्धि और साधना है। आप की सिद्धि साधना की हम आराधना करते हैं : क्योंकि आपके द्वारा विश्वभावमय भाषा की सहायता से विश्वबन्धुत्वगत कल्याण की अभिलाषा सिद्धि पाती है।

हे संस्कृति भावरंग,

''कबीर' अपनी चूनर के लिए जिस ''निझर झरै अनहद बजै'' के रंग हेतु प्रतिपल अविकल आकांक्षा करते हैं आप उसी की साकांक्ष व्याख्या करते हैं। हमारी श्रद्धा; आस्था प्रसून, निष्ठा कुंकुम् और भावभक्ति चन्दन सहित आपका वन्दन करती है।

हे रससंगान्गौरव,

भारत की भरत परंपरा के उन्नयन मनन एवं प्रबन्ध सृजनवश आप माँ भारती के दुलारे हैं। ''वीणा पुस्तक धारिणी'' की वेणु आप से मुखर है क्योंकि आप में सहज सिद्ध प्रखर प्रभूत प्रतिभा सस्वर है। परम पुनीत संस्कृति प्रतीक का शुचि गौरव आप जैसों से उद्भासित है। हमें कृपान्वित करें।

हे वाग्गेयकार !

आपने ''वन्देवाणीविनायकौ'' और ''वन्देनादतनुं तमुद्धरजगतगीतंमुदे शंकरं'' की आप्त दार्शनिकपरंपरा को आदर्श समन्वय से अभिनव स्वरूप दिया है।

हे आचार्य प्रवर !

जन मानस के अनुकार, रंजक, भावुक आदि स्तर को पार करते हुए प्रति-मानस के रसिक स्तर तक पहुँचे हुए शिक्षक ही ''गुरुदेवोभव'' के संस्कृति की उन्नति करते हैं। आप का दर्शन ही हमसे स्वतः कहला देता है :—
''मातृदेवोभव'' ''पितृदेवो भव'' ''गुरुदेवोभव'' :—

''नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ताः यत्र गायंति तत्र तिष्ठामि नारद॥'' के

अनुसार आप में निहित भगवदतत्व हेतु हम मानसा वचसा कर्मणा यही कह पा रहे हैं :—

''आवाहनं न जानामि न जानामि तवार्चनम्।
पूजां चैव न जानामि प्रीयतां परमेश्वर॥''

चरणारविंदम्'' :—

कामना करने वाले :—
समारोह समिति

संगीत संसृति संगम
राजेश्वर आचार्य
संस्थापक

संयोजक →
गण

ज्योतिषी

दिनांक १२-३-१९७२ रविवार
वा रा ण सी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ श्री ॥

परम धर्मनिष्ठ, भारतीय संगीत के विचक्षण पंडित, मधुर गायक, विनीत

तथा भारत के यशस्वी संगीतज्ञ

श्रीयुत पंडित बलवन्तराय भट्ट

'भावरंग'

के

कला-कोमल करकमलों में

सादर भावाभिनन्दन

संगीत-कला-कुमुद-कलानिधि !

आप ने इस महिमामय भरत खण्ड के सम्पूर्ण संगीत शास्त्र की अत्यन्त समुज्ज्वल गौरव गरिमा की उदात्त और पुनीत परम्परा तथा पांडित्य को आत्मसात् करके अपने पावन आचरण, विचार और व्यवहार के द्वारा संगीत प्रेमियों को जिस प्रकार प्रभावित किया है उससे भावाभिभूत होकर हम आप का हृदय से सोल्लास अभिनन्दन करते हैं।

साक्षात् भगवान शंकर के सद्योजात, वामदेव, अघोर, तत्पुरुष और ईशान नामक पञ्चमुखों के तथा जगद्जननी पार्वती के परमपुनीत मुखमण्डल से समुद्‌भूत जिस सारस्वत संगीत ने समस्त सामगान तथा संगीत की त्रिधारा-गीत वाद्य और नृत्य को अनादि कला से भावित किए रक्खा और जिस 'प्रणव' के स्फोट ने वाग्विलास बनकर समस्त विश्व को सदा वाणी का वैभव प्रदान किया, उस नाद-ब्रह्म के परम साधक संगीत-मार्तण्ड पंडित ओम्कारनाथ ठाकुर 'प्रणव रंग' के 'भावरंग' में रँग कर आप भावनगर निवासी होने के कारण स्वभावतः 'भावरंग' बन गये और इस 'भावरंग' की अत्यन्त दिव्यमय ज्योतिच्छटा से आप ने भाव संगीत की ऐसी मधुर भावधारा बहाई कि जो भी भावुक आपके सहज सम्पर्क में आया वही रस-मग्न हो गया, तृप्त हो गया, तर गया ऐसे संगीत-भावरस के कुबेर का आज काशी की इस पावन नगरी में हम सादर यशोगान करते हैं।

आपकी वाह्यज्योति लुप्त हो जाने पर भी भूतभावन भगवान् भव ने अपनी अहेतुकी कृपा से वह ज्ञान-ज्योति दे डाली जिसका दिव्य अवलम्बन पाकर बम्बई के नेत्रहीन विद्यालय में शिक्षा प्राप्त करके संगीत वरेण्य पं० ओम्कारनाथ ठाकुर जी के सम्पर्क से भारतीय संगीत की शिक्षा ग्रहण करके उसमें परम सिद्धि और गति प्राप्त कर ली, जिसके परिणाम स्वरूप सन् १९५० में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय ने अपने संगीत महाविद्यालय में आपको नियुक्त करके अपना गौरव संवर्धित किया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हे सुकण्ठ गायक !

आपके सुकण्ठ की कल काकली से आकृष्ट होकर अनेक देशों ने आपका मधुर संगीत सुनने की लालसा प्रकट की जिसके फलस्वरूप आपने नेपाल, अफ़ग़ानिस्तान आदि देशों में जा जा कर अपने मधुर कंठ से जहाँ उन श्रोताओं को मंत्र-मुग्ध कर दिया वहीं आपने भारतीय संगीत की महिमा का भी तूर्यनाद करके भारत का गौरव संवर्धित किया ।

हे शिष्य वत्सल !

आपने अपने अगणित शिष्यों को अपने मधुर स्वभाव, स्नेहपूर्ण व्यवहार तथा कृपापूर्ण सद्भाव से संगीत विद्या प्रदान करके उन्हें अपने पैरों पर खड़ा होने तथा भारतीय संगीत का प्रचार व प्रसार करने की दीक्षा देकर उनका भी कल्याण किया और साथ ही भारतीय संगीत विद्या का भी विस्तार करने का यश अर्जित किया । आपने अपनी 'भावरंग-लहरी' में जिस तन्मयता और मनोयोग के साथ सगीत की सूक्ष्मतम कलाओं का विन्यास और विलास प्रदर्शित किया है; वह साहित्य और संगीत दोनों दृष्टियों से अत्यन्त महनीय और सराहनीय ग्रन्थ है जिसका प्रयोग और और अध्ययन करके आपके शिष्य निरन्तर यश प्राप्त कर रहे हैं ।

आज वीणापाणि के ऐसे वरेण्य वरद् पुत्र का अभ्यर्चन और अभिनन्दन करते हुए हम सब फूले नहीं समा रहे हैं। हम भगवान् विश्वनाथ और माता अन्नपूर्णा से यही मंगल-कामना करते हैं कि वे हमें 'भावरंग' के 'भावरंग' में मग्न होकर 'भावरंग' बनने का पुण्य और सुयश प्रदान करें तथा आपको चिर-सौख्य, अखण्ड कीर्त्ति और शतायुष्य का मंगल वरदान दें ।

हम हैं आपके विनीत गुणगणगायक—

पं० रामसहाय संगीत विद्यालय के समस्त संगीत सेवी तथा
काशी के नागरिक और कलाकार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ॐ

कनकोत्सव

गायन-वादनाचार्य

प्रज्ञाचक्षु पं० बलवंतराय भट्ट

'भावरंग' के कर-कमलों में

सादर समर्पित

स्वर की गंगा, लय की यमुना तथा साहित्य की सरस्वती का आपके पावन व्यक्तित्व में अपूर्व संगम है। आपके स्वर-सान्निध्य में जिन्होंने श्रवण-लोचन से अलौकिक आनन्द पाया है वे आपकी साधना से प्रभावित हैं—सिद्धि से विस्मित हैं। शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में भी विरल देन मानी जाने वाली आपकी अद्भुत रचनाशक्ति आपको आधुनिक युग के "सात्त्विक सदारंग" सम्बोधित करने के लिये प्रेरित करती है।

'संगीत मार्तण्ड' की सहस्रों स्वर-रश्मियों को कठिन तपस्या, सच्ची निष्ठा तथा पूर्ण मनोयोग से आत्मसात् करते हुए आपने उन समस्त कोमलांग विद्यार्थियों में स्वर-प्रकाश बिखेरा है जो सूर्य के प्रकाश के अभ्यर्थी थे किन्तु सूर्य के प्रताप से विचलित थे। पूर्णचन्द्र से भी सौम्य' शीतल एवम् उज्ज्वल स्वर-कान्ति द्वारा क्षयवृद्धि के लांछन से मुक्त आप "ध्रुव-चन्द्र" हैं।

निःसीम और अजेय काल को अनेकानेक खण्डों में विभाजित करते हुए लय के सूक्ष्मतम और क्लिष्टतम भेदों को सहज जाननेवाले, अप्रयास प्रदर्शित करने वाले तथा सरल ढंग से, सुबोध शैली में, सुचारु रूप से समझाने वाले आप "कालजयी" हैं।

शक्ति का बल, लक्ष्मी का चातुर्य, सरस्वती का ज्ञान, सीता का त्याग, सावित्री की दृढ़ता, सुकन्या की निष्ठा, और धरित्री के धैर्य का वरदान जिनको प्राप्त है वह आदर्श भारतीय नारी आपकी "जीवन-वीणा का षड्ज" हैं।

'षड्ज' से उद्भूत ऋषभ, गांधारादि छः स्वरों के समान आपकी छः सुयोग्य सन्तान तथा निज परिवार सम आपको 'प्रिय' आपका शिष्य-प्रशिष्य परिवार; व्यष्टि से समष्टि तक, आदि से अन्त तक, जीव से शिव तक "आपका संगीत गौरव" व्याप्त करें।

विधि की विडम्बना से विचलित हुए विना 'प्रणव' के प्रसाद को पचा कर, सह धर्मचारिणी के सुदृढ़ सहयोग से 'हीनता' की परिभाषा आपने मिथ्या कर दी है। आपकी 'स्वर्ण-जयन्ती' सोपान चढ़ती हुई, हीरे-मोती-माणिक्य की भांति जगमगाएँ यह हमारी अभिलाषा है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आपने 'प्रणव' के 'भाव' की जो 'नेह' भरी एक 'लहरी' उठाई है उससे रस-पिपासुओं की प्यास और बढ़ गई हैं। आपसे संगीत-जगत् को बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं। आशा समर्थ से की जाती है। आप समर्थ हैं—सक्षम बनें, निरामय दीर्घायुष्य प्राप्त करें; "संगीत-सेवा-व्रत पूर्ण करें।"

"अल्प समय सीमित साधन की देते नहीं दुहाई।
निश्छल हृदय, नेह-प्रीति की सबने महिमा गाई।
जो कुछ है-जैसा है-ज्यों है अर्पित है कर-पंकज में,
करें स्वीकार विमल अभिवंदन सहज-सरल-सुखदाई ।।"

मंगल-कामना के साथ—हम हैं आपके, गुणानुरागी,

'नेत्रहीन सहायक संघ;' वाराणसी के अध्यक्ष,
मंत्री एवं समस्त सदस्य गण

दिनांक : १२ मार्च १९७२, रविवार, वाराणसी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गान्धार

'स्वर्ण - जयन्ती' तथा 'अमृत - महोत्सव' के अवसर पर स्नेही विद्वान् मित्रों द्वारा बलवन्तराय जी की प्रशस्ति में लिखे पद्य (तमिल एवं संस्कृत) एवं उनका हिन्दी भावानुवाद

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पं. बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग' जी के प्रति
तमिळ भाषा की एक रचना

प्रस्तुतकर्ता-
श्री. श्रीरङ्गम् आर. कण्णन्

राग-कल्याणी, ताल- आदि

पल्लवी-

कुट्र मिल्लामले पाडुवार् बलवन्तराय
कुट्र मिल्लामले पाडुवार् इशै गुणंगळेल्लाम्
तोण्ड्र कुरलिल् इनिमै पेट्रु ।

अनुपल्लवी-

शोट्र्वरामलुम् शोर्वु इल्लामलुम्
नट्रिशै पावकळै नात्तलुम्बेरवे ।

चरणम् -

अलुमुरवम् काट्टामल् अच्चम् कोळ्ळामलुम्
अवैयिल उळ्ळोरै कण्डु अच्चम् कोळ्ळामलुम्
वलि वलियाय् वन्द वण्ण इशै तेनै
वारि इनितळित्तु वण्मैयुडन वालुम् ॥

उपर्युक्त पद का हिन्दी भावार्थ-

श्री. बलवन्तराय जी दोषरहित गाते हैं।
सङ्गीत के सब गुणों से युक्त मीठी आवाज़ में दोषरहित गाते हैं।

शब्द-दोष के बिना और आलस्यरहित होकर सुन्दर रचनाओं को सुस्पष्ट शब्द से बलवन्तराय दोषरहित गायन गाते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुँह को विरूप बनाए बिना, रचना में सन्देह किए बिना
सभा में उपस्थित सज्जनों को देखकर डरे बिना,
परम्परा से आए मधुर गीतों का
श्रवण-सुखद आनन्द सबको देकर (गाकर)
उच्च जीवन बिताने वाले बलवन्तराय दोषरहित गाते हैं।

बलवन्तराय जी को उत्तर-भारतीय शास्त्रीय-सङ्गीत की राग एवं ताल-पद्धति के साथ ही अन्य शैलियों यानि दक्षिण भारतीय सङ्गीत एवं ओडिसी सङ्गीत की राग एवं ताल-पद्धति को समझने में काफी रुचि रही है। इन परम्पराओं को वे भारतीय सङ्गीत की समृद्धि मानते रहे हैं। सङ्गीत-सङ्काय में कार्यरत होने के दौरान दक्षिण-भारतीय सङ्गीत-शैली के विद्वानों श्री· ए· सुब्रह्मण्यम् (वीणावादक), श्री· वी· के वेङ्कट रामानुजम् (वॉयलिनवादक), तथा श्री· श्रीरङ्गम् आर· कण्णन् (कण्ठ-सङ्गीत) के साथ अक्सर चर्चा करते थे। अपने विद्यार्थी डॉ· दामोदर होता (जिन्होंने ओडिसी सङ्गीत की भी शिक्षा ली है) से भी वे ओडिसी पद्धति में रागों के स्वरूप की चर्चा करते रहे हैं।

इन लोगों से प्राप्त जानकारी के आधार पर उन्होंने 'भावरङ्ग लहरी' के द्वितीय भाग में स्वर-साम्य तथा चलन के आधार पर राग-रूप को समझते हुए तीनों पद्धतियों में प्रचलित राग-नामों का विशेष उल्लेख किया है। विषय के विद्वानों से चर्चा करना उन्हें हमेशा प्रिय रहा। सङ्काय में प्रतिदिन मिलने तथा चर्चा करने से परस्पर एक दूसरे की विद्वत्ता के प्रति आदर भाव तो बढ़ा ही, पारस्परिक सौहार्द्र भी उतना ही प्रगाढ़ हुआ।

इसी आदरभाव और आत्मीयतावश विद्वान् श्री· श्रीरङ्गम् आर· कण्णन् ने 'भैयाजी' को जीवन के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

५० वर्ष पूर्ण करने के उपलक्ष में उनकी साङ्गीतिक उपलब्धि एवं वैयक्तिक गुण को लक्ष्य करते हुए तमिळ भाषा के उपर्युक्त गीत की रचना कर उन्हें समर्पित किया (स्वयं गाकर प्रस्तुत किया) तथा उसका हिन्दी भावार्थ भी दिया ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

॥ श्री भावरङ्गाभ्यर्चनम् ॥

(१)

सर्वावसाददमने नितरममोघमोघं रसामृत-तरङ्गलसन्नदीनाम् ।
योगं विनापि कृतसाधुसमाधिवन्द्यं सङ्गीतकं जगति धन्यतमं स्मराम: ॥

(२)

न्यक्कृतकोकिलकण्ठं जितवीणावेणुनि:स्वनोत्कर्षम् ।
गान्धर्वदेवतायास्तिलकं बलवन्तमर्चाम: ॥

(३)

सङ्गीतलक्ष्म्या: सुषमासमृद्धे: संरक्षणे सद्व्रतमादधानम् ।
भट्टं भटं श्रीबलवन्तमार्यं वन्दामहे पौरुषकेन्द्रबिन्दुम् ॥

(४)

ओङ्कारनाथगुरुदेवपदारविन्दमाद्यन्मरन्दनिकुरम्बनिपानमुग्ध: ।
गीतागमामृतनिधेर्नवमन्दराद्रि: श्रीभावरङ्ग विबुधो जयति प्रकामम् ॥

(५)

विख्यातभावनगरे जननेन, गीतमार्तण्डतो विकसितेन मनोऽम्बुजेन ।
सर्वासु दिक्षु विसरत्प्रियसौरभेण सद्भाववैभवभरेण च य: समृद्ध: ॥

(६)

दामोदरो भजति यं विनतोऽनुरागात् राजेश्वरश्चरणचिह्नमनुप्रयाति ।
यं चित्तरञ्जन उपाश्रयतेऽथ गोपीकृष्णोऽपि यं नमति सन्ततमादरेण ॥

(७)

मध्ये वयस्युपनतं करुणार्द्रचित्तं शान्तं कलाकलितकोमलभावभाजाम् ।
विद्यावदातयशसं महसोल्लसन्तं सन्तं गुरुं तमतुलं वयमर्चयाम: ॥

(८)

गान्धर्ववेदहृदयं निधिमुत्सवानां यस्मिन्विधाय विधिवद् विदधेऽर्चनीयम् ।
तं छात्रवर्गमखिलासु निवेश्य दिक्षु सम्भावनां गुरुजनस्य भवान् बिभर्त्ति ॥

(९)

सङ्गीतदैवतमनल्पगुणाभिरामं लोकोत्तरं सहृदयं कविमात्तविद्यम् ।
भव्यं यशस्यचरितं स्वरतालसिद्धं विद्यार्थिनामतुलकल्पतरुं नमाम: ॥

रचयिता
पं. रतिनाथ झा
संस्कृत महाविद्यालय,
का. हि. वि. वि.
वाराणसी-५

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ श्रीभावरङ्गाभ्यर्चनम् ॥

(१)

जो समस्त अवसादों (दुखों) का दमन करने में अमोघ है (अचूक हैं), जो रस (आनन्द) रूपी अमृततरङ्गों से सुशोभित नदियों का प्रवाह है, जो योग के बिना भी साधुजनों (सङ्गीतमर्मज्ञों) को समाधिस्थ कर देता है, जगत् में सर्वाधिक धन्य ऐसे सङ्गीत को हम सब स्मरण करते हैं।

(२)

कोकिलध्वनि को तिरस्कृत करने वाले अर्थात् अत्यन्त मधुर कण्ठध्वनि वाले, वीणा और वेणु के निःस्वन (नाद, ध्वनि)-उत्कर्ष को जीतने वाले अर्थात् स्वाभाविक रूप से अनुरणनयुक्त (गूँजदार) और चित्ताकर्षक ध्वनि वाले, गान्धर्व देवता के तिलकस्वरूप अर्थात् सङ्गीतदेवी की शोभा और सम्मान बढ़ाने वाले बलवन्त की हम सब अर्चना करते हैं।

(३)

सङ्गीतरूपी लक्ष्मी की सुषमारूपी समृद्धि के संरक्षण का सद्व्रत लेने वाले अर्थात् सङ्गीत के स्वर-ताल-पद के सौन्दर्य को समृद्ध और संरक्षित करने की तपस्या में लगे हुए, पौरुष (अथक-परिश्रम) के केन्द्रबिन्दु, वीर (हिम्मत न हारने वाले), आर्य (सभ्य और सुसंस्कृत) श्री बलवन्त भट्ट का हम सब वन्दन करते हैं।

(४)

ओङ्कारनाथगुरुदेव के पदारविन्द के आद्य मकरन्द का पान करने से मुग्ध अर्थात् उनके युवावस्था के गानकौशल से प्रभावित, गीत के आगम (गुरुपरम्परा) रूपी अमृतनिधि को मथने वाले नवीन मन्दराचल, विशेष बुद्धिसम्पन्न श्री भावरङ्ग निश्चय ही जयशाली हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(५)

जो विख्यात (शिक्षा और संस्कृति के क्षेत्र में) भावनगर में जन्म लेने के कारण, गीतमार्तण्ड के सम्पर्क से मन रूपी कमल के विकसित होने से सभी दिशाओं में फैले प्रिय सौरभ के कारण अर्थात् जैसे सूर्य के सम्पर्क से कमल खिल कर चारों ओर सुगन्ध फैलाता है, वैसे ही सङ्गीतमार्तण्ड के सम्पर्क से मनन-चिन्तन, विचार-मन्थन करने वाला मन विकसित होने से सङ्गीत का सौरभ अर्थात् प्रसिद्धि सभी दिशाओं में फैलने के कारण और सद्भाव रूपी वैभव से भरे होने के कारण अत्यन्त समृद्ध हैं।

(६)

अनुराग के कारण विनम्र दामोदर जिनको भजता है, राजेश्वर जिनके चरणचिह्न का अनुगमन करता है, चित्तरञ्जन जिनका आश्रय लेता है और गोपीकृष्ण भी जिन्हें सदैव आदर के साथ नमन करता है।

(७)

जो मध्यवय को प्राप्त कर चुके हैं (शतायु की मध्य वय अर्थात् पचास वर्ष), जिनका चित्त करुणा से भीगा हुआ है, कला-कलित कोमल भाव भरे हुए लोगों के जो राय (राजा, सम्माननीय) हैं, विद्यादान से यशस्वी, अत्यन्त उल्लास से भरे, सन्त स्वभाववाले उस अतुल गुरु की हम सब अर्चना करते हैं।

(८)

जिसके हृदय में गान्धर्ववेद को स्थापित कर विधिवत् जिसे उत्सवों की निधि बनाया और जिसे सबके आदर-सम्मान का पात्र बनाया, उस छात्रवर्ग को समस्त दिशाओं में निवेशित करके (छात्रों को जीविकोपार्जन हेतु स्थिर करके) गुरुपद के सम्मान को आप धारण करते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(ज)

अनल्प अर्थात् अत्यधिक गुणों से सम्पन्न सङ्गीत विद्या वाले, लोकोत्तर अर्थात् असाधारण, सहृदय कवि, विद्या को आत्मसात् करने वाले, भव्य यशस्वी चरित्र वाले, स्वर-ताल को सिद्ध करने वाले, विद्यार्थियों के अतुल कल्पतरु को हम सब नमस्कार करते हैं।

पं० रतिनाथ झा विरचित संस्कृत पद्य का
हिन्दी भावानुवाद

डॉ० स्वरवन्दना शर्मा

उपर्युक्त काव्य में वर्णित गुरु रूप में बलवन्तराय जी एवं उनके पुत्रवत् शिष्यों दामोदर होता, राजेश्वर आचार्य, चित्तरञ्जन ज्योतिषी एवं गोपीकृष्ण नागर के सहज एवं आत्मीय सम्बन्ध वर्तमान परिवेश में पाठकों को सम्भवतः अतिरञ्जित एवं अविश्वसनीय लग सकते हैं किन्तु उस समय विश्वविद्यालयीय ढाँचे में संस्था के रूप में आकार लेने पर भी सङ्गीत महाविद्यालय का वातावरण प्राचीन गुरुकुल पद्धति का स्मरण कराता था जो सामान्यतः विश्वविद्यालय के संस्थागत ढाँचे में दुर्लभ होता है। यही कारण है कि व्यक्तिकेन्द्रित प्रशस्ति में शिष्यवृन्द का नाम के साथ उल्लेख है, अन्यथा विशेषणों से मण्डित वैयक्तिक गुणों एवं उपलब्धियों की गणना भी पर्याप्त होती।

इस काव्य के माध्यम से हमें पं० रतिनाथ झा जी की पारखी एवं सम्वेदनशील दृष्टि का परिचय प्राप्त होता है जिन्होंने अध्ययन-अध्यापन की अर्थात् विश्वविद्या की राजधानी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में गुरु एवं शिष्यवर्ग के मध्य स्थापित आडम्बरहीन सहज सम्बन्ध को मुक्त कण्ठ से स्वीकारते हुए इतना महत्त्व दिया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पूर्णप्रभावलयितं बलवन्तमीडे

✍ पं. रतिनाथ झा (वाराणसी)

सत्कीर्तिकीर्तितमनल्पगुणाभिरामं
सद्वृत्तमुज्झितसमस्तदुरन्तदोषम् ।
दिश्यात् समं सपरिवारसुखानुभूत्या
मृत्युञ्जयश्चिरमनामयजीवितं वः ।।१।।

श्रीमद्गुरोश्चरणपङ्कजचञ्चरीकं
सङ्गीतमङ्गलमहोत्सवमेरुदण्डम् ।
शिष्यप्रशिष्यजनकल्पतरुं वरेण्यं
भट्टावतंसमनघं बलवन्तमीडे ।।२।।

यः पञ्चसप्ततिसमा वयसः प्रपूर्य
श्रीकौस्तुभोत्सवमुदं वितरन् प्रियेभ्यः ।
अस्मभ्यमर्पयतु सान्द्रसुखं शतायुः
प्रीतः प्रसादसुमुखो विमुखोऽपराधात् ।।३।।

सर्वं प्रियं परिजनं च कलाकलापैः
संयोज्य संसदि सतां गणनीयवृत्तम् ।
कृत्वा भवानिव भवान् भुवने चकास्ति
पूर्णत्वमेति हि जनः स्वजनैः समेतः ।।४।।

भट्टान्वयप्रभवरत्नसमुच्चयेषु
पूर्णप्रभावलयितं बलवन्तमीडे ।
योऽद्यपि कण्ठसुधया जगतीतलस्य
सामाजिकश्रवणमङ्गलमातनोति ।।५।।

प्रख्यातगायकमहामणिमालिकाया
मेरुं विदग्धपरिषत्सु सदाग्रगण्यम् ।
ओङ्कारनाथगुरुदेवपदारविन्दं
ध्यायामि यो वसति भट्टमुखेऽधुनापि।।६।।

तं निर्मलाचरणचर्चितकान्तकायं
निर्मत्सरं सुयशसं बलवन्तमीडे ।
शिष्यप्रशिष्यनिवहः सहितं सभार्यं
राराधयत्यतितरां प्रभविष्णुमीड्यम् ।।७।।

सर्वेषु प्रियबान्धवेषु मुदितामुल्लासयन्नन्वहं
कल्याणीं मतिमौरसेषु वितरन् भव्याशिषा प्रीतिमान् ।
यावज्जीवनमात्मनोऽमृतकलाकल्पैर्जनान् मोदयन्
पूर्णायुः शतवार्षिकोत्सवविधिं संयोजयेर्निश्चितम् ।।८।।

योगेनाप्तसमाधिना 'चपलतां स्वान्तस्य निर्मूलयन्
नादब्रह्मणि रञ्जयन् निजमनो निःश्रेयसं चिन्तयन् ।
आशीर्भिः शुचिसन्ततीः समुदयन् कीर्त्या दिशोः शुभ्रयन्
भारत्याः स्तनगौरवं विशदयन् जीव्याः समानां शतम् ।।९।।

मर्यादाऽऽर्यजनस्य भूरि लभतां भूयः प्रतिष्ठां परां
शास्तारः शुचितां सदाऽऽर्जवमयीं भूयो लभन्तां स्थितिम्।
नेतारोऽखिलदुष्प्रपञ्चसरणिं त्यक्त्वा शुभां पद्धतिं
कर्त्तव्योन्मुखमानवा भरतभूभागस्य दध्युर्यशः।।१०।।

नादब्रह्मसमर्चनेऽर्पितमना वैदुष्यसौजन्ययोः
सिन्धुः कीर्तिसमुज्ज्वलः शुचिरुचिर्विद्वज्जनाभ्यर्चितः।
सौम्यः सद्गुणशेवधिर्मधुसुधास्यन्दीस्वरैरर्हितो
गम्भीरो वचसा पवित्रमनसा जीयाः समानां शतम् ।।११।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पूर्णप्रभावलयितं बलवन्तमीडे

मृत्युञ्जय भगवान् शिव आपको निरामय दीर्घ जीवन दें, जो सत्कीर्ति से युक्त हो, अनेक गुणों से सुन्दर बना हुआ हो, सदाचार से सम्पन्न और समस्त दुःख-दोषों से दूर हो तथा पूरे परिवार के लिए समान सुखानुभूति से परिपूर्ण हो। ॥१॥

जो गुरुदेव के चरणकमलों के भ्रमर हैं (रस सार पीने वाले हैं), सङ्गीत के मङ्गलमहोत्सवों के मेरुदण्ड हैं, शिष्य-प्रशिष्यों के कल्पतरु हैं, ऐसे 'भट्ट' कुल के अवतंस, श्रेष्ठ और निष्पाप बलवन्त की प्रशंसा करता हूँ। ॥२॥

जो आयु के पचहत्तर वर्ष पूर्ण कर प्रियजनों में कौस्तुभ-उत्सव का आमोद बाँट रहे हैं, अपराध से विमुख रहने वाले तथा प्रसन्न मुख वाले वे हम सबको प्रेम-सहित शतायु का सघन सुख प्रदान करें अर्थात् शतायु हों। ॥३॥

अपनी कला के कौशल से समस्त प्रियजनों और परिजनों को सज्जनों की सभा में सम्मानित स्थान दिला कर संसार में चमकने वाले आप की उपमा आप स्वयं ही हैं; क्योंकि व्यक्ति स्वजनों के साथ ही पूर्णता प्राप्त करता है। ॥४॥

भट्ट कुल में उत्पन्न रत्नसमूहों में पूर्णप्रभा के वलय से सुशोभित बलवन्त की प्रशंसा करता हूँ जो आज भी कण्ठ की सुधा से जगत के सामाजिकों के श्रवणमङ्गल का विस्तार कर रहे हैं। अपने गायन की अमृतधारा से विश्व के रसिक श्रोताओं के कानों को आह्लादित कर रहे हैं। ॥५॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

गुरुदेव ओङ्कारनाथ के पदारविन्द का ध्यान करता हूँ जो प्रख्यात गायकों की महामणिमाला के मेरु हैं, जो विद्वानों की सभा में सदैव अग्रगण्य हैं और जो आज भी भट्ट के मुख में अर्थात् भट्ट की वाणी और विद्या में निवास करते हैं। ॥६॥

उन बलवन्त की प्रशंसा करता हूँ, जिनका शरीर निर्मल आचरण की कान्ति से सुशोभित है। जो निर्मत्सर (ईर्ष्यारहित) और सुयशशाली हैं, आर्या (गुरुपत्नी) के साथ उन समर्थ और पूज्य गुरु की शिष्य-प्रशिष्य समूह अत्यधिक आराधना करता है। ॥७॥

प्रतिदिन सभी प्रियबन्धुओं में प्रसन्नता और उल्लास देने वाले, भव्य आशीष से सन्तानों को कल्याणकारी मति देने वाले, अमृतकलाओं से आजीवन लोगों को मोद देने वाले, निश्चित रूप से पूर्णायु पाकर शतवार्षिकोत्सव को सम्पन्न करवाएँ। ॥८॥

हृदय की चपलता को योग से प्राप्त समाधि के द्वारा निर्मूल करते हुए, अपने मन को नादब्रह्म में रङ्गते हुए, निःश्रेयस् मोक्ष का चिन्तन करते हुए, आशीर्वाद से सन्तानों की उन्नति करते हुए और कीर्ति से दिशाओं को शुभ्र करते हुए सरस्वती का स्तन-गौरव बढ़ाते हुए (सङ्गीत और साहित्य को माँ सरस्वती का स्तन कहा गया है) (बलवन्तराय) सौ वर्षों तक जीएँ। ॥९॥

आर्यजन अर्थात् बलवन्तराय की मर्यादा बारम्बार "अधिकाधिक प्रतिष्ठा पावे, शासक अर्थात् सङ्गीतशास्त्र के उपदेशक सदा सरल-सहज पवित्र स्थान प्राप्त करें, नेता अर्थात्

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सङ्गीत के मार्गदर्शक समस्त दुष्प्रवृत्तियों को त्याग कर कल्याणकारी पद्धति को अपनावें, इस प्रकार भरत भू भाग (भारत) के कर्तव्यपरायण मानव यश को प्राप्त करें। ॥१०॥

नादब्रह्म की अर्चना के लिए अपना मन अर्पित करने वाले, विद्वत्ता और सौजन्य के सिन्धु, उज्ज्वल कीर्ति और पवित्र रुचि वाले, विद्वानों द्वारा अभ्यर्चित, सौम्य स्वभाव वाले, सद्‌गुणों की निधि, मधु और सुधा बरसाने वाले स्वरों के कारण पूजित, गम्भीर वाणी और पवित्र मन वाले (बलवन्तराय) सौ वर्षों तक जीयें। ॥११॥

पं. रतिनाथ झा विरचित संस्कृत पद्य का
हिन्दी भावानुवाद

डॉ. स्वरवन्दना शर्मा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मध्यम

पं० बलवन्तराय भट्ट जी की ७५वीं वर्षगाँठ पर
आयोजित त्रिदिवसीय समारोह का विवरण
'अमृत महोत्सव' की स्मारिका में प्रकाशित हुआ था
जिसे यहाँ पुनः प्रस्तुत किया गया है।

इसके अतिरिक्त विभिन्न अवसरों पर बलवन्तराय जी
की रचनाओं पर हुई नृत्य-प्रस्तुति की
समाचार-पत्रों में प्रकाशित कटिंग भी है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अमृत महोत्सव में प्रस्तुत रचनाएँ

दिनाङ्क २१,२२ एवं २३ सितम्बर १९९७ को 'अमृत महोत्सव' के अवसर पर आयोजित बैठकों में पं०बलवन्तराय भट्ट 'भावरंग' की निम्नलिखित बंदिशें प्रस्तुत की गईं।

दिनाङ्क २१.९.९७ को सायं ६ बजे की बैठक **प्रो.प्रेमलता शर्मा के आवास 'आम्नाय'** करौदी में हुई जिसमें सर्व प्रथम डॉ. श्रीमती स्वरवन्दना शर्मा एवं श्रीमती लयलीना भट ने युगलस्वर में निम्न बंदिशें प्रस्तुत की। इस बैठक में हार्मोनियम पर प्रो.चित्तरंजन ज्योतिषी एवं तबले पर श्रीविनोद गंगाधर लेले ने सहयोग दिया। तत्पश्चात् डॉ. श्रीमती अर्चना दीक्षित, प्रो. प्रदीप कुमार दीक्षित एवं प्रो. चित्तरंजन ज्योतिषी ने बंदिशें प्रस्तुत की।

स्वरवन्दना एवं लयलीना द्वारा प्रस्तुत बंदिशों का विवरण (तारांकित बंदिशे अप्रकाशित हैं)

	राग	ताल	बंदिश प्रकार	शब्द
१.	भूपाली	तीनताल	द्रुत ख्याल	वक्रतुण्ड महाराज
२.	हंसध्वनि	एकताल	"	' नहिं सूर्य न चंद्रभास
३.	शंकरा	रूपक	मध्यलयख्याल	* स्वर झंकार अपरंपार
४.	"	तीनताल	द्रुत ख्याल	* ऊँकार वर देह
५.	तिलंग	"	"	'श्याम मिलन को
६.	खमाज	रूपक	मध्यलय ख्याल	सुखदबेला साँझ की
७.	झिंझोटी	"	"	* तू मनका फर ले मनका
८.	"	तीनताल	(तराना)	* तननन्नन तदेरनादीनतना
९.	हेम	"	चतरंग	* तोम् तनन तनतदेरेना
१०.	मारुबिहाग	"	द्रुत ख्याल	बेगि तुम आवो संदरता
११.	रागेश्री कौंस	"	"	रागन को रंग दे
१२.	मालकौंस	द्रुत आड़ाचौताल	"	सखि आज की शुभ घड़ी
१३.	सोहिनी	द्रुत एकताल	"	'चलो हटो जावो
१४.	भैरवी	रूपक	भजन	माँ भैरवी भवतारिणी

डॉ.श्रीमती अर्चना दीक्षित

	राग	ताल	बंदिश प्रकार	शब्द
१५.	भूपाली	तीनताल	द्रुत ख्याल	एरी बाजी मुरलिया
१६.	दुर्गा	"	"	'दुर्गे दशप्रहरण-धारिणी
१७.	"	"	तराना	उदनि तदानी दर दीम
१८.	हंसध्वनि	द्रुत आड़ाचौताल	ख्याल	' विहरति ब्रह्मनंदिनी
१९.	यमन	तीनताल	"	' सुखदाता सबन के शंकर

प्रो. प्रदीप कुमार दीक्षित

	राग	ताल	बंदिश प्रकार	शब्द
२०.	जलधर केदार	धमार	धमार	धिटतिट बजे ताल
२१.	दरबारी	विलम्बित एकताल	बड़ा ख्याल	राम के दरबार
२२.	गौरी	तीनताल	द्रुत ख्याल	'सावन की रसफुहार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[illegible]	भीमपलासी			
	स्वरयोजना भावरंग	(गुजराती कविता स्व.श्री. इन्दुलाल गांधी)		प्रभु जी ने पउदा माँ राख मा
	भूपाली	(रचना- डॉ. प्रदीप कुमार दीक्षित)		तालगीत
[illegible]	भिन्नषड्ज	झपताल		कान्हा न ऐसी बजाओं बंसुरिया

[illegible]. चित्तरंजन ज्योतिषी

[illegible]	श्री	विलम्बित एकताल	बड़ा ख्याल	करनी करे तो नर नारायण होवे
[illegible]	पूरिया	तीनताल	छोटाख्याल	मिलन मोरे श्याम
[illegible]	"	द्रुत एकताल	"	"
		(एक ही बंदिश दो भिन्न तालों-तीनताल एवं एकताल में निबद्ध है।)		
[illegible]	जयजयवंती	झपताल	मध्यलय ख्याल	शोभा भई मोरे
[illegible]	"	तीनताल	छोटा ख्याल	राधिका रास खेलन चली

◎

दि. २२.९.९७ की बैठक दिनभर के लिए आयोजित थी जो कि पं. बलवन्तराय भट्ट के निवास 'नादतनु' नरिया पर हुई। [illegible] प्रातः, अपराह्न, संध्या तथा रात के राग गाए गए। इस दिन की विशेषता यह थी कि यद्यपि सबका प्रस्तुतीकरण अलग-अलग [illegible] तथापि उपस्थित श्रोताओं ने भी (जिसको जो बंदिश आती थी) समवेत स्वरों में उसे प्रस्तुत किया, जिससे सभा का आनंद [illegible]गुणित हो गया।

डॉ. स्वरवंदना शर्मा एवं लपलीना भट्ट

	राग	ताल	बंदिश का प्रकार	शब्द
[illegible]	विभास	पंचम सवारी	ख्याल	उदयाचल से
[illegible]	बिलासखानी तोड़ी	चौताल	ध्रुपद	प्रथम नाद को
[illegible]	अहीर ललित	तीनताल	तराना	* तननि तननितोम्
[illegible]	भटियार	"	ख्याल	सकल जग को
[illegible]	अहीर भैरव	"	"	नाचति गावति
[illegible]	आसावरी भैरव	झपताल	"	बिन श्याम बिलखात
[illegible]	"	द्रुत एकताल	"	आए री मोरे मंदिरवा
[illegible]	कौशिक भैरव	तीनताल	"	* जोई ध्यावे ध्यान में
[illegible]	गुर्जरीतोड़ी	द्रुतआड़ाचौताल	"	देत ताल कौल के हाथ
[illegible]	कोमल आसावरी	द्रुत एकताल	"	आयो सखि सावन
[illegible]	गांधारी	"	"	शुभ सगुन भए री आज
[illegible]	देसी	तीनताल	"	सजन को संदेश

डॉ. श्रीमती अर्चना दीक्षित

[illegible]	भैरव	विलम्बित एकताल	बड़ा ख्याल	राघव राजा राम
[illegible]	"	झपताल	मध्यलय	कैलाश के नाथ
[illegible]	देशकार	द्रुत एकताल	छोटा	भरन काज जमुना जल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

१६. ललित	तीनताल	छोटा	पियुजी पधारो
१७. "	"	"	ऐसो निलज लाल
१८. अहीर भैरव	"	तराना	तोम्तोम् तदरे
१९. सौराष्ट्र भैरव	"	ख्याल	′आए सुदामा सुनि श्याम
२०. शिवमत भैरव	"	"	आए गणराज आए
२१. गुर्जरी तोड़ी	द्रु. एकताल	"	सखि अजहूँ न आएरी
२२. कोमल आसावरी	तीनताल	तराना	रे दीम् तों तना

डॉ. वनमाला पर्वतकर

२३. अहीर ललित	विलम्बित आड़ाचौताल	बड़ा ख्याल	ए मुरत अलबेली
२४. "	तीनताल	छोटा ख्याल	′सो भावरंग रंगाया

इस आयोजन हेतु भुवनेश्वर से **डॉ. दामोदर होता** स्वयं तथा अपनी संस्था **स्वररंग के छात्र-छात्राओं** समेत उपस्थित थे उन्होंने भी एकल तथा समूह में कुछ बंदिशे प्रस्तुत कीं।

२५. भैरव	तीनताल	ख्याल	′कैलास में भोर भयो
२६. अहीर भैरव	विलम्बित एकताल	बड़ा ख्याल	′बंसी के बजैया
२७. "	तीनताल	ख्याल	जप रे मना
२८. बिलासखानी तोड़ी	तीनताल	"	′हमें ना सिखाओ
२९. कोमल आसावरी	झपताल	"	जय कैलास रानी
३०. गुर्जरी तोड़ी	तीनताल	"	वाणी को विमल रस

प्रो. चित्तरंजन ज्योतिषी

३१. नट-भैरव	झूमरा	बड़ा ख्याल	दीन्हि असीस गणराज को
३२. "	झपताल	ख्याल	नटराज क्षितिराज
३३. आसावरी	त्रिताल	ख्याल	रे पपीहा, कर कर पुकार

पं. बलवंतराय भट्ट एवं समस्त उपस्थित जन

३४. भैरवी	मत्तताल	ध्रुपद	′★ काल संकेत साकेतपति राम

◎

स्वरवंदना एवं लयलीना एवं श्री राहुल भट्ट की प्रस्तुति

२२ की अपराह्नकालीन बैठक में तबले पर श्री सौम्यकांति मुखर्जी और श्री राहुल भट्ट ने संगति की

१. गौड़सारंग	द्रुत एकताल	ख्याल	वाणी नादात्मिके
२. "	द्रुत आड़ाचौताल	"	नित गुनि संग बैठ-बैठ
३. सूहा	तीवरा	ध्रुपद	′सुदिन आय के
४. सिंधूरा	आड़ाचौताल	तराना	★ तदीम् तानोम् तना
५. पटमंजरी	द्रुत आड़ाचौताल	ख्याल	स्वरसुंदरी पटमंजरी
६. भीमपलासी	द्रुत एकताल	"	′सुख दुख समान मान

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

७. भीमपलासी	फरोदस्त	ख्याल	मोहन राधिका राधन
८. हंसकिंकिणी	तीनताल	"	मैं बोलत भई अनबोल पिया

श्री चित्तरंजन पाणि एवं 'स्वररंग' के सदस्य

९. सारंग	विलम्बित एकताल	बड़ा ख्याल	प्रणमामि राम
१०. "	तीनताल	छोटा ख्याल	बन में बिहरे बनवारी
११. "	"	तराना	तन तदीं तारे दीम

डॉ. श्रीमती अर्चना दीक्षित

१२. सारंग	विलम्बित एकताल	बड़ा ख्याल	बन में गोपाल
१३. "	झपताल	ख्याल (सादरा)	सजन मोरे अब तुम घर आलो
१४. हंसकिंकिणी	चौताल	ध्रुपद	स्वर की जब शरण गए
१५. "	झपताल	ख्याल	किंकिणी बाजति

◎

दि. २२ सितंबर की सायंकालीन बैठक में हार्मोनियम पर श्री विजय कपूर ने संगति की, एवं तबले पर श्री सौम्यकान्ति मुखर्जी और श्री राहुल भट्ट ने साथ दिया।

कु. गरिमा सिंह

संगीत शास्त्र विभाग, का.हि.वि.वि.के भूतपूर्व छात्र डॉ. तेज सिंह टाक की सुपुत्री, जो इस आयोजन के लिए लखनऊ से सपरिवार वाराणसी आये थे।

१. पूरिया धनाश्री	रूपक	ख्याल	ब्रजजैन मधुर मंगल गावे
२. मियाँ मल्हार	चतुरानन (११ मात्रा)	"	अब गाजे गगनघन

'स्वर-रंग' की छात्राएं

३. बिहाग	तीनताल	ख्याल	मैं बार-बार पछतानी

स्वरवंदना, लयलीना, राहुल

४. पूर्वी	तीनताल	ख्याल	मत कर सोच
५. पूर्वी बिहाग	"	"	मोहन मिले रहे मग माँझ
६. पूरिया धनाश्री	द्रुत एकताल	"	गोकुल की पनिहारी
७. गावती	द्रुत अड़ाचौताल	"	★ गावति वृषभामिनी
८. "	तीनताल	तराना	★ तोम् तननन्न तन तदीम्
९. कलावती	झपताल	ख्याल	श्याम की सुरतिया
१०. "	तीनताल	"	घिर आए छाए
११. जैतकल्याण	"	"	आज अँगना मोरे आए
१२. कामोद	झपताल	लक्षण गीत	कामोद का मोद
१३. मालकौंस	द्रुत एकताल	ख्याल	मातु मङ्गलकरनी

27

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

श्रीमती अर्चना दीक्षित

१४. मारवा	झपताल	ख्याल (सादरा)	सखि धूम मची

स्वयं भावरंग के निर्देशन में यह रचना समूहगान के रूप में १९६१ में 'मालवीय जन्मशती' के अवसर पर तथा १९७५ में 'संगीत संकाय' की रजत जयंती के अवसर पर प्रस्तुत की गई थी। इस दिन भी उस समूह के अनेक सहयोगी उपस्थित थे; सबने श्रीमती दीक्षित के साथ मिल कर गाया और उस वृन्दगान की याद ताजा कर दी।

१५. मारवा	एकताल	ख्याल	गुनन को चित धरिए
१६. श्री	द्रुत एकताल	"	बावरी बावरी
१७. श्याम कल्याण	झपताल	"	मूरति श्याम की
१८. जैत	द्रुत आड़ाचौताल	तराना	तन नादिर-नादिर
१९. वाचस्पति	विलम्बित एकताल	ख्याल	मातेश्वरी
२०. "	तीनताल	"	मङ्गलमयी श्रीमहादेवि

डॉ. वनमाला पर्वतकर

२१. छायानट	द्रुत आड़ाचौताल	ख्याल	अब गगन सावम गरजे

'स्वर-रंग' के सदस्य

२२. मालकौंस	तीनताल	ख्याल	राम नाम रस पीवन हारा
२३. आभोगी	झपताल	"	जय महाकालिके
२४. "	द्रुत एकताल	"	आज देख्यो नंदनंदन
२५. चन्द्रकौंस	विलम्बित एकताल	बड़ा ख्याल	सोचत भाई
२६. "	झपताल	मध्यलय ख्याल	मोरे श्याम सलोने
२७. "	तीनताल	छोटा ख्याल	चंद्र की चांदनी

डॉ. राजेश्वर आचार्य

२८. शुद्ध सारंग	तीनताल	तराना	दिर दिर दिर दिर दिर

श्री.अजित भट्टाचार्य

२९. गोरख कल्याण	तीनताल	ख्याल	खेलन चली सुंदरी
३०. आभोगी	झपताल	"	जय महाकालिके

प्रो. चित्तरंजन ज्योतिषी

३१. कोमल मालश्री	विलम्बित एकताल	बड़ा ख्याल	★ राम जपले
३२. गोरखकल्याण	तीनताल	छोटा ख्याल	सखिन मिल गावो
३३. कौशिक कान्हड़ा	....	बड़ा ख्याल	राजत श्रीवृजराज
३४.	तीनताल	छोटा ख्याल	मधुबन में मुरली बज रही
३५. खम्बावती	"	"	परत नहीं चैन
३६. भैरवी	दादरा	भजन	श्याम सुंदर मदन मोहन

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दि. २३.९.९७ को मुख्य समारोह श्रीहनुमान प्रसाद पोद्दार अन्ध विद्यालय, दुर्गाकुण्ड के सभाकक्ष में आयोजित किया गया था, जिसमें निम्नलिखित बंदिशें प्रस्तुत की गईं। सर्वप्रथम डॉ दामोदर होता के निर्देशन में पूरे समारोह का शुभारंभ **'स्वररंग'** के सदस्यों द्वारा समवेत स्वरों में किया गया।

	राग	ताल	बंदिशप्रकार	शब्द
१.	भूपाली	चौताल	ध्रुपद	नाददेव तोरी शरन

स्वरवंदना, लयलीना, राहुल एवं विभास की प्रस्तुति

तबला संगति श्रीकिशोर कुमार मिश्र, हार्मोनियम श्रीविजय कपूर

२.	दयावती	झपताल	ख्याल	स्वरदे श्री शारदे
३.	पटदीप	तीनताल	"	अनहद बाजे री
			यह शास्त्रीय संगीत की भावरंग की पहली रचना है।	
४.	हंसध्वनि	"	"	चल चल री चंचल
५.	हमीर	द्रुत आड़ाचौताल	तराना	उदन दीम् तान दीम्
६.	त्रिवेणी	तीनताल	ख्याल	सखि धुन सुनि
७.	बागेश्री	एकताल	बड़ाख्याल	राधे वर की

आज के समय में अत्यंत विलम्बित लय के एवं २.३ आवर्तन की बंदिश याद करने में सामान्य छात्र को जो कठिनाई होती है, उसे ध्यान में रखकर राजकोट के श्री अमुभाई दोशी ने भट्टजी से आग्रह किया था कि बड़ा ख्याल होने पर भी अत्यंत विलंबित न हो और ज्यादा बड़ी न हो ऐसी रचना करें। उसके निदानरूप यह एक आवर्तन की रचना है।

८.	बागेश्री	द्रुत तीनताल	छोटा ख्याल	कल ना परे
९.	रागेश्री	तीनताल	सार्थक तराना	तुंदेरे तुंदेने दानि
				कैवाड़ प्रबन्ध का प्रकार
१०.	मालकौंस	तीवरा	ध्रुपद	मची अत धूम
११.	अड़ाना	तीनताल	चतुरंग	होरी होरी होरी खेलत नंदलाल
१२.	भैरवी	दादरा	भजन	नाचति वृषभानु-नंदिनी

डॉ. श्रीमती अर्चना दीक्षित

तबला श्रीविनोद लेले, हार्मोनियम श्रीविजय कपूर

१३.	मारवा	द्रुत आड़ाचौताल	ख्याल	जावो जी मैं तुमसे न बोलूँगी
१४.	श्री	द्रुत आड़ाचौताल	तराना	तारे तुंद्रे तद्रे तानि ता
१५.	इंद्रधनु	तीनताल	रागमाला	बेलरिया हरी झुकी रही

इस राग में ७ रागों की लड़ी है, जो अड़ाना नट, केदार, बहार, मालकौंस, मालगुंजी तथा सोहिनी हैं। राग का नाम भट्ट जी की कल्पना है।

डॉ. दामोदर होता

श्रीचित्तरंजन पाणि एवं श्री देवेंद्र सत्पथी ने गायन में श्रीहोता जी को साथ दिया। तबले पर श्रीविनोद लेले और हार्मोनियम पर श्रीविजय कपूर ने साथ दिया।

१६.	वसंतबहार	तीनताल	ख्याल	छबि नवलबनी नटनागर की
१७.	अड़ाना	द्रुत आड़ाचौताल	ख्याल	घन घन घन बाजे री

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रो. चित्तरंजन ज्योतिषी

तबला श्रीकिशोर कुमार मिश्र, हार्मोनियम श्रीविजय कपूर ।

१८. कलावर्धिनी	विलम्बित एकताल	बड़ा ख्याल	'आज बजावत बाजा
१९. "	तीनताल	छोटा ख्याल	अब खेलने लागे कन्हाई
२०. छायानट	द्रुत आड़ाचौताल	"	अब गगन सावन गरजे
२१. पीलू	धुमाली	ठुमरी	गोरी काहे गुमान भरी

प्रो. प्रदीप कुमार दीक्षित ने पं. बलवंतराय भट्ट जी को समर्पित एक स्व रचित बंदिश **'धन धन धन, धन धन तू धन्य तेरी साधना'** राग अड़ाना में प्रस्तुत की। संगीत एवं मंच कला संकाय के छात्र-छात्राओं द्वारा पं. भट्ट जी द्वारा रचित एक देश-गान वृंदगान के रूप में प्रस्तुत किया गया, जिसका निर्देशन प्रो. प्रदीप कुमार दीक्षित ने किया था।

२२. भैरवी	दादरा	समूहगान	स्वाधीन भारत

इसके पश्चात् अभिनंदन, मुख्य अतिथि द्वारा सम्बोधन तथा अध्यक्षीय भाषण के उपरांत पं. बलवंतराय भट्ट जी ने सभा को संबोधित किया। तत्पश्चात् दो अन्य कार्यक्रम हुए जिसका विवरण प्रस्तुत है-

१. स्वतंत्र तबला वादन – श्री संजय मिश्र – ताल-त्रिताल (पुत्र श्री रामजी मिश्र)

२. गायन – श्रीमती विद्या कातगडे (कानपुर)

आपके साथ तबले पर संगति आपके सुपुत्र श्रीश्रुतीन्द्र कातगडे ने की।

दोनों ही कार्यक्रमों में सारंगी पर संगति श्रीसंतोष कुमार मिश्र ने की।

श्रीमती विद्या कातगडे

२३. भूपाली	विलम्बित एकताल	बड़ा ख्याल	जय श्रीगणेश प्रथमेश
२४. "	तीनताल	ख्याल	वक्रतुण्ड महाराज गणपति
२५. "	द्रुत एकताल	चतुरंग	तदरे दीम् तान दीम्
२६. नंद	तीनताल	ख्याल	वारि वारि पुनि वारि जाऊँ
२७. जोग	द्रुत एकताल	"	आज रंग राग छाए
२८. मालकौंस	तीनताल	"	साँवरिया तोसे नाहि बोलूंगी
२९. भिन्नषड्ज	तीनताल	"	मैं भावरंग मस्ताना
३०. सोहिनी	रूपक	"	प्यारे सुनहु हित की बात

कानपुर से प्राचार्य पं०शंकर श्रीपाद बोडस का पत्र

(भावरंगलहरी तृतीय भाग भेंट करने पर)

जनवरी'८३

चि०श्री भैयाजी, अनेकानेक आशीर्वाद।

आपका पार्सल खोला, देखा तो आश्चर्य हुआ, अन्दर मेरा पंचा! पुराने पंचे के लिये उसकी कीमत के टिकट लगाकर पार्सल क्यों भेजा? समझ नहीं आया। और फिर पंचे के अंदर भावरंग लहरी तीसरे भाग की प्रति देखकर तो आनन्द से छत तक उछल गया।

आपका

शं० श्री०बोडस

(पंचा - लुंगी जैसी छोटी धोती)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दैनिक नवज्योति 15.2.10

बरसा बसंत-होली का रंग

पं. कुंदनलाल गंगानी स्मृति कथक समारोह

नगर प्रतिनिधि

जयपुर, 14 फरवरी। जयपुर घराने की सुविख्यात नृत्यांगना ज्योति भारती गोस्वामी ने रविवार शाम जवाहर कला केन्द्र के रंगायन सभागार में अपने कथक नृत्य में बसंत व होली का रंग बिखेर उपस्थित दर्शकों को आल्हादित कर दिया।

गीतांजली म्यूजिक सोसायटी और जवाहर कला केन्द्र के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित दो दिवसीय नृत्याचार्य पं. कुंदनलाल गंगानी स्मृति कथक नृत्य समारोह के प्रथम दिवस डॉ. ज्योति भारती गोस्वामी ने बसंत ताल नौ मात्रा में शुद्ध कथक पेश कर खूब करतल ध्वनि पाई। उन्होंने अपने नृत्य में चाला, थाट, आमद, परन, तीन परन, टुकड़ा व छूट आदि को लुभावने अंदाज में सजाया। इसके बाद उन्होंने राग अडाना में निबद्ध पद्मश्री बलवंतराय भट्ट की बंदिश होरी, हारी, हारी खेलत नंदलाल, चंदन, अतर, कुमकुम, केसर उड़ावत भर भर भर गुलाब पर भाव पेश कर सभी को राधा-कृष्ण होली का रसास्वादन कराया। उनके साथ गायन व हारमोनियम पर रमेश मेवाल, पढंत पर अजय राठौड़, पखावज पर प्रवीण आर्य, सारंगी पर अमरुद्दीन और तबले पर कौशल कांत पंवार ने संगत की। समारोह का आगाज डॉ. शशि सांखला के निर्देशन में सोसायटी की छात्राओं ने विष्णु वंदना एवं ऋतु बसंत पर आधारित एक संचरना को पेश किया। इस प्रस्तुति में सीमा गोयल, हर्पिता कोठारी, मेजल दीवाल और श्रेया चतुर्वेदी ने भाग लिया। समारोह में दिल्ली से वरिष्ठ कलाकार जयंत कस्तुआर ने भी कथक नृत्य पेश कर नृत्याचार्य पं. गंगानी को नृत्यांजलि अर्पित की। समारोह के मुख्य अतिथि राजस्थान उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधिपति न्यायमूर्ति आई.एस. इसरानी व अध्यक्ष चैम्बर ऑफ कॉमर्स के मानद सचिव डॉ. के.एल.जैन एवं विशिष्ट अतिथि पं. लक्ष्मणभट्ट तैलंग ने कलाकारों का सम्मान किया। समारोह में सोमवार को प्रातः 10 बजे कृष्णायन सभागार में कथक नृत्य के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा होगी। सायंकाल 6.30 बजे कोलकाता की सुमेधा भट्टाचार्य और नृत्याचार्य स्व. कुंदनलाल गंगानी के सुपुत्र कथक गुरु राजेन्द्र गंगानी कथक नृत्य पेश करेंगे।

ज्योति भारती जेकेके में प्रस्तुति देती हुई।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अमर उजाला | वाराणसी : मंगलवार : 10 मई 2011

पदों पर निखरे दक्षिण के पदचाप

अमर उजाला ब्यूरो

वाराणसी। उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत के पदों पर दक्षिण भारतीय नृत्य शैली के पदचाप सोमवार की शाम बीएचयू के ओंकारनाथ ठाकुर प्रेक्षागृह में मुखर हुए। अवसर था पद्मश्री पं. बलवंतराव भट्ट भावरंग की ९० वर्ष पूर्ति पर उन्हीं द्वारा विरचित उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत के पदों पर नृत्यमय प्रस्तुति का। पं. भट्ट की नातिनी पेशे से इंजीनियर डा. श्रुतिवंदना शर्मा ने भरतनाट्यम शैली के नृत्य में भावुक भावनाओं को अभिव्यक्त किया।

बीएचयू में सोमवार को भरतनाट्यम प्रस्तुत करती डा. श्रुतिवंदना शर्मा।

प्रारंभ गणेश स्तुति से हुआ। बंदिशों में व्यक्त भाव को नृत्याभिनय के माध्यम से अभिव्यक्त करने का क्रम शुरू हुआ। उत्तर भारतीय गायन के लिए रचे गए पदों पर दक्षिण भारतीय शैली का नृत्य दर्शकों को अभिभूत कर रहा था। डा. शर्मा ने राग तिलंग में माधव बेनु में मधु गात...., राग देसी में सजन को संदेश न आयो, राग कौशिक कान्हड़ा में मधुबन में मुरली बज रही.. बंदिशों पर अभिनय प्रधान नृत्य किया। उनकी प्रस्तुति में नृत्य संयोजन प्रख्यात नर्तक दंपति पद्मभूषण पं. सीवी चंद्रशेखर और जया चंद्रशेखर की पुत्री चित्रा चंद्रशेखर दाशरथि ने किया। गायन में पल्लवी अरुण, मृदंग पर जी. गुरुमूर्ति, बांसुरी पर महेश स्वामी और सितार पर सुमारानी ने सहयोग किया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पञ्चम

आज से लगभग ५७ वर्ष पूर्व सौ० माँ ने (विवाहोपरान्त) बापूजी की रचनाओं को लिखित रूप में सुरक्षित रखने के लिए डायरी बनायी थी तथा इधर-उधर छिटपुट ढङ्ग से लिखी रचनाओं को क्रमवार उतारा था। उस ऐतिहासिक डायरी के पन्ने अब बिल्कुल जीर्ण-शीर्ण हो गये हैं जिनके कुछ पन्ने (हस्तलेख में) नमूने के तौर पर यहाँ प्रस्तुत हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२७) [illegible] - आड़ा चौताल

स्था०/ [illegible] लाल [illegible] को [illegible]
अजहुँ [illegible] कै [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible]।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हो।

अं०/ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] को,
[illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] - [illegible] [illegible],
[illegible] [illegible] [illegible] 'आतंक' को।

[illegible]

([illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] में [illegible])

२८) [illegible] - [illegible]

स्था०/ [illegible] [illegible] [illegible] है,
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible];
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है, [illegible] है।

अं०/ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
'आतंक' हरि [illegible] [illegible] [illegible],
[illegible] गोकुल [illegible] है, [illegible] है।

[illegible]

२९) [illegible] - [illegible]

स्था०/ 'आतंक' [illegible] [illegible]
सोई [illegible] [illegible]।

अं०/ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
सोई [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
सोई [illegible] [illegible] [illegible]।

[illegible]

३०) [illegible] - [illegible]

स्था०/ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible],
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

अं०/ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] की [illegible] में
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] 'आतंक' [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible]।

[illegible]   २३-३-५८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२८) काफी - होरी

स्थाई/ कान्हा तोपे कौन रंग मैं डारूँ,
तन मन को तू कारो तव मैं
काहे गुलाल बिगारूँ।

अं./ 'भावरंग' कस खेलूं होरी
कैसे फाग मनाऊँ
गोरी अपनो गुलाल सम्भारो
मैं काजल सों काज संवारूँ
राधे मैं तोपे श्यामरंग डारूँ।

२३-३-५८

(गाया गया- B.H.U. क्लब में होरी पर)
स्वयं ही २४-३-५८ को)

२९) पटदीप - रूपकताल

स्था.) साधत गुनि सरस नाद
श्रुतियन को सुसंवाद
'भावरंग' प्रभु प्रसाद।

अं.) स्वर लय सागर अगाध
विहरत साधक अबाध
लागी लगन निसदिन मनो
राजयोग की समाध।

२४-३-५८

x

३०) : गौड़मल्हार - त्रिताल

स्थां./ 12 पियु पियु करे,
पियु पियु करे पपीहा
धीर ना धरे री मा
मोरवा बोलत बन में।

अं./ सावन गरजत बरसत रिमझिम
'भावरंग' ~~क~~ पिय के मिलन की
तपन बढ़ी तन में रे मन में रे

२४-३-५८

३१) गौड़सारंग - आड़ा चौताल

स्था/ नित गुनी संग बैठ बैठ
गुनन की चरचा करो तुम
गुनन की महिमा पहिचानो,
जानो, प्यारे ~~'भावरंग' सो~~। मोरे, हो नित

अं./ ~~"भावरंग"~~ 'भावरंग' भाव सों गावो बजावो
हृदय में सत नेम प्रेम भर अब
रस बरसाओ, जगत को जाल छाँड़ प्यारे मोरे।

२५-३-५८

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धैवत

बलवन्तराय जी की रचनाओं के माध्यम से उनके साङ्गीतिक एवं साहित्यिक योगदान को रेखाङ्कित करते हुए प्रस्तुत किए गए शोध-प्रबन्धों का विवरण।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सूरत में एक विद्यार्थी गजेन्द्र त्रिवेदी के लिए बनाई पहली रचना 'अनहद बाजे री सखि' के साथ 'भावरङ्ग' जी ने उत्तर भारतीय शास्त्रीय सङ्गीत के रचना–क्षेत्र में पदार्पण किया। रचना का यह क्रम स्वयं की स्फुरणा के साथ ही अनेकानेक विद्यार्थियों तथा साथी कलाकारों की आवश्यकता एवं फर्माइश पर भी अनवरत् चलता रहा। इन रचनाओं के माध्यम से सुन्दर शब्द–योजना एवं तदनुरूप राग–ताल योजना के रूप में सङ्गीत–जगत् में उनके अमूल्य योगदान को रेखाङ्कित करते हुए देश के विभिन्न विश्वविद्यालयों से शोध–प्रबन्ध प्रस्तुत हुए हैं, जिनका विवरण निम्नानुसार है–

१. गोरखपुर विश्वविद्यालय के ललितकला एवं सङ्गीत–विभाग के गायन विषय में श्रीमती आरती श्रीवास्तव ने 'भावरङ्ग' के साङ्गीतिक कृतित्व का समीक्षात्मक अध्ययन–शीर्षक से डॉ॰ राजेश्वर आचार्य के निर्देशन में सन् १९९३ में अपना शोध–प्रबन्ध प्रस्तुत किया।

२. काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के सङ्गीत एवं मञ्चकला सङ्काय के गायन–विभाग से कु॰ रश्मिप्रभा पुसालकर ने 'वाग्गेयकार' पद्मश्री पं॰ बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट, व्यक्तित्व, कृतित्व एवं साङ्गीतिक योगदान' शीर्षक से प्रो॰ प्रदीप कुमार दीक्षित के निर्देशन में सन् १९९७ में अपना शोध–प्रबन्ध प्रस्तुत किया।

३. काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग से श्रीमती लयलीना भट (इस पुस्तक की लेखिका) ने 'भावरङ्ग लहरी' : एक समीक्षात्मक अध्ययन (साहित्य, सङ्गीत एवं नृत्य के सन्दर्भ में) शीर्षक से प्रो॰ पुष्पा अग्रवाल के निर्देशन में सन् २००६ में अपना शोध–प्रबन्ध प्रस्तुत किया।

४. इलाहाबाद विश्वविद्यालय से श्री सन्दीप ज्योतिषी ने पं॰ बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग' के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का विश्लेषणात्मक अध्ययन शीर्षक से डॉ॰ सरोज नारायण के निर्देशन में सन् २००८ में अपना शोध–प्रबन्ध प्रस्तुत किया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निषाद

पं० बलवन्तराय जी की प्रकाशित कुछ Compact discs का विवरण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुम्बई स्थित Musician's Guild (जो Cassettes एवं C.D. के Publication का काम करते हैं) से भट्ट जी की कुछ ध्वनिमुद्रिकाएँ Compact Disc के रूप में प्रकाशित हुई है। ये Studio Recording न होकर अलग-अलग समय में दिये गये उनके कार्यक्रमों की recording है, जिसका विवरण निम्नानुसार है -

१. *राग-जयजयवन्ती एवं कामोद* *mgcd 003*

राग-जयजयवन्ती - लरा माई सजन, वि.एकताल
राधिका रास खेलन चली आज, द्रुत तीनताल
तराना, द्रुत तीनताल

तबला सङ्गति- श्री दामोदर होता
हारमोनियम सङ्गति-श्री बाबू भाई
तानपूरा- श्री चितरञ्जन ज्योतिषी

राग- कामोद- हूँ तो जनम न छाँडूँ- वि.एकताल
जाने न दूँगी री माई, द्रुत तीनताल

लयकारी- जाने न दूँगी री माई, द्रुत तीनताल
गोरे बदन पर झपताल
मोरी नई लगन द्रुत एकताल
होइ मदमत्त चल्यो मदन द्रुत आड़ाचौताल

तबला सङ्गति- पं. ईश्वरलाल मिश्र
हारमोनियम सङ्गति-श्री शुकदेव भट्ट
तानपूरा- डॉ. चितरञ्जन ज्योतिषी
डॉ. प्रदीप कुमार दीक्षित

२. राग-दरबारी एवं अडाणा- **mgcd 113A**

यह C.D.पं. ओम्कार नाथ जी के गायन के साथ संयुक्त रूप से बनी है, जिसमें पं. जी का गाया हुआ राग-भैरव बहार तथा देवगिरि विलावल है।

राग-दरबारी - हज़रत तोरे, वि.एकताल
मधुवा भर ला दे, तीनताल
राग-आडाणा - तू ही रङ्गरेज़ भावरङ्ग को, तीनताल

३. राग-ललित एवं बिलासखानी तोड़ी- **mgcd 128**

राग-ललित - अरे मन राम नाम, वि. एकताल

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

	जो तू रामनाम धन पावे, तीनताल	
	तबला सङ्गति-	पं. ईश्वरलाल मिश्र
	सारङ्गी सङ्गति-	पं. नारायण मिश्रा
बिलासखानी तोड़ी-	ए बीत गई सगरी राति, वि.एकताल	
	हमें ना सिखाओ यह ज्ञान, द्रुत तीनताल	
	तबला सङ्गति-	श्री बाबूलाल पखावजी
	तानपूरा -	श्री चितरञ्जन ज्योतिषी

४. राग-श्यामकल्याण, रागेश्रीकौंस तथा हमीर- **mgcd 130**

राग-श्यामकल्याण-	री मैं वारी श्याम पे, वि. एकताल
	सजनी श्याम घन छाये री, तीनताल
राग-रागेश्रीकौंस-	चेरो आपनो जानि, वि. झूमरा
	रागन को रङ्ग दे, तीनताल
राग-हमीर-	तेंडेरे कारन मेंडेरे यार, द्रुत एकताल
	तराना, द्रुत आड़ाचौताल

इसके अतिरिक्त सोदाहरण व्याख्यान के रूप में "राग एक रूप अनेक" तथा "रागदारी में राग वाक्य" पर उनके विचार ध्वनिमुद्रित हैं।

Musician's Guild से प्रकाशित भट्ट जी की C.D. मुम्बई निवासी श्री विजय पोरेचा ने अपने निजी सङ्कलन से उपलब्ध कराई है। संयोग से वे "पं. ओम्कारनाथ ठाकुर मेमोरियल ट्रस्ट" के ट्रस्टी भी रहे हैं। विजय भाई पं. ओम्कारनाथ ठाकुर के निकटतम मित्रों में से एक श्री वालजी भाई पोरेचा के सुपुत्र हैं। बलवन्तराय जी के गायन के सम्पूर्ण कार्यक्रम को ध्वन्यङ्कित कर सहेजने का कार्य सर्वप्रथम पूज्य वालजी भाई ने किया। मुम्बई में कार्यक्रम भी उन्होंने ही आयोजित किया था और ध्वन्यङ्कन भी स्वयं ही किया था। **mgcd 003** में सुरक्षित राग-जयजयवन्ती उसी कार्यक्रम में प्रस्तुत किया गया था।

Musician's Guild के प्रकाशन से अतिरिक्त पं. बलवन्तराय जी के निजी सङ्ग्रह से उनके कुछेक कार्यक्रमों की ध्वनिमुद्रिकाओं को edit कर दिसम्बर २००८ में तीन सी० डी० प्रकाशित की गई। बलवन्तराय जी की ज्येष्ठ पुत्री स्वरवन्दना तथा पुत्र राहुल ने अहमदाबाद जाकर उनके कनिष्ठ भ्राता श्री राजेन्द्र भट्ट के साथ मिलकर इस कार्य को सम्पन्न किया। यह studio recording नहीं है बल्कि भिन्न - भिन्न अवसरों पर हुए उनके जो कार्यक्रम ध्वनिमुद्रिका के रूप में सुरक्षित हो सके थे उनमें से कुछ को प्रकाशित किया है।

इन प्रस्तुतियों के माध्यम से श्रोताओं को उनकी प्रौढ एवं गम्भीर गायकी सुनने का अवसर मिलेगा जिसमें विस्तृत आलापचारी बोलबाँट, बोलतानों तथा तानों के साथ ही उनकी लयकारी का चमत्कार भी सुनने को मिलेगा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तीनों C.D में सामग्री का विवरण-

1. Just listen

राग छायानट - ए री अब गूँद लावो, वि० एकताल
झनन झननन झननन नननन बाजे बिछुवा, द्रुत तीनताल

राग बागेश्री - (लयकारी)
बिनती सुनो मोरी, झपताल
धन धन धन, चौताल
आयो फागुन मास, धमार
तराना, तीनताल

तबला सङ्गति- पं० ईश्वरलाल मिश्र
हार्मोनियम सङ्गति- डॉ० चित्तरञ्जन ज्योतिषी
सारङ्गी सङ्गति- पं० बच्चालाल मिश्र

2- Unsung Maestro

राग - पटमञ्जरी - पतिया रे, वि० एकताल
अबलौं मोरे पिया नाहिं आए, द्रुत तीनताल

राग - सूहा कान्हड़ा - (लयकारी)
सुदिन आय के, ताल तीव्रा
आसा मोपे करम, ताल झपताल
तू है मम्मदसा दरबार, द्रुत एकताल
तराना, द्रुत तीनताल

राग-भैरवी (भजन) नैहरवा हमका न भावे

तबला सङ्गति - पं० ईश्वरलाल मिश्र
गायन में सहयोग - डॉ० चित्तएजन ज्योतिषी एवं
डॉ० प्रदीप कुमार दीक्षित
सारङ्गी.सङ्गति - पं० नारायण मिश्र

३- भक्तिगान -

वेदमन्त्र - शिवसङ्कल्प
प्रार्थना - जय जगदीश हरे,
जय जय देव हरे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भजन – अबकी टेक हमारी
चादर राम नाम रस भीनी
मारूति ज्ञानमूरति
तुज शरणु ए अम (गुजराती)
नैहरवा हमका न भावे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तार-षड्ज

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में बलवन्तराय जी के नाम पर
दृष्टिबाधित छात्रों को दिये जाने वाले
स्वर्णपदक का विवरण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्वर्णपदक का नाम : 'पद्मश्री' पं. बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग' स्वर्णपदक

बलवन्तराय जी की ज्येष्ठ सुपुत्री डॉ. स्वरवन्दना शर्मा ने अपने पिता जी के नाम से उनकी कर्मस्थली काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में दृष्टिबाधित छात्रों को दो स्वर्णपदक देने की व्यवस्था की है, तदनुसार विगत कुछ वर्षों से यह पुरस्कार प्रतिवर्ष योग्य छात्रों को मिल रहा है।

१. पहला स्वर्णपदक उनके अपने विषय के अनुसार सङ्गीत एवं मञ्चकला सङ्काय के छात्र हेतु संस्तुत है।

योग्यता :
- सङ्गीत एवं मञ्चकला सङ्काय के एम.म्यूज. गायन कक्षा के दृष्टिबाधित छात्रों में प्रथम श्रेणी सहित सर्वाधिक अङ्क प्राप्त करने वाले विद्यार्थी के लिए, प्रतिवर्ष।
- गायन में उपयुक्त छात्र न होने की स्थिति में एम.म्यूज. वादन, तथा उसमें भी छात्र न होने पर एम.म्यूज़िकोलॉजी के विद्यार्थी को देने की संस्तुति की है।
- यदि एम. म्यूज़. कक्षा में उपर्युक्त किसी भी विभाग में उपयुक्त छात्र नहीं है, उस स्थिति में यह बी.म्यूज़ गायन अथवा वादन के विद्यार्थी को दिये जाने का प्रावधान किया है।

२. दूसरा स्वर्णपदक उनकी विशेष रुचि के विषयों यानि संस्कृत साहित्य / हिन्दी साहित्य / दर्शन शास्त्र में प्राथमिकता के आधार पर कला-सङ्काय के छात्र को देने का प्रावधान किया है।

योग्यता :
- कला-सङ्काय के एम.ए. कक्षा के दृष्टिबाधित छात्रों में प्रथम श्रेणी सहित सर्वाधिक अङ्क प्राप्त करने वाले विद्यार्थी हेतु यह संस्तुत है। प्राथमिकता के आधार पर संस्कृत, हिन्दी अथवा दर्शनशास्त्र के विद्यार्थी के लिए यह संस्तुत है।
- उपर्युक्त विषयों में उपयुक्त छात्र न मिलने पर कला-सङ्काय के ही एम.ए.कक्षा के किसी अन्य विभाग के विद्यार्थी को देने की व्यवस्था है।
- एम.ए. कक्षा में किसी भी विषय में उपयुक्त छात्र न होने की स्थिति में बी.ए. आनर्स में प्रथम श्रेणी सहित सर्वाधिक अङ्क पाने वाले विद्यार्थी को प्राथमिकता के आधार पर संस्कृत / हिन्दी / दर्शन शास्त्र में यह पुरस्कार दिया जायेगा।
- उपर्युक्त विषयों में उपयुक्त छात्र न होने पर बी.ए. कक्षा के ही अन्य किसी विषय के आनर्स हेतु उक्त पुरस्कार दिये जाने का प्रावधान हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१. **अलङ्कारपारिजात**, श्री नरोत्तम दास स्वामी, प्रकाशक-लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा, १९५७.

२. **आत्मदर्शन**, पं. बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट, सम्पा. डॉ. स्वरवन्दना शर्मा, अभिनव प्रकाशन, बी-२०१, त्यागराज कॉलोनी, का.हि.वि.वि., वाराणसी, २००५.

३. **क्रमिक पुस्तक मालिका**, चौथी पुस्तक पं. वि.ना.भातखण्डे (हिन्दी अनुवाद) सङ्गीत कार्यालय, हाथरस, उत्तर प्रदेश, १९७०.

४. **क्रमिक पुस्तक मालिका**, भाग-६वां, पं. वि.ना.भातखण्डे (हिन्दी अनुवाद) सङ्गीत कार्यालय, हाथरस, उत्तर प्रदेश, सम्वत् २०११.

५. **गायनाचार्य पं. विष्णु दिगम्बर**, प्रा.बी.आर. देवधर, देवधर्स स्कूल ऑफ इंडियन म्यूजिक, बम्बई (मराठी से अनुवाद-डॉ. अपेक्षा पेंढारकर) १९७१.

६. **छन्दः प्रभाकर**, "भानुकवि" विरचित, सम्पादक-श्री बी.जगन्नाथ प्रसाद, चतुर्थ संस्करण-१९१९.

७. **दसरूपकम्**, तृतीय संशोधित संस्करण, सम्पादक-डॉ. श्रीनिवास शास्त्री, प्रकाशक- रतिराम शास्त्री, साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ, १९७६.

८. प्रेम-रसायन एवं सङ्गीत-मीमांसा, प्रथम संस्करण, सम्पादिका-डॉ. उर्मिला शर्मा, राधा पब्लिकेशन ४३७८/४ बी. अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-२, २००२.

९. **भारतीय काव्यशास्त्र**, प्रथम संस्करण, डॉ. विजय पाल सिंह, जय भारती प्रकाशन, लालजी मार्केट, माया प्रेस रोड, २५८/३६५, मुट्ठीगंज, इलाहाबाद-३, १९९८.

१०. **भावरङ्ग-लहरी**, प्रथम भाग, रचनाकार एवं प्रकाशक-पं. बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट, वाराणसी, १९६४.

११. **भावरङ्ग-लहरी**, द्वितीय भाग, रचनाकार एवं प्रकाशक-पं. बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट, वाराणसी, १९७४.

१२. **भावरङ्ग-लहरी**, तृतीय भाग, रचनाकार एवं प्रकाशक-पं. बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट, वाराणसी, १९८२.

१३. **भावरङ्ग-लहरी**, प्रथम भाग, तृतीय परिवर्धित संस्करण, पं. बलवन्तराय गुलाबराय भट्ट, सम्पादिका-डॉ. स्वरवन्दना शर्मा, प्रकाशक-शारदा संस्कृत संस्थान, सी-२७/५९, जगतगंज, वाराणसी, २०१२.

१४. **राग-विज्ञान**, प्रथम-भाग, अष्टम संस्करण, पं. वि.ना. पटवर्धन, सङ्गीत-गौरव ग्रन्थमाला, पुणे-२, १९६२.

१५. **राग-विज्ञान**, भाग-३, सातवाँ संस्करण, पं. वि.ना. पटवर्धन, सङ्गीत-गौरव ग्रन्थमाला, पुणे-२, १९६७.

१६. **राग-विज्ञान**, पंचम भाग, चतुर्थ संस्करण, पं. वि.ना. पटवर्धन, सङ्गीत-गौरव ग्रन्थमाला, पुणे-२, १९६२.

१७. **संगीत-चिन्तामणि**, प्रथम संस्करण, आचार्य डॉ. वृहस्पति एवं श्रीमती सुमित्रा कुमारी, सङ्गीत कार्यालय, हाथरस, उत्तर प्रदेश, जून, १९६६.

१८. **सङ्गीताञ्जलि**, चतुर्थ भाग, प्रथम आवृत्ति, लेखक एवं प्रकाशक, पं. ओम्कारनाथ ठाकुर, वाराणसी, १९५७.

१९. सङ्गीतमार्तण्ड, पं. ओम्कारनाथ ठाकुर, 'प्रणवरङ्ग', जीवन कवन सुमन, अर्चनदीप दीक्षित, वाराणसी, १९९९.

२०. सङ्गीतरत्नाकर (प्रथम खण्ड), व्याख्या और अनुवाद, डॉ. सुभद्रा चौधरी, राधा पब्लिकेशंस, ४३७८/४ बी., अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-२, २०००.

२१. सङ्गीतरत्नाकर, आनन्दाश्रम, संस्करण (आनन्दाश्रम संस्करण संस्कृत ग्रन्थावलि) ग्रन्थाङ्क-३५, सम्पादक-मङ्गेश रामकृष्ण तैलङ्ग, पुणे-१८९६.

२२. Nandikeshwar's Abhinaya Darpanam,3rd edition, edited and translated by Shri Manmohan Ghosh. Manisha Granthalaya Pvt. Ltd. Calcutta. 1981.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

२३. Sangit Ratnakar of Sarangdev, edited by Pt. S. Subrahmanyam Shastri, The Adyar Library, 1953.

पत्रिका–

१. नादरूप, अंक –१, श्री कला सङ्गीत भारती, प्रथम दशकपूर्ति समारोह विशेषाङ्क, प्रधान सम्पादिका–डॉ. प्रेमलता शर्मा, १९६१.

२. प्रयाग सङ्गीत समिति, १९६५.

३. भावरङ्ग अमृत महोत्सव (स्मारिका), प्रधान सम्पादिका– डॉ. स्वरवन्दना शर्मा, १९९७.

४. संस्मारिका (पं. बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग' स्वर्ण जयन्ती), नेत्रहीन सहायक संघ, वाराणसी। मार्च–१९७२.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'भावरङ्ग' जी के रचनाकार स्वरूप की विलक्षणता के प्रति मराठी भाषा के लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार श्री पु.ल. देशपाण्डे के उद्‌गार .... 'अविश्वसनीय ! यह एक सङ्गीतकार की साहित्यिक दृष्टि है या साहित्यकार की साङ्गीतिक सृष्टि !! उस पर कमाल यह कि रचनाकार नेत्रहीन है !!!'

(पुणे में आयोजित एक सङ्गीतप्रधान परिसम्वाद में प्रख्यात गायिका डॉ० वीणा सहस्रबुद्धे द्वारा सोदाहरण व्याख्यान के रूप में प्रस्तुत भट्टजी की रचनाएँ 'गोपिका चली सुरन बन', 'भावमूर्ति आनन्द श्याम घन', अनहद बाजे री सखि' तथा 'चन्द्र की चाँदनी' आदि सुनकर सभाध्यक्ष के रूप में श्री पु०ल० देशपाण्डे के वक्तव्य का अंश)

मशहूर शायर मरहूम नज़ीर बनारसी की नज़र में...

तेज, तप, ओज और जीवन की खोज में ही
मन उन्मन हो इधर-उधर भटका।
चित्त नहीं शान्त हुआ, भ्रान्त हुआ इतस्तत:
कभी इस तट का तो कभी उस तट का।।
कहीं ज्ञानयोग ने, प्रयोग ने विज्ञान के
कहीं कोरे उपदेश ने दिया है झटका।
भावना विभोर हुआ, मुग्ध मन मोर हुआ
जब सुना गान मैंने बलवन्त राय भट्ट का ।।

१५.०८.१९८०

Music is his life's breath
The melodies in his throat take away
Music lovers beyond here and now
He is well known as 'Nadamaharshi'
Of Hindustani music Kingdom
Though became blind at boyhood
He made Rag-Tal as his two eyes
In this regard he is like our Dwaram.

Excerpt from-
Pt. Bhatt's Special Interview to "News To Day" Reporter.
Published in -
EENADU (ORISSA), BERHAMPUR.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

डॉ० लयलीना भट

एसोसिएट प्रोफेसर, नृत्य (भरतनाट्यम्)
महिला महाविद्यालय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

जन्म-तिथि एवं स्थान	:	१-९-१९५९, वाराणसी
माता	:	श्रीमती वसुन्धरा भट्ट
पिता	:	'पद्मश्री' पं. बलवन्तराय भट्ट 'भावरङ्ग'
शिक्षा	:	स्नातक (कण्ठ - सङ्गीत, सम्मान-विषय) स्नातकोत्तर (हिन्दी) एडवांस्ड डिप्लोमा (तेलुगु) सङ्गीत-प्रभाकर (कण्ठ-सङ्गीत) सङ्गीत-अलङ्कार (भरतनाट्यम्) डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (हिन्दी)
सङ्गीत- शिक्षा	:	आरम्भिक शिक्षा पिता से
नृत्य-गुरु	:	'पद्मभूषण' प्रो. सी. वी. चन्द्रशेखर

विशेष :

प्रो. प्रेमलता शर्मा के निर्देशन में प्रस्तुत संस्कृत नाटकों 'मालविकाग्निमित्रम्' तथा 'उत्तर-रामचरितम्' में अभिनय तथा नृत्य। 'यवनिका' संस्था की प्रस्तुतियों 'सत्य- हरिश्चन्द्र' 'आषाढ़ का एक दिन' एवं 'चन्द्रावलि' नाटिका में सङ्गीत एवं नृत्य - निर्देशन तथा वेशभूषा परिकल्पना। 'ज्ञान-प्रवाह' के तत्त्वावधान में प्रस्तुत संस्कृत-नाटक 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' एवं 'विक्रमोर्वशीयम्' में पूर्वरङ्ग का नृत्य- निर्देशन तथा वेशभूषा परिकल्पना। 'उद्धव-शतक' 'पुष्प-वाटिका', 'श्री कृष्ण लीला' 'चण्डालिका' (प्रथम-दृश्य) तथा महामना मालवीय द्वारा रचित ब्रजभाषा के काव्य पर आधारित नृत्य - नाटिका 'स्याम बिना ब्रज में है सब-सून' में सङ्गीत एवं नृत्य निर्देशन तथा वेशभूषा परिकल्पना । 'विश्वनाथाष्टक' एवं 'गङ्गा-स्तुति' के चयनित श्लोकों पर भरतनाट्यम् शैली में समूह - नृत्य निर्देशन तथा 'भावरङ्ग' जी की कतिपय बन्दिशों पर नृत्य - रचना ।

विभिन्न शोध पत्रिकाओं में नृत्य से सम्बन्धित १२ शोध-प्रपत्र प्रस्तुत करने के अतिरिक्त राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय सङ्गोष्ठियों में प्रपत्र वाचन ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi